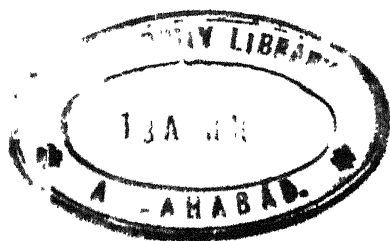


हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला-१९

# संगीत शास्त्र

लेखक

के० वासुदेव शास्त्री



प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग  
उत्तर प्रदेश

प्रथम संस्करण

१९५८

मूल्य

साढ़े छः रुपये

मुद्रक

सम्मेलन मुद्रणालय, प्रयाग



## प्रकाशकीय

भारत की राजभाषा के रूप में हिंदी की प्रतिष्ठा के पश्चात् यद्यपि इस देश के प्रत्येक जन पर उसकी समृद्धि का दायित्व है, किन्तु इससे हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों के विशेष उत्तरदायित्व में किसी प्रकार की कमी नहीं आती। हमें संविधान में निर्धारित अवधि के भीतर हिन्दी को न केवल सभी राजकार्यों में व्यवहृत करना है, वरन् उसे उच्चतम शिक्षा के माध्यम के लिए भी परिपुष्ट बनाना है। इसके लिए अपेक्षा है कि हिन्दी में वाङ्मय के सभी अवयवों पर प्रामाणिक ग्रन्थ हो और यदि कोई व्यक्ति केवल हिन्दी के माध्यम से ज्ञानार्जन करना चाहे तो उसका मार्ग अवरुद्ध न रह जाय।

इसी भावना से प्रेरित होकर उत्तर प्रदेश शासन ने हिन्दी समिति के तत्त्वाधान में हिन्दी वाङ्मय के सभी अंगों पर ३०० ग्रन्थों के प्रणयन एवं प्रकाशन के लिए पञ्च-वर्षीय योजना परिचालित की है। यह प्रसन्नता का विषय है कि देश के बहुश्रुत विद्वानों का सहयोग इस सत्प्रयास में समिति को प्राप्त हुआ है जिसके परिणाम-स्वरूप थोड़े समय में ही विभिन्न विषयों पर अठारह ग्रन्थ प्रकाशित किये जा चुके हैं। देश की हिन्दीभाषी जनता एवं पत्र-पत्रिकाओं से हमें इस दिशा में पर्याप्त प्रोत्साहन मिला है जिससे हमें अपने इस उपक्रम की सफलता पर विश्वास होने लगा है।

\* प्रस्तुत ग्रंथ हिन्दी ग्रंथमाला का १९वाँ पुष्प है। सम्प्रति हिन्दी में संगीत शास्त्र पर वस्तुतः ग्रंथों की बहुलता नहीं है, और जो ग्रंथ प्रकाशित भी हुए हैं उनमें सागो-पागत्व, विस्तृत विवेचन एवं शोध का अभाव दिखाई पड़ता है। प्रस्तुत पुस्तक के लेखक श्री के० वासुदेव शास्त्री न केवल भारतीय संगीत की विभिन्न पद्धतियों के सुविज्ञ हैं, वरन् उन्होंने गत सैंतीस वर्षों से प्राचीन ग्रंथों में संगीत शास्त्र-विषयक समस्त उपलब्ध सामग्री का अध्ययन किया है। और इस अध्ययन, चिन्तन, एवं मनन का परिणाम है प्रस्तुत ग्रंथ। इसमें संगीत के सभी तत्त्वों का सरल, सुबोध और आकर्षक

ढंग से उद्घाटन हुआ है। इससे भारतीय संगीत के विद्यार्थियों एवं जिज्ञासुओं की तृप्ति तो होगी ही, साथ ही इस दिशा में आगे शोध करनेवालों को प्रत्न प्रेरणा एवं दिग्निर्देश भी प्राप्त होगा। इसी विश्वास में हम उगे हिन्दी के गहदय पाठकों के सम्मुख उपस्थित करते हैं।

भगवतीशरण सिंह  
सचिव, हिन्दी समिति

## भूमिका

हमारे प्राचीन ग्रन्थों में संगीत शास्त्र विषयक जो सामग्री उपलब्ध है, पिछले ३७ वर्ष से मैं उसका अध्ययन करता रहा हूँ। यह पुस्तक उसी का परिणाम है। तजोर जिले में स्थित मेरे ग्राम कीवलूर में बहुत से शोकिया तथा पेशेवर संगीतज्ञ निवास करने थे। कन्दस्वामी नागस्वरकारर नामक अत्यन्त प्रसिद्ध वशीवादक उसकी शोभा बढ़ा रहे थे। वे वशीवादक संगीतज्ञों के मुकुटमणि थे, जिनका स्थान देश के उस अञ्चल में सामान्यतः अन्य वादकों तथा गायकों के समकक्ष ही माना जाता है। राग, छाया तथा स्वर-पचार की प्रथम शिक्षा मुझे अपने बड़े भाई श्री माधव शास्त्री से मिली जो संगीत शिक्षक थे। मुझे अपने गाव के बहुत ही कुशल संगीतज्ञ श्रीरामचन्द्र भागवतार का गायन सुनने तथा उनसे कुछ सीखने का भी अवसर प्राप्त हुआ था। पहले तो वे हिन्दुस्थानी संगीत के अद्वितीय गायक के रूप में प्रसिद्ध हुए, किन्तु बाद में उन्होंने कर्णाटक संगीत में भी ख्याति प्राप्त की। उनके नारी-सुलभ कण्ठस्वर पर नागूर के मशहूर ढोलकवादक तजौर निवासी जनाब नन्हू मिया साहब, मुग्ध हो गये। इन्होंने उन्हें शास्त्रीय हिन्दुस्थानी संगीत की शिक्षा दी और फिर दोनों ने साथ-साथ समस्त दक्षिण भारत का परिभ्रमण किया जिससे दोनों को ही मयुक्त लाभ पहुँचा। श्री रामचन्द्र भागवतार ने अपने प्रारम्भिक जीवन के कितने ही वर्ष उस समय के दो महान् करनाटकी संगीतज्ञों, श्री महावैद्यनाथ ऐयर तथा श्री पटनम मुन्नह्मण्य ऐयर, का संगीत सुनने में बिताये और जब उक्त दोनों प्रतिष्ठित कलाकार दिवंगत हो गये, तब स्वयं प्रथम कोटि के करनाटकी संगीतज्ञ का स्थान प्राप्त कर लिया। इसी समय सुप्रसिद्ध अभिनेत्री बालामणि ने लुभावना वेतन देकर उन्हें संगीत की शिक्षा प्रदान करने के लिए कुछ वर्षों तक अपने यहाँ नियुक्त कर लिया, जिससे पेशेवर संगीतज्ञ के रूप में उनका जीवन समाप्त हो गया। इसके बाद उन्होंने अपना अधिकांश समय संगीत की शिक्षा प्रदान करने में ही लगाया और वे लगभग २५ वर्षों तक “संगीतज्ञों के संगीतज्ञ” रूप में ही प्रसिद्ध रहे। मैंने देखा था कि स्वर्गीय पचम केश भागवतार, वायलिन गोविन्द स्वामी पिल्लै, नागस्वरम् पक्किरिया पिल्लै, कोयम्बटूर तयी और बंगलूर नागरत्नम् रागो तथा कृतियों के किसी गूढ़ तत्त्व को समझने के लिए हफ्तों तक उनकी मौज का इन्तजार किया करते थे। पिछली शताब्दी

के उत्तरार्ध में कर्णाटक संगीत के उक्त दोनों आचार्यों की मधुर परम्परा का प्रतिनिधित्व उन्होंने किया।

मैंने उस समय तक रागों, उनकी छायाओं, उनके स्वरों तथा मन्त्रों का अंश-ज्ञान प्राप्त कर लिया था, जब सन् १९२१ में प्रकाशित पूना ज्ञान गंगा के श्रुति-ग्रन्थ में संगीत विषयक संस्कृत के भाषण मैंने देखे। उसमें मुझे श्री बलराम नेरुंग सहस्रबुद्धे तथा कुछ अन्य विद्वानों के व्याख्यान पढ़ने का भित्ति। संगीत रत्नाकर, नारदी शिक्षा तथा पाणिनि शिक्षा, यही तीन पुस्तकें थीं जिनका अध्ययन मैंने पहले पहल किया।

संस्कृत जानने के कारण मुझे संगीत रत्नाकर तथा नारदी शिक्षा के श्लोकों का अर्थ समझने में वहाँ यथेष्ट सुविधा हुई जहाँ तक ऐसे विषय का सम्बन्ध था जो प्राविधिक न था, किन्तु उसके प्राविधिक अंश में हर दूसरे-तीसरे श्लोक पर कठिनाई का सामना करना पड़ा। पहली समस्या श्रुतियों और स्वरों के पारम्परिक सम्बन्ध में थी जिसका मुझे समाधान करना था। हमें बताया गया है कि मन्त्र में बाईस श्रुतियाँ होती हैं, षड्ज में चार, ऋषभ में तीन, इत्यादि और समस्त सातों स्वरों में बाईस श्रुतियों का समावेश हो जाता है। अब प्रश्न यह था “क्या प्रत्येक श्रुति एक स्वर का प्रतिनिधित्व करती है? ग्रन्थों में जो यह कहा गया है कि षड्ज में चार श्रुतियाँ होती हैं, क्या उसका यह आशय है कि षड्ज भी चार होते हैं?” कोई भी इसका उत्तर “हां” में न देगा। फिर, यदि प्रत्येक श्रुति का आशय स्वर ही हो, तो इसके लिए दो पृथक् शब्द—श्रुति और स्वर—रखने की क्या आवश्यकता है? और यदि प्रत्येक श्रुति स्वर है तो फिर स्वर भी बाईस होने चाहिए, जब कि ग्रन्थों में कहीं भी इनकी अधिक से अधिक संख्या १९ के ऊपर नहीं आयी है। मैंने महजबुद्धि से यह परिणाम निकाला कि श्रुतियाँ वे छठक अंग मात्र हैं जिनमें स्वरों का निर्माण हुआ है अर्थात् प्रत्येक स्वर चार, तीन या दो श्रुतियों के संयोग से बना है। कई वर्षों के बाद जब मैंने नाट्यशास्त्र का सुषिराध्याय याने ३० वां अध्याय देखा तो मेरे इस विचार की पुष्टि हो गयी। किन्तु इस पुष्टि के बहुत पहले ही मानों मेरे कान में कोई कह उठता था कि मेरा यह सोचना यथार्थ है। श्रुतियाँ स्वरों के निर्माणकारी अंग हैं, लेकिन फिर यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि “किसी विशिष्ट श्रुति में प्रत्येक स्वर का अपना स्थान है”, इस कथन का क्या तात्पर्य है? प्रत्येक स्वर को किसी विशिष्ट श्रुति के रूप में पहचानने में हमें अपने कानों से सहायता मिलती है जिसमें इस मत की पुष्टि होती है कि प्रत्येक स्वर एक ही श्रुति-विशेष का द्योतक है। इसका उत्तर मैंने यह कहकर दिया कि यद्यपि प्रत्येक स्वर कई श्रुतियों के मेल से बनता है, फिर भी जो

श्रुति अधिक देर तक बनी रहती है, उसी से स्वर का स्थान निर्धारित करने में सहायता मिलती है।

नाट्यशास्त्र के जिस अंश में स्वरों की बनावट सम्बन्धी मेरे मत का समर्थन होता है, वह जैसा कि पहले कहा जा चुका है, नाट्यशास्त्र के सुषिर सम्बद्ध तीसरे अध्याय में आया है जहाँ चार श्रुतियोंवाले, तीन श्रुतियोंवाले तथा दो श्रुतियोंवाले स्वर उत्पन्न करने की विधि का उल्लेख किया गया है। वहाँ कहा गया है कि जब आप किसी स्वर सम्बन्धी छिद्र को पूरा खुला रखते हैं, तो चार श्रुतियोंवाला स्वर निकलता है, जब उसे आधा बन्द रखते हैं तब दो श्रुतियों का स्वर प्राप्त होता है और जब आप जल्दी-जल्दी उसे बन्द करते तथा खोलते हैं तो तीन श्रुतियोंवाला स्वर निकलता है। पश्चिम का “मध्यावकाश” वाला विचार, मैं भरत मुनि के स्पष्ट कथन को देखते हुए स्वीकार नहीं कर सकता था। इस दिशा में मैंने बाद में जो गवेषण किये हैं, उनमें यह बात प्रमाणित हो गयी है कि मैंने जो कहा था, वह सत्य है।

दूसरा प्रश्न, जिसका समाधान मुझे करना है, इस कथन के सम्बन्ध में था कि सप्तक में केवल २२ श्रुतियाँ होती हैं। केवल २२ श्रुतियों के होने की बात कहने का क्या आशय है जब कि हम सप्तक में अगणित श्रुतियों की कल्पना कर सकते हैं? संगीत रत्नाकर में “श्रुति वीणा” सम्बन्धी श्लोकों का अच्छी तरह अध्ययन करने से यह कठिनाई दूर हो गयी। “बाईस श्रुतियाँ, एक दूसरी से अधिक ऊँचाई पर, बाईस तारों पर स्थापित की गयी हैं, शर्त यह है कि अनुक्रम में एक के बाद एक आगेवाली दो श्रुतियों के बीच में तीसरी श्रुति नहीं रह सकती।” (देखिए “संगीत रत्नाकर”, अध्याय १, प्रकरण ३, श्लोक २—“स्यान्निरन्तरता श्रुत्योर्मध्ये ध्वन्यतराश्रुतेः।”) शुरू में इस शर्त का कोई मतलब मेरी समझ में नहीं आ रहा था। मेरा तरीका ग्रन्थ के वाक्यों को बार-बार तब तक पढ़ते रहना रहा है, जब तक कि उनका वास्तविक अर्थ समझ में न आ जाय। कभी-कभी तो श्लोकों का यथार्थ आशय समझने में मुझे वर्षों लग गये हैं। जैसा कि बहुधा हुआ है, इस दृढ़ विश्वास के साथ लगातार परिश्रम करते

१. मैंने प्रारम्भ से ही अपनी स्थापनाओं का आधार उन वाक्यों को माना है जो प्राचीन महर्षि हमारे लिए छोड़ गये हैं। मैंने उन्हें आधुनिक विज्ञान के नतीजों से अधिक अंजा स्थान दिया है। आज का विज्ञान अभी दिन पर दिन “प्रगति” ही कर रहा है, अतः आज की स्थापना में कल और सुधार हो जाया करता है। मैंने उक्त शास्त्रीय वाक्यों को व्यवहार के बिल्कुल अनुरूप पाया है। प्रत्येक संगीतज्ञ उन्हें देख सकता है और उनकी परीक्षा कर सकता है।

रहने से अन्य श्लोको की तरह इनका भी अर्थ स्पष्ट हो गया कि हमारे महर्षियों ने जो कुछ कहा है, समस्त वैज्ञानिक साधनों से युक्त आज के सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक निश्चयपूर्वक कहा है और वे अधिक गहराई तक जा सकते हैं, अन्त में अन्य श्लोको की तरह इनका भी अर्थ स्पष्ट हो गया। एकाएक यह बात मेरे ध्यान में आई कि जब एक श्रुति में दो स्वर एक दूसरे के बहुत निकट होने हैं, तब वे 'श्रुति' (श्रुति) उत्पन्न करते हैं और बिना एक दूसरे में मिले पृथक्-पृथक् नहीं रह सकते। इसलिए स्वतंत्र अस्तित्व की शर्त यह है कि श्रुतियों के बीच में कम से कम दूरी हो। अब उक्त श्लोक का अर्थ स्पष्ट हो गया। इसका आशय यह हुआ कि अनुक्रम में आनेवाली ऐसी केवल बाईस श्रुतियाँ ही हो सकती हैं जिनके बीच में इतना अल्पतम अन्तर हो कि डोलों की उत्पत्ति न होने पाये।

दूसरी समस्या उस समय सामने आयी जब मैंने "ग्राम", फिर "मूर्च्छना" और तब "जाति" से सम्बद्ध धारणाओं पर विचार किया। इनके कारण मैं अधिक कठिनाई नहीं हुई, क्योंकि उनका अर्थ आसानी से मेरी समझ में आ गया। फिर भी मुझे इन धारणाओं के सम्बन्ध में जनता में प्रचलित अनेक भ्रान्तियाँ से जूटना पड़ा। इस पुस्तक में मैंने विस्तार से यह कार्य किया है। तंत्रों के सम्बन्धी महर्षि में कार्य करने का परम सीमाय मुझे प्राप्त हुआ था, जहाँ पाण्डुरिपियों का दुर्लभ संग्रह विद्यमान है, अतः संगीत के सम्बन्ध में प्रत्येक छपी हुई पुस्तक और पाण्डुरिपियों में उपलब्ध प्रायः एक-एक सामग्री का मैं अवलोकन कर चुका हूँ।

मैं समझता हूँ कि सबसे महत्व की बात जिसकी खोज मैंने की है, सात प्रकार के स्थायी स्वर अलंकारों के सम्बन्ध में है। एक ही स्वर का उच्चारण सात मूर्च्छनाओं से किया जा सकता है और इन मूर्च्छनाओं का प्रत्येक राग में विशिष्ट सम्बन्ध है, यह जो बात कही जाती रही है, इसने संगीत रत्नाकर के रचनाकाल से अर्थात् सन् १२०० ईसवी से आज तक के विद्वानों और संगीत शास्त्रियों को हैरान कर रखा था। बाद के सभी ग्रन्थ-लेखकों ने इस सिद्धान्त की अवहेलना की, यद्यपि 'संगीत रत्नाकर' में इसे प्रत्येक राग का लक्षण माना है। अब मैं बतलाता हूँ कि बुद्धि को चक्कर में डालने वाला यह विषय किस तरह मेरी समझ में आया। इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में मैं निरंतर विचार करता रहता था कि एक दिन मैंने देखा कि पृष्ठ में "यदुकुल काम्भोजी" की जिस तरह समाप्ति होती है, उसमें एक विशेष प्रकार की कौमलता (फैटनेस) रहती है जो 'काम्भोजी' में विद्यमान नहीं रहती। तब मेरे मन में यह बात आयी कि पृष्ठ में समाप्ति के ये दोनों प्रकार ही स्थायी स्वर अलंकारों के सात प्रकारों में से दो प्रकार होने चाहिए। अब मैं अपने परिश्रम का फल सुविज्ञ विद्वानों तथा संगीतज्ञों के

सामने रख दे रहा हूँ जिससे इसमें जो कुछ उपयोगी हो, उसे वे ग्रहण कर ले और जो काम का न हो उसे छोड़ दे।

• मैं उत्तर प्रदेश सरकार के सूचना विभाग की हिन्दी समिति के सचिव को हार्दिक धन्यवाद देना चाहता हूँ क्योंकि उन्होंने संगीत के अध्ययन में अपना यह तुच्छ अशदान सर्वसाधारण के समक्ष रखने का अवसर मुझे प्रदान किया।

सरस्वती महल, तजौर ]

के० वासुदेव शास्त्री

## विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
पहला परिच्छेद	
शास्त्रावतरण	१-७
दूसरा परिच्छेद	
श्रुति, स्वर और ग्राम	८-३०
तीसरा परिच्छेद	
वर्णालकार और गमक	३१-३७
चौथा परिच्छेद	
मूर्च्छना और क्रम	३८-४४
पांचवाँ परिच्छेद	
जाति या रागमाता	४५-७३
छठवाँ परिच्छेद	
राग प्रकरण	७४-१४०
सातवाँ परिच्छेद	
हिन्दुस्थानी और कर्णाटक संगीत पद्धति	१४१-२०५
आठवाँ परिच्छेद	
ताल प्रकरण	२०६-२२७
नवाँ परिच्छेद	
प्रकीर्णक अध्याय	२२८-२३३
दसवाँ परिच्छेद	
प्रबन्ध	२३४-२५१



ग्यारहवां परिच्छेद

वाद्याध्याय

२५२-२८३

बारहवां परिच्छेद

वाग्गेयकारो का संक्षिप्त इतिहास

२८४-२९८

अनुबन्ध - १

कृणाटिक पद्धति के रागो का आरोहण-अवरोहण-क्रम

२९९-३५६

अनुबन्ध - २

हिन्दुस्थानी पद्धति के रागों का आरोहण-अवरोहणादि विवरण

३५७-३९८

अनुबन्ध - ३

तालो का प्रस्तार-क्रम

३९९-४२९

संगीत शास्त्र

योगियों के प्रत्यक्ष और स्वानुभव ज्ञान से प्राप्त है, अनुमान से नहीं। पाश्चात्य देशों में इन्द्रियों से उपलब्ध ज्ञान ही एक मात्र साधन है। जिन विषयों में पाश्चात्य विद्वान् इन्द्रियों से सत्य स्वरूप नहीं जान पाते, उनमें इन्द्रियों से प्राप्त तत्सम्बद्ध ज्ञान से अनुमान करते हैं। नयी-नयी खोजों के अनुसार यह अनुमान प्रतिदिन बदलता रहता है। उनके ग्रन्थों में वस्तुओं का स्वरूप कल एक प्रकार का हुआ तो, आज और कुछ भिन्न प्रकार का होता है। वस्तुतः वस्तुस्वरूप कभी बदलनेवाला नहीं होता, परन्तु पाश्चात्य लोग वस्तुओं के लगातार बदलनेवाले सिद्धान्त को 'साइण्टिफिक प्रोग्रेस' नाम देकर तृप्त होते हैं। असली बात यह है कि हर एक कला और विज्ञान की शाखा में हमारे प्राचीन ग्रन्थों में पाये जानेवाले बहुत से तत्त्वों पर पाश्चात्य वैज्ञानिकों और कलाकारों का ध्यान अब तक नहीं गया है।

हमारे सगीत शास्त्र के अवतरण में विविध परम्पराएँ हैं। उनमें तीन परम्पराएँ मुख्य प्रतीत होती हैं—(१) वेद-परम्परा (२) आगमों और पुराणों की परम्परा (३) ऋषि प्रोक्त संहिता परम्परा। वेद-परम्परा में हमारे सगीत की उत्पत्ति सामवेद से बतायी गयी है।

‘सामवेदादिद गीत सञ्जग्राह पितामहः।’

गीत और वाद्य में क्रमशः नारद और स्वाति ब्रह्मा के प्रथम शिष्य हुए। कहा जाता है कि नाटक में उपयोग करने के लिए गीत और वाद्य को इन दोनों से भरत मुनि ने सीखा। भरतमुनि ने ही स्वयं यह अपने 'नाट्यशास्त्र'<sup>३</sup> में कहा है।

१. उदाहरण के तौर पर यहाँ एक विषय का उल्लेख किया जाता है। हमारे शस्त्रचिकित्सा ग्रन्थ 'सुश्रुत संहिता' में हमारे शरीर के १०७ मर्मस्थानों का विवरण है जिनमें शस्त्र का आघात होने से वे अंग प्रयोजन के योग्य नहीं रह जाते अथवा कुछ ही दिनों में या बहुत दिनों के बाद मृत्यु की सम्भावना होती है। पाश्चात्य चिकित्सा-शास्त्री इस तथ्य को नहीं जानते। फलतः पाश्चात्य चिकित्सा में सुसिद्ध 'आपरेशन' करने के कुछ दिनों के बाद, कारण जाने बिना लगभग ५ प्रतिशत लोगों का मरण होता है।

२. 'गान्धर्वञ्चैव वाद्यञ्च स्वातिना नारदेन च।

विस्तार गुणसम्पन्नम् उक्तं लक्षणकर्मतः॥

अनुवृत्त्या तथा स्वातेरातोद्यानां समासतः।

पौष्कराणां प्रवक्ष्यामि निर्वृत्तिं संभवं तथा॥'

—अध्याय ३३, श्लोक ३—४।

महर्षि नारद का आदि ग्रन्थ 'नारदीय शिक्षा' है। यही सामवेद की शिक्षा है। उसमें श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, सप्त मुख्य राग—उनका विवरण है। उसके अलावा सामवेद के सप्तस्वर, लौकिक संगीत के सप्तस्वर और दूसरे वेदों के स्वर आदि में परस्पर सम्बन्ध भी बताया गया है।

सामवेद के सप्तस्वरो का नाम ऋण्ड, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मन्द्र, अतिम्वार है। यह अवरोहण क्रम है। लौकिक सप्तस्वरों में ये 'म ग रि स नि ध प' के समान हैं। ऊपरी दृष्टि से देखे तो यह अनुभवविरुद्ध जान पड़ता है। यह चर्चा की ही बात है। इसका पूरा विवरण आगे स्पष्ट किया जायगा।

'स्वानिनारदसवाद' नामक एक ग्रन्थ है। प्रयत्न करने पर यह ग्रन्थ मिल सकता है।

संगीत शास्त्र के उपलब्ध आदि ग्रन्थ भरत नाट्यशास्त्र में संगीत विभाग (अध्याय २८ से ३६ तक) है। इस ग्रन्थ में गीत और वाद्यों का पूरा विवरण है, परन्तु रागों के नाम और उनके विवरण नहीं बताये गये हैं। भरत के शिष्यों में दत्तिल, कोहल, विशाखिल—इन तीनों के द्वारा ग्रन्थ लिखे गये। उनमें दत्तिल कृत 'दत्तिलम्' नामक ग्रन्थ छपा हुआ है। कोहल कृत 'कोहलीयम्' लिखित रूप में मिल सकता है। 'विशाखिलम्' उपलब्ध नहीं है। इसी परम्परा में आये हुए मतग मुनि ने 'बृहद्देशी' नामक ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ भी छपा हुआ है। 'दत्तिलम्' और 'बृहद्देशी' में रागों की उत्पत्ति, नाम और लक्षण के विवरण है।

आगम परम्परा में संगीत के आदिकर्ता महादेव हैं। शिव-पार्वती मवाद के रूप में ३६००० श्लोकों का एक ग्रन्थ गान्धर्व नाम से प्रचलित था। परन्तु वह ग्रन्थ अब प्राप्य नहीं है। तो भी उसकी विषय सूची यामलाष्टक नामक ग्रन्थ में दी गयी है।

इसी परम्परा के ग्रन्थों में नन्दिकेश्वर कृत 'नन्दिकेश्वर संहिता' भी एक है। यह ग्रन्थ अब नहीं मिलता। परन्तु संगीत रत्नाकर के टीकाकार सिंहभूषाल ने (ई० १५००) इसके कुछ श्लोक उद्धरण के रूप में दिये हैं। यदि खोज की जाय तो कदाचित् यह ग्रन्थ मिल सकता है।

ऋषि कृत संहिता परंपरा में 'काश्यपीयम्' ही मुख्य ग्रन्थ है। इसके कुछ श्लोकों के उद्धरण पिछले दिनों के ग्रन्थों में दिये गये हैं। पर यह काश्यपीय ग्रन्थ अप्राप्य ही है।

इनके अलावा आगम-पुराण-परंपरा के शैव और वैष्णव आगम ग्रन्थों में गिल्प, नाट्य आदि विषयों के साथ संगीत विषयक विचारों के महत्त्वपूर्ण उल्लेख हैं।

अन्य परम्पराओं में याष्टिक, दुर्गा, आञ्जनेय परम्पराएँ ही मुख्य हैं। याष्टिक, दुर्गा परम्पराओं का अनुसरण करके संगीत रत्नाकर में शार्ङ्गदेव ने रागोत्पत्ति और रागविवरण दिये हैं। आञ्जनेय मत का अनुकरण चतुरदामोदर कृत 'संगीत दर्पण' (१६०० ई०) में है। संगीत परम्पराओं के प्रवर्तकों का नाम संगीत रत्नाकर में यों दिया गया है—

‘सदाशिव. शिवा ब्रह्मा भरत. कश्यपो मुनि’ ।  
 मतज्ञो याष्टिको दुर्गा शक्तिः शार्दूलकोहलौ ॥  
 विशाखिलो दत्तिलश्च कम्बलोऽश्वतरस्तथा ।  
 वायुविश्वावसू रम्भाऽर्जुनो नारदतुम्बुरू ॥  
 आञ्जनेयो मातृगुप्तो रावणो नन्दिकेश्वर ।  
 स्वातिर्गणो बिन्दुराजः क्षेत्रराजश्च राहल ॥  
 रुद्रटो नान्यभूपालो भोजभूवल्लभस्तथा ।  
 परमर्दी च सोमेशो जगदेकमहीपतिः ॥  
 व्याख्यातारो भारतीये लोल्लटोद्भटशकुनाः ।  
 भट्टाभिनवगुप्तश्च श्रीमत्कीर्तिधरः परः ॥  
 अन्ये च बहव पूर्वे ये संगीतविशारदाः ।’

इनके साथ द्रविड़ (तमिल) देश में एक अति प्राचीन पद्धति उत्पन्न हुई है। इस परम्परा के प्रवर्तक परमशिव, स्कन्द और अगस्त्य हैं। इस पद्धति में कई ग्रन्थ भी लिखे गये थे। पर अब सब ग्रन्थ नष्ट हो चुके हैं। उन ग्रन्थों से कुछ उद्धरण पिछले दिनों के काव्यों और निघण्टुओं में उपलब्ध हैं। इस पद्धति में रागों का नाम ‘पण’ और ‘तिरम्’ है। इनके लक्ष्य अब भी ‘देवार’ नामक स्तोत्र में वर्तमान है।

सन् १२०० ई० में सब पद्धतियों का मन्थन करके शार्ङ्गदेव ने ‘संगीत रत्नाकर’ नामक सुप्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा, इसकी छः टीकाएँ सस्कृत में थीं। पर अब दो ही प्राप्य हैं। सन् १७०० ई० में लिखी हुई ‘सितु’ नाम की एक व्रजभाषा टीका ‘तजौर सरस्वती महल पुस्तकालय’ में है। टीकाकार का नाम है गगाराम। भावभट्ट के द्वारा लिखी हुई आनन्दभूषा की टीका भी है। इससे इस ग्रन्थ का महत्त्व जाना जा सकता है। यही समूचे भारत के संगीत संप्रदाय में एकरूपता लानेवाला अन्तिम ग्रन्थ है।

१. कुम्भकर्ण, केशव, कल्लिनाथ, सिंहभूपाल, हंसभूपाल—और एक टीकाकार का नाम नहीं मालूम है।

इसके पश्चात् लिखे हुए सब ग्रन्थ हिन्दुस्थानी और कर्नाटक पद्धतियों की उत्पत्ति के बाद ही लिखे गये हैं। इस ग्रन्थ के लेखनकाल तक भारतीय के संगीत में अन्त-प्रान्तीय छाया भेदों के रहने पर भी सारे देश में एक ही प्रकार का संगीत विद्यमान था। इस ग्रन्थ की रचना के पश्चात् उत्तर और दक्षिण भारत में विदेशी आक्रमणों के कारण कलाजगत् और शास्त्रजगत् में एक शून्यता फैल गयी थी। यह अवस्था १७० वर्ष तक रही। इसके पश्चात् दक्षिण में विजयनगर साम्राज्य और उत्तर में दिल्ली के बाराशाहों की सहायता से कला और शास्त्रों का पुनरुद्धार किया गया। उस पुनरुद्धार के फल-स्वरूप ही कर्नाटक और हिन्दुस्थानी नामक दो पद्धतियों का उद्भव हुआ। बीच के 'अन्धकारयुग' या 'शून्ययुग' के कारण सब शास्त्रों को, उत्तर और दक्षिण के विद्वान् लोग भूल गये। संप्रदायों में भी उथल-पुथल हुई। पुनरुद्धार के समय रहते-रहते संप्रदायों के रक्षण के लिए एक व्यवस्था करनी पड़ी। उत्तर भारत में थाट, और दक्षिण में मेल का उदय हुआ। इसके पहले के ग्रन्थों में 'थाट' या 'मेल' शब्दों का प्रयोग कही नहीं हुआ है। केवल श्रुति, स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, ज्ञानि, राग, वर्ण और अलंकार—ये ही संगीत शास्त्र के अंग रहते थे।

रत्नाकर के बाद के ग्रन्थों में उत्तर भारत की पद्धति के आधारभूत ग्रन्थों में (१) रागार्णव (२) गन्धर्वराज कृत 'राग रत्नाकर' (३) पुण्डरीक विट्ठल कृत 'नतन निर्णय' (४) सोमेश कृत 'मानसोल्लास' (५) कुम्भकर्ण कृत 'संगीत राज' (६) भावभट्ट कृत 'हृदय प्रकाश' (७) जयदेव कृत 'पद्मराग चन्द्रोदय' (८) 'रागमाला' (९) चतुरदामोदर कृत 'संगीत दर्पण'—आदि मुख्य हैं।

इनमें पहले के चार ग्रन्थ अमुद्रित हैं, जिनमें पहले के तीन ग्रन्थ तभी सरस्वती महल पुस्तकालय में हस्तलिखित ग्रन्थों के रूप में हैं। चौथा बड़ीदा में छपा जा रहा है। 'संगीतराज' की छपाई भी हो रही है। अन्तिम चार ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं।

कर्नाटक सम्प्रदाय के आधारभूत ग्रन्थ विद्यारण्य का 'संगीत सार', रामामात्य का 'स्वरमेलकलानिधि', रघुनाथ नायक और गोविन्द दीक्षित का 'संगीत मुद्रा', सोमनाथ का 'रागविबोध', वेकट मन्नी कृत 'चतुर्दण्ड प्रकाशिका', गोविन्द कृत 'मग्न चूड़ामणि', शाहजी और उनके सभा पण्डितों के द्वारा लिखे हुए 'रागलक्षण' और 'चतुर्दण्डिलक्ष्य' और तुलजाराज कृत 'संगीत सारामृत' आदि हैं।

इनमें 'संगीत सार' अब उपलब्ध नहीं है, परन्तु संगीत मुद्रा का 'रागलक्षण' इसके अनुकरण पर लिखा हुआ है। शाहजी के रागलक्षण और चतुर्दण्डिलक्ष्य के अनि-रिक्त शेष सब ग्रन्थ मुद्रित हो चुके हैं। शाहजी और उनके विद्वानों के लक्षण, लक्ष्य ग्रन्थ तालपत्र के रूप में सरस्वती महल पुस्तकालय में हैं।

इनके अनुकरण पर पीछे लिखे हुए बहुत से ग्रन्थ दोनों सम्प्रदायो में मिलते हैं। साधारणतया प्राचीन शास्त्रों के बहुत भाग समझ में न आने के कारण, दोनों ही सम्प्रदायों में लक्ष्य के सहारे ही सगीत कला का रक्षण और पोषण किया गया है। शास्त्र की सहायता बहुत कम ही ली गयी है। ऐसी हालत में भी विद्वानों और गवैयों का कथन है कि शास्त्र के अनुसार ही वे गाते हैं। वे नहीं मानते कि रागच्छाया के आवश्यक शास्त्र भाग बहुत दिन पूर्व ही भूले जा चुके हैं। प्राचीन शास्त्र का एकमात्र अवशेष 'वादी-सवादी-तत्त्व' हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय में ही है। कर्नाटक पद्धति में वह भी नहीं है। हर एक राग में स्वरों का तीव्र या कोमलस्वरूप, उनके क्रम, वर्त, वर्ज्य-भाव को ही अब दोनों सम्प्रदायों के व्यक्ति शास्त्र समझ बैठे हैं। गुरुकुल सम्प्रदाय में अभ्यास के कारण रागों का स्वरूप, मार्ग और छाया उनके मन में भली-भाँति ठहर जाती है। परन्तु यह उनका भ्रम है कि स्वरावली की सहायता से ही राग स्वरूप सिद्ध हो रहा है। उनको यह बात भी नहीं ज्ञात है कि इसके अतिरिक्त एक सच्चा शास्त्र हमारे प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध है।

## दूसरा परिच्छेद

### श्रुति, स्वर और ग्राम

#### नाद की उत्पत्ति

संगीत सुखजनक नादविशेष है। हमारे शास्त्र-सिद्धान्तों के अनुसार नाद आकाश का गुण है। तर्कशास्त्र में 'शब्दगुणकमाकाशम्' कहा गया है। परन्तु पाश्चात्य विज्ञान के अनुसार नाद आकाश का गुण नहीं है, किन्तु अन्य वस्तुओं के आघात में नाद का उद्भव होता है। हमारे सिद्धान्त में भी 'आकाश' अन्य वस्तुओं के साथ रहते समय 'आश्रिताश्रय' सम्बन्ध से विद्यमान है। जब आकाश में नाद का उद्भव आघात के बिना स्वयं होता हो तो भी अन्य वस्तुओं में स्थित आकाश में नाद के उद्बोधन के लिये आघात की आवश्यकता है।

#### प्रपञ्चभूत तत्त्व

हमारे शास्त्रों की परिभाषा पाश्चात्य वैज्ञानिक परिभाषा से भिन्न है। हमारे शास्त्रों में प्रपञ्च के स्वरूप की धारणा के आधार पर ही विवेचन किया गया है कि इन्द्रियों से हम जो-जो अनुभव कर रहे हैं, उनकी मर्याद ही प्रपञ्च है। हम एक इन्द्रिय से अनुभव किये जानेवाले प्रपञ्च भाग को 'भूत' नाम दिया गया है। कान से अनुभव किये जानेवाले भूत का नाम 'आकाश' है। जो भूत स्पर्श-इन्द्रिय से अनुभव किया जाता है उसका नाम 'वायु' है। नयन-इन्द्रिय से जो अनुभव किया जाता है उसका नाम 'तेजस्' है। जो जिह्वा से अनुभव किया जाता है वह 'अप' और जो नासिका से अनुभव किया जाता है वह 'पृथ्वी' है। यह भी हमारा सिद्धान्त है कि पृथ्वी में गन्ध के साथ बाकी चारों भूतों के गुण भी हैं। 'जल' में रुचि के साथ, पृथ्वी का छोड़कर

१. यह पूछना सरल है कि कैसे आकाश (प्रदेश) ज्ञान का अनुभव कान से किया जा सकता है। अगर किसी को कान के अलावा दूसरी इन्द्रियों की सहायता नहीं है; तो भी वह केवल श्रवण से विभिन्न शब्दों को सुनकर उनकी दिशा और उनकी दूरी समझ सकता है। दसों दिशाओं और दूरों के ज्ञान को जोड़कर प्रदेश का अनुभव उसे होता है।



वाकी तीनों के गुण भी है। इसी प्रकार तेजस् में पृथ्वी और जल को छोड़कर वाकी दोनों के गुण भी हैं। वायु में आकाश का गुण भी है। आकाश में 'गब्द' ही एक गुण है। इसलिए हमारा सिद्धान्त है कि प्रपञ्च सृष्टि क्रम में आकाश से वायु, वायु से तैजस्, तेजस् से जल, जल में पृथ्वी उत्पन्न हुई है। सृष्टि में ईश्वर ही आदि है। प्रपञ्च का कर्ता और कारणवस्तु दोनों वही है। उसके स्वरूप को समझने की शक्ति हमारे मस्तिष्क में नहीं है। वेद और महर्षियों के अनुभवों से ही ईश्वरस्वरूप को हम जान सकते हैं।

वेद और शास्त्रों में ईश्वर को 'सच्चिदानन्द' कहते हैं। 'मत्' नाश रहित, 'चित्' अखण्ड ज्ञान स्वरूप, 'आनन्द' आनन्द स्वरूप इसका अर्थ है। ईश्वर के, अपनी मायाशक्ति द्वारा अपने सच्चिदानन्द स्वरूप को अनेक प्रकारों में सकुचित करने में प्रपञ्च की सृष्टि हुई है। ईश्वर की प्रथम सृष्टि आकाश है। आकाश का गुण है नाद। इसी कारण से आकाश और उसके गुण नाद में अन्य विषयों से भी अधिक परिमाण में ईश्वर का स्वरूप विकसित है। अर्थात् आनन्द का आविर्भाव आकाश में तथा उससे सम्बद्ध श्रवणानुभव में अधिक है। इसलिए इन्द्रिय-जन्य विषय-मुखों में से कान में अनुभव किये जानेवाले सगीत में अन्य मुखों की अपेक्षा ज्यादा सुख है।

### अनाहत नाद

नाद के दो भेद हैं। एक आहत और दूसरा अनाहत। हमारे शरीर में 'चिन्तन' का स्थान हृदय है। यही ईश्वर का आविर्भाव अधिक मात्रा में है।

हृदय में 'दहराकाश' नाम से एक छोटी-सी जगह शुद्ध आकाश से व्याप्त है। उसमें आघात के बिना नाद का आविर्भाव हमेशा हो रहा है। इसका नाम है अनाहत नाद। ऐसा होने पर भी हम उसे नहीं सुना करते, क्योंकि हमारा मन और इन्द्रिय-ग्राम बाह्य विषयों में आमक्त हैं। इन्द्रियों को बाह्य विषयों से खींचकर अन्तर्मुख होने के पश्चात् अगर हम मुनौं, तो उस अनाहत नाद को सुन सकते हैं। शास्त्र में कहा गया है कि वह नाद इतना मधुर है कि उसे सुनने के बाद मन किसी दूसरे विषय में नहीं लगता। यह योगियों का ही साध्य है।

हृदय में आनन्द स्वरूपी ईश्वर का आविर्भाव अधिक होने के कारण उस आनन्द-स्वरूप की छाया अनाहत नाद में पड़ती है। इसलिए अनाहत नाद आनन्दजनक है अर्थात् मधुर है। यही उसकी मधुरता का कारण है।

योगियों की तरह, जनसाधारण ही नहीं, जीवसाधारण को भी, इस आनन्द का अनुभव करने के लिए सगीत रूपी एक साधन ईश्वर की देन है।

### आहत नाद

हृदयाकाश में होनेवाले नाद के अलावा बाकी सभी नाद 'आहत' हैं। संगीत का नाद भी 'आहत' ही है। अब हमें यह विचार करना चाहिए कि अनायास को भी अनाहत नाद का अनुभव कराने के लिए संगीत कैसे एक माध्यम होता है ? इस समझने के लिए नाद-संबद्ध भौतिक शास्त्र का ज्ञान आवश्यक है। नाद विज्ञान में 'अनुनाद' नाम का एक तत्त्व है जो हमें जान लेना चाहिए। अनुनाद (Resonance) तत्त्व यह है कि जब एक सूक्ष्म शब्द उम्मी तरह के दूसरे शब्द में मिल जाता है, तब पहला शब्द बहुत अधिक स्थूल और गभीर बन जाता है। यदि संगीत का नाद अनाहत नाद के समान है, तो अनाहत नाद अपनी सूक्ष्मता को छोड़कर और गभीरता का प्राप्ति करके हमारे द्वारा श्रवणीय बन जाता है। उसमें होनेवाले आत्मानन्द की छाया भी मधुरता के रूप में हमें प्राप्त होती है। हमारा संगीत, जितना अधिक अनाहत नाद का अनुकरण करता है, उतना अधिक आनन्द उससे मिलता है। महर्षि लोग जो हमारे संगीत शास्त्र के रचयिता हैं उन्होंने अनाहत नाद का प्रत्यक्ष अनुभव किया है। इसलिए अनाहत नाद के स्वरूप के अनुसार संगीत शास्त्र उन्होंने लिखा है।

### शरीर में श्रुति, स्वरों की उत्पत्ति

हमारे योग शास्त्र और आयुर्वेद शास्त्र में 'नाडी' का विवरण बहुत विस्तार से लिखा हुआ है। इनके अनुसार अगर हम एक भाव का व्यक्त रूप में प्रकाशित करना चाहते हैं, तो आत्मा मन को प्रेरित करता है। मन शरीर में रहनेवाली अग्नि को जगाता है। नाभि के नीचे 'ब्रह्मप्रस्थि' नामक एक स्थान है। उसमें रहनेवाली वायु को अग्नि उठा देती है। हृदय की ऊर्ध्व नाडी में संलग्न तिरछी २२ नाड़ियाँ हैं। उन पर वायु का आघात होने से २२ ध्वनियाँ उच्च-उच्चतर रूप में उत्पन्न होती हैं। इसी तरह कण्ठ में इनके दुगुने प्रमाण की दूसरी २२ ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं, और इनके भी दुगुने प्रमाण की २२ ध्वनियाँ सिर में उत्पन्न होती हैं। इन ध्वनियों का नाम श्रुति है। इन तीनों ध्वनि-समूहों का नाम क्रमशः मन्द्र, मध्य और तारस्वार्था (स्थान) है। इन तीनों को सूक्ष्म, पुष्ट और अपुष्ट नाम दिया गया है। कारण स्पष्ट है। इसलिए हमें यह मालूम होता है कि हमारे शरीर में ६६ श्रुतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

पर पाश्चात्य विज्ञान पद्धति में कहा जाता है कि कण्ठ में रहनेवाले द्वार के छोटा या बड़ा बनने से और कण्ठ में रहनेवाली ध्वनि की छोटी रस्सी का लम्बी या छोटी करने से ही ध्वनिसमूहों की उत्पत्ति होती है। इन श्रुतियों से मन्द स्वरों की उत्पत्ति

होती है। उसकी रीति यही है—पहली चार श्रुतियों से पङ्ज स्वर उत्पन्न होता है। उसका तात्पर्य यह है कि पङ्ज स्वर को उच्चारण करते समय ही चारों श्रुतियों का उच्चारण भी हो जाता है। इसी तरह पाँचवीं, छठी और सातवीं—इन तीनों श्रुतियों से ऋषभ स्वर उत्पन्न होता है। आठवीं और नौवीं—इन दोनों श्रुतियों से गांधार तथा इसके बाद की चारों श्रुतियों से मध्यम की उत्पत्ति होती है। इसके बाद की चारों श्रुतियों, अर्थात् चौदहवीं, पंद्रहवीं, सोलहवीं और सत्रहवीं श्रुतियों से पञ्चम, अठारहवीं, उन्नीसवीं और बीसवीं श्रुतियों से धैवत तथा इक्कीसवीं और बाईसवीं श्रुतियों से निषाद की उत्पत्ति होती है। इस तरह बने हुए स्वरों का नामकरण 'प्रकृति स्वर' किया गया है।

### स्वरस्थान और स्वरगत श्रुतियाँ

यद्यपि स्वर दो, तीन या चार श्रुतियों से उत्पन्न होता है तथापि वह उनमें से एक नियत या विशेष श्रुति पर ही कुछ अधिक देर ठहरता है। जहाँ स्वर अधिक देर ठहरता है, उसे नियतश्रुति या स्वरस्थान कहते हैं। इस तरह पङ्ज का स्वरस्थान चौथी, ऋषभ का सातवीं, गान्धार का नवीं, मध्यम का तेरहवीं, पञ्चम का सत्रहवीं, धैवत का बीसवीं और निषाद का स्थान बाईसवीं श्रुति है। स्वरस्थान वीणा में स्पष्टतया निदर्शित कर सकते हैं और स्वरगत श्रुतियों को बाँसुरी में ही स्पष्ट रूप से जान सकते हैं। बाँसुरी में प्रत्येक स्वर के लिए नियत रहनेवाले द्वारों को पूरा खोल देने से चतुःश्रुति स्वर की उत्पत्ति होती है। द्वार को आधा बन्द करके दूसरे आधे भाग को खुला रखने से द्विश्रुतिस्वर की उत्पत्ति होती है। और उस द्वार में उँगली को पुनः पुनः बन्द और खुला रखने से त्रिश्रुतिस्वर की उत्पत्ति होती है।<sup>१</sup>

### अवधान

श्रुति और स्वर हमेशा रसभाव से सम्बन्धित रहते हैं और रसभाव की उत्पत्ति के भी कारणीभूत हैं। रस और भाव मन की वृत्तियाँ हैं। मन के अवधान के बिना

१ 'स्वराणां च श्रुतिकृतं तच्च मे सन्निबोधत ।

व्यक्तमुक्ताङ्गुलिस्तत्र स्वरो ज्ञेयश्चतुःश्रुतिः ॥

कम्पमानाङ्गुलिश्चैव त्रिश्रुतिश्च स्वरो भवेत् ।

द्विकोऽर्धाङ्गुलियुक्तस्तु एवं श्रुत्याश्रिताः पुनः ॥'

रस और भाव का निश्चय नहीं होता। इसलिए मन के अवधान में ही श्रुति स्वरों के स्वरूप का निश्चय होता है। एक आधार स्वर में मन सावधान नहीं रहता, ११ श्रुति स्वरों की उत्पत्ति और स्वरूप निश्चय नहीं हो सकते। यह समझा जाता है कि षड्ज या मध्यम दोनों ही आधार स्वर होने लायक हैं अर्थात् पट्ज को आधार स्वर बनाकर उससे एक सप्त स्वर समूह को तथा मध्यम को आधार स्वर बनाकर उससे एक सप्त स्वर समूह को भी उत्पन्न किया जा सकता है। पट्ज के आधार पर जिन स्वरों की उत्पत्ति होती है उनके समूह का नाम 'पट्जग्राम' है। मध्यम के आधार पर जिन स्वर समूह की उत्पत्ति होती है, वह स्वरसमूह 'मध्यमग्राम' कहलाता है। इन दोनों ग्रामों में पञ्चम और धैवत स्वरों को छोड़कर बाकी स्वर समान हैं। पट्जग्राम में पञ्चम स्वर १४, १५, १६, १७ श्रुतियों से उत्पन्न होता है। मध्यमग्राम में ना १८, १९, १६ इन्हीं तीनों श्रुतियों से पञ्चम उत्पन्न होता है। धैवत स्वर पट्जग्राम में १८, १९, २० इन तीनों श्रुतियों से उत्पन्न होता है और मध्यमग्राम में १७, १८, १९, २० इन चारों श्रुतियों से उत्पन्न होता है। आज से ७०० वर्ष पहले दोनों पहार के ग्रामस्वर भी आरम्भिक शिक्षा में सिखाये जाते थे। वह पद्धति मध्यमकालीन शून्ययुग में विच्छिन्न हो गयी। इसके बाद पुनरुज्जीवन के समय में पट्जग्राम स्वरों को ही आरम्भिक शिक्षा में सिखाया जाना आरम्भ हुआ, परन्तु पट्जग्राम, मध्यमग्राम और उभयग्राम स्वरों से बनाये हुए राग सम्प्रदाय में अब भी विद्यमान हैं। इन रागों का पता लगाने के लिए एक सुलभ मार्ग है। पट्ज को 'मुर' बनाकर गाने में कुछ राग पूर्ण रञ्जक होते हैं, तो और कुछ राग मध्यम का 'मुर' बनाकर गाने में रञ्जक होते हैं। शास्त्रों में कहा गया है कि 'गान्धार' नामक भी एक ग्राम है, पर वह देव और गन्धर्वों के ही गाने योग्य है।

### श्रुति और स्वरों के बारे में होनेवाली कुछ शंकाएँ

'श्रुति' शब्द अब 'आधार श्रुति' के अर्थ में प्रयुक्त किया जा रहा है। हम कहते हैं कि इस विद्वान् का संगीत 'श्रुतिशुद्ध' है। इसका श्रुतिज्ञान अच्छा है आदि। पर शास्त्र में 'श्रुति' का शब्दार्थ ऐसा दिया गया है कि—

“प्रथमः श्रवणात् शब्दः श्रूयते ह्रस्वमात्रकः।

सा श्रुतिः संपरिज्ञेया स्वरावयव लक्षणा ॥”

इसका तात्पर्य यह है कि श्रुति ह्रस्वमात्रावाली है। श्रुति स्वर का अवयव या अंग है। अर्थात् हर एक स्वर दो-चार श्रुतियों से बना हुआ है। इस श्लोक का यह भाग 'प्रथमः श्रवणात् शब्दः' कुछ दुरूह-सा है। इसका अर्थ यह है कि एक शब्द को गुनते

समय हमें जो पहला छोटा भाग सुनाई पड़ता है, वही 'श्रुति' कहलाता है। क्योंकि लगातार सुनाई पड़ने के कारण वह 'श्रुति' रूप छोड़कर स्वररूप लेता है।

हमारे शास्त्र में कहा गया है कि एक स्थायी (मप्तक) में २२ श्रुतियाँ ही उत्पन्न हो सकती हैं। पर हर एक स्थायी के अन्दर भिन्न-भिन्न रूप में होनेवाली ह्रस्वमात्र शब्दों की संख्या अनन्त है। फिर शास्त्र वाक्य का मतलब क्या है? इन २२ श्रुतियों के बारे में सगीत-रत्नाकर में कुछ विवरण मिलता है। उस ग्रन्थ में २२ श्रुतियों को वीणा में २२ तारों में स्थापित करने का उपाय कहा गया है। उनकी स्थापना का क्रम यों दिया गया है—

.....आदिमा ।  
कार्या मन्द्रतमछवाना द्वितीयोच्चध्वनिर्मनाक् ॥  
स्यान्निरन्तरता श्रुत्योर्मध्ये ध्वन्यन्तराश्रुतेः ।'

—सगीत रत्नाकर, १।३।१२।

इसका तात्पर्य है कि पहले तार में यथामभव नीची श्रुति का स्थापन करना। पहली श्रुति से तनिक उच्च श्रुति को दूसरे तार में स्थापन करना चाहिए। इन दोनों श्रुतियों के बीच में अगर और एक तार बजाया जाय, तो वह ध्वनि कान में नहीं पड़नी चाहिए। इस बात पर हमें जरा विचार करना आवश्यक है कि दो श्रुतियों के बीच में तीसरी ध्वनि का श्रवण नहीं होना चाहिए। यहाँ 'ध्वनि विज्ञान' हमें सहारा दे सकता है। दो तारों में होनेवाली ध्वनियों में अगर थोड़ी भिन्नता रहती है, तो दोनों को बजाने समय दोनों शब्द अलग-अलग नहीं सुनाई पड़ते हैं। पर दोनों मिलकर ऊँचे और नीचे बदलनेवाला एक शब्द सुनाई पड़ता है। इसे पाश्चात्य वैज्ञानिक परिभाषा में 'बीट्स' (Beats) कहते हैं। दोनों तारों की ध्वनियाँ जितना निकट होती हैं उतना विलंब 'बीट्स' होते हैं। दोनों ध्वनियाँ एक रूप हो जायँ तो 'बीट्स' नहीं होते। इसी तरह दोनों ध्वनियों की दूरी को अधिक करते जायँ, तो 'बीट्स' वेग से होने लगते हैं। पर ऐसा होते-होते एक नियत दूरी पर बीट्स रुक जाते हैं। इससे यह बात निश्चित होती है कि दो श्रुतियों के बीच का अन्तर नियमित दूरी को पार न करे, तभी 'बीट्स' सुनाई पड़ता है। जिस दूरी में 'बीट्स' रुक जाता है उसी को हमारे शास्त्रों में दो श्रुतियों का अन्तर माना गया है। एक स्थायी में २२ ऐसी ही श्रुतियों को ही उत्पन्न किया जा सकता है। यही बाईस श्रुतियों का तत्त्व है।

### श्रुतियों में स्वरस्थानों का निदर्शन

दो समान नाद देनेवाली दो वीणाओं पर हर एक में २२ तारों की स्थापना करनी

चाहिए। फिर इनमें, अब बतायी हुई रीति से, दोनों वीणाओं में समान स्वर की ३२ श्रुतियों को स्थापित करना चाहिए। इनमें एक वीणा में श्रुतिवा गान्धार रहनी है। उसे 'ध्रुव वीणा' नाम दे सकते हैं। और दूसरी वीणा में श्रुतियों का क्रम इस प्रकार होगा कि उसका नामकरण 'चलवीणा' किया जा सकता है।

चलवीणा में दूसरे तार की श्रुति को ध्रुववीणा के पहले तार की श्रुति के समान (उतारकर अर्थात् शिथिल करके) करना है। इस तरह क्रम में चलवीणा के हर तार की श्रुति को ध्रुववीणा के आगे के तार की श्रुति के समान करने के लिए उतारना है। अब ध्रुववीणा के स्वरों से चलवीणा के स्वर एक श्रुति नीचे होंगे हैं। इसी तरह पहली उतारी हुई चलवीणा की हर एक श्रुति को उसके आगे की श्रुति के समान नीचा करना है। अब ध्रुववीणा के स्वरों से चलवीणा के स्वर २ श्रुति नीचे होंगे हैं। इसी प्रकार गान्धार का कथन है कि गान्धार का स्वरस्थान ऋषभ के स्वरस्थान से दो श्रुति ऊँचा है।

इसलिए चलवीणा का गान्धार ध्रुववीणा के ऋषभ के समान रहना चाहिए। अब इन दोनों वीणाओं के गान्धार और ऋषभ तार बजाये जायें, तो इस बात का निदर्शन होता है। इसी प्रकार चलवीणा का निषाद ध्रुववीणा के धैवत के समान रहता है।

इसी तरह तीसरी बार चलवीणा की श्रुतियों को और एक श्रुति नीचा करना चाहिए। तब चलवीणा के स्वर ध्रुववीणा के स्वरों से तीन श्रुति नीचे होंगे हैं। इसी कारण चलवीणा के ऋषभ और धैवत, ध्रुववीणा के पड्ज और पञ्चम के समान रहते हैं। इससे इस बात का निदर्शन होता है कि ऋषभ और धैवत, पड्ज और पञ्चम से तीन श्रुतियों से ऊँचे हैं।

अगर इसी तरह चलवीणा के स्वरों को और एक श्रुति नीचा किया जाय, तो चलवीणा के पञ्चम और पड्ज, ध्रुववीणा के मध्यम और निषाद के समान रहते हैं। और चलवीणा का मध्यम ध्रुववीणा के गान्धार के समान होता है। क्योंकि पड्ज, मध्यम, पञ्चम—इन तीनों स्वरों में चार श्रुतियाँ हैं। इनके स्वरस्थान क्रमशः नि, ग, म स्वरों से चार श्रुति ऊँचे हैं।

### स्वरों में रञ्जन का रहस्य

स्वर का निजी अर्थ ग्रन्थों में ऐसा दिया गया है—

‘श्रुत्यनन्तरभावी यः शब्दोज्जुरणनात्मकः।

स्वतो रञ्जयते श्रोतुश्चित्तं स स्वर ईर्यते ॥’

इस श्लोक में स्वर का लक्षण ऐसा कहा है—(१) श्रुतियों को लगातार उत्पन्न कराने से स्वर की उत्पत्ति होती है।

(२) शब्द का अनुरणन रूप ही 'स्वर' कहलाता है। अर्थात् हरएक शब्द में, आहृति के बाद होनेवाला शब्द, लहरो के क्रम से उत्पन्न होकर फिर क्रम से लीन हो जाता है। इसका नाम 'अनुरणन' है। अनुरणन ही स्वर का मुख्य स्वरूप है। क्योंकि अनुरणन में स्वरगत श्रुतियों का प्रकाशन होता है।

(३) हरएक स्वर, दूसरे स्वर की सहायता के बिना स्वयं रञ्जक है।'

एक स्वर में अगर रञ्जन देखना है, तो क्रमशः प्रसाद और दीप्ति के साथ स्वरों का उच्चारण करना आवश्यक है। रेल के इंजिन की सीटी की तरह प्रसाद और दीप्ति के बिना उच्चारण करे, तो उसमें रञ्जन नहीं रहता, अतः वह स्वर कहलाने योग्य भी नहीं होता।

हरएक श्रुति और हरएक स्वर का निश्चित रसभाव है। भाव के अनुसार २२ श्रुतियों को ५ जातियों में बाँटा गया है। जातियों को दीप्ता, आयता, करुणा, मृदु और मध्या नाम दिये गये हैं। इसके अलावा प्रत्येक जाति की श्रुतियों को उनके विशिष्ट भाव के कारण अलग-अलग नाम दिया गया है। २२ श्रुतियों का नाम ऐसा है—

श्रुति	श्रुति का नाम	जाति
१	तीव्रा	दीप्ता
२	कुमुद्वती	आयता
३	मन्दा	मृदु
४	छन्दोवती	मध्या स
५	दयावती	करुणा
६	रञ्जनी	मध्या
७	रतिका	मृदुः रि
८	रौद्री	दीप्ता

१. श्रुति और स्वर का भेद प्राचीन ग्रन्थों में सुस्पष्ट बताया गया है। पर पिछले ग्रन्थों में श्रुति और स्वरों के भेद का विवेचन उतना स्पष्ट नहीं है। नाट्यशास्त्र में बताया गया है कि दो, तीन या चार श्रुतियों से स्वर बनाये हुए हैं। एक ही श्रुति से स्वर बनाया हुआ हो, तो स्वर की 'स्वतो रञ्जकत्व' शक्ति नहीं होती। स्वर का अनुरणनत्व भी सिद्ध नहीं होता। शास्त्र बचन के अनुसार श्रुति स्वरावयव न होकर स्वर ही बन जाती है। यह शास्त्र के विरुद्ध है।

९	क्रोधा	आयता	ग
१०	वर्जिता	दीपता	
११	प्रगाग्निणी	अयता	
१२	प्रीति.	मृदु	
१३	मार्जनो	मध्या	म
१४	क्षिति	मृदु	
१५	रक्ता	मध्या	
१६	सदीपनी	आयता	
१७	आलापिनी	कृष्णा	ग
१८	मदन्ती	कृष्णा	
१९	रोहिणी	आयता	
२०	रम्या	मध्या	घ
२१	उग्रा	दीपता	
२२	क्षोभिणी	मध्या	नि

स्वरप्रयोग में, आवश्यक विशिष्ट भाव के अनुसार स्वरगत श्रुतियों में उम भाव में सम्बन्ध रखनेवाली श्रुति जरा अधिक देर ठहरानी पड़ती है। स्वरों के भी अपने-अपने विशिष्ट रसभाव है। पङ्क और ऋषभ, वीर-अद्भुत और रोद रस प्रधान है। धैवत, वीभत्स और भयानक रस का अभिव्यञ्जक है। गान्धार और निषाद कर्षण रस प्रधान है। मध्यम और पञ्चम ह्रास्य और शृंगार रस प्रधान है।

### वादी, संवादी, अनुवादी और विवादी

प्रायः समान रसभाव देनेवाले दो स्वर पास-पास एक ही स्वरसमूह में रहने पर परस्पर रक्तिवर्धक होते हैं। इसलिए वे परस्पर संवादी स्वर कहलाते हैं। एक का नाम वादी और दूसरे का नाम संवादी है। हमारे काम देनेवाले मुख्य रस देनेवाले स्वर वादी है। प्रायः उन्हींके समान रसभाव देनेवाले स्वर संवादी हैं। हर एक स्वरसमूह के आदि या अन्त में स्वर का संवादी रहने से ही वह स्वरसमूह पूर्ण रञ्जक होता है। जिन दो स्वरों के स्वरस्थान के बीच नौ या तेरह श्रुति अन्तर है, वे ही परस्पर संवादी हैं। संवादी के संवादी में रञ्जन शक्ति कुछ कम रहती है। उनके संवादियों में रक्ति और भी कम रहती है। इस प्रकार होनेवाले द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि संवादियों का नाम अनुवादी है। इसी तरह संवादी के संवादियों को ढूँढ़ते समय दस अनुवादियों के बाद पहले की तरह स्वर फिर भी प्राप्त होते हैं।



अनुवादियों की दूरिया क्रमशः ऐसी ही रहती है—

(१)	४	या	१८
(२)	५	या	१७
(३)	८	या	१४
(४)	१	या	२१
(५)	१०	या	१२
(६)	३	या	१९
(७)	६	या	१६
(८)	७	या	१५
(९)	२	या	२०
(१०)	११		

इनमें पिछले के अनुवादियों में क्रम में रक्ति कम होती है। इनमें २ या २० में रक्ति न होने के अलावा रक्ति का भग भी होता है। इसलिए २ या २० श्रुतियों के आगे रहनेवाले स्वर विवादी है।

**संवादी प्रकृति स्वरों में**

पङ्ज	(४)	के संवादी मध्यम	(१३)	और पञ्चम	(१७)	हैं।
ऋषभ	(७)	का संवादी धैवत	(२०)			
गान्धार	(९)	का संवादी निषाद	(२२)			
मध्यम	(१३)	„ निषाद	(२२)	और पङ्ज	(४)	
पञ्चम	(१७)	„ पङ्ज	(४)			
धैवत	(२०)	„ ऋषभ	(७)			
निषाद	(२२)	„ गान्धार	(९)	और मध्यम	(१३)	

मत्तङ्ग आदि महर्षियों के मत के अनुसार समश्रुति संख्या रखनेवाले स्वर ही संवादी हो सकते हैं। इस मत के अनुसार देखें तो 'मध्यम' और 'निषाद' संवादी नहीं हैं।

हमारे शास्त्रों के अनुसार रागों में वादी राजा है। संवादी मन्त्री है। अनुवादी परिजन है। विवादी शत्रु है।

**प्रकृति स्वर और विकृत या साधारण स्वर**

स्वाद के लिए पङ् रस हैं। ये छः रस अलग-अलग स्वाद के कारण होते हैं, परन्तु रसना उनसे तृप्त नहीं होती। वह और कुछ मिश्र रसों को चाहती है। रंगों

के सात प्रकार हैं। पर हमारी आँखें केवल इन सात रंगों में तृप्त नहीं होती। इनके सम्मिश्रित रंगों का भी प्रकार भेद सुन्दरता की दृष्टि से आवश्यक जान पड़ता है।

इसी तरह, संगीत में भी सात प्रकृति स्वरों से भिन्न रचिवाले रंगों का वर्णन नहीं हुई। कुछ मिश्रित स्वरों की भी आवश्यकता हुई।

मिश्रित स्वरों का जन्म पहले विवादी दोष के परिहार के रूप में हुआ। स्वर-वली में ऋषभ और गान्धार तथा धैवत और निषाद पास-पास आते हैं। पर ये ऋषभ गान्धार परस्पर विवादी हैं और धैवत निषाद भी परस्पर विवादी हैं। इसलिए ऋषभ गान्धार को साथ-साथ उच्चारण करने में रक्तिमत्ता होती है। उसी तरह धैवत निषाद को भी। इसे परिहृत करने के लिए गान्धार और मध्यम को मिश्रित करके एक नये स्वर की उत्पत्ति हुई। उसका नाम 'अन्तरम्भर' है। उसका स्वर-स्थान मध्यम की द्वितीय श्रुति अर्थात् ग्यारहवीं श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ ८, ९, १०, ११ हैं। इसी तरह धैवत निषाद के विवादित्व के परिहार के लिए 'काकली' नामक एक नया स्वर उत्पन्न हुआ। स्वर के 'कलत्व' अर्थात् अव्यक्त मधुरता के कारण इसका 'काकली' नाम पड़ा। इसका स्वरस्थान पट्टज की द्वितीय श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ २१, २२, १, २ हैं। इस तरह के मिश्रित स्वरों का नाम साधारण या विकृत स्वर है। कालान्तर और देशान्तर में कुछ और विकृत स्वरों की उत्पत्ति हुई है। इनमें काकली स्वर के स्वरस्थान को एक श्रुति नीचा करके 'कैशिकी' नाम का एक स्वर उत्पन्न हुआ है। इन काकली व कैशिकी स्वरों का अंतर केसमाद्य गानों अतिस्वल्प है। इसलिए इसका नाम कैशिकी पड़ा। उसका स्वरस्थान पट्टज की प्रथम श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ २१, २२, हैं। इसी तरह अन्तरगान्धार के स्वरस्थान को भी एक श्रुति नीचा करके साधारण गान्धार नामक एक नया स्वर उत्पन्न हुआ। इसका स्वरस्थान दसवीं श्रुति है। स्वरगत श्रुतियाँ ८, ९, १० हैं। पट्टजस्वर का स्वरस्थान एक श्रुति नीचा करके च्युतपट्टज नाम का एक विकृत स्वर हुआ। इसी तरह च्युतमध्यम भी मध्यम स्वरस्थान की एक श्रुति नीची करके हुआ।

मध्यमग्रामीय पञ्चम और धैवत, तथा काकली और कैशिकी निषाद, अन्तर एव साधारण गान्धार ये पहले उत्पन्न विकृतस्वर हैं। बाद में एक श्रुति को मिलाकर चतुःश्रुति ऋषभ का जन्म हुआ; और ऋषभस्वर से गान्धार की दो श्रुतियों को मिलाकर पञ्चश्रुति ऋषभ भी हुआ। और मध्यम की प्रथम श्रुति को भी मिलाकर षट्श्रुति ऋषभ भी हुआ। इसी तरह धैवत में भी चतुःश्रुति धैवत, पञ्चश्रुति धैवत और षट्श्रुति धैवत भी उत्पन्न हुए। ये सब विकृतस्वर कर्नाटक और हिन्दुस्थानी संप्रदायों में अब भी इस्तेमाल किये जाते हैं। परन्तु इनके नाम में आज के कर्नाटक सम्प्रदाय

मे थोड़ा अन्तर है, तो हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय के स्वरों के नामों में अधिक अन्तर है।

स्वरस्थान श्रुति	प्राचीन नाम	कर्नाटक सम्प्रदाय	हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय
१	कैशिकी या साधारण निपाद <sup>१</sup>	कैशिकी निषाद (षट्श्रुति धैवत)	कोमलतर निषाद
२	काकली निषाद	—	कोमल निषाद
३	च्युतपङ्ज	काकली निषाद	शुद्ध निषाद
४	पङ्ज (प्रकृति)	पङ्ज	पङ्ज
५	—	—	—
६	—	—	—
७	ऋषभ (प्रकृति)	शुद्ध ऋषभ	कोमल ऋषभ
८	—	चतुःश्रुति ऋषभ	शुद्ध ऋषभ
९	गान्धार (प्रकृति)	शुद्ध गान्धार (पञ्च- श्रुति ऋषभ)	(तीव्र ऋषभ) अति कोमलतर गान्धार
१०	साधारण गान्धार	साधारण गान्धार (षट्श्रुति ऋषभ)	कोमलतर गान्धार
११	अन्तर गान्धार	—	कोमल गान्धार
१२	च्युत मध्यम	अन्तर गान्धार	शुद्ध गान्धार
१३	मध्यम (प्रकृति)	शुद्ध मध्यम	शुद्ध मध्यम
१४	—	—	—
१५	—	—	—
१६	मध्यम ग्राम पञ्चम	प्रतिमध्यम	तीव्रमध्यम
१७	पञ्चम (प्रकृति)	पञ्चम	पञ्चम
१८	—	—	—
१९	—	—	—
२०	धैवत (प्रकृति)	शुद्ध धैवत	कोमल धैवत
२१	—	चतुःश्रुति धैवत	शुद्ध धैवत
२२	निपाद (प्रकृति) <sup>२</sup>	शुद्ध निपाद (पञ्च- श्रुति धैवत)	अति कोमलतर निपाद

१. कर्नाटक सम्प्रदाय में प्रथम श्रुति में स्थान रखनेवाले स्वर को ही कैशिकी निषाद कहते हैं। पर कुछ रागों में द्वितीय श्रुति पर स्थित स्वर भी प्रयुक्त किया जा रहा है। उसका अलग नाम नहीं है। उसे भी कैशिकी निषाद ही कहते हैं। इसी तरह गान्धार में भी १०, ११ दोनों श्रुतियों में स्थान रखनेवाले स्वरों को भी साधारण गान्धार ही कहते हैं।

२. इन स्वरों के अलावा 'रत्नाकर' में अच्युत षड्ज, अच्युत मध्यम, साधारण

### स्वरस्थानों का निश्चय करने का मार्ग

स्वरों के उच्चारण को सुनने से स्वरस्थानों का निर्धारण करना संभव नहीं है, परन्तु निश्चय करने का एक सुलभ मार्ग यह है कि वादी एवं गायत्री स्वरों के सापेक्ष स्वरस्थानों को निश्चित करना चाहिए। कर्नाटक पद्धति, हिन्दुस्थानी पद्धति, पाश्चात्य पद्धति इन तीनों पद्धतियों के प्रयोग में आनेवाले स्वरों का श्रृंगस्थान और दो स्वरों के बीच के अन्तर—इन्हें निश्चित करने के लिए वादी गायत्री तत्त्व की बड़ी आवश्यकता है। इनके बारे में प्रचलित सिद्धान्त का भी संशोधन करना आवश्यक है।

षड्ज का स्थान तीनों सम्प्रदायों में चौथी श्रुति ही है। मध्यम का स्थान उसमें ९ श्रुतियों के आगे है। इसलिए उसका स्थान १३ वीं श्रुति है। पञ्चम का स्थान षड्ज से १३ श्रुतियों के आगे है। इसलिए इसका स्थान १७ वीं श्रुति है। यद्यपि तीनों पद्धतियों में समान है।

पञ्चम से उसके सवादी ऋषभ का स्थान निश्चित कर सकते हैं। ऋषभ का स्थान पञ्चम से ९ श्रुतियों के नीचे है। अर्थात् इस ऋषभ का स्थान आठवीं श्रुति है। कर्नाटक पद्धति में ऋषभ के चार भेद हैं। प्राचीन काल के प्रकृति ऋषभ का शुद्ध ऋषभ कहते हैं। उसका स्थान शास्त्रों के अनुसार सातवीं श्रुति है। उसमें उच्च ऋषभ को चतुःश्रुति ऋषभ कहते हैं। और उससे उच्च ऋषभ को पञ्चश्रुति ऋषभ कहते हैं। और भी ऊँचे ऋषभ को षडश्रुति ऋषभ कहते हैं। पञ्चम का संवादी होने वाला ऋषभ, शंकराभरण राग में प्रयोग किये जानेवाला चतुःश्रुति ऋषभ भी है। इसलिए कर्नाटक पद्धति में ८ वीं श्रुति में स्थान रखनेवाले ऋषभ का नाम चतुःश्रुति ऋषभ है। इसका उदाहरण शंकराभरण में ऋषभ से शुरु होकर पञ्चम में समाप्त होनेवाली (री, गा, मपा) रक्तिदायक पकड़ है। हिन्दुस्थानी पद्धति में इस स्वर का नाम शुद्ध ऋषभ है। हिन्दुस्थानी पद्धति के सारङ्ग राग में ऋषभ पञ्चम का संवादी है। उसका नाम उस पद्धति में शुद्ध ऋषभ है।

ऋषभ, साधारण पञ्चम नामक चार विकृत स्वर भी दिये गये हैं। अच्युत षड्जषड्ज स्वर की तृतीय और चतुर्थ श्रुतियों से बना हुआ है। उसका स्वरस्थान षड्ज की चतुर्थ श्रुति ही है। इस तरह अच्युत मध्यम भी मध्यम की तृतीय और चतुर्थ श्रुतियों से बना हुआ है। साधारण ऋषभ ४, ५, ६, ७ श्रुतियों से बना हुआ है। स्वरस्थान सातवीं श्रुति है। साधारण पञ्चम मध्यमग्राह्य में १३, १४, १५, १६ श्रुतियों से बना हुआ है। स्वरस्थान १६वीं श्रुति है। ये नाम अब प्रचार में नहीं हैं।

पाश्चात्य पद्धति में सुप्रसिद्ध मेल का नाम है 'डायटॉनिक स्केल' (Diatonic Scale) । स्वरों के नाम C, D, E, F, G, a, b, c, हैं । उसमें शुद्ध रूप स्वरों को 'नेचुरल' कहते हैं । तीव्रस्वर को 'शार्प' (sharp) और कोमलस्वर को 'फ्लैट' (flat) कहते हैं । उनके चिह्न 'H' और 'b' हैं ।

पाश्चात्य पद्धति में विकृत या शार्प और फ्लैट की उत्पत्ति ऐसी होती है कि 'डायटॉनिक स्केल' के हर एक स्वर को उसके 'पञ्चम भाव' (Dominant or Fifth) के अनुसार चढ़ाने से एक विकृत स्वर उत्पन्न होता है । इसी तरह दूसरी बार स्वरों को पञ्चम भाव करने से दूसरा विकृत स्वर उत्पन्न होता है । इस तरह सात 'शार्प' (sharp) स्वरों की उत्पत्ति होती है । इसी तरह मध्यम भाव<sup>३</sup> करने से सात 'फ्लैट' (flat) स्वरों की उत्पत्ति होती है । यही पाश्चात्य सम्प्रदाय

### १. पञ्चम भाव से तीव्र स्वरों की उत्पत्ति

स्वर	—	C	D	E	F	G	a	b	
स्वरस्थान	—	4	8	12	13	17	21	25(3)	
पहली दफा	—	17	21	25	4	8	12	<u>16</u>	—F <sup>H</sup>
दूसरी दफा	—	8	12	<u>16</u>	17	21	25	<u>7</u>	C <sup>H</sup>
तीसरी दफा	—	21	25	<u>7</u>	8	12	<u>16</u>	<u>20</u>	G <sup>H</sup>
चौथी दफा	—	12	<u>16</u>	<u>20</u>	21	25	<u>7</u>	<u>11</u>	D <sup>H</sup>
पाँचवीं दफा	—	25	<u>7</u>	<u>11</u>	12	<u>16</u>	<u>20</u>	<u>2</u>	a <sup>H</sup>
छठीं दफा	—	<u>16</u>	<u>20</u>	<u>2</u>	25	<u>7</u>	<u>11</u>	<u>15</u>	E <sup>H</sup>
सातवीं दफा	—	<u>7</u>	<u>11</u>	<u>15</u>	<u>16</u>	<u>20</u>	<u>2</u>	<u>6</u>	b <sup>H</sup>

### २. मध्यम भाव के अनुसार चढ़ाने से कोमल स्वरों की उत्पत्ति

C	D	E	F	G	a	b	
4	8	12	13	17	21	25(3)	
13	17	21	<u>22</u>	4	8	12	b <sup>b</sup>
<u>22</u>	4	8	<u>9</u>	13	17	21	E <sup>b</sup>
<u>9</u>	13	17	<u>18</u>	<u>22</u>	4	8	a <sup>b</sup>
<u>18</u>	<u>22</u>	4	<u>5</u>	<u>9</u>	13	17	D <sup>b</sup>
<u>5</u>	<u>9</u>	13	<u>14</u>	<u>18</u>	<u>22</u>	4	G <sup>b</sup>
<u>14</u>	<u>18</u>	<u>22</u>	<u>23(1)</u>	<u>5</u>	<u>9</u>	13	C <sup>b</sup>
<u>23</u>	<u>5</u>	<u>9</u>	<u>10</u>	<u>14</u>	<u>18</u>	<u>22</u>	F <sup>b</sup>

मे विकृतस्वरो का उत्पत्ति विवरण है। इस पद्धति में ८ वीं श्रुति ऋषभ का 'डी' नेचुरल ('D' natural) कहते हैं।

इस ऋषभ का सवादी धैवत है। उसका स्थान २१ वीं श्रुति है। उसका नाम कर्नाटक संप्रदाय में चतुःश्रुति धैवत है। यह स्वर शकाराभरण राग में है। हिन्दुस्थानी पद्धति में उसका नाम शुद्ध धैवत है। राग मारङ्ग में शुद्ध ऋषभ और शुद्ध ऐशानवादी संवादी है। पाश्चात्य सम्प्रदाय में इस धैवत का नेचुरल ए (Natural 'A') कहते हैं।

धैवत का सवादी गान्धार है। इस गान्धार का स्थान १२ वीं श्रुति है। अर्थात् मध्यम से एक श्रुति नीचे है। इन धैवत और गान्धार का वादी संवादी रागनेत्र राग हिन्दुस्थानी, कर्नाटक दोनों पद्धतियों में है। कर्नाटक पद्धति के राग 'मोहनम' को हिन्दुस्थानी पद्धति में 'भूप' कहते हैं। इन दोनों रागों में गान्धार और ऐशानवादी सवादी है। इस गान्धार को अब कर्नाटक पद्धति में अन्तरगान्धार कहते हैं। प्राचीन सम्प्रदाय में इस स्वर का नाम च्युत मध्यम है। उसमें एक श्रुति नीचे स्थान रागनेत्राले स्वर को ही अन्तरगान्धार नाम दिया गया था। हिन्दुस्थानी पद्धति में उसका नाम शुद्ध गान्धार कहते हैं। पर कई रागों में इस स्वर में एक श्रुति नीचे होनेवाला स्वर भी प्रयोग में है। उसे भी 'शुद्ध गान्धार' कहते हैं। पाश्चात्य सम्प्रदाय में भी यह सन्देह है कि 'E' नेचुरल का स्थान ११ वीं 'की' है या १२ वीं। सन्देह निवर्तन का एक मार्ग यह है। शुद्ध धैवत से एक श्रुति नीचे दूसरा धैवत है। उसका नाम प्राचीन काल में 'प्रकृति धैवत' दिया गया है। हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय में उसका नाम कोमल धैवत है। कर्नाटक सम्प्रदाय में उसे 'शुद्ध धैवत' कहते हैं। उसका स्थान बीगवी श्रुति है। इसके संवादीस्वर का स्थान ११ वीं श्रुति होना चाहिए। इसलिए इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कोमल धैवत और गान्धार के जिन रागों में वादी-सवादी है, उनमें गान्धार का स्थान ११ वीं श्रुति है और २१ वीं श्रुति के अर्थात् हिन्दुस्थानी पद्धति के शुद्ध धैवत और गान्धार जहाँ वादी-संवादी हैं, वहाँ उन रागों में गान्धार का स्थान बारहवीं श्रुति है।

बारहवीं श्रुति के अन्तरगान्धार का संवादी, तीसरी श्रुति में स्थान रागनेत्राला निषाद स्वर है। उसका नाम प्राचीन काल में च्युतपड्ड था। अब तो इसका नाम कर्नाटक पद्धति में काकली निषाद, हिन्दुस्थानी पद्धति में शुद्ध निषाद और पाश्चात्य पद्धति में नेचुरल 'बी' (Natural 'B') है। उसके स्वरस्थान के बारे में नेचुरल ई (Natural 'E') की तरह सदेह है कि उसका स्थान तीसरी या दूसरी श्रुति है।

तीसरी श्रुति के इस निषाद का संवादी, पञ्चम से एक श्रुति नीचे का स्वर है।

इसका नाम प्राचीन काल में च्युत पञ्चम, आधुनिक कर्नाटक पद्धति में प्रतिमध्यम और हिन्दुस्थानी पद्धति में तीव्र मध्यम है। पाश्चात्य पद्धति में इसका नाम 'एफ' शार्प ('F' sharp) है।

उस मध्यम का सवादी प्राचीन काल का शुद्ध ऋषभ है। उसका स्थान सातवीं श्रुति है। उसे कर्नाटक पद्धति में शुद्ध ऋषभ और हिन्दुस्थानी पद्धति में कोमल ऋषभ कहते हैं। पाश्चात्य पद्धति में इसका नाम 'सी' शार्प ('C' sharp) है।

इस ऋषभस्वर का सवादी प्राचीन काल का शुद्ध धैवत है। उसका नाम कर्नाटक पद्धति में शुद्ध धैवत, हिन्दुस्थानी पद्धति में कोमल धैवत और पाश्चात्य पद्धति में 'जी' शार्प ('G' sharp) है। उसका सवादी प्राचीन कालीन अन्तरगान्धार है। इनका विवरण अन्तरगान्धार के स्वर स्थान की चर्चा में बताया गया है। ग्यारहवीं श्रुति में स्थान रखनेवाले गान्धार का सवादी प्राचीन काल का काकली निषाद है। अब कर्नाटक पद्धति में इसका अलग नाम नहीं है। हिन्दुस्थानी पद्धति में इसे भी शुद्ध निषाद कहते हैं। पाश्चात्य पद्धति में इसका नाम 'ए' शार्प ('A' sharp) है।

उसका सवादी १५ वीं श्रुति का होना चाहिए। इसका प्रयोग केवल पाश्चात्य संगीत में है। इसका नाम 'ई' शार्प ('E' sharp) है।

इसका सवादी ६ वीं श्रुति में है। इसका प्रयोग सिर्फ पाश्चात्य संगीत में ही है। इसका नाम 'बी' शार्प ('B' sharp) है।

उसका सवादी १९ वीं श्रुति में होना चाहिए। किसी भी पद्धति में इसका प्रयोग नहीं दिखाई पड़ता है। उसका सवादी प्राचीन काल का कैशिकी या साधारण गान्धार है। उसका स्थान १० वीं श्रुति है। अब इसे कर्नाटक पद्धति में साधारण गान्धार कहते हैं। इस पद्धति में प्राचीन काल के अन्तरगान्धार का अलग नाम प्रचलित न होने के कारण ग्यारहवीं श्रुति में स्थान रखनेवाले स्वर को भी साधारण गान्धार ही कहा जाता है। हिन्दुस्थानी पद्धति में इसका नाम कोमलतर गान्धार है। पाश्चात्य पद्धति में इसका नाम 'एफ' फ्लैट ('F' flat) है।

इसके आगे भी सवादियों को ढूँढकर जायें तो पहले आये हुए स्वरस्थान ही मिलते हैं। २२ श्रुतियों की उत्पत्ति कर दिखाने के लिए यह भी एक मार्ग है।

दो स्वर परस्पर सवादी हैं या नहीं इसके निश्चय का उपाय जान लेना आवश्यक है। दोनों स्वरों में एक से आरम्भ करके दूसरे स्वर में समाप्त होनेवाली एक पकड़ या स्वरावली को गाते समय अन्तिम स्वर पर खड़े होते समय रञ्जन होता तो यह निश्चय होता है कि वे दोनों स्वर परस्पर सवादी हैं। स्वरों के परस्पर सवादित्व के निश्चय हो जाने से हमें यह ज्ञात हो जाता है कि वे स्वर एक दूसरे से ९ या १३ श्रुतियों के

अन्तर के हैं। इसी तरह निर्धारित किये हुए स्वरस्थान में अनिर्धारित स्वरस्थान का निश्चय कर सकते हैं।

### कर्नाटक सम्प्रदाय में वादी-संवादी

वादी	संवादी
षड्ज (४)	शुद्धमध्यम और पञ्चम (१३ और १७)
शुद्ध ऋषभ (७)	प्रतिमध्यम और शुद्ध धैवत (१६ और २०)
चतुःश्रुति ऋषभ (८)	पञ्चम और चतुःश्रुति धैवत (१७ और २१)
पञ्चश्रुति ऋषभ (९)	पञ्चश्रुति धैवत (२२)
शुद्ध गान्धार (९)	शुद्ध निषाद (२२)
साधारण गान्धार (१०)	कैशिकी निषाद (१)
अनामी गान्धार (११)	कैशिकी निषाद (२)
अन्तरगान्धार (१२)	चतुःश्रुति धैवत और काकली निषाद (२१ और ३)
शुद्ध मध्यम (१३)	शुद्ध निषाद और षड्ज (२२ और ४)
प्रतिमध्यम (१६)	काकली निषाद और शुद्ध ऋषभ (३ और ७)
पञ्चम (१७)	षड्ज और चतुःश्रुति ऋषभ (४ और ८)
शुद्ध धैवत (२०)	शुद्ध ऋषभ (७)
चतुःश्रुति धैवत (२१)	चतुःश्रुति ऋषभ और अन्तरगान्धार (८ और १२)
शुद्ध निषाद (२२)	शुद्ध गान्धार और शुद्ध मध्यम (९ और १३)
कैशिकी निषाद (१)	साधारण गान्धार (१०)
काकली निषाद (३)	अन्तर गान्धार (१२) और प्रतिमध्यम (१६)

### हिन्दुस्थानी सम्प्रदाय में वादी-संवादी

वादी	संवादी
षड्ज (४)	शुद्ध मध्यम और पञ्चम (१३ और १७)
कोमल ऋषभ (७)	तीव्र मध्यम और कोमल धैवत (१६, २०)
शुद्ध ऋषभ (८)	पञ्चम और शुद्ध धैवत (१७, २१)
तीव्र ऋषभ (९)	तीव्र धैवत (२२)
अति कोमलतर गान्धार (९)	अति कोमलतर निषाद (२२)



कोमलतर गान्धार (१०)	कोमलतर निपाद (१)
कोमल गान्धार (११)	कोमल धैवत और शुद्ध निपाद (२० और २)
शुद्ध गान्धार (१२)	शुद्ध धैवत और शुद्ध निपाद (२१ और ३)
शुद्ध मध्यम (१३)	अतिकोमलतर निपाद और पङ्ज (२२ और ४)
तीव्र मध्यम (१६)	शुद्ध निपाद और कोमल ऋषभ (३ और ७)
पञ्चम (१७)	पङ्ज और शुद्ध ऋषभ (४ और ८)
कोमल धैवत (२०)	कोमल ऋषभ और कोमल गान्धार (७ और ११)
शुद्ध धैवत (२१)	शुद्ध ऋषभ और शुद्ध गान्धार (८ और १२)
अतिकोमलतर निपाद	अतिकोमलतर गान्धार या तीव्र ऋषभ और
या तीव्र धैवत (२२)	शुद्ध मध्यम (९ और १३)
कोमलतर निपाद (१)	कोमलतर गान्धार (१०)
कोमल निपाद (२)	कोमल गान्धार (११)
शुद्ध निपाद (३)	शुद्ध गान्धार और तीव्र मध्यम (१२ और १६)

१. प्रकृति या शुद्ध स्वर क्या है ? हिन्दुस्थानी शुद्ध स्वर या कर्नाटक शुद्ध स्वर ? यह प्रश्न अब सुलझाना है कि हमारे प्राचीन शास्त्र में कहे हुए प्रकृति या शुद्ध स्वर का रूप क्या है ? स्वर्गीय भातखण्डे जी, जिन्होंने हिन्दुस्थानी पद्धति की विस्तृत रूप से चर्चा कर एक सरल मार्ग का निर्माण किया है, उस से अधिक प्रश्नों को पीछे आनेवाले गवेषकों के द्वारा सुलझाने के लिए छोड़ गये हैं। उनमें यह प्रश्न भी एक है। इसे निर्धारित करने के लिए प्राचीन ग्रन्थों में दिये हुए प्रकृतिस्वरों के लक्षण पर विचार करना आवश्यक है। स्वर लक्षण को स्पष्ट रूप से बतानेवाला प्राचीन ग्रन्थ भरत का नाट्य-शास्त्र है। उसमें प्रकृति स्वरों का लक्षण यों दिया गया है—

“षड्जश्च ऋषभश्चैव गान्धारो मध्यमस्तथा ।  
पञ्चमो धैवतश्चैव निषादः सप्त च स्वराः ॥  
चतुर्विधत्वमेतेषां विज्ञेयं श्रुतियोगतः ।  
वादी चैवाथ संवादी अनुवादी विवाद्यपि ॥”

तत्र यो यत्रांशः स तस्य वादी, ययोश्च नवकत्रयोदश श्रुत्यन्तरे तावन्त्योऽन्यं संवादीनौ। यथा षड्ज मध्यमौ, षड्जपञ्चमौ, ऋषभधैवतौ, गान्धारनिषादौ इति षड्जग्रामे। मध्यमग्रामेऽप्येवमेव षड्जपञ्चमवर्जं पञ्चमऋषभयोश्चात्र संवादः।

कुछ रागों में हम देखने हैं कि सवादी न होनेवाले स्वर भी 'गमक' और 'गम-गुम्फन' नामक क्रिया से सवादी होकर रसितजनक होते हैं। एक स्वर, उमके आगे या पीछे होनेवाला स्वर इन दोनों को एक के बाद दूसरे का वेग में आसानी से उच्चारण करने से 'गमक' होता है। वेग के अनुसार गमकों का अनेक नाम दिये गए हैं। स्वर का उच्चारण करते समय उमके आगे या पीछे के स्वर की छाया का भी भिन्नकर उच्चारण करने को 'स्वरगुम्फन' कहते हैं। इसलिए यह सिद्ध होता है कि गमकों में स्वर-विवेचन का काम बड़ा कठिन है। कई जगहों में अगमक भी है।

अत्र श्लोकः

‘संवादो मध्यमग्रामे पञ्चमस्यर्षभस्य च।

षड्जग्रामे च षड्जस्य संवादः पञ्चमस्य च॥

विवादिनस्तु ये तेषां द्विश्रुति स्वरमन्तरम्’

यथा ऋषभ, गान्धारोर्ध्वत-निषादौ। एवं वादि-संवादि-विवादिषु स्यापितेषु शेषा अनुवादिसंज्ञकाः।

“षड्जश्चतुःश्रुतिर्ज्ञेय ऋषभस्त्रिश्रुतिः स्मृतः।

द्विश्रुतिश्चापि गान्धारो मध्यमश्च चतुःश्रुतिः॥

चतुःश्रुतिः पञ्चमः स्यात् त्रिश्रुतिर्ध्वतस्तथा।

द्विश्रुतिस्तु निषादः स्यात् षड्जग्रामे भवन्ति हि॥

चतुःश्रुतिस्तु विज्ञेयो मध्यमः पञ्चमः पुनः।

त्रिश्रुतिर्ध्वस्तु स्याच्चतुःश्रुतिक एव च॥

निषादषड्जौ विज्ञेयो द्विचतुःश्रुतिसंभवौ।

ऋषभस्त्रिश्रुतिश्च स्यात् गान्धारो द्विश्रुतिस्तथा॥”

—अध्याय २४ श्लोक १९-२६।

इसका तात्पर्य यह है कि स्वर सात हैं—षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत और निषाद।

स्वर चतुर्विध हैं, वादी, संवादी, अनुवादी और विवादी। किसी गाने में प्रधान स्वर वादी है। उससे ९ या १३ श्रुतियों के अन्तर पर रहनेवाला स्वर संवादी है। उदाहरणार्थ ‘स’ और ‘म’, ‘स’ और ‘प’, ‘री’ और ‘ध’, ‘ग’ और ‘नि’ परस्पर वादी संवादी हैं। षड्जग्राम में वादी संवादी का सम्बन्ध ऐसा है। इस तरह मध्यम ग्राम में ‘री’ और ‘प’ वादी संवादी हैं, ‘स’ और ‘प’ नहीं। अन्य स्वरों का संवाद षड्जग्राम के अनुसार

सामगान से संगीत की उत्पत्ति

‘नारदीय शिक्षा’ में सामवेद का और लौकिक संगीत के स्वरों का सम्बन्ध ऐसा बताया गया है कि सामवेद के सप्तस्वर अर्थात् ऋष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ,

ही हैं। उद्धृत श्लोक का अनुवाद यह है—“मध्यम ग्राम में ऋषभ और पञ्चम वादी संवादी हैं।” दो स्वर परस्पर विवादी हैं जिनमें दो श्रुतियों का अन्तर है। उदाहरणार्थ ऋषभ और गान्धार, धैवत और निषाद। संवादी विवादियों का निर्धारण करने से यह निश्चित होता है कि बाकी स्वर परस्पर अनुवादी हैं।

षड्जग्राम में षड्ज की चार श्रुतियाँ हैं। ऋषभ की तीन, गान्धार की दो, मध्यम की चार, पञ्चम की चार, धैवत की तीन और निषाद की दो, मध्यमग्राम में षड्ज की चार, ऋषभ की तीन, गान्धार की दो, मध्यम की चार, पञ्चम की तीन, धैवत की चार, और निषाद की दो श्रुतियाँ हैं।

इन श्लोकों से प्राचीन ग्रन्थों के प्रकृति या शुद्धस्वर का अर्थात् षड्जग्राम स्वर का स्वरूप निश्चित हो सकता है। पहले मध्यम और पञ्चम के बारे में संदेह नहीं है। अब ऋषभ का स्वरूप निश्चय करना है। कहा गया है कि (श्लोक २१) ऋषभ और पञ्चम, मध्यमग्राम में वादी संवादी हैं। मध्यमग्राम का पञ्चम, षड्जग्राम के पञ्चम से एक श्रुति नीचे का है। उसका प्रमाण ‘नाट्यशास्त्र’ में है यथा—

“मध्यम ग्रामे तु श्रुत्यपकृष्टः पञ्चमः कार्यः—मध्यम ग्राम में पञ्चम को एक श्रुति नीचे करना है”—२२वें श्लोक के बाद का गद्य भाग।

यह त्रिश्रुति पञ्चम, मामूली पञ्चम से एक श्रुति कम है। उसका नाम कर्नाटक पद्धति में प्रतिमध्यम है और हिन्दुस्थानी पद्धति में तीव्रमध्यम। यह मध्यमग्राम-पञ्चम ही ऋषभ का संवादी बताया गया है। कर्नाटक पद्धति में ‘पूर्वी कल्याण’ में शुद्ध ऋषभ और प्रतिमध्यम का परस्पर संवादित्व है। इसी तरह हिन्दुस्थानी पद्धति में भी उसी राग में कोमल ऋषभ और तीव्र मध्यम का संवादित्व है। हिन्दुस्थानी पद्धति का शुद्ध ऋषभ तीव्र मध्यम का संवादी नहीं हो सकता। पञ्चम या शुद्ध धैवत का ही संवादी है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन ग्रन्थों में बताया हुआ प्रकृति या शुद्ध ऋषभ हिन्दुस्थानी पद्धति का कोमल ऋषभ अर्थात् कर्नाटक पद्धति का शुद्ध ऋषभ ही है। इससे यह निश्चित होता है कि कर्नाटक पद्धति में शुद्ध ऋषभ का नामकरण ठीक है। इसी तरह शुद्ध ऋषभ का संवादी शुद्ध धैवत भी कर्नाटक पद्धति में ठीक है। गान्धार का अब विचार करना है। कहा गया है कि गान्धार, ऋषभ का विवादी (श्लोक २२ के बाद का गद्य भाग) है। इस कारण शुद्ध ऋषभ और शुद्ध गान्धार का प्रयोग साथ-

मन्द्र और अतिस्वर्य क्रमशः लौकिक स्वरों में ये 'म ग रि म नि प ध प' के समान हैं। पर सामगान करते समय उन स्वरों का स्वरस्थान हिन्दुस्थानी पद्धति के कान्ठा पाठ अर्थात् कर्नाटक पद्धति के खरहरप्रिया मेल का 'म ग रि म नि प ध प' के समान होता है। इनका समन्वय करना आवश्यक है।

पहले हमें याद रखना चाहिए कि काफी बाद या खरहरप्रिया मेल के बाद स्वरों से बनाया हुआ है, क्योंकि उसके ऋषभ, गान्धार, धैवत और निषाद ये नाम स्वर प्रकृति स्वरों से ऊँचे हैं। अर्थात् प्रकृति ऋषभ सातवीं श्रुति पर है, परन्तु उस बाद का ऋषभ ८ वीं श्रुति पर है। प्रकृति गान्धार ९ वीं श्रुति पर है, उस बाद का मेल का गान्धार १० वीं श्रुति पर है। प्रकृति धैवत २० वीं श्रुति पर है, परन्तु उस बाद का धैवत २१ वीं श्रुति पर है। प्राचीन काल में काकड़ी और अन्य—ये शक्ति धारण ही प्राचीन ग्रन्थों में बताये गये हैं।

साथ नहीं हो सकता। पर हिन्दुस्थानी पद्धति में शुद्ध गान्धार कोमल ऋषभ के साथ बहुत से रागों में आता है। अतः प्राचीन ग्रन्थों का शुद्ध गान्धार हिन्दुस्थानी पद्धति का शुद्ध गान्धार नहीं हो सकता। कर्नाटक पद्धति के शुद्ध गान्धार का स्थान चतुःश्रुति ऋषभ के ऊपर और साधारण गान्धार के नीचे है। अर्थात् हिन्दुस्थानी पद्धति के शुद्ध ऋषभ के ऊपर और कोमल गान्धार के नीचे है। उसका नाम कोमलतर गान्धार है। इस गान्धार के साथ कोमल ऋषभ का प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति में नहीं है। कारण, दोनों परस्पर विवादी हैं। इस कारण कर्नाटक पद्धति में भी शुद्ध ऋषभ और शुद्ध गान्धार का प्रयोग साथ-साथ नहीं हो रहा है। इसलिए कर्नाटक पद्धति में ही शुद्ध गान्धार का नामकरण ठीक है। शुद्ध गान्धार के संवादो शुद्ध निषाद का नामकरण भी कर्नाटक पद्धति में ठीक है। कर्नाटक पद्धति में जो स्वर शुद्धस्वर कहे जाते हैं वे ही प्राचीन काल के शुद्धस्वर हैं। परन्तु यह हमें भूलूम नहीं होता कि हिन्दुस्थानी पद्धति में कब और किस कारण से शुद्धस्वरों के नाम बदल गये हैं। केवल यह बताया जा सकता है कि यह नवीन नामकरण १७, १८वीं शताब्दी तक नहीं हुआ था।

१. यः सामगानां प्रथमः स वेणोर्मध्यमः स्वरः। यो द्वितीयः स गान्धारः। तृतीयः स्तवृषभः स्मृतः। चतुर्थः षड्ज इत्याहुः पञ्चमो धैवतो भवेत्। षष्ठो निषादो वक्तव्यः सप्तमः पञ्चमः स्मृतः। नारदीय शिक्षा प्रथमप्रकरणे, खण्डिका ५, श्लो० १—२। इन श्लोकों में धैवत और निषाद स्थान विवर्तित हैं।

दूसरी बात यह है कि सामगान करते समय हमे खरहरप्रिया मेल या काफी ठाट की याद नही आती है। परन्तु हिन्दुस्थानी पद्धति के 'पीलू' और कर्नाटक पद्धति के

प्रकृतिस्वर की श्रुतियाँ		सामगान मे अवरोह रूप मे रहते समय उनके रूप	बैठने के स्थान	काफी या खरहरप्रिया के स्वरो की	
				श्रुतियाँ	बैठने के स्थान
म	१०	१३			
	११	१२		८	
	१२	११		९	
	१३	१०	१०	ग १०	१०
			—	५	—
				६	
ग	८	९		७	
	९	८	८	रि ८	८
रि	५	७	—	१	—
				२	
	६	६		३	
	७	५	५	स ४	४
स	१	४	—		—
	२	३		२१	
	३	२		२२	
	४	१	१	नि १	१
			—	१८	—
				१९	
नि	२१	२२		२०	
	२२	२१	२१	ध २१	२१
			—	१४	—
ध	१८	२०		१५	
	१९	१९		१६	
	२०	१८	१८	प १७	१७
प	१४	१७	—	१०	—
	१५	१६		११	
	१६	१५		१२	
	१७	१४	१४	म १३	१३
			—		—

‘रीतिगौड’ रागों की याद थोड़ी आती है। उन दोनों रागों का पञ्चम गान्धार से शुरू होकर पड़ज में खतम होते हैं। इस पकड़ में रागिन के रहने का कारण आदि और अन्त के स्वर का परस्पर सबादी होना आवश्यक है, परन्तु पञ्चम का गान्धार गान्धार नहीं; मध्यम है। इसलिए यह निश्चय होता है कि उन रागों का गान्धार मध्यम का उद्गार आता है। क्योंकि पड़ज का स्वरस्थान चौथी श्रुति है। उस छोट के गान्धार का स्वरस्थान १० वीं श्रुति है। मध्यम का स्वरस्थान १३ वीं श्रुति है। सबादीद्वय होने के लिए नौ श्रुतियों का अन्तर रहना चाहिए। इसलिए ऐसा दिखाई पड़ता है कि यह गान्धार १३ वीं श्रुति से आरम्भ होकर अवरोह करता हुआ दसवीं श्रुति पर समाप्त होता है। इससे हमें एक विषय की स्फूर्ति होती है कि मध्यम का चार श्रुतियाँ १२, १२, ११, १० इन चारों को अवरोह क्रम में उच्चारण करें, तो उन रागों का गान्धार के समान ध्वनि सुनाई पड़ती है। अतः मध्यम का अवरोह रूप सामगान का प्रथमस्वरूप का रूप ले लेता है। इसी तरह अन्य प्रकृति स्वरों का भी अर्थात् ग, रि, स, नि, ध, प को अवरोह रूप में गाते हैं, तो उनके स्वरस्थान काफी थोड़ा या सरहर्षाप्रया भन्त की रि, स, नि, ध, प, म स्वरों के स्थानों में प्रायः बैठ जाते हैं। अतः हम उस सिद्धान्त पर पहुँच सकते हैं कि सामगान के स्वरों का उनकी श्रुतियों पर अवरोहात्मक रूप में उच्चारण किया जाता है, परन्तु लौकिक स्वर अपनी श्रुतियों के आराहात्मक रूप में उच्चरित होते हैं और ‘नारदीय शिक्षा’ के सामगान स्वरों और लौकिक स्वरों के सम्बन्ध की व्यवस्था ठीक निकलती है।

सामगान स्वरों के उच्चारण की अवरोहात्मक गति सामगान करने समय और ध्यानपूर्वक सुनने पर स्पष्ट दिखाई पड़ेगी।

इससे यह स्पष्ट होता है कि सामगान में प्रकृति स्वरों का ही प्रयोग किया जाता है, परन्तु हर एक स्वर का उच्चारण मार्ग श्रुतियों के अवरोह क्रम में है।

हमारे लौकिक संगीत में ये ही स्वर अपनी श्रुतियों के आरोह क्रम में उच्चारित किये जाते हैं।

## तीसरा परिच्छेद

### वर्णालंकार और गमक

स्वरों मे रञ्जन की उत्पत्ति का साधन

हरएक स्वर स्वतन्त्र रूप मे भी रञ्जक होना चाहिए अन्यथा उसका नामकरण 'स्वर' हो ही नहीं सकता। रञ्जन के लिए अनुरणन, प्रसन्नता और दीप्ति का प्रयोग आवश्यक है। 'दीप्ति' का अर्थ है गभीरता और 'प्रसन्नता' का अर्थ है शान्त होना। इन दोनों के साथ-साथ प्रयोग करने की रीति मे मात भेद है। उनके नाम भी शास्त्रो मे दिये गये हैं।

पहली रीति मे स्वर का उच्चारण प्रसन्नता से शुरू होकर क्रम से गभीर होता है। इसका प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति मे राग 'विहाग' मे है। उस राग मे हरएक स्वर शान्त भाव से शुरू होने के पश्चात् क्रमशः गभीर होकर पुनः शान्त भाव को प्राप्त न करके उसी गभीरता मे स्थिर रहता है। यही रीति कर्नाटक पद्धति मे 'भैरवी' और यदुकुल काम्बोजी रागो मे पायी जाती है। इसका नाम 'प्रसन्नादि' है।

दूसरी रीति मे स्वर का उच्चारण गभीरता के साथ आरम्भ होकर फिर शान्त होता है। इसका प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति मे राग 'मालकोस' मे है। कर्नाटक पद्धति मे कल्याणी राग मे है। इस रीति का नाम है 'प्रसन्नान्त'।

तीसरी रीति मे स्वरों का उच्चारण गभीरता से शुरू कर शान्त अवस्था को प्राप्त होता और पुनः गभीरता मे ही स्थिर रहता है। इसका नाम है 'प्रसन्न मध्यम'। इसका प्रयोग कर्नाटक पद्धति मे शकराभरण और तोड़ी रागो मे और हिन्दुस्थानी पद्धति के राग सिन्धुभैरवी मे है।

चौथी रीति मे स्वरों का उच्चारण प्रसन्नता से आरम्भ होकर गभीर होता हुआ अन्त मे प्रसन्नता को प्राप्त कर लेता है। इसका प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति मे राग 'माङ्ग' और कर्नाटक पद्धति मे 'काम्बोजी' राग मे है। इस रीति का नाम है 'प्रसन्नाद्यन्त'।

पाँचवी रीति मे स्वर का विस्तार होता है। उसका नाम है 'प्रस्तार'। हिन्दुस्थानी पद्धति मे राग गौड़ सारङ्ग के आरोहण में इसका प्रयोग होता है। कर्नाटक पद्धति मे श्रीराग के आरोहण मे भी इसका प्रयोग दिखाई पड़ता है।

छठी रीति में स्वर केवल शान्त हो जाते हैं। इसका नाम है 'प्रसाद'। प्रसाद और प्रसाद दोनों रीतियाँ प्रायः एक ही राग में आती हैं। आरोहण में प्रसाद और अवरोहण में प्रसाद का प्रयोग होता है। प्रसाद रीति का प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति के राग गौड़ सारङ्ग में और कर्नाटक पद्धति के श्रीराग के अवरोहण में किया जा रहा है।

सातवीं रीति में चार-पाँच स्वरों के द्वारा वेग में आरोह या अवरोह करना पड़ता है। इसका नाम 'क्रमविरेचित' है। यह रीति 'यमनकल्याण' के आरोह में और कर्नाटक पद्धति के सहजाना राग के आरोहण में मिलती है।

इन सातों प्रकारों में प्रत्येक राग की एक ही रीति का प्रयोग सब स्वरों में करना चाहिए। परन्तु स्थायी स्वर में ही रीति का स्वरूप स्पष्ट दृश्य पड़ता है। इसी कारण इन रीतियों को 'स्थायी स्वर अलंकार' कहते हैं। गानाक्रिया में एक स्वर में स्थिर रहने को 'स्थायी वर्ण' कहते हैं। 'वर्ण' गानाक्रिया का साधारण नाम है। स्थायी के अलावा, आरोही वर्ण, अवरोही वर्ण और संचारी वर्ण भी गानाक्रिया में हैं। आरोही, अवरोही, संचारी वर्णों में भी अनेक प्रकार के अलंकार हैं।

प्रारम्भिक शिक्षा में ही इन सब अलंकारों का अभ्यास करना चाहिए। उनमें अनेक अलंकार अब भी प्रारम्भिक शिक्षाभ्यास में वर्तमान हैं। जो अलंकार आज के अभ्यास में नहीं हैं, उन्हें भी शिक्षाभ्यास में सम्मिलित करना चाहिए। स्थायी स्वर अलंकारों का इस तरह अभ्यास करना चाहिए कि जिस स्थायी स्वर अलंकार का जिस राग में प्रयोग किया जा रहा हो, उस राग के संचार से उस अलंकार का विकसित, मध्य और द्रुत—इन तीनों कालों में अभ्यास हो जाय। और प्रत्येक राग में प्रयुक्त गीत, वर्ण और चीजों का उस राग के विशिष्ट स्थायी स्वर अलंकार के साथ तीनों कालों में अभ्यास हो जाय।

आरोही, अवरोही और संचारी वर्णों के अलंकार नाट्यशास्त्र और संगीत रत्नाकर में दिये गये हैं। आरोही वर्ण में १३ अलंकार, अवरोही में ५ और संचारी में १४ अलंकार नाट्यशास्त्र में बताये गये हैं, परन्तु संगीत रत्नाकर में आरोही में १२, अवरोही में १२ और संचारी में २५ अलंकार दिये गये हैं। इनके अलावा गाना प्रसिद्ध अलंकारों के नाम भी दिये गये हैं। इन सब अलंकारों का वर्णन मात्र नाट्यशास्त्र में है। संगीत रत्नाकर में उनके उदाहरण भी हैं। आजकल बिना उनके नाम के प्रारम्भिक शिक्षा में उनका अभ्यास किया जा रहा है। कर्नाटक पद्धति में 'मरली वरिस', 'जण्ट वरिस', 'दाट्टु वरिस', सप्तालंकार कहलाते हैं। हिन्दुस्थानी पद्धति में सरगम, मीड, मुरकी, खटका, तान, बोलतान कहते हैं।



### आरोही वर्ण के अलंकार

१. विस्तीर्ण—सा री गा मा पा धा नी
  २. निष्कर्ष—सस - रिरि - गग - मम - पप - धध - निनि,  
गात्रवर्ण—ससस - रिरिरि - गगग - ममम - पपप - धधध - निनिनि,  
सससस - रिरिरिरि - गगगग - मममम - पपपप - धधधध - निनिनिनि ।
  ३. बिन्दु—सा<sub>३</sub>रि<sup>१</sup> - गा<sub>३</sub>म - पा<sub>३</sub>ध - नी<sub>३</sub>स - सा<sub>३</sub>रि ।
  ४. अभ्युच्चय—सगपनिरि ।
  ५. हसित—सा - रीरी - गागागा - मामामामा - पापापापापा - धा धा धा-  
धा धा धा - नीनीनीनीनीनीनी - सासासासासासासा ।
  ६. प्रेक्षित—सरी - रिगा - गमा - मपा - पधा - धनी - निसा ।
  ७. अक्षिप्त—सगा - गपा - पनी - निरी ।
  ८. सधिप्रच्छादन—सरिगा - गमपा - पधनी - निसरी ।
  ९. उद्गीत—सससरिगा - मममपधा - निनिनिसरी ।
  १०. उद्वाहित—सरिरिरिगा - मपपपधा - निसससरी ।
  ११. त्रिवर्ण—सरिगगगा - मपधधधा - निसरिरिरी ।
  १२. पृथग्वेणु—सरिग सरिग सरिग - रिगम रिगम रिगम - मपध मपध मपध  
पधनि पधनि पधनि - धनिस धनिस धनिस ।
- इसी नाम के और इसी क्रम में १२ अवरोही अलंकार हैं ।

### संचारी वर्ण के अलंकार

१. मन्द्रादि—सगरी - रिमगा - गपमा - मधपा - पनिधा - धसनी - निरिसा -  
सधनी - निपधा - धमपा - पगमा - मरिगा - गसरी - रिनिसा ।
२. मन्द्रमध्यम—गसरी - मरिगा - पगमा - धमपा - निपधा - सधनी -  
रिनिसा - सगरी - निरिसा - धसनी - पनिधा - मधपा - गपमा -  
रिमगा - सगरी ।
३. मन्द्रान्त—रिगसा - गमरी - मपगा - पधमा - धनिधा - निसधा - सरिनी -  
सनरी - निधसा - धपनी - पमधा - मगपा - गरिमा - रिसगा ।
४. प्रस्तार—सगा - रिमा - गपा - मधा - पनी - धसा - सधा - निमा -  
धमा - पगा - मरी - गसा ।

१. इसमें 'सा' 'प्लुत' या त्रि-मात्रिक है ।

५. प्रसाद—सरिसा—रिगरी—गमगा—मपमा—पधपा—धनिधा—निधनी—  
सरिसा—सनिसा—निधनी—धपधा—पमपा—मगगा—गरिगा—  
रिमरी—सनिसा ।
६. व्यावृत्त—सगरिमामा—रिमगपारी—गपमधागा—मपधनामा—धनिध-  
सापा—धसनिरीधा—निरिमगानी—मगरिमागा—मधनिधमा—निधध-  
पानी—धमपगाधा—पममरापा—मरिमगामा—मगारिमागा—रिनि-  
सधारी—सधनिपासा ।
७. स्कलित—सगरिममरिमगा—रिमगपममरी—गपमपममगा—मप-  
निनिपधमा—पनिधसमधनिधा—धमनिरिमनिधगा—निरिमगमगानी—  
सधनिपपनिधमा—निपधममधपनी—धमपमपमपम—पममरिमममगा—  
मरिमससगरिमा—मगरिनिनिरिमगा ।
८. परिवर्तक—सगम—रिमपा—गपधा—मधनी—धनिधा—मनिधा—  
निधमा—धपगा—पमरी—मगगा ।
९. आक्षेप—सरिगा—रिमगा—मपधा—पधनी—धनिधा—सनिधा—निध-  
धपमा—पमगा—मगरी—गरिमा ।
१०. बिन्दु—सा<sub>१</sub>रिसा—री<sub>१</sub>गरी—गा<sub>१</sub>मगा—मा<sub>१</sub>पमा—धा<sub>१</sub>निधा—नी<sub>१</sub>गना—  
सा<sub>१</sub>रिसा—नी<sub>१</sub>धनी—धा<sub>१</sub>पधा—पा<sub>१</sub>मपा—गा<sub>१</sub>मगा—री<sub>१</sub>गरी—  
सा<sub>१</sub>निसा ।
११. उद्धाहित—सरिगरी—रिमगगा—गमपमा—मपधपा—पधनिधा—धनि-  
सनी—निसरिसा—सनिधनी—निधपधा—धपमपा—पममगा—मगरिगा—  
गरिसरी—रिसनिसा ।
१२. ऊर्मि—मासमा—पारिपा—धागधा—नोमनी—मापमा—पागपा—  
मानिमा—गाधगा—रीपरी—साममा ।
१३. सम—सरिममगरिसा—रिममपमगरी—गमपधममगा—मपधनिनि-  
धपमा—पधनिससनिधपा—सनिधपपधनिमा—निधमममधनी—मपधम-  
गमपधा—पमगरिरिमपा—मगरिससरिमगा ।
१४. प्रेख—सरीरिसा—रिगागरी—गमामगा—मपापमा—पधाधपा—धनी-  
निधा—निसासनी—सनीनिसा—निधाधनी—धपापधा—पमामपा—मगा-  
गरी—गरीरिगा—रिसासरी—सनीनिसा ।
१५. निष्कूजित—सरिसागसा—रिगरीमरी—गमगापगा—मपमाधमा—पधपा-

- निधा — धनिधासनी — निसनीरिसा — सनिसाधनी — निधनीपधा —  
धपधामपा — पमपागमा — मगमारिगा — रिसरीनिसा ।
- १६ श्येन—सपा — रिधा — गनी — पसा — सपा — निगा — धरी — पसा ।
- १७ क्रम—सरिसरिगसरिगमा — रिगरिगमरिगमपा — गमगमपगमपधा —  
मपमपधमपधनी — पधपधनिपधनिसा — सनिसनिधसनिधप — निधनिधप-  
निधपम — धपधपमधपमगा — पमपमगपमगरी — मगमगरिमगरिसा ।
- १८ उद्धृत्—सरिपमगरी — रिगधपमगा — गमनिधपमा — मपसनिधपा —  
पधरिसनिधा — धनिगरिसनी — निसमगरिसा — सनिमपधनी — निधगमपधा  
— धमरिगमपा — पमसरिगमा — मगनिसरिगा — गरिधनिसरी — रिसप-  
धनिसा ।
१९. रञ्जित—सगरिसगरिसा — रिमगरिमगरी — गपमगपमधा — मधपमधपमा —  
पनिधपनिधपा — धसनिधसनिधा — निरिसनिरिसनी — सगरिसगरिसा —  
सधनिसधनिसा — निपधनिपधनी — धमपधमपधा — पगमपगमपा — मरिगम-  
रिगमा — गसरिगसरिगा — रिनिसरिनिसरी — सधनिसधनिसा ।
- २० सन्निवृत्त प्रवृत्त—सपागमरी — रिधापमगा — गनीधपमा — मसानिधपा —  
परीसनिधा — धगारिसनी — निमागरिसा — समापधनी — निगामपधा —  
धरीगमपा — पसारिगमा — मनीसरिगा — गधानिसरी — रिपाधनिसा ।
२१. वेणु—सासरिमागा — रीरिगपागा — गागमधापा — मामपनीधा — पापध-  
सानी — धाधनिरीसा — सासनिपाधा — नीनिधमापा — धाधपगामा —  
पापमरीगा — मामगसारी — गागरिनीसा ।
२२. ललितस्वर—सरिमरिसा — रिगपगरी — गमधमगा — मपनिपमा — पधस-  
धपा — धनिरिनिधा — निसगसनी — सरिमरिसा — सनिपनिसा —  
निधमधनी — धपगपधा — पमरिमपा — मगसगमा — गरिनिरिगा — रिसध-  
सरी — सनिपनिसा ।
२३. ह्रँकार—सरिस — सरिगरिस — सरिगमगरिस — सरिगमपमगरिस —  
सरिगमपधपमगरिस — सरिगमपधनिधपमगरिस — सरिगमपधनिसनिधप-  
मगरिस — सनिस — सनिधनिस — सनिधपधनिस — सनिधपमगमपधनिस —  
सनिधपमगरिमपधनिस — सनिधपमगरिसरिगमपधनिस ।
२४. ह्लादमान—सगरिसा — रिमगरी — गपमगा — मधपमा — पनिधपा —  
धसनिधा — निरिसनी — सगरिसा — सधनिसा — निपधनी — धमपधा —  
पगमपा — मरिगमा — गसरिगा — रिनिसरी — सधनिसा ।

२५. अवलोकित—गममामरिसा—रिमपागरी—गमपा रमगा—मरनीनिरमा—  
सधपापनिसा—निपमामधनी—धमगागपथा—पगगा रभा—मरगागमगा।

### गमक

एक स्वर में रज्जत के साथ कम्पन देने को गमक कहते हैं। एक स्वर के ऊपर या नीचे होनेवाले स्वर को भी मिलाकर ऊपर और नीचे वेग में उच्चारण करने से ही 'गमक' उत्पन्न होता है। गमको के पन्द्रह भेद हैं—

(१) तिरिप (२) स्फुरित (३) कम्पित (४) लीन (५) आन्दोलित (६) वलि (७) त्रिभिन्न (८) कुरुल (९) आहत (१०) उल्लासित (११) प्लावित (१२) गुम्फित (१३) मुद्रित (१४) नामित (१५) मिथित।

१. तिरिप—एक ह्रस्वाक्षर के १ मात्रा काल के वेग में होनेवाले कम्पन का नाम 'तिरिप' है।

२. स्फुरित—एक ह्रस्वाक्षर के २ मात्रा काल के वेग में होनेवाले कम्पन का नाम 'स्फुरित' है।

३. कम्पित—एक ह्रस्वाक्षर के ३ मात्रा काल के वेग में कम्पन किया गया हो वह 'कम्पित' कहा जाता है।

४. लीन—एक ह्रस्वाक्षर के ३ मात्रा काल के वेग में कम्पन किया गया हो वह 'लीन' है।

५. आन्दोलित—एक ह्रस्वाक्षर काल के अर्थात् एक मात्रा के वेग में कम्पन करने को 'आन्दोलित' कहते हैं।

६. वलि—वेग से कम्पन करते समय थोड़े वक्रत्व के साथ कम्पन करने को 'वलि' कहते हैं।

७. त्रिभिन्न—तीनों स्थानों में वेग से संचार करने का नाम 'त्रिभिन्न' है।

८. कुरुल—'वलि' में ही स्वरों को घनता के साथ उच्चारण करने को 'कुरुल' कहते हैं।

९. आहत—संचार करते समय आगे के स्वर पर आघात करके आगे के स्वर को 'आहत' कहते हैं।

१०. उल्लासित—संचार में एक स्वर को पार करके जाने का 'उल्लासित' नाम दिया गया है।

११. प्लावित—तीन ह्रस्वाक्षर काल के वेग से कम्पन करने को 'प्लावित' नाम दिया गया है।

१२. गुफित—हुँकार और गभीरता के साथ कम्पन करने का नाम गुम्फित है ।
१३. मुद्रित—मुँह बन्द करके कम्पन करने को 'मुद्रित' कहते हैं ।
१४. नामित—स्वरो का नमन करके कम्पन करना 'नामित' है ।
१५. मिश्रित—ऊपर बताये हुए गमको में दो या अधिक गमको को मिश्रित करके प्रयोग करने को 'मिश्रित' कहते हैं ।

## चौथा परिच्छेद

### मूर्च्छना और क्रम

भारतीय सगीत का विशिष्ट स्वरूप है 'राग'। रागों के स्वरूप और रागों के पारस्परिक भेद को हमारे देश के समस्त सगीत-मप्रदायक और सगीत-जन अवधार से जानते हैं। परन्तु यदि एक विदेशी पूछे कि 'राग क्या है?' तो उसे समझाने के लिए आजकल के लक्षण पर्याप्त नहीं हैं।

आज रागलक्षण के नाम से प्रचलित लक्षण केवल द्वापरकाल के राग में प्राचीन स्वरों के कोमल और तीव्र रूप एवं वक्र वर्ज्यभाव ही है। उत्तर भारत में वादनायकी रूप से एक लक्षण और भी है। परन्तु रागच्छाया देनेवाले दूसरे लक्षणों का भूते हमें बहुत दिन हो गये। केवल सम्प्रदाय के कारण रागों का जीवन और छाया मुरझाने लगी है। रागच्छाया के निश्चित लक्षणों को प्राचीन ग्रन्थों में बड़े निरालम्बा ढंग से आवश्यक कर्तव्य है।

प्राचीन ग्रन्थों में राग का स्वरूप इस प्रकार वर्णित किया गया है कि श्रुति में स्वर, स्वरों से ग्राम, ग्राम से मूर्च्छना, मूर्च्छना से जाति और जाति में रागों की उत्पत्ति होती है। श्रुति, स्वर, ग्राम—इन तीनों का स्वरूप पहले ही बताया जा चुका है। अब मूर्च्छना पर विचार किया जाय।

#### मूर्च्छना का स्वरूप

एक स्वर से आरम्भ करके क्रमशः सातवें स्वर तक आरोह करने के पश्चात् उसी मार्ग से अवरोह करने को मूर्च्छना कहते हैं। हर एक ग्राम में हर एक स्वर से शुरू करने पर सात मूर्च्छनाएँ उत्पन्न हो सकती हैं। मूर्च्छना रागच्छाया का आधार है। यह कैसे हो सकता है?

कहा गया है कि राग का स्वरूप 'रञ्जक स्वर-सन्दर्भ' है। वैसे तो हर एक स्वर अलग रहते समय भी रञ्जक होता है, परन्तु राग में स्वरसमूह के प्रयोग में और भी रञ्जन की उत्पत्ति होती है। हर एक स्वर एक रसभाव का पोषक है। उस स्वर को उसके संवादी के साथ एक स्वरसमूह में प्रयोग करने से उस रसभाव का प्रकाशन

और रञ्जन शक्ति और भी ज्यादा होती है। एक ही रसभाव देनेवाले अनेक पकड़ों को कल्पना के साथ गाते जाना 'राग' है।

हर एक पकड़ में आरम्भिक स्वर का प्राधान्य अधिक है। उसके सवादी तक आरोहण करने से रसभाव-पूर्ण एक पकड़ हमें मिल जाता है। दूसरे स्वर से शुरू करे तो उस पकड़ से दूसरा रसभाव ही मिलता है। राग की प्राप्ति के लिए हमें एक ही प्रकार का रसभाव देनेवाले बहुत पकड़ों की उत्पत्ति चाहिए। पर अब हमें एक ही पकड़ मिला हुआ है। तार और मन्द्र स्थानों में अगर इसी स्वर से शुरू करके उसके सवादी तक आरोहण करे तो और दो पकड़ों की प्राप्ति होती है। इस तत्त्व को लेकर इसी तरह बहुत से पकड़ों को उत्पन्न करने का एक उपाय किया जाय तो उसका नाम मूर्च्छना है।

एक स्वर से आरम्भ करके उसके सवादी तक आरोहण करने से एक रसभाव की पूर्ति होने के कारण, उसके ऊपर लगातार संचार करे तो भी आदि में उत्पन्न रसभाव की हानि नहीं होती। प्रायः एक स्वर का सवादी उसका चौथा या पाँचवाँ स्वर ही रहता है। उस चौथे या पाँचवे स्वर के आगे भी संचार करके जायँ तो रसभाव का भंग नहीं होता। पर इसे याद रखना आवश्यक है कि आरम्भिक स्वर का आठवाँ स्वर तारस्थान में वही स्वर है और उससे शुरू कर सवादी तक आरोहण करने से हमें काम आनेवाला राग का दूसरा पकड़ मिलता है। अगर आठवे स्वर में शुरू करना है तो सातवे स्वर पर रुकना चाहिए। अन्यथा संचार लगातार होने के कारण आठवे स्वर से आरम्भ हमें प्राप्त नहीं होता। इसलिए चौथे या पाँचवे स्वर के आगे संचार करते समय सातवे स्वर तक आरोहण करने पर रुक जाना पड़ता है। अगर और संचार करना है तो अवरोह ही करना चाहिए। अवरोह करते समय भी आरम्भ स्वर तक अवरोहण करके रुक जाना चाहिए। इस प्रकार एक स्वर से शुरू करके उसके सातवें स्वर तक आरोह करने के पश्चात् पुनः आरम्भ स्वर तक अवरोहण करने से एक चक्राकार संचार मिलता है। उस चक्र में संचार करते हैं तो एक ही रसभाव प्राप्त होता है।

हर एक राग का अपना निजी मूर्च्छना-चक्र है। इसे ढूँढ़ने का एक सरल मार्ग है। राग में संचार करते समय, (i) एक स्वर तक पहुँचने के पश्चात् उसके आगे न जाकर उसी स्वर में कुछ देर स्थिर रहना और तत्पश्चात् ही ऊपर जाना पड़ता है। (ii) या उस स्वर तक पहुँचने के बाद तत्काल लौटना पड़ता है। (iii) या उस स्वर को छोड़कर जाना पड़ता है। इन तीनों में किसी एक प्रकार में संचार रुक जाय तो यह निश्चित होता है कि वही स्वर उस राग की मूर्च्छना का आरम्भिक स्वर

है। इसी प्रकार अवरोहण के द्वारा भी निरन्तर कर सकते हैं। जैसे किन्नास पञ्जीर के नाट राग में गान्धार में ऋषभ तक आराधनामक संचार (संगमन्यास) निर्दिष्ट किया जाता है। ऋषभ तक पहुँचकर थोड़ा पड़ता है। अगर ऐसा आगे जाना चाहे, तो ऋषभ के बाद के स्वर गान्धार का उठना करके 'रिगा' का संचार—ऐसा संचार करना पड़ता है। 'रिगा' या 'गरी'—ऐसा संचार नहीं किया जाता। अत्रोहण में भी मूर्च्छना के अन्तिम स्वर गान्धार के नीचे जाना चाहें तो 'गरी' या 'मरी'—ऐसा संचार करना चाहिए। 'गरी', 'मरी'—ऐसा संचार नहीं किया जाता।

इसी तरह हिन्दुस्थानी पञ्जीर के माध्य राग में मूर्च्छना का अन्तिम स्वर गान्धार होकर ऋषभ तक समाप्ति होती है। तत्पश्चात् गान्धार का आरोहण होता है। ऋषभ के ऊपर इस राग में भी 'रिगा, गरी'—ऐसा संचार नहीं है। ऋषभ के ऊपर जाना चाहे, तो ऋषभ पर ठहरकर पुनः आगे जाना पड़ता है। और जानना चाहें तो 'सगा'—ऐसा आरोह करना पड़ता है। इसी प्रकार गान्धार के नीचे जाना चाहें तो गान्धार पर ठहरकर संचार करना पड़ता है या 'री' का उठना करके नीचे 'गरी'—ऐसा संचार कर सकते हैं।

### रागों की सीमाएँ और आधार, मूर्च्छना और न्यासस्वर

राग स्वरमय चित्र है। एक चित्र के ऊपर और एक नीचे का माया है। उसी तरह एक आधार है। एक ही आधार और सीमाओं में अनेक चित्रों का अनेक किया जा सकता है। रागस्वरूप की सीमाएँ ही 'मूर्च्छना' है। क्योंकि मूर्च्छनावक के अन्दर ही राग का स्वरूप उत्पन्न होता है।

अब यह विचार किया जाय कि 'आधार' क्या अस्तित्व है। राग में संचार करने समय यह अनुभव होता है कि कुछ स्वरों पर कुछ देर ठहरें। दूसरे स्वरों पर ठहरने की इच्छा नहीं होती। हराक राग में एक ऐसा स्वर है जहाँ जाने पर और आगे, नीचे बढ़ने की इच्छा ही नहीं होती। रागावस्थान की इच्छा में विषय होकर एक नया प्रस्थान करना पड़ता है। इस स्वर का नाम 'न्यास' है जहाँ हमें इस तरह स्थिर रहने की इच्छा होती है। न्यास शब्द का अर्थ है (नि—निर्गमम् = अच्छी तरह आस = बैठना) अच्छी तरह बैठना। यही न्यासस्वर रागों की वृत्तिवाद है जहाँ अनेक संचार करने के बाद राग समाप्त होते हैं। चित्रों के आधार और सीमाओं में परस्पर निर्धारक सम्बन्ध है। इसी तरह मूर्च्छना और न्यासस्वर का परस्पर निर्धारक सम्बन्ध है। न्यासस्वर मूर्च्छना से उत्पन्न हुआ है।

एक ही स्वर में आकर समाप्त होनेवाले बहुत से राग हैं। हमें अनुभव है कि



षड्ज स्वर में आकर बहुत से राग समाप्त होते हैं। अनेक राग एक ही न्यासस्वर के आधार में रहने पर भी भिन्न-भिन्न रसभाव के पोषक रहते हैं। इसका कारण यह है कि हर एक राग एक विशिष्ट रसभाव देनेवाले स्वर को अश रूप में लेता है। अर्थात् वही स्वर उस राग का मुख्य स्वर बन जाता है। उसका नाम अश या वादी है।

न्यासस्वर से मूर्च्छना निर्धारित होती है। जिससे कि एक ही न्यासस्वर के आधार पर रहनेवाले सब राग एक ही मूर्च्छना से उत्पन्न हो जायें।

एक मूर्च्छना एक रसभाव देती है। फिर उसके आधार पर भिन्न-भिन्न रसभाव का पोषण करनेवाले बहुत से रागों की उत्पत्ति कैसे होती है? इस प्रश्न का जवाब देने के लिए ही क्रम संचार है।

### क्रमसंचार और वादी-संवादी

हर एक मूर्च्छना चक्राकार में है। इस चक्र में किसी भी स्वर से शुरू कर उस चक्र की पूर्ति कर सकते हैं। हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि संगीत में हर एक पकड़ या संचार का रसभाव आरम्भ स्वर से निश्चित होता है। इसके कारण एक मूर्च्छना चक्र में हर एक स्वर से शुरू करके चक्र की पूर्ति करने से एक-एक रसभाव उत्पन्न होता है। अर्थात् हर एक संचार में वादी संवादी भिन्न होते हैं।

हर एक मूर्च्छना हर एक रसभाव का पोषण करती है, और उसमें हर एक स्वर से शुरू करके संचार करने समय भिन्न-भिन्न प्रकार के रसभाव उत्पन्न होते हैं। मूर्च्छना के साथ रसभाव और संचारों के साथ रसभाव का क्या सम्बन्ध है?

काव्य और नाटकों में रसनिष्पत्ति के समय मुख्य रस एक होता है और उसमें उपरम दूसरे होते हैं। उदाहरणतया शृङ्गार रस में ही हास्य, करुण, रौद्र इत्यादि रसभाव उत्पन्न होते हैं। उनमें मुख्य रसभाव मूर्च्छना से उत्पन्न होता है। उपरसों की उत्पत्ति क्रमसंचारों से होती है। नीचे सात मूर्च्छनाएँ चक्राकार में लिखी गयी हैं। हर एक चक्र में १२ स्थान हैं जिनमें शुरू कर चक्र-संचार की पूर्ति कर सकते हैं।

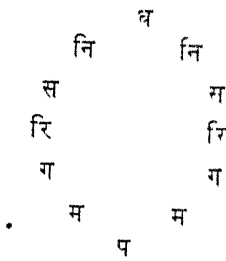
### प्रथम मूर्च्छना

	स	
रि		रि
ग		ग
म		म
प		प
ध		ध
	नि	

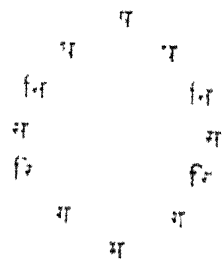
### द्वितीय मूर्च्छना

	नि	
स		स
रि		रि
ग		ग
म		म
प		प
	ध	

## तृतीय मूर्च्छना



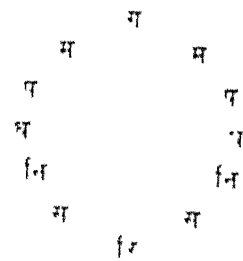
## चतुर्थ मूर्च्छना



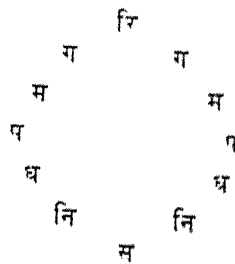
## पंचम मूर्च्छना



## षष्ठ मूर्च्छना



## सप्तम मूर्च्छना



इतमें प्रथम मूर्च्छना से उत्पन्न होनेवाले क्रमवार यों हैं—

१. सरिगमप धनि धपमगरिस
२. रिगमप धनि धपमगरिसरि
३. गमप धनि धपमगरिसरिग

## मूच्छन्ता और क्रम

४. मप धनि धपमगरिसरिगम
- ५ प धनि धपमगरिसरिगमप
६. धनिधपमगरिसरिगमप ध
- ७ नि धपमगरिसरिगमप धनि
- ८ धपमगरिसरिगमप धनि ध
९. पमगरिसरिगमप धनि धप
- १० मगरिसरिगमप धनि धपम
- ११ गरिसरिगमप धनि धपमग
१२. रिसरिगम पधनि धपमगरि

द्वितीय मूच्छन्ता मे उत्पन्न होनेवाले क्रमसंचार—

- १ निसरिगमप धपमगरिसनि
- २ सरिगमप धपमगरिसनिस
३. रिगमप धपमगरिसनिसरि
- ४ गमप धपमगरिसनिसरिग
- ५ मप धपमगरिसनिसरिगम
- ६ प धपमगरिसनिसरिगमप
- ७ धपमगरिसनिसरिगमप ध
८. पमगरिसनिसरिगमप धप
९. मगरिसनिसरिगमप धपम
- १० गरिसनिसरिगमप धपमग
११. रिसनिसरिगमप धपमगरि
- १२ सनिसरिगमप धपमगरिस

तृतीय मूच्छन्ता के क्रमसंचार—

- १ धनिसरिगमपमगरिसनि ध
- २ निसरिगमपमगरिसनि धनि
३. सरिगमपमगरिसनि धनिस
- ४ रिगमपमगरिसनि धनिसरि
५. गमपमगरिसनि धनिसरिग
- ६ मपमगरिसनि धनिसरिगम
७. पमगरिसनि धनिसरिगमप

- ८ मगरिमनि धनिरिगमपमग  
 ९. गरिमनि धनिसरिगमपमग  
 १०. रिमनि धनिरिगमपमगरिग  
 ११. मनि धनिरिगमपमगरिग  
 १२ नि धनिसरिगमपमगरिगनि

इसी तरह चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ और सप्तम मूर्च्छनाओं के क्रमसंचारों का भी लिख सकते हैं। हर एक क्रमसंचार में पहला स्वर रमनिर्गमनि है। कारण है। यही स्वर अशस्वर है। पर इस स्वर का सवादी निकट में नहीं होता। अतः इस अशस्वर के योग्य नहीं बनता। तब क्रमसंचार का अन्तिम स्वर अशस्वर बन जाता है। इसी रीति में हर एक क्रमसंचार के वादी-सवादी यथादिष्टे जाते हैं। इसी क्रमसंचारों के लिए यहाँ सब स्वर प्रकृति-स्वर माने गये हैं। किन्तु स्वरों का वादी-सवादी उनके स्वरस्थान के अनुसार रहते हैं।

पहली मूर्च्छना के क्रमसंचारों में वादी-सवादी- -

क्रमसंचार की संख्या	वादी	सवादी
१	म	म
२	रि	प
३	ग	नि
४	म	ग
५	प	ग
६	ध	रि
७	नि	ग
८	ध	रि
९	प	ग
१०	म	म
११	ग	नि
१२	रि	ध

इसी प्रकार दूसरे क्रमसंचारों में वादी-सवादी ऊहनीय है।

## पाँचवाँ परिच्छेद

### जाति या रागमाता

वादी सवादी मे विभिन्नता होने पर भी एक ही मूर्च्छना से उत्पन्न रागो मे कई लक्षण एक ही प्रकार के होते है। उन लक्षणों मे न्यासस्वर प्रधान हैं। सप्त स्वरों में से किसी भी एक स्वर को न्यास रूप मे ग्रहण करनेवाली जाति की उत्पत्ति हो सकती है। जिस जाति मे 'षड्ज' न्यास स्वर रहता है उसका नाम षाड्जी है। इसी प्रकार आर्षभी, गाधारी, मध्यमा, पञ्चमी, धैवती, नैषादी—ये क्रमशः ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत और निषाद आदि को न्यास रूप मे ग्रहण करनेवाली जातियो के नाम है।

हर जाति या राग के बारह लक्षण होते है, यानी (१) न्यासस्वर लक्षण (२) अंशस्वर लक्षण (३) ग्रहस्वर लक्षण (४) अपन्यास स्वर लक्षण (५, ६) सन्यास-विन्यास लक्षण (७, ८) अल्पत्व-बहुत्व लक्षण (९) सपूर्णपाडवीडव लक्षण (१०) अन्तरमार्ग लक्षण (११) तार लक्षण (१२) मन्द्र लक्षण।

जाति या राग का विस्तार करते समय अशस्वर मे पहले थोड़ी देर स्थिर रहना चाहिए। इसलिए अशस्वर को स्थायी स्वर भी कहते है। कभी-कभी स्थायी स्वर से ही सचार शुरू करते है। कभी-कभी अन्य स्वर से शुरू करके स्थायी स्वर मे आकर रागविस्तार करते है। इस तरह के प्रारम्भस्वर का नाम ग्रहस्वर है। अश या न्यास भी ग्रहस्वर हो सकता है तथा कोई दूसरा स्वर भी।

हर एक जाति मे अशस्वरों को बदलकर भिन्न-भिन्न रागो की उत्पत्ति की जा सकती है। एक या दो स्वरों को वर्ज्य करके भी भिन्न-भिन्न रागो को उत्पन्न कर सकते है। उनमे छः स्वरों से उत्पन्न राग और जातियो का नाम पाडव और पाँच स्वरों से उत्पन्न होनेवालो का नाम औडव है।

न्यासस्वर को ही अश रखकर, सातों स्वरों के साथ अगर जाति विस्तार किया जाय तो शब्द जाति होती है। अशस्वर को बदलकर अथवा एक या दो स्वरों को वर्ज्य करके अर्थात् पाडव, औडव कर जाति विस्तार किया जाय, तो उन्हे विकृत जाति कहते है। विकृत जातियाँ ही राग है।

राग की सृष्टि एक आत्मानुभव की अभिव्यक्ति है। जब रागों की सृष्टि कर है, तब रागों के लक्षण अपने आप रागकल्पना में विद्यमान रहते हैं। राग का उपयोग लक्षणों से नहीं, बल्कि रागों में लक्षणों की उत्पत्ति होती है। इस बात का अर्थ स्पष्ट आवश्यक है।

राग और जाति के विस्तार में न्यासस्वर और अशस्वर विस्तार का अन्तर ही योग्य है। इनके अलावा न्यास और अश के सवादी और निच के सम्बन्ध स्पष्ट होते हैं। अनुवादी भी सचार का केन्द्र बनने लायक है। इस तरह के रागों का अपना स्वर कहते हैं। राग सचार में छोटे भागों के केन्द्र या अशस्वर संन्यास भी विन्यास हैं।

जाति और रागविस्तार में कई स्वरों का प्रयोग अधिक होता है और ऐसे स्वरों का प्रयोग कम होता है। इस लक्षण का नाम अल्पत्व, बहुत है। न्यास और अश स्वरों के सवादी और उनके निकट के अनुवादी बहुत्वपूर्ण स्वर होते हैं। इन के अनुवादी और विवादी अल्पत्वपूर्ण स्वर हैं। उन बहुत स्वरों के प्रयोग में दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरों का सम्यक् उच्चारण एक भाग है, उसका नाम 'अश्वर' है। इन स्वरों से युक्त पकड़ों का तुरन्त प्रयोग करना दूसरा भाग है। उसका नाम 'अभ्यास' है। अल्प स्वरों के प्रयोग में भी दो प्रकार हैं। सचार में उन स्वरों का वर्ण कर अर्थात् उनको लाघकर सचार करना एक प्रकार है, उसका नाम 'अवन' है। जिन पकड़ों में ऐसे स्वर रहते हैं उन पकड़ों को प्रयोग में न लाना दूसरा भाग है। उसका नाम 'अनभ्यास' है।

हर राग में सचार करते समय तारस्थान में एक सीमा होती है, उसका अंगे सचार नहीं करना चाहिए। तारस्थान में अश स्वर का सवादी ही वह सीमा है। उसका नाम तारलक्षण है। इसी तरह नीचे भी एक सीमा है, वह मन्द्रस्थान में अशस्वर या न्यासस्वर का सवादी या मन्द्र पङ्क्ति है। उसका नाम मन्द्रलक्षण है। मन्द्र और तार अवधि के बीच में संचार करने में राग का पूर्ण स्वरूप मिल जाता है। तार स्वर के ऊपर अगर संचार करने की अभिलाषा होती हो तो दूसरी बार इसी तरह अति तारस्थान सीमा तक सचार करने की शक्ति जानी चाहिए, अन्यथा वह चेष्टा रागस्वरूप के चरण या कटि मात्र छूकर आने की भाँति प्रतीत होगी। इसी तरह मन्द्रस्थायी के नीचे सचार करना भी साध्य नहीं है।

कभी-कभी अल्प या विवादी स्वरों का प्रयोग भी करते हैं। उस दशा में ऐसे स्वरों को अंश या अंश के सवादी स्वरों के साथ मिलाकर प्रयुक्त करना होता है। यह प्रयोग मिठाई खाते समय स्वाद बदलने के लिए बीच-बीच में कुछ नमकीन या

विवृत पदार्थों को खाने के समान किया जाता है। इस तरह के प्रयोग का नाम 'अन्तर मार्ग' है।

### विकृत जातियों की उत्पत्ति

विकृत जातियों की उत्पत्ति चार प्रकार से हो सकती है। अशस्वर न्यास से भिन्न होना, अपन्यासस्वर भिन्न होना, ग्रहस्वर भिन्न होना, असम्पूर्ण अर्थात् पाडव या औडव होना, इन चारों कारणों से विकृत जातियों की उत्पत्ति हो सकती है। इन कारणों में एक कारण मात्र से चार प्रकार की विकृत जातियों की उत्पत्ति हो सकती है (क, ख, ग, घ)। दो-दो कारण मिलकर छ. विकृत जातियों की उत्पत्ति हो सकती है (कख, कग, कघ, खग, खघ, घक)। तीन-तीन कारण मिलकर चार विकृत जातियों की उत्पत्ति हो सकती है (कखग, कखघ, कगघ, खगघ)। चार कारणों से एक विकृत जाति की उत्पत्ति हो सकती है (कखगघ)। कुल मिल कर पन्द्रह विकृत जातियों की उत्पत्ति होती है। उनमें भी असम्पूर्णता में पाडव, औडव के दो भेद हैं। यह असम्पूर्णता इन पन्द्रह विकृत जातियों में से आठ विकृत जातियों का कारण होती है (१+३+३+१)। ये आठ विकृत जातियाँ पाडव, औडव के दो भेद होने के कारण सोलह बन जाती हैं। इसलिए हर एक जाति से २३ जातियाँ उत्पन्न होती हैं।

रागोत्पत्ति के लिए सात शुद्ध जाति मात्र काफी नहीं है। इस कारण से दो, तीन आदि विकृत जातियों को मिलाकर नयी ग्यारह जातियों को उत्पन्न किया गया है। उनका नाम सकीर्ण जाति है। इन ग्यारह सकीर्ण जातियों का उत्पत्तिक्रम यों है—

१. षड्जकैशिकी = षाड्जी + गान्धारी
२. षड्जमध्यमा = षाड्जी + मध्यमा
३. गान्धारपञ्चमी = गान्धारी + पञ्चमी
४. आन्ध्री = गान्धारी + आर्षभी
५. षड्जोदीच्यवती = षाड्जी + गान्धारी + धैवती
६. कार्मारवी = आर्षभी + पञ्चमी + नैषादी
७. नन्दयन्ती = आर्षभी + गान्धारी + पञ्चमी
८. गान्धारोदीच्यवा = गान्धारी + धैवती + पाड्जी + मध्यमा
९. मध्यमोदीच्यवा = मध्यमा + पञ्चमी + गान्धारी + धैवती
१०. रक्तगान्धारी = गान्धारी + मध्यमा + पञ्चमी + नैषादी
११. कैशिकी = षाड्जी + गान्धारी + मध्यमा + पञ्चमी + धैवती + नैषादी

इस तरह शुद्ध और सकीर्ण जातियाँ कुल मिलकर अठारह हुईं। इनमें सात जातियाँ षड्जग्राम-मूर्च्छनाओं से उत्पन्न हुई हैं। वे षाड्जी, षड्जकैशिकी, षड्ज-

मध्यमा, पङ्जोदीच्यवती, आर्षभी, धैवती और नैपादी है। बाकी ११ जातियाँ मध्यमग्राम-मूर्च्छनाओं से उत्पन्न हुई हैं। जातियों के सम्बन्ध में कई विशिष्ट नियम हैं—

### १. जातियों की मूर्च्छनाएँ

जाति	ग्राम	मूर्च्छना
१. पाङ्जी	पङ्जग्राम	धैवतादि मूर्च्छना
२. आर्षभी	"	पञ्चमादि मूर्च्छना
३. गान्धारी	मध्यमग्राम	"
४. मध्यमा	"	ऋषभादि मूर्च्छना
५. पञ्चमी	"	"
६. धैवती	पङ्जग्राम	"
७. पङ्जकैशिकी	"	पङ्जादि मूर्च्छना (?)
८. नैपादी	"	गान्धारादि मूर्च्छना
९. पङ्जोदीच्यवा	"	"
१०. पङ्जमध्यमा	"	मध्यमादि मूर्च्छना
११. गान्धारोदीच्यवा	मध्यमग्राम	धैवतादि मूर्च्छना
१२. रक्तगान्धारी	"	ऋषभादि मूर्च्छना
१३. कैशिकी	मध्यमग्राम	गान्धारादि मूर्च्छना
१४. मध्यमोदीच्यवा	"	मध्यमादि मूर्च्छना
१५. कामाग्री	"	पङ्जादि मूर्च्छना
१६. गान्धारपञ्चमी	"	गान्धारादि मूर्च्छना
१७. आन्ध्री	"	मध्यमादि मूर्च्छना
१८. नन्दयन्ती	"	पञ्चमादि मूर्च्छना

### २. न्यासस्वरों के प्रयोग-नियम

(अ) सात शुद्ध जातियों में अपने-अपने नाम के स्वर ही न्यास हैं; जैसे—  
“पाङ्जी का पङ्ज, आर्षभी का ऋषभ इत्यादि।

(आ) पङ्जकैशिकी, रक्तगान्धारी, गान्धारपञ्चमी, आन्ध्री और नन्दयन्ती—इन पाँच जातियों का न्यास-स्वर गान्धार है।

(इ) षड्जोदीच्यवा, गान्धारोदीच्यवा और मध्यमोदीच्यवा—इन तीन जातियों का न्यास-स्वर मध्यम है।



- (ई) कार्मारवी जाति का न्यास-स्वर पचम है।  
 (उ) षड्जमध्यमा जाति के “स” और “म” दो न्यास-स्वर हैं।  
 (ऊ) कैशिकी जाति के “ग” “प” तथा “नि” न्यास-स्वर हैं।

यह बात पहले ही बतायी गयी है कि मूर्च्छना से ही न्यास-स्वर निश्चित होता है। हर मूर्च्छना में अंतिम स्वरों पर ठहरना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त मूर्च्छना के आरोहण एवं अवरोहण में, आरम्भ-स्वर के अंश-स्वर में ठहरना भी उचित है। इसलिए मूर्च्छना के आरम्भ और अंतिम स्वर तथा उनके सवादी—इन सब में कोई एक भी न्यास-स्वर बनने योग्य है। दो-चार जातियों को छोड़कर बाकी सब जातियों में ऐसा ही एक स्वर न्यास-स्वर रहता है।

प्रत्येक जाति के सातों स्वर भी अंश-स्वर नहीं हो सकते। न्यासस्वर उसके सवादी तथा पास के अनुवादी; ये ही अंशस्वर हो सकते हैं। इसके नियम नीचे यों दिये जाते हैं—

जातियों में अंश और अपन्यासों के नियम

जातियाँ	अंश	अपन्यास
१. षाड्जी	सगमपध	गप
२. आर्षभी	रिधनि	रिधनि
३. गाधारी	सगमपनि	सप
४. मध्यमा	सरिमपध	सरिमपध
५. पचमी	रिप	रिपनि
६. धैवती	रिध	रिमध
७. नैषादी	निरिग	निरिग
८. षड्जकैशिकी	सगप	सपनि
९. षड्जोदीच्यवा	समधनि	सध
१०. षड्जमध्यमा	सरिगमपधनि	सरिगमपधनि
११. गाधारोदीच्यवा	सम	सध
१२. रक्तगाधारी	सगमपनि	सगमपधनि
१३. कैशिकी	सगमपधनि	सगमपधनि
१४. मध्यमोदीच्यवा	प	सधा
१५. कार्मारवी	रिपधनि	रिपधनि

जातियाँ	अंश	अपन्यास
१६. गांधारपंचमी	प	रिप
१७. आंध्री	रिगर्पनि	रिगर्पनि
१८. नन्दयन्ती	प	मप

### जातियों में षाडव तथा औडवलोपी स्वर

जातियाँ	षाडवलोपी स्वर	औडवलोपी स्वर
१. पाड्जी	नि	—
२. आर्षभी	म	मप
३. गांधारी	रि	रिध
४. मध्यमा	ग	गनि
५. पंचमी	ग	गनि
६. धैवती	प	सप
७. नैषादी	प	मप
८. पड्जकैशिकी	—	—
९. पड्जोदीच्यवा	रि	रिप
१०. पड्जमध्यमा	नि	गनि
११. गांधारोदीच्यवा	रि	—
१२. रक्तगांधारी	रि	रिध
१३. कैशिकी	रि	रिध
१४. मध्यमोदीच्यवा	—	—
१५. कामारवी	—	—
१६. गांधारपंचमी	—	—
१७. आंध्री	स	—
१८. नंदयन्ती	—	—

जातियों का रसभाव उनके न्यास एवं अंशस्वरों के अनुसार है ।

जातियां और रस<sup>१</sup>

जातियाँ	रस
<p>पङ्गोदीच्यवती }  पङ्गमध्यमा }  मध्यमा }  पचमी }  नदयन्ती }</p>	शृङ्गार, हास्य
<p>आर्षभी }  पाङ्गी }</p>	वीर, अद्भुत, रौद्र
<p>गांधारी }  रक्तगांधारी }</p>	करुण
<p>पङ्गकैशिकी }  धैवती }  कैशिकी }  गांधारपचमी }</p>	बीभत्स, भयानक

१. संगीतरत्नाकर में १८ जातियों के लक्षण और एक जाति में ब्रह्मा कृत साहित्य भी दिया गया है। उन लक्षणों में ऊपर बताये हुए न्यासस्वर, अंशस्वर, अपन्यासस्वर, षाडव-औडवलोपी स्वरों के अलावा, काकली आदि साधारण स्वरों की विशेष विधि, दो-दो स्वरों को जोड़कर प्रयोग करने की रीति, अल्पत्व-बहुत्व स्वर, वारलोप की विशेष विधि, हर एक जाति में साहित्य के लायक प्रबंधों का नियत लक्षण, ताल के नाम व मार्ग, गीतिविशेष, प्रत्येक जाति का नाटक में प्रयोगसंदर्भ और उस जाति की छाया से युक्त तात्कालिक विवरण दिये गये हैं।

ताल के बारे में आगे तालाध्याय में विस्तार किया जायगा। इनमें से पहले-पहल उत्पन्न ताल ही उपयुक्त किये गये हैं।

अ—चच्चत्पुटं	(८ अक्षर)	ई—संपद्वेष्टांक	(१२ अक्षर)
आ—चाचपुटं	(६ अक्षर)	उ—पंचपाणि	(१२ अक्षर)
इ—षट्पितापुत्रकं	(१२ अक्षर)	ऊ—उद्धटं	(६ अक्षर)

ये आदिकाल के ताल हैं। ताल के अंगों को दुगुना या चौगुना करके नये तालों के रचना-नियमों की—यानी कला के बारे में प्रत्येक जाति की—विधि भी बतायी गयी है। प्रत्येक कला के मात्राकाल के भेद—अर्थात्, मार्ग के विषय में नियम—दिये गये हैं।

मध्यमोदीच्यवा } गाधारोदीच्यवा }	वीर, रौद्र
कामाग्निवी } आग्नी }	अद्भुत
पङ्कजमध्यमा	सर्वरस

‘अव प्रत्येक जाति का लक्षण यहा दिया जाता है ।

### जातिलक्षण

#### १ षाड्जी

(१) इस जाति में (षाडव-औडव रहित) सपूर्ण रूप में काकली-स्वरो का प्रयोग है । (२) सगा, सधा जोड़कर प्रयोग करना है । (३) गाधार जब अश होता है तब निषाद का लोप नहीं है । (४) इस जाति के प्रबन्ध में ताल है । “पंचपाणि” जो पटपितापुत्रक नामक ताल का एक भेद है । (५) यह ताल एक कला, द्विकला और त्रुत्पुल्ल में प्रयुक्त किया जाता है । इस ताल के मार्ग में चित्र, वार्तिक तथा दक्षिण का (अर्थात् हर कला की दो, चार और आठ मात्राओं का) प्रयोग होता है । (६) गीति में मागधी, सभाविता और प्रथुला—इन तीनों का प्रयोग है । (७) नाटक में इस जाति का प्रयोग, “नैष्कामिक” ध्रुवा में, पहले दृश्य में किया जाता था । संगीतरत्नाकर-काल के (ई० सन् १२०० के) वराटी राग की छाया इस जाति में थी ।

#### २. आर्षभी

इस जाति में, गाधार और निषाद का, दूसरे पाँच स्वरो के साथ मिलाकर प्रयोग करना पड़ता है । इस जाति में, गाधार और निषाद बहुत स्वर है । पंचम अल्प स्वर है । पंचम का लंघन होता है । ताल चच्चत्पुट (८ अक्षर) है । कलाएँ आठ हैं । नैष्कामिक ध्रुवा में प्रयोग किया जाता था । इस जाति में देशी मधुकरी की छाया है ।

#### ३. गांधारी

इस जाति में न्यासस्वर एवं अंशस्वर अन्य स्वरो के साथ-साथ प्रयुक्त किये जाते हैं । “रि” और “ध” का साथ-साथ प्रयोग किया जाता है । पंचम के अंश होने पर जाति षाडव-औडव रहित अर्थात् पूर्ण होती है । नि, स, म—इनमें कोई एक स्वर

अश होता है तो औडव रूप नहीं होता। पूर्ण और षाडव रूप ही होते हैं। इसका ताल “चच्चत्पुट” है। प्रत्येक अक्षर की कलाएँ सोलह हैं। इसका प्रयोग, तीसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में होता था। गांधारपंचमी, देशी बेलावली—इन दोनों रागों की छाया इस जाति में है।

#### ४. मध्यमा

इस जाति में षड्ज और मध्यम बहुल स्वर हैं। इस जाति में साधारण स्वर अर्थात् अन्तर, काकली स्वरों का प्रयोग है। गांधार और निषाद अल्पत्व स्वर हैं। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ आठ हैं। इसका प्रयोग, दूसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में होता था। चोक्ष (शुद्ध) षाडव और देशी आधाली—इन दोनों की छाया इस जाति में है।

#### ५. पंचमी

इस जाति में, “सग” और “म” अल्पत्व स्वर हैं। “रिम” और “गनि” के प्रयोग साथ-साथ होते हैं। इस जाति में भी अन्तर, काकली स्वरों का प्रयोग है। ऋषभ, अश रहता है, तो औडव रूप नहीं होता। पूर्ण और षाडव मात्र होते हैं। ताल चच्चत्पुट है। तीसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था। चोक्ष पंचम तथा देशी आधाली की रागच्छायाएँ इस जाति में हैं।

#### ६. धैवती

आरोह में षड्ज और पंचम लघ्य या वर्ज्य हैं। “रिध” बहुल स्वर है। ताल पचपाणि है। मार्ग, गीति, प्रयोग इत्यादि षाड्जी जाति की तरह होते हैं। कलाएँ बारह हैं। इस जाति में चोक्ष कैशिकी, देशी सिंहली इत्यादि रागों की छाया है।

#### ७. नैषादी

समपध अल्पत्वस्वर हैं और निरिध बहुल स्वर हैं। विनियोग षाड्जी की ही तरह होता है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चोक्ष, साधारित, देशी, बेलावली इत्यादि की छाया इस जाति में पायी जाती है।

#### ८. षड्जकैशिकी

ऋषभ और मध्यम अल्पत्वस्वर हैं। धनि बहुल स्वर है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। दूसरे दृश्य में, प्रावेशिकी ध्रुवा में, इसका प्रयोग होता था। इस जाति में, गांधार पंचम, हिंदोल और देशी बेलावली की छायाएँ हैं।

### ९. षड्जोदीच्यवा

स म नि और ग—इन चारों में दो-दो स्वरों का प्रयोग साथ-साथ होता है। मद्र व गांधार बहुलस्वर है। पड्ज और ऋषभ अतिबहुलस्वर है। निपाद और गांधार अश होने हैं तो निपाद का अल्पत्व नहीं होता। गीति, ताल, कला, विनियोग इत्यादि षड्जी ही के समान हैं। इसका प्रयोग, दूसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में होता था।

### १०. षड्जमध्यमा

इस जाति में, सब अशस्वरों में से (सगमपधनि) दो-दो स्वरों का प्रयोग साथ-साथ होता है। उस जाति में अन्तर काकली स्वरों का प्रयोग है। निपाद का अल्पत्व है। गांधाराश न होने पर पाडव-ओडव में निपाद का लोप होता है। पाडव-ओडव में निपाद का लोप है। पाडव-ओडव में गांधार और निपाद त्रिवादी स्वर हैं। गीति, ताल, कला—ये सब षड्जी की तरह हैं। यह दूसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में, प्रयुक्त होती है।

### ११. गांधारोदीच्यवा

पूर्ण स्वरूप में, अंश के सिवा अन्य स्वर अल्पत्व के हैं। पाडव-रूप में भी, “नि, ध, प,” तथा “ग” का अल्पत्व है। रि और ध साथ-साथ आते हैं। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ मोलह हैं। चौथे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग है।

### १२. रक्तगांधारी

पड्ज और गांधार का, साथ-साथ प्रयोग होता है। धैवत और निपाद बहुल स्वर हैं। ताल, गीति और कला षड्जी ही के अनुसार हैं। तीसरे दृश्य में, ध्रुवा गान में, इसका प्रयोग होता था।

### १३. कैशिकी

इस जाति में, निपाद और धैवत अश हो तो पंचम-न्यास रहना चाहिए। इस विषय में मतांतर भी है कि “नि” एवं “ग” अंश होने पर नि, ग और प—इन तीनों को न्यास स्वर रहना चाहिए। ऋषभ अल्प स्वर है। निपाद और पंचम बहुलस्वर हैं। सारे अशस्वरों में अर्थात्, सगमपधनि में—दो-दो स्वरों का प्रयोग, साथ-साथ होता है। ताल, कला और गीति षड्जी के समान हैं। इसका प्रयोग, पाँचवें दृश्य में, ध्रुवा गान में, होता था।

### १४. मध्यमोदीच्यवा

इस जाति मे, अल्पत्व, बहुत्व और स्वरसगति गाधारोदीच्यवा के समान है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह है। चौथे दृश्य मे, ध्रुवा गान मे, इसका प्रयोग होता था।

### १५. कामारित्री

इस जाति मे, जो स्वर अश के नही है, वे अतरमार्ग प्रयोग से बहुलस्वर है। गाधार अति बहुल स्वर है। अश स्वरों मे से दो-दो स्वरों का, साथ-साथ प्रयोग होता है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह है। पाँचवे दृश्य मे, ध्रुवा गान मे, इसका प्रयोग होता था।

### १६. गांधारपंचमी

इस जाति मे गाधारी और पचमी—दोनों जातिथो के समान, स्वरों का प्रयोग साथ-साथ होता है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ सोलह हैं। चौथे दृश्य मे, ध्रुवा गान मे, इसका प्रयोग होता था।

### १७. आंध्री

इस जाति मे, रि, ग, ध और नि—इन स्वरों को मिला-मिला कर प्रयोग करना चाहिए। अशस्वर से न्यासस्वर तक का क्रम-संचार है। अन्य लक्षण गांधार पचमी के अनुसार ही है।

### १८. नन्दयन्त्री

इस जाति मे गान्धार ग्रहस्वर है। मतान्तर मे, पचम भी ग्रहस्वर है। मन्द्र ऋषभ बहुल स्वर है। ताल चच्चत्पुट है। कलाएँ बत्तीस है। नाटक मे पहले दृश्य मे, ध्रुवा गान मे, इसका प्रयोग होता था।

## जातियों के उदाहरण

हर एक जाति के लिए, ब्रह्माजी ने, गीति और उसका साहित्य बनाया। इसका कारण यह है कि उन्होंने ही आरम्भ में सामवेद से जातियों का संग्रह किया है। प्रत्येक गीति में उन-उन जातियों के ताल एवं कला का अनुसरण किया गया है।

## षाड्जी—१

१. सा	सा	मा	मा	पा	निध	पा	धनि
त		भ	व	ल	ला		ट
२. री	गम	गा	गा	मा	रिग	धम	धा
न	य	नां		वु	जा		धि
३. रिग	सा	री	गा	मा	सा	सा	सा
कं							
४ धा	धा	नी	निर्स	निध	पां	सो	सी
न	ग	सू		नु	प्र	ण	य
५ नी	धा	पा	धनि	री	गा	मा	गा
के		लि		म	मु		डू
६ सा	धा	धृन्ति	पु	सा	सा	सा	सा
वं							
७. सा	सा	गा	सा	मा	पा	मा	मा
स	र	स	कृ	त	ति	ल	क
८. सा	गा	मा	धनि	निध	पा	गा	रिग
प			का	नु	ले	प	
९. गा	गा	गा	गा	सा	सा	मा	सा
नं							
१०. धृ	सा	री	गरि	सा	मा	मा	मा
प्र	ण	मा		मि	का		म
११. धा	नी	पा	धनि	री	गा	री	सा
दे		हें		ध	ना	न	
१२. रिग	सा	री	गा	सा	सा	सा	सा
लं							



आर्षभी—२

१. री	गा	सा	रिग	मा	रिम	गा	रिरि
गु	ण	लो		च	ना		धि
२. री	री	निध	निध	गा	रिम	मा	पनि
क	म	न		न्त	म	म	र
३. मा	धा	नी	धा	पा	पा	सा	गा
म	ज	र	म			क्ष	य
४. नी	धनि	री	गरि	सधु	गरि	री	री
म	जे					य	
५. री	मा	गरि	सधु	सस	रिस	रिग	मम
प्र	ण		मा			मि	दिव्य
६. निध	पा	री	री	रिप	गरि	सधु	सा
म	णि	द		र्ष	णा		म
७. रिस	रिस	रिग	रिग	मा	मा	मा	गरि
ल	नि	के				त	
८. पा	नी	री	मा	गरि	सधु	गरि	गरि
भ	व	म	मे				यं

गांधारी—३

१. गा	गा	सा	नी	सा	गा	गा	गा
ए				त			
२. गा	गम	पा	पा	धप	मा	निध	निसं
र	ज	नि	व	धू		मु	ख
३. निध	पनि	मा	मपरि	गा	गा	गा	गा
वि			भ्र	म		दं	
४. गा	गम	पा	पा	धप	म	निध	निसं
नि	शा	म	य	व	रो		रु
५. निध	पनि	मा	मपरि	मा	गा	मा	सा
न	व	मु	ख	वि	ला		स
६. गा	सा	गा	गा	गा	गम	गा	गा
व	पु	श्चा	रु		म	म	ल

७	गा	गम	पा	पा	धप	मा	निध	निम
	मृ	दु	कि	र	ण			
८	निध	पनि	मा	मपरि	गा	गा	गा	गा
	म	मृ	त	भ	व			
९.	री	गा	मा	पध	री	गा	गा	मा
	र	ज	त	गि	रि	शि	ग	र
१०	नी०	नी०	नी०	नी०	नी०	नी०	नी०	नी०
	म	णि	श	क	ल	श		ख
११	गा	गम	पा	पा	धप	मा	निध	निम
	व	र	यु	व	ति	द		त
१२	निध	पनि	मा	मपरि	गा	गा	गा	गा
	प		क्ति	नि	भं			
१३.	नी	नी	पा	नी	गा	मा	गा	गा
	प्र	ण	मा		मि	प्र	ण	य
१४.	गा	मा	गा	गा	गा	गम	गा	गा
	र	ति	क	ल	ह	र	व	नु
१५.	गा	पा	मा	मा	निध	निर्म	निध	पनि
	द							
१६.	मा	परिग	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	श	शि			नं			

## मध्यमा—४

१.	मा	मा	मा	मा	पा	धनि	नी	धप
	पा			तु	भ	व	मू	
२.	मा	पम	मा	सा	मा	गा	री	री
	धं	जा			न	न		
३.	पा	मा	रिम	गम	मा	मा	मा	मा
	कि	री	ट					
४.	मी	निध	निर्स	निध	पम	पध	मा	मा
	म	णि	द		पं		णं	

५. नी०	नी०	री	री	नी०	री	री	पा
गौ		री		क	र	प	
६. नी०	मप	मा	मा	सा	सा	सा	सा
ल्ल	वा			गु	लि		सु
७. गां	नी	सां	गां	धप	मा	धनि	सां
ते						जि	त
८. पा	सां	पा	निधप	मा	मा	मा	मा
सु	कि	र		णं			

पंचमी—५

१. पा	धनि	नी	नी	मा	नी	मा	पा
ह	र	मू		धं	जा		न
२. गा	गा	सा	सा	मू	मू	पा	पू
न	म	हे		श	म	म	र
३. पू	पू	धू	नी०	नी०	नी०	गा	सा
प	ति	बा		हु	स्तं		भ
४. पा	मा	धा	नी	निध	पा	पा	पा
न	म	न		तं			
५. पा	पा	री०	री०	री०	री०	री०	री०
प्र	ण	मा		मि	पु	रु	ष
६. मू	निग	सा	सध	नी	नी	नी	नी
मु	ख	प	द्य		ल		क्ष्मी
७. सां	सां	सां	मा	पा	पा	पा	पा
ह	र	म		बि	का		प
८. धा	मा	धा	नी	पा	पा	पा	पा
स्ति	म	जे		य			

धैवती—६

१. धा	धा	निध	पध	मा	मा	मा	मा
त	रु	णा		म	ले		दु
२. धा	धा	निध	निसं	सां	सां	सां	सां
म	णि	भू		षि	ता		म

३.	मध	धा	पा	मध	धा	निध	धनि	धा
	ल	शि	रो				ज	
४	मा	मा	रिग	रिग	मा	रिग	मा	सा
	भु	ज	गा		धि	पै		क
५	धा	धा	नी०	पा	धा	पा	मा	मा
	कुं		ड	ल	वि	ला		स
६.	धा	धा	पा	मुधु	धा	निधु	धुनि	धा
	कृ	त	शो				भं	
७.	धा	धा	निर्म	निर्म	निध	पा	पा	पा
	न	ग	सू		नु	ल		क्षमी
८.	रिग	मा	मा	सा	नी०	नी०	नी०	नी०
	दे	हा			धं	मि		श्रि
९.	सा	रिग	रिग	सा	नी०	मा	धा	धा
	त	श	री				र	
१०	री०	गुरुि	मुगु	मा	मा	मा	मा	मा
	प्र	ण	मा		मि	भू		त
११.	नी	नी	धा	धा	पा	रिग	मा	रिग
	गी		तो		प	हा		र
१२.	पा	धा	सा	मा	धा	नी	धा	धा
	प	रि	तु				ष्ट	

## नैषादी—७

१.	नी	नी	नी	नी	माँ	धा	नी	नी
	त		सु	र	वं		दि	त
२.	पा	मा	सा	धा	नी०	नी०	नी०	नी०
	म	हि	प	म	हा		मु	र
३.	सा	सा	गा	गा	नी	नी	धा	नी
	म	थ	न	मु	मा		प	तिं
४.	साँ	साँ	धा	नी	नी	नी	नी	नी
	भो		ग	यु	तं			

५.	सा	सा	गा	गा	मृा	मृा	मृा	मृा
	न	ग	सु	त	का		मि	नी
६.	नी०	पृा	धृा	पृा	मृा	मृा	मृा	मृा
	दि		व्य	वि	शे		प	क
७.	री०	गाँ	साँ	साँ	री०	गाँ	नी	नी
	सू		च	क	शु	भ	न	ख
८.	नी	नी	पा	धनि	नी	नी	नी	नी .
	द		र्प	ण	क			
९.	सा	सा	गा	सा	मा	मा	मा	मा
	अ	हि	मु	ख	म	णि	ख	चि
१०.	मृा	मृा	मृा	मृा	नी०	धृा	मृा	मृा
	तो		ज्ज्व	ल	नू		पु	र
११.	धा	धा	नी	नी	री	गा	मृा	मृा
	बा	ल		भु	ज	ग		म
१२.	मृा	मृा	पृा	धृा	नी०	नी०	नी०	नी०
	र	व	क	लि		त		
१३.	पृा	पृा	नी०	नी०	री	री	री	री
	द्रु	त	म	भि	ब्र	जा		मि
१४.	री	मा	मा	मा	री	गा	सा	सा
	श	र	ण	म	नि		दि	त
१५.	धा	मा	री	गा	सा	धा	नी	नी
	पा		द	यु	ग	पं		क
१६.	पाँ	माँ	री०	गाँ	नी	नी	नी	नी
	ज	वि	ला		सं			

षड्जकैशिकी—८

१.	सा	सा	मृा	पृा	गरि	मग	मा	मा
	दे							
२.	मा	मा	मा	मा	सृा	सृा	सृा	सृा
	वं							

३.	धा	धा	पा	पा	धा	धा	री	रिम
	अ	म	क	ल	ग	धि	ति	ल
४.	री	री	नी०	नी०	नी०	नी०	ना०	ना०
	कं							
५.	धा	धा	पा	धनि	मा	मा	पा	पा
	द्वि	र	द	ग	ति			
६.	धा	धा	पा	धनि	धा	धा	पा	पा
	ति	पु	ण	म	ति			
७.	मा	मा	सा	सा	सा	सा	मा	मा
	मु		गध		मु	खा		ब
८.	धा	धा	पा	धा	धनि	धा	धा	धा
	रु	ह	दि		व्य	का		ति
९.	सा	सा	सा	रिग	सा	रिग	धा	धा
	ह	र	म		बु	दो		द
१०.	मा	धा	पा	पा	धा	धा	नी	नी
	धि	नि	ना		द			
११.	री	री	गा	सा	मा	मा	मा	गा
	अ	च	ल	व	र	सू		न
१२.	धा	रिमु	री०	सुरि	री०	मा	मा	मा
	दे		हा		धं	मि		श्रि
१३.	सा	सरि	री	सरि	री	सा	सा	सा
	त	श	री		रं			
१४.	मा	मा	मा	मा	निध	पध	मा	मा
	प्र	ण	मा		मि	तम	हं	
१५.	नी	नी	पा	पम	पा	पम	पध	रिग
	अ	नु	प	म	मु	ख	क	म
१६.	गा	गा	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	लं							

## षड्जोदीच्यवा—९

१.	सा	सा	सा	मा	मा	गा	गा
	शै			ले			

४. मा	मगम	मा	मा	नि	पथ	पम	मगम
प्र	वि	क	मि	न	कु	मु	द
५. धा	पथ	परि	रिग	मग	रिग	मगम	मा
द	ल	फे	न	ग			नि
६. निध	सा	री	मगम	मा	मा	मा	मा
भ							
७. मा	मा	मुगमु	मुधु	पुपु	पुपु	पुम	मुमुग
का		मि	ज	न	न	ग	न
८. धा	पथ	परि	रिग	मग	रिग	मगम	मा
ह	द	या	भि	न			दि
९. मा	मा	धनि	धग	धप	मप	पा	पा
न							
१०. मा	मुगमु	मा	निधु	पुधु	पुमगु	गा	मा
प्र	ण	मा	मि	दे			व
११. धा	पथ	परि	रिग	मग	रिग	मगम	मा
कु	मु	दा	धि	धा			मि
१२. निध	सा	री	मगम	मा	मा	मा	मा
न							

## गांधारोदीच्यवा—११

१. सा	सा	पा	मा	पा	धप	पा	मा
सौ							
२. धा	पा	मा	मा	सा	मा	मा	मा
म्य							
३. धा	नी	सा	सा	मा	मा	पा	पा
गौ		री		मु	खां		व
४. नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
रु	ह	दि		व्य	नि	ल	क
५. मा	मा	धा	निस	नी	नी	नी	नी
प	रि	चु		बि	ता		चि
६. मा	पा	मा	परिग	गा	गा	सा	सा
त	सु	पा		दं			

७.	गा	मग	पा	पध	मा	धनि	पा	पा
	प्र	वि	क	सि	त	हे		म
८	री	गा	सा	सध	नी	नी	धा	धा
	क	म	ल	नि	भ			
९.	गा	रिग	सा	सनि	गा	रिग	सा	सा
	अ	ति	रु	चि	र	का		ति
१०	सा	सा	सा	मा	मनि	धनि	नी	नी
	न	ख	द		र्ष	णा		म
११.	माँ	पाँ	माँ	परिगँ	गँ	गँ	साँ	साँ
	ल	नि	के		तँ			
१२.	गाँ	साँ	गाँ	साँ	माँ	पाँ	माँ	परिगँ
	म	न	सि	ज	श	री	र	
१३.	गाँ	माँ	गाँ	साँ	गाँ	गाँ	गाँ	साँ
	ता			ड	न			
१४	नी°	नी°	पाँ	धाँ	नी°	गाँ	गाँ	गाँ
	प्र	ण	मा		मि	गौ		री
१५.	नी°	नी°	धाँ	पाँ	धाँ	पाँ	माँ	पाँ
	च	र	ण	यु	ग	म	नु	प
१६.	धाँ	पाँ	साँ	साँ	माँ	माँ	साँ	माँ
	म							

रक्तगांधारी—१२

१.	पा	नी	सा	सा	गा	सा	पा	नी
	तँ		बा		ल	र	ज	नि
२	साँ	साँ	पा	पा	मा	मा	गा	गा
	क	र	ति	ल	क	भू		प
३	मा	पा	धा	पा	मा	पा	धप	मग
	ण	वि	भू					
४.	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा
	ति							



५ धा ०	नी०	पा	मुपु	धा	नी०	पा	पा
६. मू ०	पा	मू	धुनि	पा	पा	पा	पा
७. री प्र	गा ण	मा मा	पा	पा मि	पा गौ	मा	पा री
८. री व	गां द	मां ना	पां	पां र	पां वि	मां	पां
९. पा द	पा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
१० री प्री	गा	सा ति	मा क	री र	गा गा	गा	गा
११. गां ०	गां	पां	धर्मं	धां	निर्धं	पा	पा
१२. मां ०	पां	मां	परिर्गां	गां	गां	गां	गां

## कैशिकी—१३

१. पा के	धनि	पा ली	धनि	गा ह	गा	गा	गा
२. पा का	पा	मा म	निध त	निध नु	पा	पा	पा
३. धा वि	नी	सां अ	सा म	री वि	री ला	री	री सं
४. सा ति	सा ल	सा क	री यु	गा तं	मा	मा	मा
५. मू मू	धा धौ	नी० धौ	धा ध्वं	मू ध्वं	धा बा	मू	पा ल
६. गा सो	री	सा म	धनि नि	री भं	री	री	री

७	गा	री	सा	सा	धा	धा	मा	मा
	मु	ख	क	म	ल			
८.	गा	गा	गा	मा	मा	निधनि	नी	नी
	अ	स	म		हा		ट	
९.	गा	गा	नी	नी	गा	गा	गा	गा
	क	स	रो		ज			
१०	गाँ	गाँ	नी	नी°	निर्धं	पाँ	पाँ	पाँ .
	ह	दि	सु	ख	द			
११.	माँ	पाँ	माँ	पाँ	पाँ	पाँ	माँ	माँ
	प्र	ण	मा		मि	लो	च	
१२.	साँ	माँ	गाँ	निर्धनिं	नी	नी°	माँ	गाँ
	न	वि	शे		ष			

मध्यमोदीच्यवा—१४

१.	पा	धनि	नी	नी	मा	पा	नी	पा
	दे		हा		धं	रू		प
२.	री	री	री	गा	सा	रिग	गा	गा
	म	ति	कां		ति	म	म	ल
३.	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	म	म	ले		दु	कु		द
४.	नी	नी	धप	मा	निध	निध	पा	पा
	कु	मु	द	नि	भ			
५.	पा	पा	री	री	री	री	री	री
	चा		मी		क	रा		बु
६.	मा	रिग	सा	सधृ	नी०	नी०	नी०	नी०
	रु	ह	दि			व्य	कां	ति
७.	मा	पा	नी	सा	पा	पा	गा	गा
	प्र	व	र	ग	ण	पू		जि
८.	गा	पा	मृा	निधृ	नी०	नी०	सा	सा
	त	म	जे		य			

९. पा	पा	मा	धुनि	पा	पा	पा	पा
मु	रा	भि	ट्ट	न	म	नि	न
१० मा	पा	गा	रिग	गा	गा	गा	गा
म	नो	ज		व		म	न
११. गा	पा	मा	पा	नी	नी	नी	नी
दो		द	वि	नि	ना		द
१२ मा	पा	मा	पांग	गा	गा	गा	गा
म	ति	हा		म			
१३ गो	गाँ	गाँ	गाँ	मा	निथ	नी	ना
शि	व	या		त	म	मु	र
१४ नी	नी	धप	मा	निथ	निथ	पा	पा
च	मू	म	थ	न			
१५ री°	गाँ	माँ	गाँ	माँ	निथनि	नी°	नी°
वं		दे		त्रै	लो	कय	
१६ नी°	नी°	धौ	पाँ	धौ	पाँ	माँ	मा
न	त	च	र	ण			

## कामरिखी—१५

१. री	री	री	री	री	री	री	री
त		स्था		णु	ल	लि	त
२. मा	गा	सा	गा	सा	नी	नी	नी
वा		मां		ग	स		कत
३. नी	मू	नी	मू	पा	पा	गा	गा
म	ति	ते		जः	प्र	स	र
४. गा	पा	मा	पा	नी	नी	नी	नी
सौ		धा		शु	का		ति
५. री°	गाँ	साँ	नी°	री°	गाँ	री°	माँ
फ	णि	प	ति	मु	खं		
६. री	गा	री	सा	नी	धनि	पा	पा
उ	रो	वि	पु	ल	सा		ग

७	मां	पां	मां	परिंर्ग	गा	गा	गा	गा
	र	नि	के		तं			
८	री	री	गा	सम	मा	मा	पा	पा
	सि	त	प		न	गे		द्र
९.	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	म	ति	कां		तं			
१०.	धा	नी	पा	मा	धा	नी	सा	सा
	ष		प्मु	ख	वि	नो		द
११.	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	क	र	प		ल्ल	वा		गु
१२	मृा	मृा	धृा	नी०	सनिनि	धा	पा	पा
	लि	वि	ला		स	की		ल
१३	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	न	वि	नो		द			
१४.	नी	नी	पा	धनि	गा	गा	गा	गा
	प्र	ण	मा		मि	दे		व
१५	सां	री०	गां	सां	नी०	नी०	नी०	नी०
	य		ज्ञो		प	वी		त
१६	नी०	नी०	धं	धं	पं	पं	पं	पं
	कं							

गांधारपंचमी—१६

१.	पा	मप	मध	नी	धप	मा	धा	नी
	कां							
२.	संनिनि	धा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
			त					
३.	धा	नी	सा	सा	मा	मा	पा	पा
	वा		मै		क	दे		श
४.	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी	नी
	प्रे		खो		ल	मा		न

५.	नी	नी	धप	मा	निरा	निरा	पा	पा
	क	म	ल	नि	भ			
६.	पा	पा	री	री	री	रा	रा	रा
	व	र	गु	र	भि	हु	गु	म
७.	मा	रिग	मा	सग	नी	ना	ना	ना
	ग		पा		वि	ल		मि
८.	नी	नी	गा	रिग	री	रा	रा	री"
	त	म	नो		ज			
९.	नो	गा	गा	निग	मा	ना	ना	नी
	न	ग	रा		ग	गु		न
१०.	नी०	मा	नी	मा	पा	पा	ग	गा
	र	ति	रा		ग	र	भ	ग
११.	गा	पा	मा	पा	ना	नी	ना	नी
	के		ली		हु	ल		भ
१२.	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	ग
	ह	ली	लं		न			
१३.	नी०	नी०	पा	धा	नी	गा	गा	गा
	प्र	ण	मा		मि	रे		न
१४.	नी०	नी०	नी०	नी०	नी०	ना	ना	नी
	जं		द्रा		धं	म		रि
१५.	मा	मा	धा	नी०	गनित	पा	पा	पा
	त	वि	ला		सको		ल	
१६.	मा	पा	मा	परिग	गा	गा	गा	गा
	न	वि	नी		दं			

## आंध्री—१७

१.	गा	री	री	री	री	री	री
	त	रु	णें		हु	कु	गु
२.	री	गा	री	गा	री	री	री
	ख	चि	त	ज	ट		

३.	री	री	गा	गा	री	री	मा	मा
	त्रि	दि	व	न	दो	स	लि	ल
४	री	गा	सा	धनि	नी०	नी०	नी०	नी०
	धौ		त	मु	खं			
५	नी०	री	नी०	री	धुनि०	धुनि०	पा	पा
	न	ग	सू		नु	प्र	ण	य
६.	मू	पू	मू	रिग	गा	गा	गा	गा
	वे		द	नि	धि			
७	री	री	गा	सस	मा	मा	पा	पा
	प	रि	णा		हि	तु	हि	न
८.	मू	पू	मू	रिग	गा	गा	गा	गा
	शै		ल	गृ				
९.	धू	नी०	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	अ	मृ	त	भ	व			
१०	पा	पा	मा	रिग	गा	गा	गा	गा
	गु	ण	र	हि	त			
११.	नी	नी	नी	नी	री	री	री	री
	त	म	व	नि	र	वि	श	शि
१२	री	री	गा	नी	सा	सा	नी	नी
	ज्व	ल	न	ज	ल	प	व	न
१३	पं	पं	मं	रिगं	गं	गं	गं	गं
	ग	ग	न	त	नु			
१४.	री०	री०	गं	संमं	मं	मं	पं	पं
	श	र	णं		ब्र	जा		मि
१५	मं	मं	नी०	नी०	सं	री०	गं	पं
	शु	भ	म	ति	कृ	त	नि	ल
१६	रिग	गा	गा	गा	गा	गा	गा	गा
	य							

नन्दयन्ती—१८

१.	गा	गा	गा	गा	पा	पा	धप	मा
	सौ							

२ धा ०	धा	धा	धा	धा	नी	सन्निनि	धा
३. पा म्य	पा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
४ धा वे	नी०	मा दा	पा	गु ग	गु वे	गा	गु द
५ मा क	री र	गा क	गा म	गा ल	गा या	गा	गा निं
६ मा त	मा मो	पा र	पा जो	धा वि	निथ व	पा	पा
७ धा जि	नी तं	मा	पा	गा	गा	गा	गा
८. गम हरं	पा	पा	पा	मा	मा	गा	गा
९. धा भ	नी व	मा ह	पा र	गा क	गा म	गा ल	गा ग
१०. मा ह	मा	मा	मा	मा	मा	मा	मा
११. री शि	गा वं	मा शा	पा	पम तं	पा मं	पा	नी नि
१२ री० वे	री०	री० श	री० न	पा म	पा पु	मा	मा वं
१३ धा भू	नी० ष	सन्निनि	धा ण	पा ली	पा	पा ल	पा
१४. धा उ	नी र	मा गे	पा	गु श	गु भो	गु	गु ग
१५. गा भा	पा	पा मु	पा र	धा शु	मा भ	गा प	मा धु
१६. धा लं	धा	नी	धा	पा	पा	पा	पा
१७. री अ	गा च	मा ल	पा प	पम ति	पा सू	पा नु	नी

१८. री०	री०	री०	री०	पूा	पूा	पूा	पूा
क	र	प		क	जा		म
१९. पा	पा	पा	पा	धा	मा	मा	मा
ल	वि	ला		स	की		ल
२०. नी०	पूा	गूा	गूमु	गूा	गूा	गूा	गूा
न	वि	नो		द			
२१ री०	री०	गूा	गूा	मूा	मूा	मूा	मा
स्फ	टि	क	म	णि	र	ज	त
२२ नी	पा	नी	मा	नी	धा	पा	पा
सि	त	न	व	डु	कू		ल
२३ सी	सी	धनि	धा	पा	पा	पा	पा
क्षी		रोद		सा			ग
२४ मा	पा	मा	परिग	गा	गा	सी	सी
र	नि	का		शी			
२५ री	री	गा	गा	मा	मा	पा	पा
अ	ज	शि	र	क	पा		ल
२६. री	री	री	गा	मा	रिग	मा	मा
पृ	थु	भा			ज	न	
२७. मा	नी	पा	नी	गा	गा	गा	गा
व		दे		सु	ख	द	
२८. मा	मा	पा	पा	धा	धनि	निध	मा
ह	र	दे		ह	म	म	ल
२९ धा	धा	सा	नी	धा	नी	पा	पा
म	धु	सू		द	न		सु
३०. री०	री०	री०	री०	मा	पा	धा	मा
ते		जो		धि	क		सु
३१ नी	नी	नी	नी	धा	पा	मा	मा
ग	ति	यो					
३२. मा	परिग	गा	गा	गा	गा	गा	गा
		नि					



## छठवाँ परिच्छेद

### राग प्रकरण

राग दो प्रकार के हैं—प्राचीन और नवीन। प्राचीन रागों का 'मार्गराग' तथा 'भाषाराग' कहते हैं। नवीन रागों का नाम 'देशीराग' है। मार्गराग, भाषाराग और देशीराग—उन तीनों के दूसरे नाम भी हैं, जैसे—शुद्ध राग, छायायुग राग और साधारण राग। मार्गराग में व्रज्जा, भरत, नारद आदियों के उपदेशानुसार शुद्ध और विकृत जातियों के लक्षण पूर्णरूप में हैं।

मार्गरागों में तीन भेद हैं, ग्रामराग, शुद्धराग और उग्रराग। ग्रामरागों में पांच भेद यो हैं—शुद्ध, भिन्न, गोठ, वेसर और साधारण।

काव्य, नाटक और गीत इन सब में रुचिभेद के अनुसार कल्या में रीति, नाटक में वृत्ति और गीत में गीति के भेद हुए हैं। पाँचों गीतियों के अनुसार ही ग्रामरागों के पूर्वोक्त पांच भेद हुए हैं।

शुद्ध गीति में स्वर वक्रतारहित है और मृदुल भी। भिन्न गीति में स्वर बक, सूक्ष्म, मधुर और गमकयुक्त है। गोठी गीति में स्वरों की निश्चिन्ता के साथ, तानों स्थानों में सवार गमकयुक्त है और मद्रस्थान में विशेष सवार है। वेसरगीति में स्वरों का प्रयोग वेग से होता है तथा रक्तिपूर्ण भी रहता है। इन तीनों गीतियों के लक्षणों का मिश्रित रूप ही साधारणी गीति है।

इन गीतियों के अनुसार ही ग्रामरागों की उत्पत्ति हुई थी, जैसे—

१. भरतमुनि ने—मागधी, अर्धभागधी, पृथुना, संभाविता—इन चारों गीतियों का ही उल्लेख किया है। ये गीतियाँ पद और ताल के अनुसार रहती हैं। परन्तु यहाँ बताया हुई गीतियाँ स्वरों से अनुसृत हैं। ये पाँच गीतियाँ "संगीत रत्नाकर" में "बुधर्म-मत" के अनुसार लिखी गयी हैं। मतंग के मतानुसार इन पाँचों के साथ, भाषा एवं विभाषा के दो और भेदों को मिलाकर सात गीतियाँ बनी हुई हैं।

२. इस विशेष संचार को "ओहाटी ललित" कहते हैं। चित्रक को वक्षःस्थल पर रखकर उकारों व अकारों के प्रयोग से गाना होता है।

ग्रामराग

- (अ) शुद्ध—७ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न राग  
 (१) षड्जकैशिकमध्यम  
 (२) शुद्धसाधारित  
 (३) षड्जग्रामराग  
 (२) मध्यमग्राम से उत्पन्न राग  
 (४) पचम  
 (५) मध्यमग्रामराग  
 (६) पाडवराग  
 (७) शुद्धकैशिकराग
- (आ) भिन्न—५ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न राग  
 (८) कैशिकमध्यम  
 (९) भिन्नषड्ज  
 (२) मध्यमग्राम से उत्पन्न  
 (१०) तान  
 (११) कैशिक  
 (१२) भिन्नपचम
- (इ) गौड—३ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न  
 (१३) गौडकैशिकमध्यम  
 (१४) गौडपंचम  
 (२) मध्यमग्राम से उत्पन्न  
 (१५) गौडकैशिक
- (ई) वेसर—८ (१) षड्जग्राम से उत्पन्न  
 (१६) टक्क  
 (१७) वेसर पाडव  
 (१८) सौवीरी  
 (२) मध्यमग्राम से उत्पन्न  
 (१९) बोट्टराग  
 (२०) मालवकैशिक  
 (२१) मालवपचम  
 (३) षड्ज और मध्यमग्राम से उत्पन्न

- (२२) टक्ककौशिक  
 (२३) हिंदोल  
 (उ) साधारण—७ (१) पङ्जग्राम मे उत्पन्न  
 (२४) रूपसाधार  
 (२५) शक  
 (२६) भम्माणपन्नम  
 (२) मध्यमग्राम मे उत्पन्न  
 (२७) ननं  
 (२८) गायत्रापन्नम  
 (२९) पाटुजौशिक  
 (३०) ककुभ

## उपराग—८

- |                |                |
|----------------|----------------|
| (१) शकतिलक     | (१) जेवगणा     |
| (२) टक्क       | (६) पन्नभाषा ७ |
| (३) सैधव       | (७) भाषनापन्नम |
| (४) कोकिलपन्नम | (८) नागगाधार   |

## राग या शुद्ध राग—२०

- |                  |                    |
|------------------|--------------------|
| (१) श्रीराग      | (११) ध्वनि         |
| (२) नट्ट         | (१२) मेघराग        |
| (३) बगाल (पहला)  | (१३) गंगराग        |
| (४) बगाल (दूसरा) | (१४) कामोद (पहला)  |
| (५) भास          | (१५) कामोद (दूसरा) |
| (६) मध्यमषाडव    | (१६) आम्रपन्नम     |
| (७) रक्तहस       | (१७) कदर्प         |
| (८) कोह्लहास     | (१८) देशख्य        |
| (९) प्रसव        | (१९) कौशिकककुभ     |
| (१०) भैरव        | (२०) नट्टनारायण    |

इन ५८ रागों में १५ रागों से भाषा, विभाषा और अंतरभाषा जैसे रागों की उत्पत्ति होती है। वे इनकी छाया के अनुसार रहते हैं। इस तरह के भाषाजनक १५ राग और उन १५ रागों से उत्पन्न राग ये हैं—

(१) सौवीर	(६) टक्ककैशिक	(११) भिन्नपञ्ज
(२) ककुभ	(७) हिंदोल	(१२) विसरपाडव
(३) टक्क	(८) बोट्ट	(१३) मालवपञ्चम
(४) पञ्चम	(९) मालवकैशिक	(१४) तान
(५) भिन्नपञ्चम	(१०) गाधारपञ्चम	(१५) पञ्चमपाडव

इनमें (१) सौवीर से उत्पन्न भाषाराग—४

(१) सौवीरी	(३) साधारित
(२) वेगमध्यमा	(४) गाधारी

(२) ककुभ से उत्पन्न भाषाराग—६

(१) भिन्नपञ्चमी	(४) रगन्ती
(२) काभोजी	(५) मधुरी
(३) मध्यमग्राम	(६) शकमिश्रा

ककुभ से उत्पन्न विभाषाराग—३

(१) भोगवर्धनी
(२) आभीरिका
(३) मधुकरी

ककुभ से उत्पन्न अंतरभाषाराग—१

१. शालवाहिनिका

(३) टक्कराग से उत्पन्न भाषाराग—२१

(१) त्रवणा	(९) पञ्चमलक्षिता
(२) त्रवणोद्धवा	(१०) सौराष्ट्री
(३) वैरजी	(११) पञ्चमी
(४) मध्यमग्रामदेहा	(१२) वेगरजी
(५) मालववेसरी	(१३) गाधारपञ्चमी
(६) छेवाटी	(१४) मालवी
(७) सैन्धवी	(१५) तानवलित
(८) कोलाहला	(१६) ललिता

- |                   |               |
|-------------------|---------------|
| (१७) रविचन्द्रिका | (१९) अश्वमेधा |
| (१८) ताना         | (२०) शिखा     |
| (२१) वेगरी        |               |

टक्कराग से उत्पन्न विभाषाराग—४

- |                  |             |
|------------------|-------------|
| (१) देवाग्रचन्दी | (२) गुर्जरी |
| (३) आध्री        | (४) भावनी   |

(४) पंचम से उत्पन्न भाषाराग—१०

- |               |                  |
|---------------|------------------|
| (१) कैशिकी    | (५) मैग्धवी      |
| (२) त्रावणी   | (६) दाक्षिणात्या |
| (३) तानोद्धवा | (७) आध्री        |
| (४) आभीरी     | (८) मागरी        |
| (५) गुर्जरी   | (९) भावनी        |

पंचम से उत्पन्न विभाषाराग—२

- |             |               |
|-------------|---------------|
| (१) भम्माणी | (२) आर्मायिका |
|-------------|---------------|

(५) भिन्नपंचम से उत्पन्न भाषाराग—४

- |                 |              |
|-----------------|--------------|
| (१) धैवतभूषिता  | (३) वराटो    |
| (२) शुद्धभिन्ना | (४) विद्याला |

भिन्न पंचम से उत्पन्न विभाषाराग—१

- (१) कौशली

(६) टक्ककैशिक से उत्पन्न भाषाराग—२

- |           |                |
|-----------|----------------|
| (१) मालवा | (२) भिन्नवलिता |
|-----------|----------------|

टक्ककैशिक से उत्पन्न विभाषाराग—१

- (१) द्राविडी

(७) हिंदोल से उत्पन्न भाषाराग—९

- |                 |                 |
|-----------------|-----------------|
| (१) वेसरिका     | (५) भिन्नपौराली |
| (२) चूतमजरी     | (६) गौड़ी       |
| (३) पङ्कजमध्यमा | (७) मालववेसरी   |
| (४) मधुरी       | (८) छेवाटी      |
| (९) पिजरी       |                 |

(८) बोट्टराग से उत्पन्न भाषाराग—१

- (१) माङ्गली

(९) मालवकैशिक से उत्पन्न भाषाराग—१३

- |               |               |
|---------------|---------------|
| (१) बागाली    | (७) गौड़ी     |
| (२) मागली     | (८) पौराली    |
| (३) हर्षपुरी  | (९) अर्धवेसरी |
| (४) मालववेसरी | (१०) शुद्धा   |
| (५) खजनी      | (११) मालवरूपा |
| (६) गुर्जरी   | (१२) सैधवी    |
| (१३) आभीरी    |               |

मालवकैशिक से उत्पन्न विभाषाराग—२

- |            |                 |
|------------|-----------------|
| (१) कामोजी | (२) देवारवर्धनी |
|------------|-----------------|

(१०) गांधारपंचम से उत्पन्न भाषाराग—१

- (१) गांधारी

(११) भिन्नषड्ज से उत्पन्न भाषाराग—१७

- |                 |                  |
|-----------------|------------------|
| (१) गांधारवल्ली | (५) त्रवणा       |
| (२) कच्छेल्ली   | (६) मध्यमा       |
| (३) स्वरवल्ली   | (७) शुद्धा       |
| (४) निषादिनी    | (८) दाक्षिणात्या |

- |                |             |
|----------------|-------------|
| (९) पुल्लन्दका | (१३) कलिका  |
| (१०) तुवुगा    | (१४) आलपणका |
| (११) पड्जभाषा  | (१५) बागलशी |
| (१२) कालिन्दी  | (१६) गारागा |
- (१७) मीरवा

#### भिन्नपड्ज से उत्पन्न विभाषाराग—४

- |             |               |
|-------------|---------------|
| (१) पोगलिका | (३) कालिन्दी  |
| (२) मालवी   | (४) देवशर्भनी |

#### (१२) बेसरषाडव से उत्पन्न भाषाराग—२

- |            |                |
|------------|----------------|
| (१) नाद्या | (२) बाह्यापडवा |
|------------|----------------|

#### बेसरषाडव से उत्पन्न विभाषाराग—२

- |             |             |
|-------------|-------------|
| (१) पार्वती | (२) श्रीकटी |
|-------------|-------------|

#### (१३) मालवपंचम से उत्पन्न भाषाराग—३

- |             |           |
|-------------|-----------|
| (१) वेदवती  | (२) भावनी |
| (३) विभावनी |           |

#### (१४) तान से उत्पन्न भाषाराग—१

- (१) तानोद्भवा

#### (१५) पंचमषाडव से उत्पन्न भाषाराग—१

- (१) पांता

ऊपर कहे हुए पंद्रह भाषाजनक रागों के अलावा, काँई-काँई, 'शका' नाम के भाषाराग के जनक रेवगुप्ति को भी अलग मानते हैं।

उत्पत्ति स्थान न जाननेवाला विभाषाराग पल्लवी है। उमी प्रकार के अन्तर-भाषा राग (१) भासवल्लिता (२) किरणावली (३) शकलल्लिता हैं।

(१) ग्राम रागों से उत्पन्न देशीराग या रागाङ्ग—

शकराभरण	पाचाली	गुर्जरी
घटारव	मध्यमादि	गौड़
हसक	मालवश्री	कोलाहल
दीपक	तोडी	वसन्त
रीति	बगाल	धन्यासी
कर्णाटिका	भैरव	देशी
लाटी	वराली	देशाख्या

(२) भाषारागों से उत्पन्न देशीराग या भाषाङ्ग—

गांभीरी	छाया	प्रथममजरी
बेहारी	तरङ्गिणी	आदिकामोदी
खसिता	गाधारगति	नागध्वनि
उत्पला	वेरजिका	वराटी
यौड़ी	डोवक्रिया	नट्टा
नादान्तरी	सावेरी	कर्नाटवगाला
नीलोत्पली	वेलावली	

(३) क्रियाङ्ग—

भावक्री	कुमुदक्री	धन्यकृति
स्वभावक्री	दनुक्री	विजयक्री
शिवक्री	ओजक्री	रामकृति
मकरक्री	इन्द्रक्री	गौड़कृति
त्रिनेत्रक्री	नागकृति	देवकृति

(४) उपाङ्गराग—३०

पूर्णटिका	कुतलवराटी	हतस्वर वराटी
देवाल	द्राविड ,,	तोडी (उपाङ्ग)
कुञ्जरी	सैधव ,,	छायातोडी
वराटी (उपाङ्ग)	अपस्थान ,,	तुरुक



गुर्जरी (उपाङ्ग)	प्रनाथ बलारग	हिंदोल (उपाङ्ग)
महाराष्ट्र गुर्जरी	भैरव (उपाङ्ग)	भल्लारग
सौराष्ट्र "	भैरवी	ब्राह्मरग
दक्षिण "	कामोद (उपाङ्ग)	मल्लारग
द्राविड़ "	मिहली कामोद	भल्लारग
वेलावली (उपाङ्ग)	नट्ट (उपाङ्ग)	कर्नाट गीत
गुजी	छायानट्ट	तुमक गीत
खंवावती (स्तभावती)	टक्क (उपाङ्ग)	द्राविड़ गीत
छाया वेलावली	कोलाहल	

### रागों का लक्षण और ग्रामरागों के पाँच भेद

जो स्वजाति का अनुसरण करके प्रकाशित होने समय रूपक या प्रबन्ध के नियमों में दूसरी जातियों का भी थोड़ा-सा अनुसरण करने है, उन्हें शुद्धराग कहते हैं। भिन्न राग चार प्रकार के होते हैं, जैसे—(१) श्रुतिभिन्न (२) शुद्धभिन्न (३) जातिभिन्न और (४) स्वरभिन्न।

श्रुतिभिन्न राग में चतुःश्रुति-स्वर, द्विश्रुति-स्वर के रूप की कल्पना है। उदाहरण—भिन्नतान राग में पङ्क्ति की दो श्रुतियों की निपाद लेना है।

शुद्धभिन्न रागों की उत्पत्ति स्वराति के भेद में होती है। शुद्धकैशिक और भिन्नकैशिक—इन दोनों के स्वरस्थान और दूगुने मात्र विषय एक-जैसे हैं। किन्तु शुद्धकैशिक राग में तारस्वर की व्याप्ति होती है। भिन्नकैशिक में मध्यमराग की व्याप्ति होती है।

जातिभिन्न रागों की उत्पत्ति अल्पत्व-बहुत्व के भेद, सूक्ष्म, अतिसूक्ष्म और वक्र-स्वरों के प्रयोग से होती है। शुद्धकैशिक मध्यमराग में भिन्नकैशिकमध्यमराग उत्पन्न होता है। दोनों रागों के ग्रह और अंश समान हैं, परन्तु जनकजाति के भेद में वर्णभेद अर्थात् सूक्ष्म व अतिसूक्ष्म स्वरों का प्रयोग, वक्रप्रयोग होने में जातिभिन्न रागों की उत्पत्ति होती है।

स्वरभिन्न रागों में, वादी स्वरों को रखकर संवादियों को छोड़ देना जाता है। उदाहरण—शुद्धपाडव से भिन्नपङ्क्ति, भिन्नपञ्चम इत्यादि रागों की उत्पत्ति इसी रीति से हुई है।

गौड़राग में गौड़गीति का लक्षण है।

वेसरराग में स्वर वेग से उच्चारण किये जाते हैं। इसी कारण इसका नाम

वेसर पड़ा। नाटक में शुद्ध-भिन्न आदि रागों के विनियोग पर नाट्यशास्त्र में इस प्रकार व्यवस्था की गयी है—

पूर्वरङ्ग में शुद्धराग, प्रस्तावना में भिन्नराग, आमुख में वेसरराग, गर्भ में गौड़ी और अवमर्श में साधारण रागों का उपयोग करना होता है। इसके सम्बन्ध में एक दूसरी विधि भी है। मुखसधि में षड्जग्रामराग, गर्भसधि में साधारितराग, अवमर्श में पञ्चमराग, सहार में कैशिकराग, पूर्वरंग में षाडवराग और अन्त में कैशिकमध्यम इत्यादि रागों को उपयोग में लाना चाहिए।

### (१) शुद्धसाधारित

यह राग शुद्धमध्यमा जाति से उत्पन्न होता है। इसकी मूर्च्छना षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना है। इसके ग्रहस्वर और अशस्वर तारषड्ज है। न्यासस्वर मध्यम है। इसमें निषाद एव गाधार अल्पप्रयोग है। इस राग का देवता है सूर्य। यह राग वीर-रौद्र रसों का पोषक है और यह दिन के द्वितीय प्रहर में गाने योग्य है।

**आलाप**—साँ पाँ धाँ रीपापाधारी पाधा सासा पाधानीधा पामाम्पा रीपा धारीपाधारी पाधापाधापापा सासा मा। साँ गाँ रीं माँ। मगरि सासा सरिग पाधारीपा धारी पाधापाधासासा सारीगामाधापानीधा पानीधापा सा सा।

**करण**—सस पप धध ररि रप धस साम् २ ररि रप धनि पप रिप धस सा सा २ धध मृमृ गारी गुमृ रिग मम मगरिग सासा २ सस धस रिगु सासा पाधा निधध मृमृ। (यह प्रबन्धविशेष है।)

आक्षिप्तिका—

१	सा	सा	धा	नी	पा	पा	पा	पा
	उ	द	य	गि	रि	शि	ख	र
२	धा	धा	नी	नी	री	री	पा	पा
	शे	ख		र	तु	र	ग	खु
३	री	पा	पा	पा	धा	नी	पा	मा
	र		क्ष	त	वि	भि	न्न	
४.	धा	मा	धा	सा	सा	सा	सा	सा
	ध	न	ति	मि	र			
५.	धा	धा	सा	धा	सा	री	गा	सा
	ग	ग	न	त	ल	स	क	ल

६. री	गा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
त्रि	लु	लि	न	ग	ह		म
७. धा	मा	धा	भा	सा	सा	सा	सा
कि	र		णो	ज	य		तु
८. पा	धा	निध	पा	मा	पा	मा	मा
भा				तु			

—(यह मतङ्गादि पोम्न वचन स्वर साहित्य है।)

### (२) षड्जग्रामराग

यह षड्ज मध्यमा जाति में उत्पन्न होता है। उसका प्रह तथा अग्रस्वर तार षड्ज है। राग सपूर्ण है। इसमें न्यासस्वर मध्यम है, अन्यास पद्म है। अवगोही वर्ण में इस राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अरुणकार प्रभञ्जन है। उसी मूर्च्छना षड्जादि है। इसमें काकली निपाद एवं अग्रमाधार का प्रयोग विहित है। यह राग वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पापक है। राग-देशता बृहस्पति है। इसे वरसात के दिनों में प्रथम प्रहर में गाना चाहिए।

**आलाप**—सुमुरी गधगरि मनिधापाधाधारीगा सा। री गा सा मग पानिपनिम सा सा। गसरि पधनिप मामा।

**करण**—री० री० गाधा गरि मामा नी० धपापा। री० री० गध पानि सा री० सा री०। सी० सी० गानिधा रीरीगा धा गारी सी० सी० निधपापा। री री पापा निधनि सा गा री०। सरि सरि पधनिध पमामामामा।

### आक्षिप्तिका—

१. री	री	गा	सा	गा	री	गा	सा
स	ज	य	तु	भु		ता	
२. नी	धा	पा	पा	री	री	गा	धा
धि	प	ति:		प	रि	क	र
३. गा	री	सा	सा	सा	सा	सा	सा
भो		गीं	द्र		कुं		ड
४. सा	सा	गा	धनि	नी	नी	नी	नी
ला		म	र	ण:			

५. गा	रिग	धा	धा	गा	गरि	सा	सा
ग	ज	च		मं	प	ट	नि
६. नी	धा	पा	पा	री	री	पा	पा
व	स	न		श	शा		क
७ नी	धा	नी	सा	सा	सा	सा	रिसरि
चू		डा	म	णि			
८ पा	धा	निव	पा	मा	मा	मा	मा
श				भु			

### (३) शुद्ध कैशिकराग

यह राग कामरवी और कैशिकी जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका ग्रहस्वर और अशस्वर तारपङ्ग है, न्यासस्वर पचम है। इस राग में काकलीनिषाद का प्रयोग है। अवरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। इसमें स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। यह राग सपूर्ण है। इसकी मूर्च्छना मध्यमग्रासीय षड्जादि है। राग अगारक (मङ्गल) का प्रीतिकारी और वीर, रौद्र एव अद्भुत रसों का पोषक है। शिशिर ऋतु में प्रथम प्रहर में इसे गाना चाहिए।

**आलाप**—सासा गामा गारी गामा सुानी सारी साधा माधा माधा नीधा पामा गामा पापा।

**वर्तनी**—सासासासा रीरीसासारीरी गागा सासासासा मामा गारी गारी सासा-रीरीप नि सासासासा रीरी मामा पापाधामा मामाधानी सासासामा रीरीगामा सासा-पापा धामागामा पामा पापापापा।

आक्षिप्तिका—

१ सा	सा	सा	सा	सा	सा	नी	धा
अ		पिन		ज्वा		ला	शि
२ सा	सा	री	मा	सा	री	गा	मा
खा		के		शि			
३ सा	गा	री	सा	सा	सा	सा	सा
मा				स	शो		णि
४. सा	सा	सा	सा	नी	सा	नी	नी
त	भो				जि	नि	

५	मा	गा	गा	रा	मा	म	रा	पा
	म		वा		रा		रा	पा
६	वा	वा	पा	पा	रा	म	रा	पा
	नि		मा		मे			
७	रा	गा	गा	गा	वा	रा	वा	पा
	न			म	म	र	न	
८	वा	नी	गा	गा	पा	म	पा	प
	मो			म	मो			

## (४) शुद्ध षाड्जराग

मध्यम जाति में विकृत भेद में उत्पन्न हुआ है। इसका प्रमुख कारण मध्यम है, न्यास एवं अशस्वर मध्यममध्यम है। मध्यमग्राहीय मध्यमादि उत्पत्ति मन्त्रित है। इसमें गांधार और पचम का अल्प प्रयोग है, हात्थोनिषाद तथा अवस्थाधार का प्रयोग भी है। संचारी वर्ण में इस राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अन्तर्कार प्रसन्नान्त है। यह शुक्र-प्रिय राग है और हास्य एवं शृंगार रस का पापक है। पूर्व याम में गाना चाहिए।

**आलाप—**मा गारी नीधा साधानी साधवा गारीगा धा रा धामागामा साधवा-  
मारी गारीनीधा साधानीमामा।

**करण—**ममरिग मम सन धनि गम धनि मा मा पपवर्धन धममम प्रमगार गागा-  
मूरिगामामा।

**वर्तनिका—**साधनि पध मारि सानि धवाधमगारि गागगागना धममा  
सा गारी गारी गासामाधामा गारीगा गमार्गिगा मागना मा धनि धमसाधनि  
मा मा मा।

## आक्षिप्तिका—

१.	मा	मा	धा	धा	रा	वा	नी	पा
	पृ	श्रु	ग		उ	ग	नि	न
२.	धा	नी	मा	मा	मा	रा	मा	री
	म	द	ज	ल	म	नि	मी	
३	धा	नी	सा	सा	गा	रिग	धा	धा
	र	भ	ल		रन		पद्	प

४. मा	धा	सा	मग	मू।	मू।	मू।	मू।
द	स	मू		ह			
५. मग	री	गा	म।	मा	मा	पम	गा
मु	ख	मि		द्र	नी		ल
६. री	गा	मू।	मू।	मू।	मू।	मू।	मू।
श	क	लै		भू	पि		त
७. नी	धू।	नी	धू।	मू।	मू।	सू।	सू।
मि	व	ग	ण	प	ते		
८. गा	री	री	गा	मू।	मू।	मू।	मू।
	जं	य	तु				

### (५) भिन्नकैशिकमध्यम

यह राग पङ्जमध्यमा जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका ग्रह और अशस्वर पङ्ज है, न्यासस्वर मध्यमस्वर भी हो सकता है। पङ्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है। संचारी वर्ण मे राग का प्रकाशन होता है। राग मे काकलीनिषाद का प्रयोग है। इसका स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नादि है। यह वीर, रौद्र और अद्भुत रसो का पोषक है। दिन के प्रथम याम मे गाने योग्य है। चद्र-प्रिय राग है।

**आलाप—**सू निधा सांमा। मम धम मम धम गामाधावा नीधा सस सू गा माधानीधा सू सा धमा मगा स गास साधा मामा। सू गा माधानीधा सू सा मवा पमाप मामा।

**वर्तनिका—**सस निध सस मम मध मग मध निमम। नीधा नीमधनिस। निधनि सुसुसुनुनु धध। मम गसू सु गम। सांग गधाधावधममधुमगममधसुसु। सुमधम-धपमापा मामा। (यह प्रबन्धविशेष है।)

आक्षिप्तिका—

१. सा	सा	नी	धा	सा	सा	मा	मा
वृ	ह	दु	द	र	वि	क	ट
२. मा	धा	मा	गा	मा	धा	नी	मा
ग		म	न	ज	र	ठ	वि
३. मा	नी	धा	नी	मा	धा	नी	नी
भ		क्त		सु	वि	पु	ल

४	नी	धा	नी	सा	नी	सा	सा	सा
	पी		ना		न			
५	मा	मग	सा	सा	नी	धा	पा	प
	अ	रि	द	म	न	नि	प	म
६	धा	नी	सा	सा	नी	सा	सा	न
	लो		व	न	मू	र	न	वि
७	मा	मा	मा	सा	नी	सा	सा	म
	त	वि	ना		प	क		
८	सा	सा	धा	नी	मा	सा	सा	सा
	व				इ			

## (६) भिन्नतानराग

यह मध्यमा और पचमी जानियों से उत्पन्न होता है। इसमें पा, म, र, न, ध, और अक्षर हैं, न्यामस्वर मध्यम है। इसमें कान्करीनिपाद का प्रयोग है। पचमस्वर का अल्प प्रयोग है। सच्चागी वर्ण में इस राग का प्रतीकान होता है रनार्या सा र अक्षर प्रसन्नादि है। ऋषभ वर्ज्य भी है। मध्यमग्रामी। पचमादि मूर्च्छित है। प्रथम याम में गाने योग्य है। करुण रस का पोषक है। शिवप्रिय राग है।

आलाप—पूा नीा सागा मापा धापा मगा मामा । मगध मगध सा सा गन मू भागम पापापानी सुगुामा धापा म सुमुमा । मम धप धप मूग पापा मगध मानमापापा मूम पप धध निनि पध मध मगगुमा सा गुगगमम पापापानी सुगुपापा धापा मगमासा ।

वर्तनी—पापा नीनी सुमु गुगुपापानीपूानी सागुग सागामा पापा पाम सासापापा (पचम) पापा सुमा धामापापा (पङ्क) मग मम (पचम) नीसुगा मापाधाम गूा मामा ।

## आक्षिप्तिका—

१.	पा	पा	नी	नी	सा	सा	सा	सा
	ह	र	व	र	मू	कु	ट	ज
२.	सा	गूा	मप	मग	सा	सा	सा	सा
	टा		लु	लि	तं			
३.	सा	गा	मा	पा	धा	पा	मप	मग
	अ	म	र	व	धू		कु	च

४	सा	गा	मा	पा	पा	पा	पा
	प	रि	म	लि	त		
५	धा	पा	सा	मा	पा	पा	धा
	व	हु	वि	थ	कु	सु	म
६	सा	सा	पा	पा	धा	पा	मा
	जो		रु	णि	त		गा
७	धा	पा	पम	मपग	सुा	गुा	मुा
	वि	ज	य	ते	ग		गुा
८	धा	पा	मग	मा	मा	मा	मा
	वि	म	ल	ज	ल		

### (७) भिन्नकैशिक

यह कैशिकी और कामरिखी जातियों से उत्पन्न हुआ है। ग्रह, अश और अपन्यास पङ्क्ति हैं। सम्पूर्ण है। इसमें काकलीनिपाद का प्रयोग है। मद्र स्थायी स्वरों का प्रयोग अधिक है। पङ्क्तिग्राम की पङ्क्तिमूर्च्छना में राग-स्वरूप मिलता है। राग का प्रकाशन सचारी वर्ण में होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नदि है। राग दानवीर, रोद्र तथा अद्भुत रसों का पोषक है। शिशिर ऋतु में, पहले याम में गाने योग्य है। शिवजी को प्रीतिदायक है।

**आलाप**—साधा साधासा निधस नीसा सा सारी सावाधासाधासा निध सनि सासा सारी सासा धानी साधा सा मवासापापा।

**वर्तनी**—सामाधा साधापा सारी सापा धामाधासासासा। सासा रीरी गुागुा सारी सामासाधा पापा सारी सापा धामा धापा सापापापा।

आक्षिप्तिका—

१	सा	सा	सा	सा	री	री	सा	सा
	उ			द्र	नी			ल
२	सा	सा	पम	पा	पा	पा	पा	पा
	म			प्र	भ			म
३	सा	धा	सा	पा	धा	सा	री	सा
	दा			ध	ग			ध
४	सा	सा	सनि	सा	सा	सा	सा	सा
	वा			नि	त			









रसों का पोषक है। शिशिर ऋतु मे मध्यम याम के उत्तरार्ध मे गाने योग्य है। राग शिवप्रिय है।

**आलाप**—सासा सग सनिसरी मगसमम पम निप पगम गरि रिगम मस।  
गसा सृनि सरिम गपम पपरिमपाधारी मापाधानि रिमापा धास नि सासा। सासा  
(पङ्ज) ससससस ससस मगसु गसनि सासा। सासा सस,ग ससस मगमरि गसग  
सधस। पधप मापमापापा। पमपापापधपधपापप पधरिरि रि मरि मसरि मधास-  
निसासा। सासा (पङ्ज) ससससस ससस सग सग सनिसासा। सासा सस्मास  
समग मरिगस गसधसपध पमा पापा धम पापा गम गगम (पञ्चम) पप गग मम गग  
गमग। निनिपनिप गमगस सनिपनिप। गमगपम मगमग गरीरी रिगमम (पङ्ज)  
स सससससस ससगसधसा गध सरीमापापमापा।

**करण**—निस निध सस रिम रिगम धमगपपनिगा पमगारि परीरीरिमरिम-  
समरी मरिगसा मपधस रिमापमापापारिमरिम रिमपावारिम पनि रीरीरिमसा  
पध सससनिसा सम रिग। सग सनिनी निनि निनि सधध सध मम पपपा गागगनि  
पपधनी गगगप गमागा रीरी रिगामाम (पङ्ज) स सनी निसा गारी रिम गम सागा -  
मापा पनि धनि गमग धधम रिस गा सग सनि धसा धसरि मा पम पापा पम धमा रिमा  
रीसध सारी रिम मम मग साधध सस मम पप मम पापा पप गग मम पापापा।

आक्षिप्तिका—

१	सा	सा	सा	सा	नी	नी	नी	नी
	भ		स्मा		भ्य		ग	वि
२	नी	नी	सा	री	री	गा	सा	सा
	भू		षि	त		दे		ह
३	सा	सा	री	सा	री	सा	री	सा
	सु	र	व	र	मु	नि	स	हि
४	री	री	री	री	मा	मा	मा	मा
	त				भी		म	भु
५	सा	सा	सा	सा	री	री	री	री
	ज		ग	म	वे		ष्टि	त
६	सा	सा	मा	सा	मा	मा	री	मा
	वा		हु		सु	र	व	र

७	री	मा	मा	गा	पा	पा	पा	प
	न	मि	न	प	र			
८	री	री	री	री	पा	पा	पा	प
	च		द्र	क	रा		र	र
९	मा	री	री	री	मा	मा	नी	मा
	स		त	नि	ध	ध	ध	
१०	नी	नी	मा	नी	री	मा	रा	मा
	सु	र	म	रि	र		र	र
११	मा	मा	सम	गरि	मा	मा	सध	रनि
	र				प्र	ण	म	न
१२	पध	पध	पप	पप	मप	मप	पा	पा
	स	त	त		नि	र	र	
१३	पध	पध	रिम	पम	धा	मा	मा	मा
	म	क	ल		प	र	म	
१४	धा	नी	पध	मा	पा	पा	पा	पा
	शि	व	म	जे	य			

## (११) वेसरपाडव

यह राग पड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न है। अथा, यह दोर राग मध्यम है। संपूर्ण राग है। काकली निपाद और अन्तरगाथाय का प्रयोग है। मध्यमरागाय मध्यमादि मूर्च्छता है। शान्त, शृंगार और ताण्ड्य रसों का पापक है। दिन के नवगुं याम से गेय है। शुक्रप्रिय राग है।

आलाप—सुमारीगुमारी गुमू। मागा मागा। मागामापाथाना पनी धामा नीधामामा। सुधा मारीगाथा मनी धानैध (पंचम) पापा मधा मधा मरी-गुारीमामारीगारीधामा मरी मगागमा गागागरि, ममा मम रानि धनि पंग पम निध-निधा (पंचम) पम धग मम गरी मगा मुा मुामुामुगा मधा नागा रीगा मम ग्या नीधनि धसनिधा नीध (पंचम) पापा। पपनि धधनि पापा पपनि धधनि मा मुा। मम निधा धध गमा। ससमरी री गामामा। मरिगिग गुमू। गरिगिग मुा मुा मरि रिग रिनिधामा मरिगि गरि रिधम रिनि मारिगि सगा मधनि धसम, धनि धगग-धनि धधस धनि धममु मस समध मुरिगि मरिगि मगसा धनिधमनि धानिधा (पंचम)

पापा पप पपनि धनि धधनि धनि ममनि धधस ससग धधस धधमा रिग सगस धसरि-  
गम रिगमांमा । मरि गसा रिगमां मा मरी गरिगमा । मरिगरि धरि रिरि धरि  
रिरि मांमा । गममगधधम धम रिरिम रिग सगस धनिध सनि धनिधा (पंचम)  
पापा । पृपृ पृपृ पृपृ पृपृ । निध निध धनि धनि ममनि निध निध धमा गुस गस धनिध  
सनि धनी धसरि गरिग सनिधासा पधासरी मृ गा मृ मा ।

करण—मृधामम गृमांमा मम गम मा । मृमृमरिमृमां ममरि मृमा धधानि  
धनिधा धस धनिधा धाधा म रिग मग मांमा (ऋषभ) रि धरीरीरीरीधरीरीरीरीग  
रिग मांमा नी पधा मा रिग रिग रिग सा । सुमृ (धैवत) निध धस धनि धापापा ।  
पप (धैवत) धनीनीमांमा । मृरि मरिग मनि धा धा धा (धैवत) धनिधग (षड्ज)  
सा नीधा सारी गृ मा मृमधारि रिरि गग मृमृ रिग रिनि पध मृमृ रिग रिम  
रिगा ससा धनि धस धनि धध (पंचम) पा । (धैवत) धग सस मग रिग मा-  
मांमांमा ।

आक्षिप्तिका—

१.	मा	गा	री	सा	री	गा	री	सा
	इ		द	गो		व	म	णि
२.	री	सा	री	गा	मा	मा	मा	मा
	दा		रु	स		चि	अ	
३	मा	री	गा	सा	नी	धा	सा	सा
	फु	ल्ल	क		द	ल	सि	
४	पा	धा	मा	री	गा	मा	मा	मा
	लि		ध	सो		हि	अ	
५	री	री	पा	पा	मा	पा	धा	नी
	म		त्त	द		हु	र	णि
६	पा	धा	मा	गा	री	गा	री	सा
	णा		अ	सो		हि	अ	
७.	मा	री	गा	सा	नी	धा	सा	सा
	का		ण	ण		सु	र	हि
८.	पा	धा	सा	री	गा	मा	मा	मा
		ग	ध	सी		अ	ल	



पपनिनिनिनिधनिनि निपवधधरिपपमधममरिरिगरि (पचम) पनिनिधधपुपुमुमगग-  
रिरिमग सामानिधनिधाधधधनिपपपधगमरीगरिरिपरिपामगागामामा ।

१. सा	धा	सा	सा	सा	सा	सा	सा
प	व	न	वि	लु	लि	त	
२. धा	पा	मा	पा	धा	पा	मा	मा
भ्र	मि	त	म	धु	क	र	
३. धा	पा	मा	गा	री	गा	सा	निध०
ज	ल	ज	रे		णु	प	रि
४. सा	री	मा	पा	पा	पा	पा	पू
पि		ज	रि	ते			
५. सा	री	मा	पा	पा	पा	पा	धा
म		द	म		द	ग	ति
६. सा	सा	पा	पा	धा	पा	मा	गा
ह		स	व	धू			
७. धा	पा	मा	गा	री	गा	सा	निध
वि	च	र	ति	वि	क	सि	त
८. पा	पा	पम	गम	मा	मा	मा	मा
कु	मु	द	व	ने			

### (१३) मालवपंचम

यह मध्यमा और पचमी जातियो से उत्पन्न है। ग्रह, अश तथा न्यास पंचम है। मध्यमग्रामीय पचमादि मूर्च्छना से रागस्वरूप मिलता है। आरोही वर्ण मे राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। गाधार अल्पत्वस्वर है। काकलीनिपाद का प्रयोग है। श्रृंगार एव हास्य रसो का पोषक है। केतु का प्रियकर है। दिन के अतिम याम मे गेय है।

**आलापः**—पामारिगासाधानिधपाधधानिसरीमागागपा धामारिगा सानिधनिमा-  
साधनिसारिगामगससाधानीवपापधानीसारी। मृमृ।गगपुधामारीगासानिधनिमा-  
माधानिसारिगामगसनिधनिपु।।पु।पु।सधाधासगसामुमगारिरिरिमु।मु।पमा।सारीमा-  
पाधानीवापाधमासाधानीधापु।रिरिरिगामापारीरीगामापारीरीरिगामापानिधा मापा-  
निधा मारीरिगामामासरिगामामगसनिधानिपा। पापा पपस धधग ससग गरिप  
अमप मपपु।पु।।धाम मप धम।मा पृ।धानीनिमाम।पाधासासमाम।पु।धागासाधानि धापु।



धमामधनि धापा मामा (मध्यम) गाग् मगम री रिगारि र्गमग मगमगम रीरि र्गमग  
मापमामपापापपधामा ममनिनिधवापप र्गमाममम र तातातातातापमममगारि र्गाननी-  
धधपा रीरीधरिगिमापापा रीरीधरिगिगमापा । र्गमगमग री र्गमापापा र्गमगिगमप-  
धनिधम मरिरिगिगम मगमगधमगिगमगिगनिधमपापा र्गमगगुर्गानतापातामुगासु-  
धानीधापाधमसधनिधपा ।

करण—मापाधामा र्गमगमा धनिमा धनिमा रिमगा धनिधमधनिधपापा ।  
धध धनिधनिरि मापधनिधमगधानीधामाधाना (पनम) पापधमगधधमगाममसा-  
मगारीपमामुपनिधनिधमनिधपापा रिगमापा धनिधम धनिधपधमममममधनि-  
ममनिनिधधपाधामनिधपापा ।

आक्षिप्तिका—

१	गा	री	मनि	गा	मग	रिग	गा	पम
	ध्या		न	म	य	न	वि	
२	पा	पा	गा	मा	गम	गा	निध	नी
	मु		च	नि	दी	न		
३	री	मग	पा	पम	पा	पा	धप	भा
	व्या	ह	र		नि	वि	श	ति
४	रिम	गम	धम	धनि	पा	पा	पा	पा
	म	र	म	लि	ले			
५	पम	धम	सा	मा	गा	गा	गा	निध
	वि	धु	नो		नि	प		क्ष
६	निध	सा	सा	मा	मा	र्ग	गा	मा
	यु	ग	ल		न	रे		द्र
७	धा	मा	रिग	सा	निध	गा	पा	मा
	हं		सो		नि		ज	
८	मरि	गम	धम	निध	पा	पा	पा	पा
	प्रि	या	वि	र	हं			

### (१४) रूपसाधार

यह नैपादी व पङ्जमध्यमा जातियो से उत्पन्न हुआ है। ग्रह और अंश पङ्ज हैं।  
मध्यम न्यास है। ऋषभ तथा पचम अल्पस्वर हैं। काकलीनिपाद का प्रयोग है।

अवरोही वर्ण मे राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नमध्य है। वीर, करुण, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है।

**आलाप**—सानिधा सनि सा सामा पामापामपा मगामनी निधाधधा सधनि धासनी सुसुपा धा सा री गाधा सापा धमा माधा निधानीनी मागा मागा मसा।

या

**आलाप**—सा धा सा धा पा पधा सा सा सगामगासगा धापा धा सा सुा सुा सुा गा मृ निधा सुा ससनि सा सुा सुा सुा ग सा धा पाप धप ध सा सुा सुा गा मा नी सासा (षड्ज) स सगा सगा ग सासा धापा धाप मामा।

**करण**—साधा सनिधनी सा सा पामा पममा गसु नीधाधाध सधनिधध (षड्ज) सा साधाधासारी गमगरिसधाधपसाधधनिसा (मध्यम) मगमसा। सगमधमनिधा सगस सधनिध धमा मगामा मामा (मध्यम) (पचम) पगगम माग ममनि निधप-प मपा। गममम (षड्ज) सध सससा निधम पप धध स ररिर मरि ग सा धधधधगसा (धैवत) निधमा (मध्यम) म सा सगगध मम पस सग सस धनि धध मा मग मामा।

आक्षिप्तिका—

१. मा	मा	नी	नी	धा	धा	सा	सा
स	द्यो			जा		तं	
२. नी	नी	धा	सा	सा	सा	सा	सा
वा		म	म	धो		र	
३. सा	सा	नी	धा	पा	मा	मा	मा
त		त्पु	रु	ष	मी		
४. सुा	री	सुा	नी	नी	धा	सा	सा
शा				न			
५. मा	मा	मा	मा	नी	नी	धा	धा
वि		श्व		वि		ण्णु	
६. सा	सा	पा	पा	मा	मा	मा	मा
वे		द	प	द			
७. मा	मा	नी	नी	नी	धा	सा	सा
सू	क्षम	म	चि		त्य	म	
८. नी	नी	धा	सा	सा	सा	सा	सा
ज	न	क	म	जा		तं	

१. मा	मा	मा	मा	ना	मा	ना	मा
प्र	ण	मा		भि	र	र	
१०. मा	मा	ना	ना	मा	मा	ना	मा
सद्	ग		र				
११. मा	मा	ना	ना	ना	ना	मा	मा
श	र	ण		म	भ	र	म
१२. मा	मा	ना	ना	मा	मा	मा	मा
हं		ग	र	म			

## (१५) शकराग

यह पाङ्जी व धैवती त्रानियों में उत्पन्न हुआ है। यह अश और स्याग पङ्ज है। संपूर्ण राग है। काकली पङ्क अन्तर गान्धार का प्रयोग है। पङ्कधामोय पङ्जजादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण में राग का प्रमाण जाना है। स्थायी स्वर अलंकार प्रमत्तमध्य है। वीर, शास्त्र तथा अद्भुत रंगों का प्रयोग है। मद्राप्रय राग है।

आलाप—मा निधनी पापाधना सारीगामासारी माधा धाना माया निधमासा निधमानी धापानिमा गमा धध निधिरि गा मा।

या

आलाप—सा सनिमा मप धम सुगुगा मम मग माध गाम पगमगामनि गगमम निरिनिरि रिरि धनि सामपाधा मागामागनि म्मा सु नी गाम। रिरिरिरि गा रिधाधा पानिनिनि निध ससा मरि रिरि धुधुधु मृ धू मा धम रिमु मरि। म्मा धापामा मागा-सास री सासा।

करण—(पङ्ज) गमनि मम मम पप धध गगा गरिगीरी समगम माधधधम गगससगासनि साससनि रिरिरिरिनिरिधनिमपधामा (गान्धार) ग (पङ्ज) सनिनि पनिसासा सससनि रिरि गरिगि धापानि निधागागा गरिगि रिरिधधधधममा। धमरि ममरिमधधपप मम गग (पङ्ज) गम निमासा।

या

करण—(पङ्ज) सनि धनि म्मा सुा सुा स ससा। सरिरिरि रिम (पङ्ज) (धैवत) धध (पङ्ज) सम म्मा गा गगमा गगनिस (पङ्ज) सनिनिनि म रिरि गगमा।

### (१६) भस्मानपंचम

यह षड्जमध्यमा जाति से उत्पन्न है। ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। न्यास मध्यम है। काकली निषाद का प्रयोग है। सपूर्ण राग है। गाधार अल्पत्वस्वर है। षड्जग्रामीय षड्जादि मूर्च्छना है। आरोही वर्ण मे राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नमध्य है। वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। शिवप्रिय राग है।

**आलाप**—सा रिरिस रिरि सारी रिपा धाधधध धपाधपा धपधप म मा मम मा । गारी रिधा धप धासा धासा धासा सरी रीसा सस मग रिसा सनिनि (धैवत) (पंचम) पप धप धप पपप ममप मप मा मगमामा ।

या

सासा सधा सरी मा पाप (पंचम) पा पा सा सा सरी पापा मृप धृसृ निध पृ.मृ। पृ.मृ। पापा मृधा सांती धापा मृपा मृपा मा मम पम प (मध्यम) मा ।

**करण**—सस रिरिरि सरीरीरी । पापा धप धधा धध पधधा । पापाप मपमप-पापापा धधध मामा माम ध रीरीरीरीरी धरिरि धा । धापा पापा पाप पपप धाधधा सध धसा सा सा । स रिरिरि सससमसमरिग स पधध धापमपनि पपाप पाप पध मधपध पाध पध पाधपपापमगसा ।

या

**करण**—सस रिरि सासा धध रिरि सासा धृ धृ धृ सरिम मग सासरि गरिस रिरि मपधससनि धास रिगा मा (पंचम) पम धम मम पग पापा।मामा ।

### आक्षिप्तिका—

१. री	गा	मा	सा	रिग	सा	धा	मा
गु	रु	ज	ध	न	ल	लि	त
२ पा	धा	पध	पम	पा	पा	धा	पम
मृ	दु	च	र	ण	प	त	न
३ सा	री	मा	पा	पा	धा	पम	मप
ग	ति	सु	भ	ग	ग	म	न
४. पा	धनि	पम	धस	सा	सा	मा	सा
म	द	य	ति				

५	री	रा	मा	पम	रिप	ना	दा	मा
	प्रि	ग	म	पद	रि	म	रा	म
६	पा	पा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
	म	ध	म	ध	म	ध	म	ध
७	गा	गा	पा	पना	रिप	ना	पना	पा
	ह	द	पा		म		पा	
८	पा	धा	पा	पा	मा	रा	मा	मा
	न				ना			

## (१७) नतंगम

यह मध्यम और पचमी आगियों में उत्पन्न होता है। इन्हींसे ही हम जानकार थेयनी ज्ञाति में उत्पन्न हुआ है। अथ और उत्पन्न पचम है। उत्पन्न मा पचम है। काकली निपाद का प्रयोग है। गानार का उत्पन्न धान म है। मा पचमागीय पचमादि मच्छेता है। सवारी धन में राग का प्रयोग होता है। सवारी स्वर कर्तार प्रसन्न मध्य है। इसका प्रयोग उद्गुत नारीमंडल नृत्य म है। नृत्य के मनानसार, हास्य व शृंगार रस का भी पोषक है।

**आलाप—**पापगा मगामापापमा नीधापापमानीनी गमा गमा गानि थेनी नीनी। नि निध धमपध ममगा गमा ममु मगा गनी निनि धधप पधममगा।

या

**आलाप—**गमागम मापापग पापा। पगापानीनिधाधा। नीनी नानुगु नुधा नीनि नीनी निनि ममा ममुगु धानीनीनी निनिनि धधनि पापध ममगागमा समा गगागरी निनी निध धधनी प (पचम) मागामामा।

**करण—**पापमगापा (पंचम) ममगगु निनिधापा (पचम) नीनीधा (पङ्क) सनिनिध सनी धापा मापा पमगा गनिनि पधनि गम गम पामधाममामा।

या

**करण—**पपप मपपप मपप मग ममग मागमा। मगा मपापनी निधनि (पङ्क) सनि सनि निधनिधा निनि धधधनि पधपा पपधपाप धामम गममा ममममगा (पंचम) धमा नीधापा। मामानी धधसा धधधध निपाधा पामागा गमसा सामा गपमा धनिधा धनि (पचम) पधप मममनि धनि पधमम (पङ्क) सगामामा।

**द्वितीयकरण—**पापा (षड्ज) सगामा (पचम) पापापा पधमा मगमा (मध्यम) मामा । ममम निधा धध निधमा पपधमा गमगमा मा (षड्ज) स मापपाधप माम मनि धरिधगु (षड्ज) सु धानी निनि नीधधवनि । पापपध पामा सामा । गा (पचम) धधम मनिधनि पध पमामा गामामामा ।

आक्षिप्तिका—

१	पा	पा	मा	गा	पा	पा	गा	मा
	अ	न	व	र	त	ग	लि	त०
२.	सा	सा	सु।	सु।	सा	मा	गा	सां
	म	द	ज	ल	दु		दि	न
३	गा	मा	पा	मा	गा	मा	मा	मा
	धा		रौ		ध	सि		वन
४	मा	गा	मा	पा	मा	पा	पा	पा
	भु	व	न	त	ल			
५	नी	सा	नी	सा	सा	सा	सा	सा
	म	धु	क	र	कु	ला		ध
६	सा	गा	नी	धा	पा	पा	पा	पा
	का		रि	त	दि	न		दिङ्
७	नी	सा	नी	सा	मा	धा	पा	पा
	मु	ख	ग	ज	मु		ख	
८	मा	पा	गा	गा	मा	मा	मा	मा
	न		म		स्ते			

### (१८) षड्जकैशिक

यह कैशिकी जाति से उत्पन्न हुआ है । अश और ग्रहस्वर षड्ज तथा ऋषभ है । न्यासस्वर निषाद और गाधार है । मद्रस्थान मे गाधार एव षड्ज का प्रयोग है । ऋषभ अल्पत्वस्वर है । अवरोही वर्ण मे राग का प्रकाशन होता है । स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है । षड्जग्राम मे षड्जादि मूर्च्छना है । वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है । शिवप्रिय राग है ।

**आलाप—**सु।सनि रि।स।मा पाम् पाप ममगा । मृ निनि धाधामा मधाध ममधा सा समा मधा गतास । धमा मसासमाधमा सासवा धमध नीनी ।

या

आलाप—मासाम नीनी सनिनी मपानीनीपापा रीरिग रीरो गगरिगि पापा मप पमगम गरीगागरीमा । मनीमपनीनी धधमप निर्गिग । ना (पङ्क) स निरी सानीसा (पङ्क) स निरीगानी ।

करण—(पङ्क) सनिध गमा गगनि गुगु। निनिम निर्गमा ममपमम पापापपम-पपा (मध्यम) । मम गगाममगम गा (गाधार) गगर्गनिधम निधम मामामाधाम धमामाधा गुगु सगु सगुमा (पङ्क) गगधधनि गमम निधानीनि । (निपाद) निधनि नीनिनि (पङ्क) सधनि नी निनिधनिगा । स मपम पापा (मध्यम) मगम ग (पङ्क) समुमुमुसु गधरिग र्गनिध निनिधम । मम धध गग रिग (पङ्क) स सधनिधम पधानीनीनी (निपाद) निनि ।

या

करण—मा (पङ्क) सनि री गानिगा (पङ्क) गमापा नीपा नीधा (पञ्चम) पापारीधरीरी पम। मारी रिगिगि (पङ्क) र्गिग निधप निगनि मनीनी ।

आक्षिप्तिका—

१	मा	री	मा	री	गा	मा	गा	मा
	दी		ह	र	फ	णि		द
२.	सा	नी	नी	नी	नी	मा	नी	री
	ना		ले		म	हि	ह	र
३.	री	री	री	री	री	गा	गा	मा
	के		स	र	दि	सा		मु
४.	नी	सा	नी	री	री	री	री	री
	ह	द	लि		ल्ले			
५	मा	मा	पा	पा	मा	मा	मग	री
			पि	अ	इ	का		ल
६.	रिम	सा	नी	नी	पा	पा	नी	नी
	भ	म	रो		ज	ण	म	अ
७.	सा	सा	सा	सा	सा	नी	नी	नी
	रं		दं	पु	ह	र		
८.	री	री	रिस	नी	नी	नी	नी	नी
	प	उ		मे				

(१९) मध्यमग्रामराग

यह गावारी, मध्यमा और पचमी जातियो से उत्पन्न हुआ है। ग्रह और अशस्वर मद्रपड्ज है। मध्यमग्राम की मध्यमादि मूर्च्छना है। न्यास मध्यम है। काकली निपाद का प्रयोग है। अवरोही वर्ण से राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नादि है। हास्य एव शृंगार रसों का पोषक है। ग्रीष्म ऋतु में, दिन के प्रथम याम में गाने के लायक है। इस राग से मध्यमादि नामक रागाङ्गराग उत्पन्न होता है। उस राग की उत्पत्ति, न्यास, मूर्च्छना, काकलीस्वर प्रयोग और वर्णालिकार—ये सब मध्यमग्राम राग जैसे है। ग्रह तथा अशस्वर मध्यम है।

**आलाप**—सु। नीधापुाधु। धुाधरि। गु।सु।। रिगानीसु।। सगपु।पपप निनि-  
पनिसु। सु। गपसानिधनिनि निरिगासा। पु। मृ पु निधामा।

**करण**—निनिपपगुगुसुमृगिगु। नि सुसासा। सुसुगुगुपुधुधु मधनिसनिध पापा-  
पापा पनी पनी सु।सु।गागासागासनी धनीनीनिनिनिरिगु।सु।सु।पापामापा निधपा-  
मामा।

आक्षिप्तिका—

१	सु।	सु।	गु।	गु।	पु।	पु।	मा	मा
	अ	म	र	गु	रु	म	म	र
२.	गु।	मा	मु।	मा	धा	नी	सु।	सा
	प	ति	म	ज	य			
३	सु।	सु।	मु।	मु।	पु।	पु।	सु।	सु।
	जि	त	म	द	न	स	क	ल
४.	री	गा	नी	सा	सु।	सु।	सु।	सु।
	श	शि	ति	ल	क			
५.	नी०	नी०	नी०	नी०	धा	पा	मा	मा
	ग	ण	श	त	प	रि	वृ	त
६	गु।	मु।	गु।	मु।	धा	नी	सा	सा
	म	शु	भ	ह	र			
७	नी०	री०	गु।	नी०	सु।	सु।	पु।	पु।
	प्र	ण	म	त	सि	त	वृ	प
८	सा	सा	निध	पा	मा	मा	सा	मा
	र	थ	ग	म	नं			





४	री	धा	सनि	सा	सा	सा	सा	सा
	त्रि	पु	र	ह	र			
५	पा	नी	री	पा	नी	री	री	सनि
	मृ	गा		क	न	य	न	
६	पा	नी	री	गम	री	गा	री	सनि
	गि	रि	नि	ल	य			
७	सा	सा	पा	पा	नी	नी	पस	नी
	न	म	त	स	दा		म	द
८	सु।	सु।	सु।	सु।	सु।	सा	सा	सा
	ना		ग	ह	र			

### (२१) षाडवराग

यह विकृत मध्यम जाति से उत्पन्न हुआ है। इसका न्य।स एव अशस्वर मध्यम है, ग्रहस्वर तारमध्यम है। इसमें गांधार एव पचम अल्पप्रयोग है। काकली अतर स्वरों का प्रयोग है। मध्यमग्राम की मध्यमादि मूर्च्छन। है। सचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। यह राग हास्य तथा शृंगार रसों का पोषक है। शुक्रप्रिय राग है। पूर्व याम में गाने के लायक है। इससे उत्पन्न रागाग-राग तोड़ी और बगाल है। तोड़ी के ग्रह, अश और न्य।सस्वर मध्यम है। पचम में गमक कंपित है। अन्य स्वर षाडव के समान है। मद्र गांधार का प्रयोग है। राग हर्षकर है। अन्य लक्षण षाडव के समान है।

बगाल राग के ग्रह, अश और न्य।सस्वर मध्यम है। अन्य लक्षण षाडव के समान है। यह भी हर्षकर है।

**आलाप**—मृ। सारी नीधा साधानी माधा सारीगा धा सु। धृ। मृ। रिगा। मृ। माधा-मारी गारीनीधा साधानीमृ।

**करण**—ममरिग मम सस धनि सस धनि मृ। मृ। पपपपनि धममध धससरि गागा-मृ। रिगा। मृ।

**वर्तनिका**—साधनि पध मारि मानि धवाधवससरि मासा। साधनी धपमृ। मृ। गारी गारी गासा। माधामृ। गारीगा गमारिगा। सासाधनी मृ। धनी धगसाधनि मृ। मृ।

**आक्षिप्तिका**—

१.	मृ।	मृ।	धा	धा	सा	धा	नी	पा
	पृ	थु	ग		ड	ग	लि	त

२ धा	नी	मा	मा	मा	रा	म	रा
म	द	ज	म	म	नि	गा	
३ धा	नी	मा	मा	मा	रा	गा	धा
म	म	ल		मा		पद्	प
४ मा	धा	नी	ममा	मा	म	म	मा
द	न	म		म			
५ मग	री	गा	मा	मा	मा	पम	गा
म	न	गि		म	नी		ल
६ री	गा	मा	मा	मा	मा	मा	मा
ग	क	ल		म	पि		न
७ नी	धा	नी	प	मा	मा	नी	मा
मि	व	म	प	म	म		
८ गा	री	री	मा	मा	मा	मा	मा
		न	म	म			

## (२२) भिन्नपङ्कज

यह पङ्कजोदीच्यवती जाति से उत्पन्न हुआ है। उसका अंश और प्रहरस्वर धैवत है, न्यामस्वर मध्यम है। पङ्कजग्राम की धैवतादिक मन्त्रेता है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य है। सचारी वर्ण से राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। काकली अंतरस्वरों का प्रयोग है। ब्रह्म-प्रिय राग है। श्रीभक्त एवं भयानक रसों का पोषक है। हेमंत ऋतु में, प्रथम याम में गाने के योग्य है। इससे उत्पन्न रागाङ्ग राग भैरव है। भैरव का अंशस्वर धैवत है। न्यामस्वर मध्यम है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य है। प्रार्थना में इसका प्रयोग है। अन्य लक्षण भिन्न पङ्कज के ही समान हैं।

**आलाप**—धा धा माम गा सा सा सगम धधा धा निधमगगमा रमम मध मग सा सा ससु ग सु। ग मधा धा धा सनिम सा सानि गनि मनिधाधा। सानिमा सा सा सु सु ग सग सु ग मधा धानि धम गमा माधा। धू नि नी नी गाग गा मामा।

**वर्तनी**—धा धगा मामध मम सा सा। सगम धधा धा धनिध पामामा सा मामम धम गसा सा सा मप मध गसा सा गसगध धा धा धनि पध मागा सा सा। मग सा सा सग धम धधा धाध निध पम गा मामा।

आक्षिप्तिका—

१. धा	धा	धा	नी	धा	पा	मा	गा
च	ल		त्त	र			ग
२. मा	गुा	मा	नी	धुा	धुा	धुा	नी
भं			गु	र			अ
३. धा	पा	मा	गा	सा	गा	सा	धा
ने			क	रे			णु
४. धा	धा	नी	गा	मुा	मुा	मुा	मुा
पि			ज	र			सु
५. मा	नी	धा	नी	मुा	सुा	सुा	सुा
रा			सु	रै			सु
६. नी	गुा	सा	नी	धुा	धुा	धा	नी
से			वि	त			पु
७. धा	पा	मा	गा	सा	गा	मा	धा
ना			तु	जा		ल्ल	
८. धा	धा	नी	गा	मा	मा	मा	मा
वी			ज	ल			

(२३) भिन्नपंचम

यह मध्यमा और पंचमी जातियों से उत्पन्न राग है। इसका ग्रह और अश धैवत है। न्यास पंचम है। मध्यमग्राम की धैवतादि मूर्च्छना है। सचारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। इस राग में काकलीनिषाद का प्रयोग है और शुद्धनिषाद का भी। विष्णुप्रिय राग है। बीभत्स व भयानक रसों का पोषक है। ग्रीष्म ऋतु के प्रथम प्रहर में गाने के लायक है। इससे उत्पन्न रागांग राग वराटी है। अशस्वर धैवत है। ग्रह और न्यासस्वर षड्ज है। मद्रस्थाधी मध्यम से तारस्थान के धैवत तक संचार है। शृंगार रस का पोषक है।

**आलाप**—धा पा धामा नीधा पानी धामा गा मा पा पा पम मग पम मगस मगा गा री री री माधा पाधा मानीधा धप धनी (धैवत) धा धा मा धा सूा (षड्ज) सामारिगसुासुा गा गसा मनी नि (धैवत) धा निध पधा धाम धा मा गा मा पा पा।

**वर्तनी**—(धैवतषड्ज) सा गा रि (ऋषभ) मनिध पप धपनि (धैवत) धा धप धनी पधम परि गरि निधाधा पा मागा मा पा (पंचम) (ऋषभ) रि मध मम मधा

पा (धैवत) धप पनी धनी (पट्ट) गमा रीरी तिथा (पैथा) धप मय मथा ममा  
गामा मा मगनी धा (पचम) नी धा पा मागा मा पा पा ।

आक्षिप्तिका—

१.	धा	मा	धप	धा	धा	धनि	धप	मा
	वि	म	ल	ग	गि	रा		ड
२.	धा	मा	नी	धा	पा	तिथ	मा	मा
	धा			रि	ण			
३.	मा	री	मा	धा	धप	धा	धप	मा
	म	म	र	ग	ण	न	मि	न
४.	नी	धा	पथ	धनि	धा	धा	धा	धा
	म	भ	व	भ	य			
५.	री	मा	धा	मा	नी	गा	मा	नी
	च		दे		थि	लां		क
६.	धा	पनि	धा	धा	धा	मा	री	मा
	ना			थ		ग	गा	
७.	धा	पम	गरि	मा	धप	धा	धप	मा
	स	रि		त्ग	थि	ल		
८.	नी	धा	धप	धनि	धा	मा	पा	पा
	धौ		त	ज	ट			

### (२४) पंचमषाडव

धैवती व आर्पभी जातियों से यह राग उत्पन्न है। इसका न्यास, अंश और ग्रहस्वर ऋषभ है। कभी-कभी मध्यम भी न्यासस्वर होता है। काकलीनिपाद का प्रयोग है। मध्यमग्राम में ऋषभादि मूर्च्छता है। आरोही वर्ण से राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नाद्यन्त है। यह राग वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। शिवप्रिय राग है। इससे उत्पन्न रागाङ्गराग गुजरी है। इसके अंश और ग्रह ऋषभ है। न्यासस्वर मध्यमस्थायी में मध्यम है। ऋषभ व धैवत बहुलस्वर हैं। स्वरों के आहत व प्रत्याहत गमक हैं। श्रृंगार रस में इसका प्रयोग है। अन्य लक्षण पंचम षाडव के अनुसार हैं।

आलाप—रीरीरिगारि सानी रीरीरीरि निरिरिरि मगामाम धामाम मामामामम  
मरि मग पप गम मगामम गममप पग मम गा गरिरि गरि मम रि गमम सधु तिथ सनि

धसनिधाध (पचम) निपा पनि सनी रीरी रिनीरीम गामाम धामम माम गा गम  
गम गप पग मम नीन्नि धाधपापमाम गागरीरीरिम सरिग सगसुध निनिध सनिध  
धनिधाध (पचम) निपापरीरी रिग म्हा पूा धनीरी रीरिनीरि ममामाम गरि सगा  
मागरीरि सगा मामा ।

करण—रीमामाम मगारि (ऋषभ) रिमापानीनी निमम धामपा गामागा  
मरीरी गारी मगारिगा (षड्ज) सनिधा (पचम) पन्नी (पचम) मधा ममा (ऋषभ)  
री मापानी पासानी मारि (ऋषभ) रि (षड्ज) सनी सरि रिगाग सामगागरीन्नी ।

आक्षिप्तिका—

१. री	गा	मा	मा	गा	री	री	री
स	क	ल	सु	र	न	मि	त
२. मा	गा	री	मा	गा	री	री	री
वि	म	ल	मृ	दु	च	र	ण
३. री	गा	री	धा	नी	मा	नी	नी
द्व	य		स	रो		ज	यु
४. धा	मा	धा	नी	गा	री	री	री
ग	ल	म	म	र	गु	रु	श
५. री	री	री	गा	री	री	री	री
र	ण	म	म	ल	मु	प	
६. री	री	री	गा	नी	नी	नी	नी
या		मि	द		या		लु
७. मा	नी	मा	मा	नी	मा	मा	री
म	सु	र		सु	र	ज	यि
८. मा	गा	मा	मा	री	री	री	री
न	म	जे		यं			

(२५) टक्कराग

यह षड्जमध्यमा व धैवती जातियो से उत्पन्न हुआ है। इसका अश, ग्रह और न्यासस्वर षड्ज है। काकलीनिषाद और अतरगाधार का प्रयोग है। पचम अल्पत्व-स्वर है। षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना है। सवारी वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नान्त है। यह राग युद्धवीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है। बरसात में, दिन के अंतिम प्रहर में गाना चाहिए। रुद्र-प्रिय राग है।

आलाप—मात्रा मारी गागा गम गध निगारी गगारी गम माग निग मत्र मरी-  
रीरिमागागमा मानग मन्निन्नामाधामरि गगा गधनि । गा गा गगगगागगगमरिग-  
माससगधाधध गगा मम धध निधाधम धमन्निमार्गार्गार्ग निधममधमरी गरीमरि-  
गमा ससग मासरिगधाधनि निगाना गगगगगगममगधममानधधममधाधमामधा  
मरिगमा गधनि ग । मामामधाममधनिन्नानि मामया धानधमगामरिग गाधधनि-  
सासासासधा गममनि गगमध मरीरिमागागमा गागागगगगगगगमगगमान धामा  
सासा (पड्ज) मममरि धमगगसनिधाधना मामा धमधममु मममधमधमाधनि  
सरिगमगमरिमगागमगगन्निमाधमगमगमम गगममगग निनिधम गगमम सगममग-  
गगमस सममरिगि गमसगगम मत्रधनिनि मममधधधधधधध निधनिधमधधधधधध  
मधधमध निधामधधमधधधधधधमगगधनिधा । मममममममध गगारि मागागमग  
धनी सासा ।

[illegible]

आक्षिप्तिका—

१. सा	सा	धा	धा	मा	मा	मा	मा
सु	र	मु	कु	ट	म	णि	ग
२. सा	मनि	धा	ना	सा	मा	गा	सा
णा	चि	त		च	र	णं	
३. सा	सा	गा	गा	सा	भा	गा	मा
सु	र	वृ	क्ष		कु	मु	म
४. धा	सा	निध	सा	सा	सा	ना	सा
वा		सि	त	मु	कु	टं	

५.	धा	नी	सा	गा	मा	धा	मा	गा
	श	शि	श	क	ल	कि	र	ण
६	सा	सा	धा	नी	सनि	धा	धा	धा
	वि	च्छु	रि		त	ज	ट	
७	सा	सा	पा	नी	मा	गा	मा	गा
	प्र	ण	म	त	प	शु	प	ति
८	गा	गा	धा	नी	सा	सा	सा	सा
	म	ज	म	म	रं			

### (२६) हिन्दोल

यह राग षाड्जी, गाधारी, पचमी और नैषादी जातियो से उत्पन्न है। इसके षड्ज, अश और न्यासस्वर षड्ज हैं। ऋषभ एव धैवत वर्ज्य हैं। मध्यग्राम की पङ्कजादि मूर्च्छना है। काकलीनिषाद का प्रयोग है। वीर, रौद्र, अद्भुत और शृंगार रसों का पोषक है। आरोही वर्ण मे राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलकार प्रसन्नादि है। वसतकाल के चौथे प्रहर मे गाना चाहिए।

इससे उत्पन्न रागाग राग वसत है। सपूर्ण राग है। अन्य लक्षण हिंदोल के समान है। वसतराग का दूसरा नाम देशी हिंदोल भी है।

**आलाप**—सानीपापमागागपापसागनी सासासासा गामापापनीनीनी गागपपापनीसा। सनीमागागपापनी सनीसनीगसा। पन्नीसामपनी सगासासामा मगगससनि गसासनीसनी पपसममामगससिसासूगाममा पापनीसा मनीमगामपापनीसनी सनि गसा पनि सागानी सा गसासमू गमा गसा सनिसनिनिपापमगामा। ससगग ममपपनिनि सनिमगा गपापनिसा। गासगसनीसनी सागा मम गम मग मगमप मगापाप सगासामा मगम मनीपा पापममगागसगपापनी निसनि सस। नीपा मागागमा पापनी सा। सनि मगा गपापनी सागासमसनी सनी सा। नि ससनी सा। सा सासागसासनी साससग मसगपमा गपापस गगमगनी पापमम गा। गससमगगपा। ममनीप पसनिनिमगापापनी सागासगसनी सनी सा (षड्ज) सस। पापनी सासापपनी पनिपापनी सासापपनि पनी पनि सगासम मगसगसनीसनी पनी मगमगासासनी। पनी पममगममा गस गसानिसनीपनी पममगमामा। मगमग सागासस निनि पपमम गमपनीनिपम। गाममपनीनि पमगामपनी ससनिमगाससगासगामपनीपापनी मगागपनी सनीसनीगसानी सापनीमपागममगागसससनि सा (षड्ज) सससगसस। मगामगम मगनी पापापस निनिगसा। ससमा (गाधार) पा (पचम) पपनिनि



गागस गसनी सनीसा (पङ्क) समसमसमसमा सस गा । निनि सपानी ममापममा  
समसमसमसमसम पापासनि मगापपानी रागसगामनिगनीग। (पञ्चम) पपनि  
पनि पापनि समनि समपापनीपगनीगपपानी मूमूमु । गगगनिनिनि पपपनिनिनि  
सम । पागसम समसमसमसमपनिपम निमगागापापनिगसमाभममगसगनीना सा ।

करण—सगापमगापा (पञ्चम) (पङ्क) समागमागनीतिपानि पपगपमग-  
गागागा (पङ्क) समगागम पाचमम (पञ्चम) पानिनि गनिग। सु । निनिनि सासा  
सनि सासातिगपानी । गासागागमनि सम निमगगगग गगतिगगगनिगति निपनीनि-  
पानीपपगपगममुगा गाग (पङ्क) समगुम् मपग । पानिगनिमा । यामा (पञ्चम)  
निमनिनि सति रागा । सस निगगनी सागापना । पानि पापपानि सति सससस  
पपपपनी । नीमम निपनिप पगमग समशाभास गनिमम गमगापन समगानांगागा  
(पङ्क) सममग मगागमगागमगागमगमग गानिगनीरागपगमुमागगगपपस  
(पङ्क) समगुम् समपपनिनि सनीगमगगगगतिग रा ।

### आक्षिप्तिका—

१	सा	सा	मा	रा	रा	रा	मा	पा
	स	मु	प	न	न	स	क	छ
२	पम	गा	मा	रा	रा	गा	मा	सा
	म	भि	नु	ग	ग	ना		ध
३.	नी	सा	पा	ना	पा	ना	रा	पा
	प	रि	तु		रट	भा		न
४.	नी	मु	मु	रा	मनि	रा	सप	नी
	म		ह		गं			
५	नी	नी	सा	गा	रा	नी	पा	पा
	प्रि	य	त	म	म	ह	न	र
६.	पम	गा	मा	सा	गम	रा	मा	पा
	स	हि	तं		म	द	ना	
७.	नी	सा	पा	नी	पा	नी	गा	पा
	ग		वि		ना	श	नं	
८.	निस	निस	सा	गा	सा	सा	सा	सा
	नौ			मि				

(२७) शुद्धकैशिकमध्यम

यह राग षड्जमध्यमा और कैशिकी जातियों से उत्पन्न हुआ है। षड्जग्राम की षड्जादि मूर्च्छना है। इसका अश और ग्रहस्वर तारषड्ज है। न्यास मध्यम है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य है। गाधार का अल्प प्रयोग है। इस राग में काकलीनिपाद का प्रयोग है। अवरोही वर्ण रागप्रकाशक होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नान्त है। चद्रप्रिय राग है। पूर्व याम में गाना चाहिए।

शुद्धकैशिकमध्यम से उत्पन्न रागागराग देशी है। ग्रह, अश और न्यासस्वर ऋषभ है। पचम वर्ज्य है। मद्र गाधार का प्रयोग है। मध्यम, निपाद और षड्ज बहुत्व-स्वर है। करुण रस का पोषक है। अन्य लक्षण शुद्धकैशिकमध्यम जैसे है।

आलाप—सू। धाम्। धा सनि धसनी सू। सू। सा धानी म्। म्। सू। ग्। सू। ग्। माधा माधा सू। निध सनि सू। सू। धाम्। मधमगागमा सासाधामासगासागामाधास निधमू।नी सू। सासाधानी मा।म।

करण—ससममधधममधसनिधसासू।सू।सू।। सुसुगुम गम्। मधमसा।निधमा सू।मू। सू। धृधृ मूम्। धम सगसगमस गग धव सस गूसु मम धमध सधनि मामा म।मू।

आक्षिप्तिका—

१. सू।	सू।	धा	पा	मा	धु।	पु।	मू।
ओ		का		र	मू		ति
२ धा	पा	मा	पा	री	री	मा	मा
स		स्थ		मा		त्रा	
३. नी	धा	मा	नी	धा	नी	सू।	सू।
त्र	य	भू		षि	तं		क
४. नी	धा	नी	सू।	सू।	सू।	सू।	सू।
ला		ती		त			
५ धा	धा	मू।	मू।	री	री	सा	सा
व	र	द		व	र		व
६. धा	धा	मा	मा	गू।	गू।	मू।	गू।
रे		प्य		गो		वि	
७ नी	धा	मा	नी	धा	नी	सा	सा
द	क	स		स्तु		त	
८. धु।	सा	धु।	नी	मू।	मू।	मू।	मू।
व				दे			

## (२८) गांधारपञ्चम

यह राग गांधारी और रक्तगांधारी जातियों में उत्पन्न है। ग्रह, अंश और न्यास-स्वर गांधार है। काकलीनिपाद का प्रयोग है। मध्यगयाम म गा रागदि मल्लंत है। संचारीवर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थाया स्वर अ प्रकार प्रगल्भस्थ है। यह राग अद्भुत, हास्य और करुण रसों का पापक है। राहुप्रिय राग है।

इसमें उत्पन्न रागाग राग देशाख्या (देशाक्षी) है। गांधार में गमक स्फुरित है। ऋषभ वर्ज्य है। अश, ग्रह और न्यासस्वर गांधार है। मद्रनिपाद का प्रयोग है। स्वरों का समसंचार है। अन्य लक्षण गांधार पंचम के समान है।

**अलाप**—गा सा नि गनि म गम गा गा। पामा गा सा गा नि गनि स सम गा गानी धानी गा नीधा पानी सा पा सा। गा ग नि म नि गग गगा।

या

**अलाप**—गागारीरी सनी मपनीमगागा (पंचम) गगा मामग पाधानि धानि पमनि धनि स पनि निध निधपापमगागा। मगाग साम गमधगम गा गागरी गनिपनि सगपमपसगागा।

**करण**—गमराग निगमापपनिममपाप पा पानी नि मथा मम धम ममा गा गा गम मम गामा (पङ्कज) गनि मस ग ग मग मम मगागा री गा नी स गनी पानी नी मप सा गम पा पग मम गु निधनि मम पपप मम। गा स गनि ममा सा सा गम धप धम ममा धा नी पनी नि म मप नि मगा (पङ्कज) ग नि गा गु। मम गपगम।

या

**करण**—मगरिरि ससनि निमसगागाग ममगगममम गमगा गममगमनि धधधनि मध ममापपधनि नीधा (पंचम) पा ममपा मम निधमाम ममपा मपपममा सा सा सस ससगागा।

## आक्षिप्तिका—

१. सा	नी	सा	गा	सा	गा	गा	गा
पिं		ग	ल	ज	टा		क
२. सा	पा	सा	पा	गा	गा	गा	गा
ला		पे		नि	प	तं	
३. गा	पा	सा	गा	गा	गा	गा	गनि
ती		ज	य	ति	जा		हू

४ नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
वी		स	त	त			
५. गा	गा	गा	गनि	नी	नी	नी	निस
पू	र्ण			हु	ति	रि	व
६ नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
हु	त	भु	जि	सु	स	मि	धि
७ मा	पा	सा	गा	गा	गा	मा	गन्नि
प	य	स		क	प	दि	
८ नी	पा	मा	पम	गा	गा	गा	गा
नो		प	नु	दे			

(२९) त्रवणा

५

भिन्नषड्ज राग का भाषाराग<sup>१</sup> है। इस राग में धैवत, निषाद और षड्ज बटुल स्वर हैं। इसका ग्रह, अश और न्यास धैवत है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य है। धैवत, निषाद और षड्ज को मिलाकर वलितगमक का प्रयोग है। तारस्थान में तारगाधार और मध्यम का प्रयोग है। मद्र-धैवत का प्रयोग भी है। विजयोत्सवो में इसका प्रयोग होता है। इस राग से उत्पन्न भाषाङ्ग राग डोबकृति है। इसका अशस्वर षड्ज है। न्यासस्वर धैवत है। ऋषभ व पचम वर्ज्य है। दीन व करुण रसों का पोषक है।

**आलाप**—धाधाधामानी सा नी सासनी सा सासनी धाध साससनि सासनि धानी नि धानी सासा सनि सनी निधाधा म्हा गा गु सूा स। सनिधाध म्हा गुा म्हा म्हा नी धाम्हा मगाग सा स सनि धानी धानी निध निध गागम्हा ससनी नीनिधानीनिधानि धानि सनि। धाधधमाधाधा।

**रूपक**—धनिधगगाग सानीनी निनिसनिसनिधनी निधा धा। समनी निध निधा धा धसगमा मगमगा सासा। निनिनि गसनि धनि निधा धा। गाधनि सनि धनिधग सगसनि धनि मम धनिधा।

१. भाषारागों के चार प्रकार होते हैं; जैसे—मूलभाषा, संकीर्णभाषा, देशभाषा, छायामात्राश्रयभाषा। भाषारागों से विभाषा और विभाषारागों से अंतर-भाषारागों की उत्पत्ति होती है।

## (३०) ककुभराग

यह मध्यमा, पचमी और धैवती जानियों में उत्पन्न राग है। इसका ग्रह और अशस्वर धैवत है। न्यासस्वर पचम है। पङ्क्तिग्राम में पैस्तार्दि मूळ्यता है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार भ्रमभ्रममध्य है। यह राग करुण रस का पोषक है। शरद् ऋतु में गाने योग्य है।

इससे उत्पन्न भाषाराग रमंगिका है। इसका ग्रह, अंश और न्यास धैवत है। धैवत में स्फुरित गमक है। धैवत बहुलस्वर भी है। तारमध्यम का प्रयोग नहीं। अपन्यास पचम है। इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग सार्वारि है। इस राग के अंश और ग्रहस्वर मध्यम है। न्यास धैवत है। पङ्क्ति अल्पस्वर है। तारगांधार तथा मद्रमध्यम का प्रयोग है। पचम वर्ज्य है। करुण रस का पोषक है।

ककुभ में उत्पन्न विभाषाराग भोगवर्धनी है। अंश, ग्रह और न्यास धैवत है। अपन्यास गांधार है। ऋषभ वर्ज्य है। तार एवं मद्र गांधार का प्रयोग है। गांधार, मध्यम, पचम, धैवत और निषाद बहुलस्वर है। वैराग्य का पोषक है।

इससे उत्पन्न भाषाङ्गराग वेलावली है। इसका ग्रह, अंश और न्यास धैवत है। पङ्क्ति में कंपित गमक है। तारधैवत व मद्रगांधार के प्रयोग हैं। विप्रलभ का पोषक है। हरिप्रिय राग है।

इससे उत्पन्न दूसरा भाषाराग प्रथममंजरी है। इसमें ग्रह, अंश और न्यास पंचम है। तारऋषभ, धैवत और मद्रगांधार के प्रयोग हैं। गांधार तथा मध्यम के गंभीर प्रयोग हैं। उत्सर्गों में इस राग का प्रयोग होता है।

तीसरा भाषाराग बंगाली है। इसमें अंश, ग्रह और न्यास धैवत है। अपन्यास गांधार है। ऋषभ व मध्यम के दीर्घ प्रयोग हैं। मद्रधैवत का भी प्रयोग है। इससे उत्पन्न भाषांग आडीकामोदी है। अंश, ग्रह तथा न्यास धैवत है। मद्रमध्यम एवं तारगांधार के प्रयोग हैं। स्वरो का क्रमसंचार है।

**आलाप**—धमु मुा मगारी रिरि ससनि निधा गामापापगामा धा ढगामाममनी सनि निधानिधनि निगा धागधागा रिमासनि मगाग रिरिमासनिनि। धधधपाधपा।

या

**आलाप**—धाधाधसु ससससधाध साध साधमसधारीरी ममरिग सामुधाधाध पधसवपधधममामा। मरिमरि मुा माधा धाधाधाधधनिध पधामुा मधापाधा सारी मरी सु गु सा गु गुध पधधमपापा।

**करण—**धा (धैवत) नीधा (पचम) गामा (ऋषभ) रिरि रि गारि (पङ्कज) सधनी नी (धैवत) धाधाधानीरी रिसानि रिसनि सनि सधा नीनी (धैवत) धा । धा धनी रिरिसा निरिसा निधानी ममगमगारी रिसानी रिसानी धानिपमगममधाधा । नी निसनि निधव (पङ्कज) सगधरिग (मध्यम) मनीनि मानि निधव (पचम) मपनि मगगारी ममपमगमधाधा । गाधाम गमरिमागा (ऋषभ) रिमाग (पङ्कज) सा । धानी नि (धैवत) धा । धामाध सरिगमगमगमनिधानी पधापनि पधमगरि ममपगरि ग्वा म्वा रि (ऋषभ) रिमाग (पङ्कज) स । धानी म (धैवत) धा माधसरि गमगप-गमनि निधानिप धापनीप धमगरिममपगरिगाम्वाग्वा (ऋषभ) सधनिम (धैवत) गा पमपमा (पङ्कज) सधनि धनि सनिधाधपा ।

या

**करण—**धवसासमधवधसरीगा सुधा पाधापापा मामापा मापाधा पाम्वाग्वा म्वा सरि मरि ममाधप धापप म्वा म्वा पध सरि मरि गाग्वा धामा पारीमा प्वा प्वा ।

अक्षिप्तिका—

१	धा	धा	सा	सा	धा	धा	री	री
	यो		न।		म	य		त्र
२.	धा	धा	धा	धा	पा	धा	पा	मा
	नि	व	स	ति	क	रो		ति
३	री	री	मा	मा	पा	धा	पा	मा
	प	रि	र		क्ष	ण		स
४	पा	धा	पा	मा	मा	मा	मा	मा
	ख	लु	त		स्य			
५	री	री	मा	मा	धा	धा	पा	मा
	मु		ग्धे		व	स	सि	च
६	पौ	मा	पा	पा	धा	धा	पा	मा
	ह	द	ये		द	ह	सि	च
७	पा	धा	पा	मा	सा	रो	सा	रो
	स	त	तं		नृ	श		
८	गा	सा	पा	पा	पा	पा	पा	पा
	सा				सि			

## (३१) बेगरंजी

यह राग टक्कराग की भाषा है। पंचम एवं धैवत वर्ण्य है। अश, ग्रह और न्यास पड़ज है। निषाद, पड़ज, ऋषभ, गायार तथा मध्यम बहुलस्वर है। मद्र-स्थानीय निषाद का प्रयोग है। बेगरंजी में उत्पन्न भाषागण नागध्वनि है। इसका ग्रह, अश और न्यास पड़ज है। पंचम वर्ण्य तथा धैवत वर्ण्य है। वीर रस का पोषक है।

**आलाप**—सा सा मनी सा रिगा नागम स नी गा ममसा मनी मारी नी मारी नी सारी मनी मामा मामागागा गा री मनि मानो मारी मारी मारी मारी मनी सनी समागारी मनी नी मरि गानी गागमागनी सासा।

**रूपक**—मममगारी री म मनी नी मनी (पड़ज) मनी मरी गरि गगमनी सगरि मामामागा गा री री सा रि ग री मनी नी नी नी नी (पड़ज) मग (ऋषभ) रि गमरि म रिगम स री गमरी मरी नी गा ममरी गा सा गा।

## (३२) सौवीर

यह पड़जमध्यमा जाति में उत्पन्न राग है। उममें ग्रह, अश और न्यास पड़ज है। ककिली निषाद का प्रयोग होता है। गायार अल्पस्वर है। अश्वराही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रगट्मान है। यह राग शांत, शीघ्र तथा अद्भुत रसों का पोषक है। दिन के पिछले याम में गेय है। शिवाप्रिय राग है।

उमसे उत्पन्न मूल भाषाराग सौवीरी है। उमका ग्रह और न्यास पड़ज है। मध्यम बहुलस्वर है। “सगा” तथा “रिधा” माध-माध आते हैं। उममें उत्पन्न भाषाङ्गराग बराटी है। बराटी का दूसरा नाम बटकी है। उमका ग्रह, अश और न्यास पड़ज है। पंचम, धैवत तथा निषाद बहुलस्वर हैं। तारस्थान में पड़ज वर्ण्य का प्रयोग है। शांत रस का पोषक है।

**आलाप**—सा सपा पधानी धापा पधा सा सपाप धा सा सपापधा ध गारि मा गा रि सनि स पा धा सनि सा। सा। सा मगारी रि मा स पा प ध निधा पापधा सा स पापधा धगा रि मा गा री सनिधा धपा सा मनी सा सा। मम ममम (पड़ज) स सु सा ग सु गग री ग सा सु सु स ध ध नि निध सनि धनि धा ध प। पपपध ध स नि सा सा सु सु सु सु सम (पड़ज) समु गमु ग सम मरि रिग मम गध धनि धध ग मं सं सं धनि ध सनि धनि धध (पंचम) पपप रि पपनि ध ध म सा सम धम रि रि धम रि रि धस सप। धध नि ग धध सस धध नि ध स नि धनि धधवा। पापपप (गाधार) गा गग मरि सग सनिध सस। पपधध सनिसा। म सु म प पध निनिनि (पड़ज) स स सरि रि रि रि रि रि रि पा धध सनिसा। सध म रि रि धम मारि रि ग मम ग धध

नि धध गस सस धध निध सनि धनि ध धप धध रि नि धधध ग रि म ग रि स निध स  
निध निध पपुध रि निध सध गरि मगरि मगरि सनि ध समाप पधध सनिसा ।

**करण—**(पङ्क) स (पचम) नीधा धा धानी (पचम) नीधा धा धनी (पङ्क)  
ससारी ररि पपनि धाधा धधस स धनि ध पा । पप निध पु पु नृ रि रि रि ग रि  
मरि सासा मम रि ग सा स सस स रि ग सा ससनि ध (पचम) धानि (पङ्क)  
स स । मम स सस स मस सा ससरि ग गसु ग सा ग सु गा सस गसनिधनिधाधध निपा  
पगा धगा धगा गगग समारी (पङ्क) सनिधापा पापाधापा धनिनि (पङ्क) समु  
मा गगारी (ऋषभ) ररि मममधमम । मासास (पचम) धासाधनिनिपानीधपा-  
रीपपपध धध सु सु धु धु धधध ममम रि रि रि रि गरि गरि गस सधनि धसा धनि-  
धधरि पपपप । पधधधध निनि (पचम) पम धध धनि (पङ्क) ससा ।

आक्षिप्तिका—

१	सा	सा	सा	सा	सा	सा	सा
	त	रु	ण	त	रु	शि	ख
२	नी	नी	धा	धा	पा	पा	मा
	कु	सु	म	भ	र	न	मि
३	नी	धा	सा	धा	नी	धा	पा
	मृ	दु	सु	र	भि	प	व
४	धा	गा	धा	सा	सा	सा	सा
	धु	त	वि	ट	पे		
५	सा	सा	सा	नी	सा	सा	री
	का		न	ने			गा
६	सा	गा	धा	धा	नी	धा	पा
	कु			ज	रो		पा
७	नी	धा	सा	धा	नी	धा	पा
	अ	म	ति	म	द	ल	लि
८	गा	गा	धा	मा	मा	सा	सा
	ली		ला	ग	ति		सा

### (३३) पिजरी

हिंदोल से उत्पन्न भापाराग पिजरी है । इसमें अशस्वर गाधार और न्यामस्वर  
पङ्क है । निपाद वर्ज्य है । इसमें उत्पन्न भापाङ्गराग नट्ट है, जिसमें ग्रह, अश



और न्यास पङ्क्ति है। तारस्थान में गाधार, पंचम तथा धैवत का प्रयोग है। मद्र-स्थान में निषाद का भी प्रयोग है। स्वरों का क्रम सार है।

गागारि सा धारि सा सारी सा सा। सासा रीरि सावासापाभापाधामारी गापा  
मागारी सा। सारि साधारीमागारीमागो सागामासागारीमागो रिगारि रीम रि  
सा। पा। धापासादि सागारि रीमा।

### (३४) कर्नाट बगान

वेगर्जी से उत्पन्न भाषाङ्गराग कर्नाटबगान है। इसका अंगस्वर गाधार और न्यसम्बर पङ्क्ति है। पंचम वर्ज्य है। श्रुंगार रस का पोषक है।

### क्रियाङ्गराग

#### (१) रामकृति (रामक्रिया)

इस राग का ग्रह, अश और न्यास पङ्क्ति है। पङ्क्ति में पंचम तक, तारस्थान और मद्रस्थान में प्रयोग है। पङ्क्ति व ऋषभ बहुलस्वर है।

#### (२) गौडकृति (गौडक्रिया)

इस राग का ग्रह, अंश और न्यासम्बर पङ्क्ति है। मध्यम एवं पंचम बहुलस्वर है। ऋषभ व धैवत वर्ज्य है। मद्रस्थान में पंचम का प्रयोग है। तारस्थान में मध्यम का प्रयोग है।

#### (३) देवकृति (देवक्रिया)

ग्रहस्वर धैवत है। अंश और न्यास पङ्क्ति है। मध्यम बहुलस्वर है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य है। मद्रस्थान में निषाद का प्रयोग है। बांस रस का पोषक है।

### उपाङ्गराग

#### (१) वराटी

वराटी राग के उपांग ६ हैं। सब में, ग्रह अश और न्यास पङ्क्ति हैं।

१. कुंतलवराटी—इस राग में, निषाद बहुलस्वर है। धैवत में कंपित गमक है। मद्रस्थानीय पङ्क्ति का प्रयोग है। श्रुंगार रस का पोषक है।

२. द्राविडवराटी—इस राग के ऋषभ में स्फुरित गमक है। मद्रस्थानीय निषाद का बहुल प्रयोग है।

३. सिंधु वराटी—इस राग में गाधार बहुल स्वर है। पङ्क्ति और धैवत में कंपित गमक है। मद्रमध्यम का प्रयोग है। श्रुंगार रस का पोषक है।

४. अपस्थान वराटी—इस राग में, मद्रस्थायी मध्यम, धैवत और निषाद का प्रयोग है।

५. हतस्वर वराटी—इस राग में पचम बहुलस्वर है। षड्ज और पचम में कपित गमक है। मद्रस्थानीय धैवत का प्रयोग है।

६. प्रताप वराटी—इस राग में पचम बहुलस्वर है। मद्रस्थानीय धैवत का प्रयोग है। षड्ज में कपित गमक है।

## (२) तोडी

तोडी के दो उपागराग हैं—

१. छायातोडी—इसमें ऋषभ एव पचम वर्ज्य है।

२. तुल्लुस्तोडी—इस राग के स्वरो में आहति है। गाधार का अल्पप्रयोग है। धैवत और निषाद बहुलस्वर है।

## (३) गुर्जरी

१. महाराष्ट्र गुर्जरी—इस राग में अश एव न्यास ऋषभ है। पचम वर्ज्य है। मद्रनिषाद का प्रयोग है। स्वरो में आहति है। उत्सवों में इसका प्रयोग होता है।

२. सौराष्ट्र गुर्जरी—इस राग के ऋषभ में कपित गमक है।

३. दक्षिण गुर्जरी—इस राग के मध्यम में कपित गमक है। अन्यस्वरो में आहति है।

## (४) वेलावली

१. तुच्छी वेलावली—इसका अंश, ग्रह और न्यास धैवत है। मध्यम वर्ज्य है। षड्ज तथा पचम में आदोलित गमक है। विप्रलभ शृंगार रस का पोषक है।

२. खंभावती वेलावली—इसका अश और न्यास धैवत है। पचम वर्ज्य है। मध्यम और निषाद में आदोलित गमक है। शृंगार रस का पोषक है।

३. छाया वेलावली—अश एव न्यास वेलावली के अनुसार है। मद्रस्थान में मध्यम का कपित गमक है।

४. प्रताप वेलावली—इसमें ऋषभ और पचम वर्ज्य है। स्वरो में आहति गमक है।

## (५) भैरव

१. भैरवी—भैरव का उपाग भैरवी ही है। इसका ग्रह, अश और न्यास धैवत है। तारस्थान और मद्रस्थान में गाधार का प्रयोग है।

## (६) कामोद

१. सिंहली कामोद—कामोद का उपांग है। उसके अतिहास लक्षण कामोद के समान है। मंद्रस्थान में मध्यम का प्रयोग है। धैर्य का कर्पित गमक है।

## (७) नट्ट

१. छायातट्ट—नट्टराग का उपांग है। उसके ग्रह, अंश आदि लक्षण नट्टराग के समान है। निषादगांधार में कर्पित गमक है। मंद्रस्थान में पंचम का प्रयोग है।

## (८) टक्क

१. कोलाहल—टक्कराग का भाषाराग है। इसका ग्रह और अंश पड्ज है। पंचम वर्ज्य है। मध्यम बहुलस्वर है। मंद्रस्थान में पड्ज और धैर्य का प्रयोग है। स्वरों में कर्पितादि गमक का प्रयोग है।

## (९) कोलाहल

रामकृति—कोलाहल का भाषाङ्ग है। इस राग का पर्याय नाम वदुर्लभ है। कलहाभिनय में इसका प्रयोग है। अंश मध्यम और न्यास पड्ज है। पंचम वर्ज्य है। टक्क तथा कोलाहल रागों के अधिक निकट होने के कारण इस राग को उनका उपाङ्ग भी कहते हैं। इसी तरह अति निकट होनेवाले रागों का उनके उपांग भी कहते हैं।

## (१०) हिंदोल

चेवाटी—हिंदोल का भाषाराग है। अंश, ग्रह और न्यास पड्ज है। ऋषभ वर्ज्य है। धैर्य बहुलस्वर है। गांधार और पंचम अपन्यासस्वर है। मंद्रस्थान में पड्ज, गांधार और मध्यम का प्रयोग है। तारस्थान में पड्ज और गांधार का प्रयोग है। उत्तमों और हास्यमदर्भों में इस राग का प्रयोग होता है।

## (११) चेवाटी

वल्लाता चेवाटी का उपांग है। ग्रह, अंश और न्यास पड्ज है। ऋषभ वर्ज्य है। मंद्रस्थान में धैर्य का प्रयोग है। शृंगार रस का पोषक है।

## (१२) पंचम

ग्रामराग है। मध्यमा एवं पंचमी जातियों से उत्पन्न है। इसमें ग्रह, अंश और न्यास मध्यमस्थानीय पंचम हैं। मध्यमग्राम की पंचमादि सुच्छंता है। काकली

अतर स्वरो का प्रयोग है। सचारी वर्ण मे राग का प्रकाशन होता है। मन्मथप्रिय राग है। शृंगार एव हस्यरसो का पोषक है। ग्रीष्म ऋतु मे दिन के प्रथम प्रहर मे गेय है।

**दाक्षिणात्य**—इसका भाषाराग है। इसमे अश, ग्रह और न्यास धैवत है। अपन्यास ऋषभ है। तारस्थान मे मध्यम, पचम, धैवत और निषाद का प्रयोग है।

**आंधालिका**—पचम का विभाषाराग है। अश, ग्रह और न्यास पचम है। निषाद का अल्पप्रयोग है। अन्य स्वरो का बहुल है। गांधार वर्ज्य है। मद्रस्थान मे षड्ज का तथा तारस्थान मे धैवत का प्रयोग होता है। इसका उपाग मल्लारी है जिसमे ग्रह, अश और न्यास पचम है। मद्रस्थान मे मध्यम का प्रयोग है। गांधार वर्ज्य है। स्वरो मे आहत गमक है। शृंगार रस का पोषक है। इसका दूसरा उपांग मल्लार है। मल्लार राग के ग्रह, अश और न्यास धैवत है। षड्ज एव पचम वर्ज्य है। मद्रस्थान मे गांधार और तारस्थान मे निषाद का प्रयोग है।

### (१३) गौड़

१. **कर्नाट गौड़**—गौड़ का उपाग है। इसका ग्रह, अश और न्यास षड्ज है।

२. **देशवाल गौड़**—दूसरा उपाग है। षड्ज मे आदोलित गमक है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य है। गांधार बहुलस्वर है। मद्रस्वरो मे आहत गमक है।

३. **तुरुष्क गौड़**—तीसरा उपांग है। इसका अश और न्यास निषाद है। ऋषभ एवं पचम वर्ज्य है। गांधार मे “तिरिप” गमक है। षड्ज एव पंचम बहुल-स्वर है।

४. **द्राविड़ गौड़**—चौथा उपाग है। अश, ग्रह और न्यास निषाद है।

### (१४) श्रीराग

मार्गरागो मे “राग” नामक विभाग मे एक प्रसिद्ध राग है। इसे देशी राग भी कहते है। यह राग षड्जग्राम की षाड्जी जाति से उत्पन्न है। अश, ग्रह और न्यास षड्ज है। मद्रस्थानीय गांधार और तारस्थानीय मध्यम का प्रयोग है। पचम अल्पस्वर है। वीररस का पोषक है।

### (१५) बंगाल

यह राग षड्ज मध्यमा जाति से, षड्जग्राम मूर्च्छना मे उत्पन्न है। इसमे ग्रह अंश और न्यास षड्ज है। मद्रस्थान मे सचार नही है।

## (१६) द्वितीय बंगाल

कौशिकी जाति में मध्यमग्राम मूर्च्छना में उत्पन्न राग है। ग्रह, अश और न्यास पड्ज है। मध्य तारस्थानीय पंचम का प्रयोग है।

## (१७) मध्यमषाडव

इसमें अशस्वर ऋषभ, न्यामस्वर पंचम और जगन्नाथस्वर धैरव है। पंचम अल्पस्वर है। यह राग वीर, रौद्र और अद्भुत रसों का पोषक है।

## (१८) शुद्धभैरव

अश, ग्रह और न्यामस्वर धैरव है। तारस्थान पड्ज और मद्रस्थान गांधार है।

## (१९) मेघराग

पड्जग्राम में धैरव जाति में उत्पन्न है। तारस्थान पड्ज है। तारस्थान में संचार नहीं है। अश, ग्रह और न्याम स्वर धैरव है।

## (२०) सोमराग

पड्जग्राम में पाड्जी जाति में उत्पन्न राग है। ग्रह, अश और न्यामस्वर पड्ज है। निषाद एवं गांधार का बहुलप्रयोग है। मद्रस्थान में मध्यम का प्रयोग नहीं। वीररस का पोषक है।

## (२१) कामोद

पड्जग्राम में पड्जमध्यमा जाति में उत्पन्न राग है। अशस्वर तारपड्ज है। तार और मद्रस्वर गांधार हैं। अशस्वर धैरव है। न्यामस्वर पड्ज है।

## (२२) द्वितीय कामोद

पाड्जी जाति से उत्पन्न है। पड्जग्राम की मूर्च्छना में उत्पन्न हुआ है। ग्रह, अश और न्याम पड्ज हैं। मद्रस्थान में गांधार का प्रयोग रसितदायक है।

## (२३) आस्रपंचम

इसका अश, ग्रह और न्यास गांधार है। तारस्थान में संचार नहीं है। मद्र-संचारों की सीमा नहीं है। मद्र व मध्य स्थान में ही संचार है। हास्य और अद्भुत रसों का पोषक है।

### (२४) कैशिकी

यह शुद्धपचम का भाषाराग है। ग्रह, अश और न्यास पचम है। अपन्यास मध्यम है। मध्यमपचम का बहुलप्रयोग है। तारस्वर षड्ज, गांधार या मध्यम है। ईर्ष्यभाव का पोषक है। इसी राग को भाषागराग कहकर दूसरे प्रकार के लक्षण ऐसे दिये गये हैं कि तारस्वर ऋषभ है। मद्रस्वर षड्ज या मध्यम है। उत्सवो मे प्रयोज्य है।

### (२५) सौराष्ट्री

यह पचम का भाषाराग है। ग्रह, अश और न्यास पचम है। ऋषभ वर्ज्य है। षड्ज एवं पचम बहुलस्वर है। तारसचार षड्ज, गांधार और धैवत तक है। मंद्र-सचार मध्यम तक है। स्वरो मे गमक का प्रयोग है। समस्त भावो का पोषक है।

### (२६) द्वितीय सौराष्ट्री

टक्कराग का भाषाराग है। इसमे ग्रह, अश और न्यास पड्ज है। निषाद का अतिबहुल प्रयोग है। अन्य स्वरो का भी बहुलप्रयोग है। पचम वर्ज्य है। करुणरस का पोषक है।

### (२७) ललिता

यह टक्क का भाषाराग है। स्वरो का ललित (मृदुल) प्रयोग है। ऋषभ एवं पचम वर्ज्य है। तार अवधि गांधार या धैवत है। मद्र अवधि षड्ज है। वीररस का पोषक है।

### (२८) द्वितीया ललिता

यह भिन्नपड्ज का भाषाराग है। इसमे अश, ग्रह और न्यास धैवत है। ऋषभ, गांधार तथा मध्यम का तारमद्र स्थानो मे ललित प्रयोग है। मद्रगति की अवधि धैवत है। ललित भावो तथा स्नेहभावो मे इसका प्रयोग है।

### (२९) सैधवी (प्रथमा)

टक्क का भाषाराग है। इसका ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। ऋषभ एवं पचम वर्ज्य है। स्वर, गमक व लघन से युक्त है। तारावधि षड्ज या गांधार है। मंद्र की अवधि षड्ज है। सारे रसो का पोषक है।

## (३०) संधवी (द्वितीया)

यह पंचम का भाषाराग है। अश, गः और न्यास पंचम है। ऋषभ एवं पंचम अपन्यासस्वर है। ऋषभ का बहुल प्रयोग है। निषाद, धैवत और पंचम गमकयुक्त है।

## (३१) संधवी (तृतीया)

यह मालवकैशिक का भाषाराग है। इसमें मधुपनम का प्रयोग है। मंद्रावधि षड्ज है। निषाद एवं गांधार वर्ज्य है। इसमें गः, अश तथा न्यास षड्ज है। समस्त भावों का पोषक है।

## (३२) संधवी (चतुर्थी)

मिश्रषड्ज का भाषाराग है। गः, अश और न्यास धैवत है। मंद्रावधि धैवत है। ऋषभ एवं पंचम वर्ज्य है।

## (३३) गौड़ी

हिंदोल का भाषाराग है। इसका गः, अश और न्यास षड्ज है। धैवत तथा ऋषभ वर्ज्य है। पंचम में गमक है। मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है।

## (३४) गौड़ी (द्वितीया)

यह मालव कैशिक का भाषाराग है। तारस्थान और मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। निषाद बहुलस्वर है। विप्रलंब शृंगार तथा वीररग में प्रयोज्य है। यह मनग-मुनिप्रोक्त है।

## (३५) ब्रावणी

यह पंचम का भाषाराग है। गः और अश षड्ज है। न्यास पंचम है। षड्ज, ऋषभ, मध्यम तथा पंचमस्वरों में, हरणक के साथ गांधार एवं निषाद का प्रयोग है। यह राग याण्टिकमुनिप्रोक्त है।

मतांतर के अनुसार यह राग भाषाङ्ग कहा जाता है। गः और अशस्वर धैवत है। पंचम तथा निषाद वर्ज्य हैं। तारस्थान में सकार नहीं है। मन्द्र धैवत एवं गांधार का प्रयोग है। मध्यम बहुलस्वर है।

## (३६) हर्षपुरी

यह मालव कैशिक का भाषाराग है। मंद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। इसमें गः, अश और न्यास षड्ज हैं। तारस्थान में मध्यम एवं पंचम का प्रयोग है। धैवत वर्ज्य है। हर्ष में इसका प्रयोग है।

### (३७) भन्माणी

यह पचम का विभाषाराग है। मद्रस्थान में षड्ज का प्रयोग है। इसमें ग्रह, अश और न्यास पचम है। तारस्थानीय षड्ज, मध्यम, पचम तथा निषाद का प्रयोग है। ऋषभ वर्ज्य है। उत्सव में इसका प्रयोग है।

### (३८) टक्ककैशिक

ग्राम रागों में बेसर रीति का एक राग है। धैवती और मध्यमा जातियों से उत्पन्न है। षड्जग्राम तथा मध्यमग्राम इन दोनों के स्वरो से युक्त है। इसमें ग्रह, अश तथा न्यास धैवत है एवं काकली और अतरस्वर का प्रयोग है। आरोही वर्ण में राग का प्रकाशन होता है। स्थायी स्वर अलंकार प्रसन्नादि है। षड्जग्राम की धैवतादि मूर्च्छना में रागस्वरूप मिलता है। बीभत्स और भयानक रसों का पोषक है। दिन के चतुर्थ याम में गाना चाहिए। कवुकीनर्तन में इसका प्रयोग होता है। महाकाल और मन्मथ—दोनों का प्रीतिकारक है।

टक्ककैशिक का भाषाराग मालवा है। ग्रह, अश और न्यास धैवत है। षड्ज और धैवत स्वरो का प्रयोग गाधार व निषाद के साथ-साथ होता है।

### (१) सौवीर के भाषाराग

१. वेगमध्यमा—इसके ग्रह एवं न्यासस्वर षड्ज है। अशस्वर षड्ज है। षड्ज एवं पचम का प्रयोग साथ-साथ होता है। मध्यम बहुलस्वर है। संपूर्ण राग है।

२. साधारित—ग्रह एवं अश षड्ज है। न्यास मध्यम है। ऋषभ मध्यम तथा षड्ज मध्यम को साथ-साथ प्रयोग करते समय गमक का प्रयोग किया जाता है।

३. गांधारी—ग्रह एवं अश निषाद है। न्यास षड्ज है। करुण रस का पोषक है।

### (२) ककुभ के भाषाराग

१. भिन्नपंचमी—ऋषभ, मध्यम, पचम और धैवत बहुलस्वर है। अशस्वर धैवत है। मध्यम अपन्यास है।

२. कांभोजी—ग्रह, अश और न्यासस्वर धैवत है। षड्ज एवं धैवत साथ-साथ आते हैं। ऋषभ एवं पचम का भी साथ-साथ प्रयोग है।

३. मध्यमग्राम—ग्रह, अश और न्यासस्वर धैवत है। ककुभ के दो ग्रामों में मध्यमग्राम से उत्पन्न राग है। ऋषभ एवं धैवत का साथ-साथ प्रयोग है।



४. मधुरी—अशस्वर पङ्क्ति है। न्यासस्वर धैर्य है। गांधार, पंचम और निषाद, धैर्य के साथ-साथ प्रयोग होते हैं।

५. शकस्मिन्—ग्रह एवं अश निषाद है। न्यास ऋषभ है। पंचम-निषाद तथा ऋषभ-धैर्य का साथ-साथ प्रयोग है।

### (३) ककुभ के विभाषाग

१. आंभीरिका—ग्रह, अश और न्यास मध्यम है। तारस्थान में पंचम का प्रयोग है। मेढस्थान में धैर्य का प्रयोग है। निषाद, ऋषभ और पङ्क्ति के साथ-साथ द्रुत-प्रयोग है। मध्यम बहुलस्वर है।

२. मधुकरी—ग्रह एवं न्यास पङ्क्ति है। तारस्थान गांधार है। पङ्क्ति, ऋषभ, पंचम, धैर्य और निषाद बहुलस्वर है।

### (४) ककुभ के अन्तर-भाषाग

१. शालवाहिनी—इसका ग्रह और अश ऋषभ है। न्यास धैर्य है। ऋषभ एवं गांधार का साथ-साथ प्रयोग है।

### (५) टक्कभाषाग

१. ब्रवणा—इसमें ग्रह, अश और न्यास पङ्क्ति है। पङ्क्ति, धैर्य तथा निषाद बहुलस्वर है। ऋषभ एवं पंचम अन्य है। मेढस्थान में पङ्क्ति का प्रयोग है। तारस्थान में गांधार और मध्यम का प्रयोग है। दिन के अंतिम याम में गेय है। वीर रस का पोषक है। देवता रुद्र है।

२. ब्रवणोज्ज्वा—अशस्वर मध्यम है। न्यास पङ्क्ति है। अशन्यास गांधार है। ऋषभ एवं धैर्य बहुलस्वर है।

३. वेरञ्जी—इसमें ग्रह एवं अश गांधार है। न्यास पङ्क्ति है। पंचम अल्पस्वर है। “समा” एवं “रिगा” का प्रयोग साथ-साथ होता है। पाण्डुराग है।

४. मध्यमग्रामवेहा—इसका ग्रह, अश और न्यास मध्यम है। पङ्क्ति एवं मध्यम का साथ-साथ प्रयोग है।

५. मालववेसरी—इसमें अश एवं ग्रह निषाद है। न्यास पङ्क्ति है। पङ्क्ति तथा गांधार एवं पङ्क्ति एवं मध्यम का साथ-साथ प्रयोग है।

६. चेवाटी—पाण्डव राग है। इसमें ग्रह, अश और न्यास पङ्क्ति है। पङ्क्तिमध्यम तथा गांधारनिषाद का साथ-साथ प्रयोग है। मध्यम बहुल स्वर है।

७. पंचमलक्षिता—इसमे ग्रह एव न्यास षड्ज है और अश पचम है। तार-स्थान मे षड्ज, गाधार, मध्यम और पचम के प्रयोग है। ऋषभ वर्ज्य है।

८. पञ्चमी—इसमे ग्रह एव अश पचम है। न्यास षड्ज है। ऋषभपचम तथा षड्जपचम के प्रयोग साथ-साथ है।

९. गांधारपंचमी—इसमे ग्रह और अशस्वर धैवत है। न्यास षड्ज है। गाधार बहुलस्वर है। षड्जमध्यम का साथ-साथ प्रयोग है।

१०. मालवी—पचम और धैवत मिलकर अश एव न्यास है। ऋषभ वर्ज्य है। तारस्थान के षड्ज, गाधार और मध्यम मे कपित गमक है।

११. तानवलिता—ग्रह एव अश मध्यम है। न्यासस्वर षड्ज है। षड्ज और पचम का मृदुभाव से लालन है।

१२. रविचन्द्रिका—इसमे ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। ऋषभ और पचम का अल्प प्रयोग है। ऋषभ गाधार तथा षड्जमध्यम का प्रयोग साथ-साथ है।

१३. ताना—इसमे ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। अपन्यास धैवत है। ऋषभ और पचम वर्ज्य है। निषाद तथा षड्ज मे गमक है। करुणरस का पोषक है।

१४. अंबाहेरी—इसमे ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास षड्ज है। गाधार एव धैवत का बहुल प्रयोग है। पचम वर्ज्य है। वीर रस का पोषक है।

१५. दोह्रा—इसमे ग्रह तथा अश गाधार है। न्यास षड्ज है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य है।

१६. बेसरी—इसमे ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। धैवत तथा निषाद का साथ-साथ प्रयोग है एव षड्ज और धैवत का भी। काकली निषाद का प्रयोग है। वीर रस का पोषक है।

### (६) टक्क के विभाषाराग

१. देवारवर्धनी—अश एव ग्रह पचम है, न्यास षड्ज है।

२. आंध्री—अश तथा ग्रह मध्यम है, न्यास पचम है।

३. गुर्जरी—ग्रह एव अश निषाद है और न्यास षड्ज है। “सम” तथा “रिनि” साथ-साथ आते है।

४. भावनी—ग्रह, अश और न्यास पचम है।

### (७) शुद्धपंचम के भाषाराग

१. तानोद्भवा—अश मध्यम है। पचम न्यास है। “धप” साथ-साथ आते है। पचम बहुलस्वर है।

२. आभीरी—ग्रह अथ तथा स्वयं प्रथम है। कृष्ण राग का प्रयोग है, निषाद बहुलस्वर है। “म” सा-साथ आते हैं।

३. गुर्जरी—ग्रह अथ और स्वयं प्रथम है। कृष्ण राग में पञ्चम राग का प्रयोग है। सा-साथ तथा प्रथम आते हैं।

४. आंध्री—ग्रह एवं अंश प्रथम है। स्वयं प्रथम है। पङ्क का हल्का प्रयोग है।

५. मांगली—ग्रह, अथ और स्वयं प्रथम है। कृष्ण निषाद का प्रयोग है। ‘मध’ तथा ‘रिध’ साथ-साथ आते हैं।

६. भावनी—ग्रह, अथ तथा स्वयं प्रथम है। स्वयं प्रथम है। म, म, नि बहुलस्वर है। “म” अपरस्वर है।

#### (८) भिन्नपंचम के भाषाराग

१. धैवतभूषिता—ग्रह, अथ और स्वयं प्रथम है। “म” तथा “रिध” साथ-साथ आते हैं।

२. शुद्धभिन्ना—अथ, ग्रह तथा स्वयं प्रथम है। “रिध” और “म” साथ-साथ आते हैं। सपूर्ण राग है।

३. वराटी—अथ एवं ग्रह मध्यम है। स्वयं प्रथम है। “कृष्ण” का हल्का प्रयोग है। “मध” व “रिध” का साथ-साथ प्रयोग है। मग बहुलस्वर है।

४. विशाला—ग्रह और अंश प्रथम है। स्वयं प्रथम है। प्रथम बहुलस्वर है। ‘मध’ साथ-साथ आते हैं। सपूर्ण राग है।

#### (९) भिन्नपंचम का विभाषाराग

१. कौशली—ग्रह एवं अथ निषाद है। स्वयं प्रथम है। कृष्ण वर्ज्य है।

#### (१०) टक्ककैशिक के भाषाराग

१. मालवा—ग्रह, अंश और स्वयं प्रथम है। “म” “रिध” साथ-साथ आते हैं।

२. भिन्नबलिता—ग्रह एवं अंश पङ्क है। स्वयं प्रथम है। प्रथम एवं निषाद बहुलस्वर है। मध्यम एवं निषाद का साथ-साथ प्रयोग है।

### (११) टक्ककैशिक का विभाषाराग

१. द्राविड़ी—ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास धैवत है। “गनि” तथा “सधा” के प्रयोग साथ-साथ होते हैं।

### (१२) हिंदोल के भाषाराग

१. वेसरी—ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। पचम एव धैवत अल्पस्वर है। “सग” व “रिनि” का प्रयोग साथ-साथ होता है।

२. प्रथममंजरी—ग्रह एव अश पचम है तथा न्यास षड्ज है। पधनिस बहुल स्वर है। ऋषभ का अल्प प्रयोग है।

३. षड्जमध्यमा—ग्रहस्वर षड्ज और न्यासस्वर मध्यम है। निषाद एवं ऋषभ वर्ज्य है। “समा” तथा “गमा” के प्रयोग साथ-साथ होते हैं।

४. साधुरी—ग्रह व अश मध्यम है। न्यास षड्ज है। पधनिस बहुलस्वर है। ऋषभ का अल्प प्रयोग है।

५. भिन्नपौराली—ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास षड्ज है।

६. मालववेसरी—ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। अपन्यास गाधार है। मध्यम एव पचम मे गमक है। ऋषभ तथा धैवत वर्ज्य है।

### (१३) बोट्ट राग का भाषाराग

१. मांगली—ग्रह और अश पचम है। न्यास मध्यम है। मध्यम बहुलस्वर है। ऋषभ एव धैवत का साथ-साथ प्रयोग होता है।

### (१४) मालवकैशिक के भाषाराग

१. बांगली—अश एव ग्रह मध्यम है। न्यास षड्ज है। मध्यम बहुलस्वर है। रि, नि का साथ-साथ प्रयोग है।

२. मांगली—ग्रह, अश और न्यास षड्ज है। मध्यम एव पंचम अल्पस्वर है। मध्यम और पचम स्फुरित गमक से युक्त है। धैवत का दीर्घप्रयोग है। तारस्थान मे ऋषभ और मध्यम का प्रयोग है।

३. मालववेसरी—ग्रह, अश तथा न्यास षड्ज है। धैवत वर्ज्य है। तारस्थान मे ऋषभ और मद्रस्थान मे पचम का प्रयोग है। मध्यम और पचम कपितगमक से युक्त है।

४. खंजनी—ग्रह एव अश पचम है। न्यास षड्ज है। धैवत वर्ज्य है। निस तथा रिमा का प्रयोग साथ-साथ होता है।

५. गुर्जरी—ग्रह और अंश निपाद हैं, न्यास पट्ज है। “रिनि” तथा “रिमा” साथ-साथ आते हैं।

६. पौराली—ग्रह, अंश और न्यास पट्ज है। पट्ज एवं मध्यम बहुलस्वर है।

७. अर्धवेसरी—ग्रह एवं अंश मध्यम है और न्यास पट्ज है। ‘म’ एवं ‘म’ बहुलस्वर है। नि अल्पस्वर है।

८. शुद्धा—ग्रह एवं अंश मध्यम है। न्यास पट्ज है।

९. मालवरूपा—ग्रह, अंश तथा न्यास पट्ज है। गानि वर्ज्य है। गांधार बहुलस्वर है।

१०. आभीरी—ग्रह, अंश तथा न्यास पट्ज है। गानि अल्पस्वर है। ग और रि साथ-साथ आते हैं। बीर रग का पापक है।

### (१५) मालवकेशिक के विभाषाराग

१. कांबोजी—ग्रह, अंश और न्यास पट्ज है। नि बहुलस्वर है। ममयुक्त भी है। रिप वर्ज्य है। मंद्रस्थानीय पट्ज का प्रयोग होता है।

२. देवारवर्धनी—पट्ज न्यास है। गांधार एवं निपाद वर्ज्य है। न्यास पंचम है।

### (१६) गांधारपंचम का भाषाराग

१. गांधारी—ग्रह, अंश और न्यास धैवत है। पट्ज और गांधार बहुलस्वर है। लोकरंजक राग है।

### (१७) भिन्नपट्ज के भाषाराग

१. गांधारवल्लि—ग्रह एवं अंश मध्यम और न्यास धैवत है। ‘मथा’ साथ-साथ आते हैं।

२. कच्चेली—ग्रह एवं अंश पट्ज है। न्यास मध्यम है। कट नात का प्रयोग है। ग, ध वर्ज्य हैं। मतान्तर में ग्रह तथा अंश मध्यम है। तार व मंद्रस्थान में ऋषभ का प्रयोग है। ग और नि वर्ज्य हैं।

३. स्वरवल्लिका—ग्रह निपाद है। अंश एवं न्यास धैवत है। ऋषभ वर्ज्य है। स्वरों का मृदुभाव से प्रयोग होता है।

४. निषादिनी—ग्रह, अंश और न्यास धैवत है।

५. मध्यमा—ग्रह, अंश और न्यास धैवत है।

६. शुद्धा—ग्रह, अश तथा न्यास धैवत है। धैवत का मृदु प्रयोग होता है। रिप वर्ज्य है। मतान्तर मे “प” मात्र वर्ज्य है। सग का साथ-साथ प्रयोग है। अप-न्यास षड्ज है। मद्रस्थान मे स, ग, धा के प्रयोग है। पचम का दीर्घ प्रयोग है।

७. दाक्षिणात्या—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। पचम अल्पस्वर है। षाडव राग है। “समा” तथा “सधा” के साथ-साथ प्रयोग होते है।

८. पुलिन्दी—ग्रह एव अश धैवत है और न्यास षड्ज है। गप वर्ज्य है। “सव” तथा “सम” के साथ-साथ प्रयोग है।

९. तुम्बुरा—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। ऋषभ वर्ज्य है।

१०. कालिन्दी—ग्रह एव अश गाधार है और न्यास धैवत है। रिप वर्ज्य है। निषाद का अल्प प्रयोग है। चतु स्वर राग है। आरोहण व अवरोहण मे राग का प्रकाशन होता है।

११. श्रीकण्ठी—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। पचम वर्ज्य है। अपन्याम ऋषभ है। रिमा का प्रयोग साथ-साथ आता है।

१२. गांधारी—ग्रह व अश गाधार है, और न्यास मध्यम है। मध्यम वर्ज्य है।

### (१८) भिन्नषड्ज के विभाषाराग

१. पौराली—ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास धैवत है। ऋषभ अल्पस्वर है। रिमप का प्रयोग साथ-साथ होता है।

२. मालवी—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। सरिगम बहुलस्वर है। मद्र स्थान मे धैवत का प्रयोग है।

३. कालिन्दी—ग्रह और अश गाधार है। न्यास धैवत है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य है। निषाद अल्पस्वर है। अद्भुत रस का पोषक है।

४. देवारवर्धनी—ग्रह एव अश निषाद है। न्यास धैवत है। ऋषभ वर्ज्य है।

### (१९) वेसरषाडव के भाषाराग

१. नाद्या—ग्रह एव अश षड्ज है। न्यास मध्यम है। “ग” बहुलस्वर है। पचम वर्ज्य है।

२. बाह्याषाडवा—अश, ग्रह और न्यास मध्यम हैं। “निग” तथा “रिग” के साथ-साथ प्रयोग है।

## (२०) वेसरपाडव के विभाषाराग

१. पार्वती—अश एवं ग्रह पट्टा है।
२. श्रीकंठी—ग्रह, अश और न्यास मध्यम है। "निषा" तथा "रिश्त" का साथ-साथ प्रयोग है। पचम वर्ज्य है।

## (२१) मालवपचम के विभाषाराग

१. वेगवती—अश धैवत है। ग्रह एवं न्यास पट्टा है। जाजनेयप्रोक्त है।
२. भावनी—ग्रह, अश और न्यास पचम है। अपन्यास पट्टा है। ऋषभ वर्ज्य है।
३. विभावनी—ग्रह, अंश और न्यास पचम है। गांधार, मध्यम और धैवत अल्पस्वर है। मद्रस्थान में पचम का प्रयोग है।

## (२२) भिन्नतान का भाषाराग

१. तानोद्भवा—अंश, ग्रह जी० न्यास पचम है। हारम वर्ज्य है। कंकरी अल्प स्वरों का प्रयोग है।

## (२३) पचमपाडव का भाषाराग

१. पोता—अश, ग्रह और न्यास ऋषभ है। निषाद एवं पट्टा बहुलस्वर है। धैवत वर्ज्य है।

## (२४) रेवगुप्त का भाषाराग

१. शका—ग्रह एवं अश मध्यम है। न्यास पट्टा है। गांधार, पचम, ऋषभ और धैवत बहुलस्वर है।

## अज्ञातजनक भाषाराग

१. पल्लवी—यह विभाषा राग है। ग्रह, अश और न्यास धैवत है। पट्टा एवं ऋषभ बहुलस्वर है। तारस्थान में गांधार का प्रयोग है।
२. भासवलिता—यह अंतर्भाषाराग है। ग्रह, अश तथा न्यास धैवत है। ऋषभ अल्पस्वर है। पचम वर्ज्य है।
३. किरणावलि—यह अंतर्भाषाराग है। ग्रह, अश और न्यास धैवत है। तारस्थान में गांधार और निषाद का प्रयोग है। मद्रस्थान में भी निषाद का प्रयोग है।

४. शकवलित—ग्रह एव अश मध्यम है। न्यास धैवत है। धनि का साथ-साथ प्रयोग है।

### उपराग (मार्ग)

१. शकतिलक—यह पाङ्जी एव धैवती जातियो से उत्पन्न है। ग्रह, अश और न्यास पङ्ज है। पचम अल्पस्वर है।

२. टक्कसैधव—यह पाङ्जी और कैशिकी जातियो से उत्पन्न है। ग्रह, अश और न्यास पङ्ज है। पचम अल्पस्वर है।

३. कोकिलपंचम—यह राग पचमी एव मध्यमा जातियो से उत्पन्न है। अश एव ग्रह पचम है और न्यास मध्यम है।

४. भावनापंचम—यह राग गाधारपचमी जाति से उत्पन्न है। गाधार ग्रह स्वर है, पचम अशस्वर है।

५. नागगांधार—यह राग गाधारी और रक्तगाधारी जातियो से उत्पन्न है। अश, ग्रह तथा न्यास गाधार है। काकली और अतर स्वरो का प्रयोग है।

६. नागपंचम—यह राग आर्षभी व धैवती जातियो से उत्पन्न है। न्यास धैवत है और ग्रह तथा अश ऋषभ है। गाधार वर्ज्य है।

### निरूपपद राग

१. नट्टराग—मध्यमोदीच्यवा जाति से उत्पन्न है। अश, ग्रह और न्यास मध्यम है। तारस्थान मे षड्ज का प्रयोग है।

२. भास—यह राग आध्री जाति से उत्पन्न है। ग्रह, अश और न्यास धैवत है।

३. रक्तहंस—रक्तगाधारी जाति से उत्पन्न राग है। अश, ग्रह तथा न्यास धैवत है और ऋषभ वर्ज्य है। तारस्थान मे गाधार का प्रयोग है।

४. कोह्लास—नैपादी व धैवती जातियो से यह राग उत्पन्न है। ग्रह, अश और न्यास पङ्ज है। धैवत अल्पस्वर है।

५. प्रसव—नन्दयती जाति से यह उत्पन्न है। ग्रह व अश मध्यम है और न्यास पङ्ज है। पङ्ज, मध्यम तथा निषाद बहुलस्वर है। वीर रस का पोषक है।

६. ध्वनि—गाधारपचमी जाति से उत्पन्न राग है। ग्रह, अश और न्यास पचम है। पचम व धैवत बहुलस्वर है। निषाद एव गाधार अल्पस्वर है। मद्रस्थान मे मध्यम का प्रयोग है।

७. कन्दर्प—यह राग षड्जकैशिकी जाति से उत्पन्न है। ग्रह, अश तथा न्यास षड्ज है। पचम वर्ज्य है। मद्र पङ्ज का प्रयोग है।



२. वेहारी—ग्रह, अश और न्यास मध्यम है। निषाद वर्ज्य है। तारषड्ज तथा मद्रमध्यम का प्रयोग है।

३. स्वसिता—ग्रह एव न्यास गाधार है और अश षड्ज है। ऋषभ एव पचम वर्ज्य है। तारस्थान मे सचार नहीं है। मद्रस्थान मे षड्ज का प्रयोग है।

४. उत्पली—ग्रह, अश और न्यास मध्यम है। तारस्थान मे षड्ज, पचम और धैवत का प्रयोग है। मद्रस्थान मे निषाद का प्रयोग है।

५. गोल्ली—ग्रह, अश और न्यास धैवत है। गाधार एव निषाद वर्ज्य है। षड्ज, ऋषभ और धैवत बहुलस्वर है। तारस्थान मे ऋषभ का प्रयोग है।

६. नादान्तरी—ग्रह एव अश मध्यम है और न्यास पचम है। षड्ज, धैवत और निषाद बहुलस्वर है। गाधार अल्पस्वर है। तारमद्रस्थानो मे ऋषभ का प्रयोग है।

७. नीलोत्पली—ग्रह एव अश धैवत है और न्यास तारषड्ज है। मद्रस्थान मे पचम का प्रयोग है। निषाद व गाधार वर्ज्य है।

८. छाया—अश, ग्रह और न्यास मध्यम है। पचम बहुलस्वर है। मद्रऋषभ और तारगाधार का प्रयोग है। धनि अल्पस्वर है। षड्ज वर्ज्य है।

९. तरङ्गिणी—ग्रह एव न्यास ऋषभ है। अश धैवत है। मद्रस्थानीय षड्ज-मध्यम का अधिक प्रयोग है। तारस्थान मे ऋषभ एव धैवत का प्रयोग है। सकीर्ण राग है।

१०. गांधारगति—अश गाधार, न्यास षड्ज और पचम ग्रह है। तारस्थान मे ऋषभ, धैवत और निषाद का प्रयोग है।

११. वरंजी—न्यास अश और ग्रहस्वर षड्ज है। मद्रस्थान मे षड्ज का प्रयोग है। धैवत तथा निषाद का बहुल प्रयोग है। पचम अल्पतर स्वर है। तारस्थान मे पचम का प्रयोग है। वीर रस का पोषक है।

### (३) क्रियाङ्गराग

भावक्रिया, स्वभावक्रिया, शिवक्रिया, मकरक्रिया, त्रिनेत्रक्रिया, कुमुदक्रिया, धनुक्रिया, ओजक्रिया, इद्रक्रिया, नागक्रिया, धन्यक्रिया, विजयक्रिया—इन सबो का लक्षण यो है—ग्रह, अश तथा न्यास षड्ज है। अल्पत्व, पूर्णत्व, वर्ज्यत्व और गमक इत्यादि का प्रयोग लक्ष्य के सहारे निर्धारित करना चाहिए।

## (४) उपाङ्गराग

१. पूर्णाटि—अश एव ग्रह धैर्य है। न्यस मध्यम है। पचम बहुलस्वर है। भिन्न पङ्क का उपाङ्ग है।

२. देवाल—अश, ग्रह और न्यास मध्यम है। ऋषभ एव धैर्य का मृदु प्रयोग है। मध्यम में कर्पित गमक है। निषाद, ऋषभ और धैर्य अल्पस्वर हैं। वसाल राग का उपाङ्ग है। प्राचीन मत के अनुसार उस राग का नाम कामोद है।

३. कुरंजी—अश, ग्रह और न्यास पचम है। धैर्य का उपाङ्ग है। पङ्क एव पचम बहुलस्वर है। ऋषभ एव निषाद वर्ग है। मद्र राग में गारार का प्रयोग है।

## सातवाँ परिच्छेद

# हिन्दुस्थानी और कर्नाटक संगीत पद्धति

### कर्नाटक पद्धति

राग, भाषा, रागाङ्ग तथा भाषाङ्ग इनके विवरण का संप्रदाय शार्ङ्गदेव के काल तक अर्थात् ई० वारहवीं शताब्दी के अंत तक—प्रचार में था। उसके बाद मुसलमानों के आक्रमण के कारण उत्तर और दक्षिण भारत में यह संप्रदाय विच्छिन्न हो गया। उत्तर भारत में राग-रागिनी संप्रदाय अवशिष्ट रह गया। दक्षिण भारत में इसका भी भग्न हो गया। मुसलमानों के आक्रमण रुक जाने के बाद १४ वीं शताब्दी के आरंभ से हमारी कलाओं के पुनरुज्जीवन का शुभ कार्य आरम्भ हुआ। दक्षिण भारत में कर्नाटक साम्राज्य अर्थात् विजयनगर साम्राज्य इस काम का केन्द्र-स्थान हुआ। इस कार्य के मूलपुरुष विजयनगर के मंत्री विद्यारण्य (माधवाचार्य) हैं।

उन्होंने भारत की ललितकलाओं का ही नहीं अपितु समस्त वेदों, शास्त्रों और कलाओं का भी उज्जीवन किया है। वेदचतुष्टयी के भाष्य, समस्त दर्शनों के सग्रह, धर्मशास्त्र के विचार, पुराणों के सग्रह, वेदांत के प्रकाशन के अतिरिक्त अन्य शास्त्रों में भी उनकी प्रशसनीय सेवाएँ हैं।

संगीत के क्षेत्र में उनका कार्य यह है कि देश के कोने-कोने में शेष रहनेवाले रागों को बहुत प्रयास से ढूँढ़-ढूँढ़कर उन्होंने एकत्र किया, तो भी उन्हें लगभग पचास राग ही मिले थे। उनके लक्षणों के बारे में विचार करते-करते उन्हें यह बात प्रतीत हुई कि लक्ष्य कुछ जगह में शेष रहने पर भी लक्षणशास्त्र के संप्रदाय का पूर्ण रूप से भग्न हो गया है। प्राचीन संगीत ग्रंथों का अर्थ भी अच्छी तरह समझ में नहीं आया था। देश-देश के रुचिभेद से लक्ष्य में भिन्नता होने के कारण वे, प्राचीन ग्रंथों में पाये जानेवाले लक्षण और तात्कालिक मिले हुए लक्ष्य—इन दोनों में समन्वय कर नहीं सके। इसलिए उन्हें उपलब्ध पचास रागों के लक्ष्यमार्ग का संरक्षण करने के लिए एक नया प्रबन्ध करना पड़ा।

प्राचीन ग्रंथों में बताया गया है कि ग्राम से मूर्च्छना, मूर्च्छना से जाति और जाति से राग उत्पन्न हुए हैं। प्रत्येक राग के ग्रह, अश, न्यासादि दस लक्षण, वर्णलक्षण और स्थायी स्वर अलंकार लक्षण—ये सब प्राचीन ग्रंथों में दिये गये हैं। विद्यारण्य को मिले

हुए पचास रागो के सम्बन्ध में इन लक्षणों को ढूँढने का काम नहीं हो सका। नया प्रबन्ध इस तरह करना पड़ा कि वीणावाद्य के सहारे हर-एक राग में प्रयुक्त होनेवाले प्रकृति-विकृति स्वरों का निर्धारण किया गया। जिन रागों के स्वरों का प्रकृति-विकृतिरूप समान था उन्हें एक समूह में रखकर हर समूह का नाम “मेल” रखा गया। इस तरह ये पचास राग पंद्रह मेलों के अंदर रखे गये। हर एक मेल में रहनेवाले रागों में प्रसिद्ध राग के नाम के अनुसार ही तत्सम्बद्ध मेल का नामकरण किया गया।

बाद में जगह-जगह से कुछ और रागों का पता लगने लगा। उनके प्रकृति-विकृतिस्वरों के अनुसार और चार मेलों की सृष्टि हुई। विद्यारण्य के बाद विजयनगर साम्राज्य के सेनापति और राजप्रतिनिधि राम रायर की आज्ञा के अनुसार रामामात्य की लिखी हुई “स्वरमेल कलानिधि” (सन् १५५६) पुस्तक में इनका विवरण मिलता है। इन्होंने १९ मेलों तथा ६४ रागों के लक्षण दिये हैं।

सन् १६०५ में, आंध्रदेश में रहनेवाले वैष्णिक और शास्त्रज्ञ सोमनाथ ने “रागविबोध” नामक ग्रंथ लिखा है। इस ग्रंथ में ७६ रागों के विवरण दिये गये हैं। इनके प्रकृति-विकृतिस्वरों के अनुसार २३ मेलों की आवश्यकता हुई।

उनके बाद सोमनाथ और भावभट्ट दोनों ने “स्वरराग सुधारणवम्” और “संगीत चद्रिका” नामक ग्रंथ लिखे हैं। उनमें लगभग १०० रागों के विवरण हैं। परंतु उन्होंने २० मेलों के अंदर ही इन १०० रागों को बाँट दिया है। आये दिन मेलों की सख्या में अनियमित वृद्धि देखकर संगीतज्ञ लोग इस पर ऐसा विचार करने लगे कि व्यवहार में रहनेवाले रागों में, काम आनेवाले प्रकृति विकृत स्वरभेदों का निश्चय करके, प्रस्तारक्रम के अनुसार, साध्य मेलों की सख्या का निर्धारण किया जाय। इस विषय पर विद्वान् लोग तरह-तरह के मत देने लगे। कुछ लोगों का कथन था कि ३० मेल ही प्रचार में रहनेवाले रागों के लिए पर्याप्त हैं। और कुछ लोग, मेलों की सख्या को एक सहस्र से भी अधिक बढ़ाना चाहते थे। अतः मैं, बहुत-से वाद-विवाद के बाद सब एक निष्कर्ष पर आ पहुँचे। उनके मतानुसार, तब के प्रचलित रागों में उपयोग किये जानेवाले प्रकृति-विकृतस्वरों की सख्याएँ १६ थीं। उनमें सात स्वर शुद्ध स्वर हैं। ऋषभ के तीन प्रकार—शुद्ध, पञ्चश्रुति और षट्श्रुति। गान्धार के तीन प्रकार—शुद्ध, साधारण और अन्तर। मध्यम के दो भेद—शुद्ध और प्रति-मध्यम। पञ्चम का एक ही रूप था। धैवत के ~~तीन~~ प्रकार—शुद्ध, पञ्चश्रुति और षट्श्रुति। निषाद में तीन रूप—शुद्ध, कैशिकी और काकली। इन १६ स्वरों में

एक ही स्वरस्थान में दो-दो नाम रखनेवाले स्वर भी हैं। तीन ऋषभो और तीन गान्धारो में, दूसरी, तीसरी, ऋषभ के स्थान पहली, दूसरी गान्धार के समान है। ९ वीं श्रुति, पञ्चश्रुति ऋषभ और शुद्ध गान्धार का स्थान है। १० वीं श्रुति षट्श्रुति ऋषभ और साधारण गान्धार का स्थान है। इसी तरह धैवत, निषाद में भी दूसरी, तीसरी धैवत का स्थान पहली दूसरी निषाद के स्थान में है। अर्थात् २२ वीं श्रुति पञ्चश्रुति धैवत और शुद्ध निषाद का स्थान है। २३ वीं या पहली श्रुति षट्श्रुति धैवत और कैंगिकी निषाद का स्थान है। इसलिए १६ स्वर रहने पर भी स्वरस्थान १२ ही अर्थात् ४, ७, ९, १०, १२, १३, १६, १७, २०, २२ और तीसरी श्रुति हुए।

इसमें और कुछ विशेषता है। कुछ रागों में नवीं श्रुति पर स्थित पञ्चश्रुति ऋषभ का प्रयोग है। और कुछ रागों में आठवीं श्रुति पर स्थित चतुश्रुति ऋषभ का प्रयोग है। इन दोनों को और इसी तरह आनेवाले अन्यस्वरो को भी अलग-अलग गिना जाय तो स्वरों की संख्या २० हो जायेगी। तब मेलों की संख्या २०० से ज्यादा हो जाती है। इसलिए मेलों की संख्या को अधिक होने से बचाने के लिए चतुश्रुति और पञ्चश्रुति स्वर एक ही स्वर-जैसे गिने गये और इसी तरह आनेवाले दोनों स्वरों को भी एक स्वर-जैसा ही गिनकर, अर्थात् केवल १६ स्वरों के रूप रखकर, ७२ मेलों की सृष्टि की गयी है। पर प्रयोग में इन दोनों स्थानों के भेद पर अच्छी तरह ध्यान दिया जाता है।

### ७२ मेल कर्ता की योजना

ऋषभ के तीन रूप और गान्धार के भी तीन रूप हैं। पहले ऋषभ और पहले गान्धार को मिलाकर (७, ९ स्थान में होनेवाले स्वर) प्रथम मेलचक्र बनाया गया। पहला ऋषभ और दूसरा गान्धार (७, १० श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर दूसरा मेलचक्र बनाया गया। पहला ऋषभ तथा तीसरा गान्धार (७, १२ श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर तीसरा मेलचक्र बनाया गया। दूसरा ऋषभ और दूसरा गान्धार (९, १० श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर चौथा मेलचक्र बनाया गया। दूसरा ऋषभ और तीसरा गान्धार (९, १२ श्रुतिस्थान के स्वर) मिलाकर पाचवाँ मेलचक्र बनाया गया। तीसरा ऋषभ एवं तीसरा गान्धार (१०, १२ वीं श्रुति के स्वर) मिलाकर छठा मेलचक्र बनाया गया। इन छ मेलचक्रों में भी शुद्ध मध्यम (१३ श्रुति) ही रखा गया। अब प्रत्येक चक्र के पूर्वभाग की जानकारी हमें हुई है। और इसी तरह धैवत और निषाद का मेलन करने से हर एक चक्र को ६ उत्तर भाग मिलेंगे। तब मेलों के रूप यो हुए—

पहले चक्र के पहले मेल मे	पहला धैवत (२०वीं श्रुति)	पहला निषाद (२२ वीं श्रुति) रह गया।
„ दूसरे मेल मे	„	दूसरा निषाद (१ ली श्रुति) रह गया।
„ तीसरे मेल मे	„	तीसरा निषाद (३ री श्रुति) रह गया।
„ चौथे मेल मे	दूसरा धैवत (२२वीं श्रुति)	दूसरा निषाद ( १ ली श्रुति) रह गया।
„ पाचवें मेल मे	„	तीसरा निषाद (३ री श्रुति) रह गया।
„ छठे मेल मे	तीसरा धैवत (१ ली श्रुति)	„ „

इसी तरह बाकी पांच चक्रों के प्रत्येक चक्र में भी छ. मेल मिलेंगे। कुल मिलकर ३६ मेल प्राप्त होते हैं। हर मेल में षड्जपञ्चम मिलेंगे तो मेल का पूर्ण रूप पाया जाता है।

इस तरह छ चक्रों से पहले ३६ मेलों की उत्पत्ति हुई। इन ३६ मेलों में ही शुद्ध मध्यम (१३ वीं श्रुति) के स्थान पर प्रतिमध्यम (१६ वीं श्रुति) को रखकर और ३६ मेलों की सृष्टि इसी रीति पर हुई।

हर एक मेल के प्रकृति, विकृति स्वर जिन रागों में दिखाई पड़े उन्हें उसी मेल से जन्य कहा गया। यद्यपि मेलों की सृष्टि आधुनिक काल में हुई, तो भी इनको 'जनक' नाम प्राप्त हो गया। इस तरह जनक, जन्य नाम रागों की उत्पत्ति के विषय में बहुत भ्रम का कारण बन गया। रागोत्पत्ति के बारे में प्राचीन ग्रन्थों से परिचय न होने के कारण लोग मेलों को ही, जो आधुनिक काल की सृष्टि है, प्राचीन जनकराग समझने लगे। कुछ पुस्तकों में ७२ मेलों को ही प्राचीन रागाङ्गराग नाम से कहा जाने लगा। करीब ६० वर्ष पहले के सुब्बराम दीक्षित के द्वारा संपादित 'संगीत संप्रदाय प्रदर्शनी' में इसी प्रकार बताया गया है। जिन्हें प्राचीन शास्त्रों का ज्ञान कम है उनमें यह आधार ग्रन्थ माना जाता है।

इन ७२ मेलों के अन्दर रहनेवाले रागों में सब से प्रसिद्ध राग का नाम ही मेलों का नाम बन गया। मेल सख्या की सूचना देने के लिए प्रसिद्ध राग के नाम के साथ कटपयादि सख्या का अनुसरण करके दो अक्षर नाम के आगे जोड़ दिये गये हैं, परन्तु बहुत मेलों के अन्दर रखने के लिए एक राग भी न मिला। इस तरह के मेलों की सृष्टि

व्यर्थ प्रतीत हुई। इन ७२ मेलो के रचयिता बेकट मखी ने इसका समाधान यो दिया है कि भविष्य में आविष्कृत किये जानेवाले रागो और विदेशो से आनेवाले रागो को भी स्थान देने के लिए इन्हें रखा जाय (मद्रपुरी संगीत विद्वत्सभा द्वारा मुद्रित चतुर्दण्ड-प्रकाशिका के ४ थे प्रकरण के ब्लोक ८० से ९२ देखिए)।

इस तरह के मेलो को नये नाम दिये गये। इन नामों में पहले दो अक्षर कटपयादि सख्यानुसार मेल के सख्यासूचक थे। इस तरह नाम रखने में भी मतभेद हुआ है।

आजकल व्यवहृत मेलो में मेल राग बने हुए रागो के नाम यो हैं—

मेल	राग	मेल का नाम
८	तोड़ी	हनुमत्तोड़ी
१५	मालवगौड़	मायामालवगौड़
२०	भैरवी	नटभैरवी
२८	काम्बोजी	हरिकाम्बोजी
२९	शकराभरण	धीर शकराभरण
३६	नाट	चलनाट
४५	पन्तुवराली	शुभपन्तुवराली

मेलकर्ता की योजना, केवल गणित मार्गानुसृत सृष्टि है। परन्तु रागो में स्वरों का रूप तो वादी-सवादी तत्त्व पर निर्भर है। इसलिए कई रागो को ७२ मेलो में किसी के अन्दर भी रखना साध्य नहीं हुआ। कुछ रागों में वादी-सवादी तत्त्व की आवश्यकता के कारण आरोहण में एक विवृत स्वर और अवरोहण में दूसरा विवृत स्वर प्रयोग में है। उन्हें भी मेलकर्ता योजना में युक्त स्थान नहीं मिला।

इस योजना में और एक दोष यह है कि चतु श्रुति (८ वी श्रुति), पञ्चश्रुति (९ वीं श्रुति), ऋषभ धैवत स्वरों को एक स्वर-जैसा मानना और साधारण गान्धार, प्राचीन काल के अन्तर गान्धार तथा कैशिकी निषाद और प्राचीन काल के काकली निषाद—इन्हें एक ही स्वर-जैसा मानना। इस प्रकार की मान्यताओं के कारण ७२ मेलकर्ता योजना को याद में रखकर गाने से वादी-सवादी सम्बन्ध भग्न होकर रक्ति-भंग का कारण बन जाता है।

इन १६ स्वरों के अतिरिक्त रहनेवाले चार स्वर, ८ वी श्रुति पर स्थित चतुः-श्रुति ऋषभ, ११ वी श्रुति पर स्थित प्राचीन काल का अन्तरगान्धार, २१ वी श्रुति पर स्थित चतुःश्रुति धैवत और दूसरी श्रुति पर स्थित काकली निषाद हैं। रागो में

जिस स्थान के स्वर का प्रयोग होता है यह वात वादी-सवादी सम्बन्ध के सहारे अत्यन्त सरलतापूर्वक निश्चित हो सकती है।

ई० सन् १५६५ मे तेलकोट्टा युद्ध मे विजयनगर राजधानी के ध्वस हो जाने के पश्चात् उस साम्राज्य की इकाइयों के प्रतिनिधि स्वतंत्र होकर अपनी-अपनी इकाइयों के राजा हो गये। उनको नायक राजा कहा जाता है। तंजौर, मदुरा, मैसूर, जिञ्जी और पेनुकोण्डा—ये पांच स्वतंत्र नायक राज्य बन गये। उनमे से तंजौर राज्य धन, धान्य, सम्पत्ति मे अन्य राज्यों से बढकर था। अतः विजयनगर के कलाकार अपने अपने कलाग्रन्थों के साथ तंजौर पहुँचे। विजयनगर मे पुनरुज्जीवित और सर्वाधिक कलाएँ और भी उन्नति पाने लगी।

संगीत के लक्ष्य संप्रदाय मे रागों का स्वरूप निश्चित करने के लिए 'संगीत रत्नाकर' के समय के पश्चात् आलाप और कई प्रबन्ध बनाये गये, वे प्रचार मे भी थे। ये चार प्रकारों मे बाँटे गये थे। उस विभाग के कर्ता गोपाल नायक हैं जो कर्नाटक देश में संगीत कला मे बहुत प्रसिद्धि पाकर दिल्ली बादशाह के द्वारा बुलाये गये। यह भी कहा जाता है कि उन्होंने वहाँ अमीर खुसरो नामक विद्वान् पर विजय प्राप्त की।

गोपाल नायक के अनुसार लक्ष्यसाहित्य आलाप, ठाय, गीत और प्रबन्ध नामक चार भागों मे विभाजित किया गया। आलाप का लक्षण संगीत रत्नाकर मे दिया गया है।

१. आलाप—आलाप के पहले भाग मे रागस्वरूप की रूपरेखा है। इसका नाम 'आक्षिप्तिका' है। इसमे जो 'आयत्तम्' नाम से भी पुकारा जाता है, उसके चार भाग हैं। इसके हर एक भाग का नाम 'स्वस्थान' है।

प्रथमस्वस्थान—प्रथम स्वस्थान मे यो गान करना चाहिए—राग के स्थायी स्वर या अश स्वर पर खड़े होकर आगे और पीछे थोडा जाकर जिस प्रकार रागभाव का प्रकाशन हो सकता हो, उस प्रकार राग के स्थायी स्वर का उच्चारण अलंकार और गमक सहित अन्य स्वरों के साथ किया जाय।

यदि वह राग अवरोही वर्ण मे प्रकाशित होता हो, तो नीचे के एक-एक स्वर को मिलाकर चालन करना है। वह आरोही वर्ण मे प्रकाशित होता हो तो ऊपर के एक-एक स्वर को मिलाकर गाते जाना है। संचारी वर्ण मे राग का प्रकाशन हो तो आगे और पीछे के स्वरों को मिलाकर गाना चाहिए। इसका नाम 'मुखचालन' है। हर एक चालन को अन्ततः स्थायी स्वर मे न्यस्त करना चाहिए। अश के सवादी पहले स्वर तक इसी तरह करना चाहिए। यह आलाप का पहला स्वस्थान है। प्रायः सवादी स्वर अंश का चौथा या पाँचवाँ स्वर ही होगा। इसलिए इसका नाम 'द्व्यर्थ-स्वर' है।



द्वितीय स्वस्थान—द्व्यर्धस्वर पर खड़े रहकर चालन करने के पश्चात् स्थायी स्वर में आकर न्यास करने का नाम द्वितीय स्वस्थान है।

तृतीय स्वस्थान—दूसरे सप्तक में रहनेवाले अश स्वर का नाम द्विगुणस्वर है। द्विगुणस्वर और द्व्यर्धस्वर दोनों के बीच में होनेवाले स्वरों का नाम 'अर्धस्थित स्वर' है। अर्धस्थित स्वरों में चालन करके अश स्वर में आकर समाप्त किये जानेवाले भाग का नाम तृतीय स्वस्थान है।

चतुर्थ स्वस्थान—द्विगुणस्वर में खड़े रहकर चालन करके अंशस्वर में आकर समाप्त करने को चतुर्थ स्वस्थान कहते हैं। आक्षिप्तिका के बाद राग को बहुत पकड़ो के साथ विस्तार करना चाहिए। इसे कई भागों में विभाजित किया गया है। उनके नाम रागवर्धनी, स्थायी, मकरिणी और न्यास हैं।

रागवर्धनी को प्रथम रागवर्धनी, द्वितीय रागवर्धनी और तृतीय रागवर्धनी नामक तीन भागों में विभाजित किया गया है। हर एक रागवर्धनी में मध्य, तारस्थान में सचार, द्वितीय रागवर्धनी में मन्द्र, मध्य स्थानी में सचार, तृतीय रागवर्धनी में तीनों स्थानों में सचार करना होता है। प्रत्येक रागवर्धनी में विलम्ब, मध्य, द्रुत काल रहते हैं। किन्तु प्रथम रागवर्धनी में विलम्ब काल सचार, द्वितीय रागवर्धनी में मध्यकाल सचार, तृतीय रागवर्धनी में द्रुतकाल के सचार ज्यादा रहते हैं।

इसके बाद 'स्थायी' नामक भाग का गान करना होता है। 'स्थायी' अर्थात् अशस्वर से शुरू करके प्रत्येक सचार में जिन स्वरों तक सचार करते हैं, उसके ऊपर नहीं जाना होता। इसी क्रम में आरोहण क्रम में एक से आठ स्वर तक दो बार सचार करना है, परन्तु नीचे इच्छानुसार सचार कर सकते हैं। इसके बाद अवरोह क्रम में इसी तरह तारस्थानीय अंश स्वर से मध्यस्थानीय अश स्वर तक नीचे के एक से आठ स्वर तक दो बार सचार करना होता है। इन सचारों में इच्छानुसार ऊपर के स्वरों में घूम सकते हैं, पर नीचे नहीं घूम सकते। जिस तरह अंश स्वर से स्थायी संचार आरम्भ किया जाता है उसी तरह हर एक अपन्यास स्वर से भी आरम्भ करके आठवें स्वर तक ऊपर और नीचे संचार कर सकते हैं।

• इसके बाद आलाप के मुकुटरूप भाग का गान करना है। उसका नाम 'मकरिणी' है। मकरिणी में हर एक स्थान में अन्तिम सचार करके न्यास स्वर में पूर्ति करना होता है। इसमें मन्द्रस्थान में अधिक संचार होता है।

अंत में न्यास स्वर से आरम्भ करके इच्छानुसार सचार करते हुए न्यास स्वर पर समाप्त करना चाहिए। उसका नाम न्यास है।

१५, १६, १७ वीं शताब्दियों में इसी प्रकार के आलापों की कल्पना साम्प्रदायिक आचार्य कर चुके हैं।

२ **ठाय**—दूसरे लक्ष्यसाहित्य का नाम है 'ठाय'। यह शब्द 'स्थाय' नामक संस्कृत शब्द का प्राकृत रूप है। एक छोटे संचार का नाम 'ठाय' है। हर एक ठाय, राग के भिन्न-भिन्न रूप को प्रदर्शित करने का काम करता है। इस प्रकार उनके रूप कार्य के अनुसार उनके नामकरण भी किये गये हैं। संगीत रत्नाकर में 'ठाय' के नाम-रूप वर्णित किये गये हैं। उस जमाने में प्रसिद्ध ठाय रूप के अनुसार दशविध, और कार्य के अनुसार तैत्तिरीय प्रकार के बताये गये हैं। अप्रसिद्ध ठाय में मिश्रित या सकीर्ण ठाय ३६ और असकीर्ण ठाय २६ हैं। कुल मिलकर ९६ ठायों का उल्लेख है। रूप के अनुसार स्थायों के उदाहरण—

१. शब्द स्थाय—व्यक्त रूप में शब्दों को अलग-अलग दिखानेवाले हैं।

२. ढाल स्थाय—मोती के ढाल के अनुसार चलन करने का नाम है।

३. लषनी—स्वरो को कोमलतर नमन के साथ उच्चारण करने का नाम है।

४. वहनी—इसमें गीत वहनी, आलप्ति वहनी; ये दो भेद होते हैं। आरोह या अवरोह में स्वरकम्पन, और संचारी में स्थिर स्वरकम्पन के साथ स्वर उच्चारण करने का नाम 'वहनी' है। हर एक वहनी के और दो भेद हैं। स्थिर वहनी और वेगाढ्या वहनी। और तीन भेद स्थायी के भेद से हैं; हृद्या, कण्ठ्या, शिरस्या। हृद्या में दो तरह के प्रयोग हैं। स्वरो को अन्दर घुसने की तरह उच्चारण किया जाय, तो उसका नाम 'कुन्ता' है। बाहर निकलने की तरह उच्चारण किया जाय तो उसका नाम 'फुल्ला' है।

५. वाद्यशब्द स्थाय—इसमें वीणा आदि वाद्यों से उपन्न शब्दों की तरह उच्चारण करने का नाम 'वाद्य शब्द' है।

६. छाया स्थाय—राग, स्वर आदियों के साथ दूसरे राग या स्वरो की छाया को भी मिलाकर उच्चारण करने का नाम है 'छाया स्थाय'।

७. स्वर लघित—दो, तीन या चार स्वरो को उच्चारण न करके लंघन करने का यह नाम है।

१. रूप के अनुसार स्थायों के नाम—ऊपर दिये हुए स्थायों को छोड़कर और भी दो हैं। वे प्रेरित और तीक्ष्ण हैं।

काम के अनुसार स्थायों के नाम—भजन, स्थापना, गति, नादध्वनि, छवि, रक्ति, द्रुत, शब्द, वृत्त, अंश, अवधान, अपस्थान, निरुक्ति, करुणा, विविधत्व, गात्र,

काम के अनुसार स्थायों के नाम के उदाहरण—

१. भजन स्थाय—राग को रक्ति के साथ प्रकाशित करने का नाम है।

२. स्थापना स्थाय—राग को निश्चयपूर्वक स्थापित करने का काम करता है।

ये स्थाय भी बहुत से रागों में साम्प्रदायिक आचार्यों द्वारा कल्पित हैं। इनमें तानप्प आर्य के द्वारा रचित साहित्य विशेष है।

इस तरह के ठायों की कल्पना करके उन्हें याद रखने के लिए एक सम्प्रदाय मार्ग है। उसके अनुसार राग के अक्ष, न्यास या अपन्यास स्वर को स्थायी बनाकर ऊपर तीन-चार स्वरों तक चार बार सचार करके उसी तरह नीचे भी सचार करने के पश्चात् मन्द्र षड्ज या न्यास स्वर पर समाप्त करना होता है। सचार का नाम 'येडुप' है। अन्त करने का नाम मुक्तायी या मकरिणी है।

३. गीत—बहुत दिन पूर्व से हजारों तरह के प्रबन्धभेद वर्तमान थे। उनका विवरण सगीतरत्नाकर प्रबन्धाध्याय में दिया गया है। उनमें कुछ प्रबन्धों को छोड़कर बाकी सब अधयुग में अप्रचलित हो गये। बचे हुए प्रबन्धों में 'सालगसूड' नामक प्रबन्ध ज्यादा प्रचार में थे। ये प्रबन्ध तालों के नामों में प्रचलित हैं। ध्रुव, मण्ड, प्रतिमण्ड, निस्सारक, अड्डताल, रासताल, एक-ताल हैं।

इन सातों तालों में सालगसूड की तरह नयी चीजों की सृष्टि भी हुई। राग-स्वरूप का प्रकाशन करने के लिए साहित्य लक्ष्यों के चार भेदों में 'गीत' का भी एक स्थान है। इसमें राग का रूप सुलभ तालबद्ध छोटे-छोटे सचारों से बना हुआ होता है।

उपसम, काण्डारण, निर्जवनगाढ़, ललित गाढ़, ललित, लुठित, सम, कोमल, प्रसूत, स्निग्ध, चोस, उचित, सुदेशिक, अपेक्षित घोष, स्वर।

अप्रसिद्ध स्थायों के नाम—असंकीर्ण-बह, अक्षराडम्बर, उल्लासित, तरंगित, प्रलम्बित, अवस्खलित, त्रोटित, संप्रविष्टक, उत्प्रविष्ट, निस्सारग, भ्रामित, दीर्घ-कम्पित, प्रीतिप्रहोलासित, अविलम्ब, विलम्बक, त्रोटित, प्रतीष्ट, प्रसूताकुञ्चित, स्थिर, स्थायुक, क्षिप्त, सूक्ष्मान्त।

मिश्रित स्थायों के नाम—प्रकृतिस्थ, शब्द, कला, आक्रमण, प्लुत, रागेष्ट, अपस्वराभास, बद्ध, कलरव, छन्दस, सुकराभास, संहित, लघु, अन्तर, वक्र, दीप्त प्रसन्न, प्रसन्न मृदु, गुरु, ह्रस्व, शिथिल गाढ़, दीप्त, असाधारण, साधारण, निरादर, दुष्कराभास, मिश्र।

**प्रबन्ध**—प्रबन्धो के ४ धातु या अवयव और उनके ६ अंग—प्रबन्धों में बहुत कुछ अप्रचलित होने के बाद भी कुछ प्रबन्ध बच गये। उनमें पञ्चतालेश्वर प्रबन्ध और श्रीरङ्ग प्रबन्ध मुख्य हैं। प्रबन्धो में ६ अंग और ४ धातु होते हैं। स्वर, विरुद, पद, तेनक, पाट और ताल—ये ६ अंग हैं।

१. स्वर—स, रि, ग, म आदि हैं।

२. विरुद—प्रस्तुत नायक के धैर्य, शौर्य आदि का वर्णन करके उसको सबोधित करना या कर्ता के नाम, कुल आदि का वर्णन करना।

३. पद—केवल प्रस्तुत नायक के गुणों का वर्णन।

४. तेनक—‘तेन’ आदि अक्षरों के उच्चारण के साथ आलाप करने का नाम है। ‘तेन’ शब्द ‘तत्’ शब्द की तृतीया विभक्ति है। ‘तेन’ शब्द का अर्थ ‘तत्’ या ‘ब्रह्म’ है। इसलिए यह मंगलकर शब्द है।

५. पाट—तक, तनादि वाद्य शब्दों से बद्ध साहित्य का नाम है।

६. ताल—एक ही प्रबन्ध में भिन्न-भिन्न ताल साहित्य के अंग हो तो इसका नाम ताल है।

### धातु या अवयव

चार धातु हैं—उद्ग्राह, मेलापक, ध्रुव, आभोग।

कभी-कभी उद्ग्राह और ध्रुव के मध्य भाग में अन्तर नामक एक पाँचवाँ धातु भी होता है। प्रबन्ध का आरम्भ भाग ‘उद्ग्राह’ है। उद्ग्राह को तृतीयाङ्ग ध्रुव के साथ मिलानेवाला होने के कारण द्वितीयाङ्ग का नाम ‘मेलापक’ पड़ा। अगो में अनिवार्यता के कारण तृतीय धातु का नाम ‘ध्रुव’ हुआ। प्रबन्ध की पूर्ति करने की जगह ‘आभोग’ है।

प्रबन्ध षडङ्ग, पञ्चाङ्ग, चतुरङ्ग, त्र्यङ्ग या द्व्यङ्ग बनाये गये थे। मेदिनी, आनन्दिनी, दीपनी, भावनी, तारावली आदि इनके नाम हैं।

धातुओं की दृष्टि से चतुर्धातु, त्रिधातु, द्विधातु प्रबन्ध भी हैं। इनमें उद्ग्राह और ध्रुव अनिवार्य हैं। त्रिधातु प्रबन्ध में ‘मेलापक’ नहीं है। ‘आभोग’ में दो भाग हैं। पहला भाग बिना ताल के ‘आलाप’ है। उसका नाम ‘वाक्य’ है। पूर्वार्ध में साहित्यकर्ता और उत्तरार्ध में प्रस्तुत नायक का नाम रहता है।

ये चारों तरह के लक्ष्य साहित्य ‘चतुर्दण्डी’ नाम से प्रसिद्ध हुए। ‘चतुर्दण्डी’ शब्द का अर्थ है संगीत कला को वश में करने के चार उपाय। ‘चतुर्दण्डी’ सम्प्रदाय के आदिकर्ता गोपाल नायक हैं। इस सम्प्रदाय ने विजयनगर के पतन के पश्चात्

तंजौर में नायको के आश्रित रहकर संरक्षण पाया। बहुत से चतुर्दण्डी साहित्यों की सृष्टि हुई।

नायको के बाद तंजौर का शासन महाराष्ट्र राजाओं के हाथ में आ गया। इन राजाओं में दूसरे राजा 'शाहजी' संगीत और साहित्य कलाओं में पारङ्गत हुए। उनका दरबार बहुत से विद्वान् लोगो, शास्त्रज्ञो, गवैयो और कवियों से अलङ्कृत था। इनके समय रागों के लक्षण को निश्चय करने के लिए दस सम्प्रदायों के विद्वानों के मत के अनुसार लगभग एक सौ कर्नाटक रागों के लक्षणों को सुनकर, तालपत्र कोशों में लिखवाया गया।

चतुर्दण्डी लक्ष्य साहित्य को भी २० तालपत्र की पुस्तकों में लिखाकर सुरक्षित किया गया है। उनमें आलाप, ठाय, गीत और प्रबन्ध स्वरूप में लिखे गये हैं। सब ग्रन्थ अब भी 'तंजौर सरस्वती महल पुस्तकालय' में सुरक्षित हैं।

वैणिक, विद्वान्, शास्त्रज्ञ और साहित्यकार वेकट मखी ने, जो १६२० ई० में तंजौर में थे, अपने "चतुर्दण्डप्रकाशिका" नामक ग्रन्थ में चतुर्दण्डी के लक्षण दिये हैं। उनके पिता गोविन्द दीक्षित नायक राजाओं के मंत्री थे। राजा रघुनाथ नायक और गोविन्द दीक्षित, इन दोनों की लिखी हुई "संगीतसुधा" में ५० रागों के आलापन क्रम विस्तृत रूप में दिये गये हैं। शाहजी (१६७८-१७११) के लक्ष्य-लक्षण ग्रन्थ में पाये जानेवाले लक्षण और लक्ष्यमार्ग ही आज की कर्नाटक संगीत पद्धति में भी विद्यमान हैं, परन्तु यह संप्रदाय संगीतरत्नाकर में दिये हुए रागस्वरूप और रागलक्षणों से बहुत भिन्न है।

संगीतरत्नाकर के बाद लिखे गये ग्रन्थों में तात्कालिक रागों की मूर्च्छना, जाति, वर्ण और अलंकार इत्यादि के लक्षण नहीं दिये गये हैं। केवल हर एक राग के प्रकृति-विकृतिस्वर बताये गये हैं। इन ग्रन्थों में दो हुई ग्रह, अश, न्यास इत्यादि सजाएँ भी उनके असली अर्थ में प्रयुक्त नहीं हैं। क्योंकि इन सजाओं के मूलभूत मूर्च्छना-तत्त्व को वे सब भूल गये थे।

शाहजी द्वारा निष्कर्ष रूप में प्राप्त सब राग लक्षणों और लक्ष्य साहित्य से उद्धृत उदाहरणों को उनके भाई तुलजा महाराज ने अपने ग्रन्थ "संगीत सारामृत" में यथा-तथ्य लिखा है। इस ग्रन्थ में रागों के प्रकृति-विकृतिस्वर और चतुर्दण्डी लक्ष्य से विशेष संचार के उद्धरण मात्र दिये गये हैं। मूर्च्छना, ग्रह, अश, न्यास, वर्ण और अलंकार आदि का उल्लेख नहीं है, किंतु संप्रदाय-परंपरा की विशुद्धता के कारण रागों की छाया पूर्ण जीवन के साथ, लगभग बीस वर्ष पहले तक विद्यमान थी। गुरुकुल संप्रदाय की

विच्छिन्नत। के कारण संगीतकला के एक मात्र आश्रय संप्रदाय की भी कमी होती जा रही है।

आज कर्नाटक संप्रदाय के प्रचलित रागों में लगभग १०० राग प्रसिद्ध हैं। १५० अप्रसिद्ध अपूर्व राग हैं।

कर्नाटक पद्धति में मेल और रागों का इतिहास—

१ विद्यारण्य का मत—संगीतसार<sup>१</sup> (लगभग १४०० ई०)

२ रामामात्य का मत—स्वरमेल कलानिधि (१५५० ई०)

३. सोमनाथ का मत—रागविबोध (१६०९ ई०)

४ वेकट मल्ली का मत<sup>२</sup>—चतुर्दण्डप्रकाशिका (१६१५)

५ शाहजी और तुलजाजी का मत—संगीत सारामृत (१७१०-१७२५)

६ ७२ मेलकर्ता (उद्भवकाल लगभग १६०० ई०)

(प्रचार का काल लगभग १७५० ई०)

१ विद्यारण्य का 'संगीतसार' अब उपलब्ध नहीं है। परन्तु उनका मत रघुनाथ नायक और गोविन्द दीक्षित की 'संगीतसुधा' में उद्धृत किया गया है।

२. यह रचना ७२ मेलकर्ता के काल में परिष्कृत हुई, परन्तु इस योजना का प्रचार पिछले दिनों में ही हुआ।

१-५० राग और १५ मेल

मेलों की संख्या	मेल एवं रागों के नाम		श्रुति संख्या																						
	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३		
१	नट्टा मेल	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	
२	गुर्जरी मेल	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	
	२. सौराष्ट्र	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	
	३. मेचवौलि	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	
	४. छाया गौड़	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	
	५. गुण्डक्रिया	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	
	६. सालगनाटिका	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	
	७. शुद्ध वसन्त	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	
	८. नादरामक्रिया	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	

मेल एंव रागों के नाम	श्रुति सख्या
१ गौड़	४
१० बौल	५
११ कर्नाट बगाल	६
१२ ललित	७
१३ मलहरि	८
१४. पाठी	९
१५ सावेरी	१०
१६. रेवगुप्ति	११
बराटी मेल	१२
श्रीराग मेल	१३



२. सालग भैरवी	स	रि ग	म	प	ध	नि
३ घण्टारव	स	रि ग	म	प	ध	नि
४. वेलावली	स	रि ग	म	प	ध	नि
५. देवगान्धारी	स	रि ग	म	प	ध	नि
६ रीतिगौड़	स	रि ग	म	प	ध	नि
७ मालवश्री	स	रि ग	म	प	ध	नि
८ मध्यमादि	स	रि ग	म	प	ध	नि
९ धनाशी	स	रि ग	म	प	ध	नि
५ भैरवी मेल	स	रि ग	म	प	ध	नि
२ भित्त पङ्क	स	रि ग	म	प	ध	नि
३ हिन्दोल वसन्त	स	रि ग	म	प	ध	नि
४ हिन्दोल	स	रि ग	म	प	ध	नि
५ भूपाल	स	रि ग	म	प	ध	नि
६ शंकराभरण मेल	स	रि ग	म	प	ध	नि
२. आरभो	स	रि ग	म	प	ध	नि
३ पूर्वगौड़	स	रि ग	म	प	ध	नि
४ नारायणी	स	रि ग	म	प	ध	नि
५. नारायण देशाक्षी	स	रि ग	म	प	ध	नि
आहीरी मेल	स	रि ग	म	प	ध	नि
२. आभेरी	स	रि ग	म	प	ध	नि

[illegible]



संख्या	श्रुति सख्या	मेल व राग		गुण्डकिया	
		स	रि	ग	म
४		पञ्चम			
५					
६					
७		शुद्ध ऋषभ			
८					
९	१०	पञ्चमश्रुति ऋषभ शुद्ध गान्धार			
१०	११	गान्धार ऋषभ			
११	१२	अन्तर गान्धार			
१२	१३	अव्यक्त मध्यम गान्धार			
१३	१४	शुद्ध मध्यम			म
१४	१५				
१५	१६	व्यक्त पञ्चम मध्यम			
१६	१७	पञ्चम			प
१७	१८				
१८	१९				
१९	२०	शुद्ध धैवत			
२०	२१				
२१	२२	पञ्चमश्रुति धैवत शुद्ध निषाद			ध
२२	२३	षट्श्रुति धैवत कैशिकी निषाद			नि
२३	२४	काकली निषाद			
२४	२५	व्यक्त षड्ज			

मेलों की संख्या

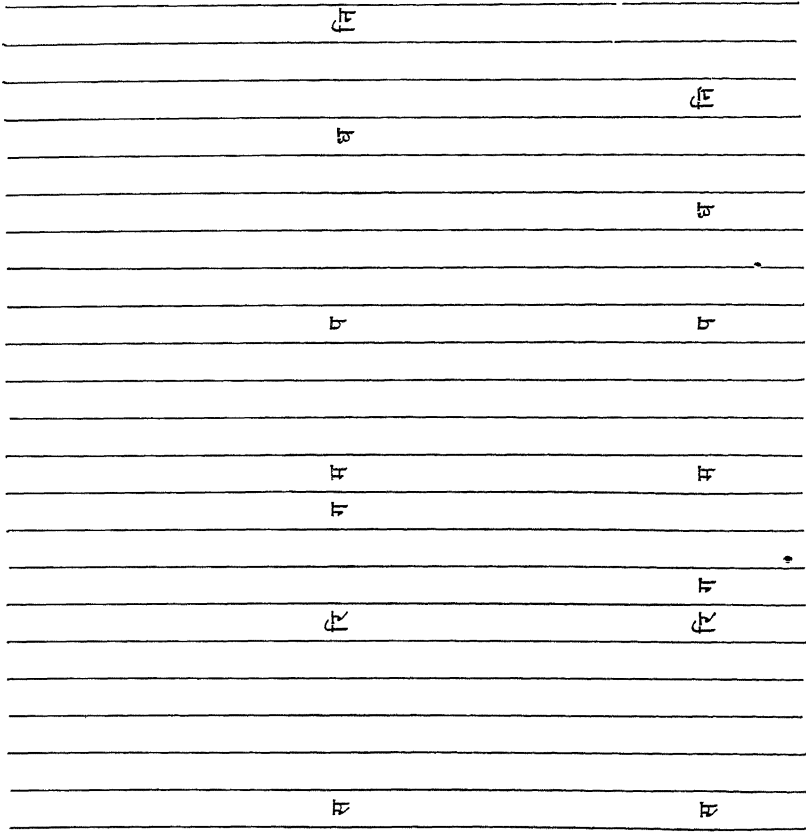
३

८. गुण्डकिया  
 ९. छायागौड़  
 १०. सिन्दुरामकिया  
 ११. कुरञ्जी  
 १२. कन्नड बगाल  
 १३. मंगल कौशिक  
 १४. मल्हारी  
 श्रीराग मेल  
 २. भैरवी  
 ३. गौड़ी

४. धन्याशी  
 ५ शुद्ध भैरवी  
 ६. बेलावली  
 ७ मालवश्री  
 ८ शकराभरण  
 ९. आन्दोली  
 १०. देवगान्धारी  
 ११ मध्यमादि  
 सारङ्गनाट मेल  
 २. सावेरी  
 ३. सालग भैरवी  
 ४. नटनारायणी  
 ५. शुद्ध वसन्त  
 ६ पूर्व गौड़  
 ७. कुन्तल वराली  
 ८. भिन्न षड्ज  
 ९ नारायणी  
 हिन्दोल मेल  
 २. मार्ग हिन्दोल  
 ३. भूपाल

४

५



क्र.सं.	मेल एवं रागो के नाम	श्रुति सख्या
६	शुद्ध रामक्रिया	४
	२ षढी	५
	३. आर्षदेशी	६
	४. दीपक	७
७	देशाक्षी मेल	८
	कन्नड गौड़	९
	२ घण्टारव	१०
	३ शुद्ध बगाल	११
	४. छाया नाट	१२
८	पुलक लोढी	१३



## ३—७६ राग और २३ मेल

[illegible]



नि	नि	नि
ध	ध	ध
प	प	प
म	म	म
ग	ग	ग
रि	रि	रि
स	स	स

७	वसन्त	१. डक्क २. हिजेजा ४ हिन्दोल वसन्तमैरवी मेल २ मारविका २ मालवगौड़ मेल २ चैतीगौड़ी ३ पूर्वी ४ पाडी ५. देवगान्धार ६. गोण्डक्रिया ७. कुरञ्जी ८ बाहुली ९ रामक्री १०. पावक ११. असावेरी १२ पञ्चम १३. बगाल १४ शुद्ध ललित
८		
९		

मेल एवं राजों के नाम	श्रुति संख्या
१५. गुर्जरी	१०
१६. फरज (परज)	११
१७. शुद्ध गौड़	१२
रीतिगौड़ मेल	
आभीर मेल	
हम्मीर मेल	
२. विषंगड	
३. केदार	
शुद्ध वराटी मेल	१३

सि		सि	सि	
			सि	
	सि			
			ध	ध
	ध			
ध		ध		
प	प	प	प	प
		म		
म				
	म		म	म
ग		ग	ग	
	ग	ग		
		रि	रि	रि
रि	रि			
स	स	स	स	स

१४	शुद्ध रामक्री मेल २. ललित ३. जेतश्री ४. त्रावणी ५. देशी
१५	श्रीराग मेल २. मालवश्री ३. घन्याशिकी ४. भैरवी ५. धवला ६. सैन्धवी
१६	कल्याण मेल
१७	काम्बोदी मेल २. देवक्री
१८	मल्लारी २. नटमल्लारी ३. पूर्व गौड़ ४. भूपाली ५. गौड़ ६. शंकराभरण

श्रुति सख्या	श्रुति सख्या	श्रुति सख्या
१	१	१
२	२	२
३	३	३
४	४	४
५	५	५
६	६	६
७	७	७
८	८	८
९	९	९
१०	१०	१०
११	११	११
१२	१२	१२
१३	१३	१३
१४	१४	१४
१५	१५	१५
१६	१६	१६
१७	१७	१७
१८	१८	१८
१९	१९	१९
२०	२०	२०
२१	२१	२१
२२	२२	२२
२३	२३	२३
२४	२४	२४
२५	२५	२५
२६	२६	२६
२७	२७	२७
२८	२८	२८
२९	२९	२९
३०	३०	३०
३१	३१	३१
३२	३२	३२
३३	३३	३३
३४	३४	३४
३५	३५	३५
३६	३६	३६
३७	३७	३७
३८	३८	३८
३९	३९	३९
४०	४०	४०
४१	४१	४१
४२	४२	४२
४३	४३	४३
४४	४४	४४
४५	४५	४५
४६	४६	४६
४७	४७	४७
४८	४८	४८
४९	४९	४९
५०	५०	५०
५१	५१	५१
५२	५२	५२
५३	५३	५३
५४	५४	५४
५५	५५	५५
५६	५६	५६
५७	५७	५७
५८	५८	५८
५९	५९	५९
६०	६०	६०
६१	६१	६१
६२	६२	६२
६३	६३	६३
६४	६४	६४
६५	६५	६५
६६	६६	६६
६७	६७	६७
६८	६८	६८
६९	६९	६९
७०	७०	७०
७१	७१	७१
७२	७२	७२
७३	७३	७३
७४	७४	७४
७५	७५	७५
७६	७६	७६
७७	७७	७७
७८	७८	७८
७९	७९	७९
८०	८०	८०
८१	८१	८१
८२	८२	८२
८३	८३	८३
८४	८४	८४
८५	८५	८५
८६	८६	८६
८७	८७	८७
८८	८८	८८
८९	८९	८९
९०	९०	९०
९१	९१	९१
९२	९२	९२
९३	९३	९३
९४	९४	९४
९५	९५	९५
९६	९६	९६
९७	९७	९७
९८	९८	९८
९९	९९	९९
१००	१००	१००

नि	नि
ध	ध
ध	
प	प प
	म
म	म
ग	ग ग
रि	रि
	रि
स	स स

- |              |                   |
|--------------|-------------------|
| २०. अट्टाणा  | २१. देशाधी मेल    |
| ३ नागध्वनि   | २२. शुद्ध नाट मेल |
| ४ शुद्ध बगाल | २३. सारङ्ग मेल    |
| ५ वर्ण, नाटक |                   |
| ६ ईराक       |                   |

## ४—४४ राग और १९ मेल

मेलों की संख्या	श्रुति संख्या																		मेल एवं रागों के नाम
	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	
१	पञ्च						पञ्चश्रुति ऋषभ साधारण गान्धार		अन्तर गान्धार	शुद्ध मध्यम			शुद्ध मध्यम	पञ्चम			शुद्ध धैवत	पञ्चश्रुति धैवत शुद्ध निषाद	नि
	स					ग ग				म म म म				प प प प			ध ध ध ध	नि नि नि नि	नि
	स																		
	स																		काकला निषाद
२	स																		
३	स																		
४	स																		
५	स																		
६	स																		

मेलों की संख्या

- मुखारी मेल  
 सामवराली मेल  
 भूपाल मेल  
 हेज्जुजीमेल  
 २. रेवगुप्ति  
 वसन्तभैरवी मेल  
 गौड़ मेल  
 २. सौराष्ट्रम्  
 ३. सारङ्गनाद

			नि
			नि
	ध		ध
		ध	ध
			प
	प	प	प
			म
	म	म	म
			ग
	ग	ग	ग
	रि	रि	रि
			स
	स	स	स

४. गुण्डक्रिया	७
५. नादरामक्रिया	
६. ललिता	
७. पाडी	
८. गुजरी	
९. कन्नड बगाल	
१०. बौली	
११. सावेरी	
१२. मलहरि	
१३. छाया गौड़	
१४. पूर्वगौड़	
भैरवी मेल	
२. हिन्दोल	
३. घण्टारव	
४. रीतिगौड़	
८ आदीरी मेल	
२. हिन्दोल वसन्तम्	
३. आभेरी	
श्रीराग मेल	
२. साला भैरवी	

मेल एव रागों के नाम	श्रुति सख्या	मेलों की सख्या									
		४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
३. धन्यासी ४. मालवश्री ५. देवगान्धारी ६. जयन्तसेना ७. मध्यमादि ८. आन्धाली ९. वेलावली १०. कन्नडगौड़ कान्धोजी मेल २. केदारगौड़	स	पञ्चम									काकली निषाद
	रि	शुद्ध ऋषभ									कौण्टिक निषाद
	ग	शुद्ध गान्धार									पञ्चश्रुति गान्धार गौड़ निषाद
	म	शुद्ध मध्यम									
	प	पञ्चम									
		शुद्ध ऋषभ									
		शुद्ध गान्धार									
		पञ्चम									
		शुद्ध ऋषभ									
		शुद्ध गान्धार									



११	३ नारायण गौड़ शकराभरण मेल	नि	नि	नि	नि	नि	नि	नि
	२. शुद्ध वसन्ता	घ	घ	घ	घ	घ	घ	घ
	३. आरिभी							
	४ नागध्वनि							
	५ साम							
	६ नारायण देशाक्षी							
	७ नारायणी							
१२	सामन्त मेल	प	प	प	प	प	प	प
१३	देशाक्षी मेल							
१४	नाट मेल							
१५	शुद्ध वराली मेल							
१६	पट्टुवराली मेल							
१७	शुद्धरामक्रिया मेल							
१८	सिहरव मेल							
१९	कल्याणी मेल							

५---१०० राग और १९ मेल

मेल एवं रागों के नाम	श्रुति सख्या
श्रीराग मेल	४
१. कन्नड गौड़	५
२. देवगान्धार	६
३. सालगमैरवी	७
४. शुद्ध देशी	८
५. माधवमुनीहरी	९
६. मध्यमप्राभाराग	१०
७. सैन्धवी	११
८. खापी	१२
१.	१३

नि	नि
घ	घ
प	प
म	म
ग	ग
रि	रि
स	स

१०. हुसेनी
  ११. श्रीरञ्जनी
  १२. मालवश्री
  १३. देवमनीहरी
  १४. जयन्त सेना
  १५. मणिरंगु
  १६. मध्यमादि
  १७. शुद्ध धन्यासी
- २ शुद्ध नाट मेल
२. उदयरविचन्द्रिका
  - ३ मालवगौड़ मेल
  २. सारङ्ग नाटी
  ३. आर्ददेशी
  ४. छाया गौड़
  ५. टक्क
  ६. गुर्जरी
  ७. गुण्डक्रिया
  ८. फलमञ्जरी
  ९. नादरामक्रिया
  १०. सौराष्ट्री

[illegible]

नि	नि	नि	नि
ध		ध	
	ध	ध	
प	प	प	प
	म	म	
म		म	
		ग	ग
	ग		
रि	ग	रि	
रि	रि		
स	स	स	स

२१. बहुली  
 २२. पाडी  
 २३. मलहरी  
 २४. ललित  
 २५. पूर्णपञ्चम  
 २६. शुद्ध सावेरी  
 २७. मेघ रञ्जी  
 २८. रेवगुप्त  
 २९. मालवी  
 ४. वेलावली मेल  
 ५. वराली मेल  
 ६. शुद्ध रामक्रिया मेल  
 ७. दीपक  
 शकराभरण मेल  
 २. आरभी  
 ३. शुद्ध वसन्त  
 ४. सरस्वती मनोहरी  
 ५. पूर्वगौड़  
 ६. नारायणी  
 ७. नारायण देसाक्षी



३. केदारगौड़
४. बलहस
५. नागध्वनि
६. छायातरङ्गिणी
७. ईशमनोहरी
८. गुरुकुल काम्भोजी
९. नाट्कुरञ्जी
१०. कन्नड
११. नटनारायणी
१२. आन्दाली
१३. सामा
१४. मोहन
१५. देवक्रिया
१६. मोहन कल्याणी
१. भैरवी मेल
२. आहरी
३. घण्टारव
४. इन्दुघण्टारव
५. रीतिगौड़
६. हिन्दोल वसन्त

नि

ध

प

म

रि ग

स

मेला एव रागों के नाम	श्रुति सख्या
७. आनन्द भैरवी	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
८ आभेरी	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
९. नागान्धारी	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
१० धन्यासी	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
११ हिन्दोल	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
मुखारी मेल	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
वेगवाहिनी मेल	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
सिन्धुरामक्रिया मेल	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
२. पंतुवराली	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३
हेज्जुजी मेल	४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३



१४	सामवराली मेल २ गान्धार पञ्चम ३ भिन्न पञ्चम वसन्तमैरवी मेल. २ ललितपञ्चम भिन्न षड्ज मेल २ भूपाल देशाक्षी मेल छाया नाट मेल सारङ्ग मेल	स	रि	ग	म	प	ध	नि	नि	नि	नि
१५		स	रि	ग	म	प	ध	नि	नि	नि	नि
१६		स	रि	ग	म	प	ध	नि	नि	नि	नि
१७		स	रि	ग	म	प	ध	नि	नि	नि	नि
१८		स	रि	ग	म	प	ध	नि	नि	नि	नि
१९		स	रि	ग	म	प	ध	नि	नि	नि	नि

## ७२ मेलकर्ता

मेलकर्ता का नाम	स	ऋषभ	गान्धार	मध्यम	पञ्चम	धैवत	निषाद
१. कनकांगी	स	शुद्ध	शुद्ध	शुद्ध	प	शुद्ध	शुद्ध
२ रत्नांगी	"	"	"	"	"	"	कैशिक
३ गानमूर्ति	"	"	"	"	"	"	काकली
४ वनस्पति	"	"	"	"	"	चतुःश्रुति	कैशिक
५. मानवती	"	"	"	"	"	"	काकली
६. तानरूपी	"	"	"	"	"	पटुश्रुति	"
७ सेनापति	"	"	साधारण	"	"	शुद्ध	शुद्ध
८. हनुमत्तोड़ी	"	"	"	"	"	"	कैशिक
९. धेनुका	"	"	"	"	"	"	काकली
१०. नाटकप्रिया	"	"	"	"	"	चतुःश्रुति	कैशिक
११. कोकिलप्रिया	"	"	"	"	"	"	काकली
१२. रूपवती	"	"	"	"	"	षट्श्रुति	"
१३. गायकप्रिय	"	"	अन्तर	"	"	शुद्ध	शुद्ध
१४. बकुलाभरण	"	"	"	"	"	"	कैशिक
१५. मायामालवगौड़	"	"	"	"	"	"	काकली
१६. चक्रवाक	"	"	"	"	"	चतुःश्रुति	कैशिक
१७. सूर्यकान्त	"	"	"	"	"	"	काकली

१८ हाटकबारी	"	"	"	"	पटुश्रुति	"	शुद्ध
१९ झंकारध्वनि	"	"	"	"	शुद्ध	"	कैशिक
२०. नटभैरवी	"	"	"	"	"	"	काकली
२१ कीरवाणी	"	"	"	"	चतुःश्रुति	"	कैशिक
२२ खरहरप्रिय	"	"	"	"	"	"	काकली
२३ गौरी मनोहरी	"	"	"	"	पटुश्रुति	"	"
२४. वरुणप्रिय	"	"	"	"	शुद्ध	"	शुद्ध
२५. माररजनी	"	"	"	"	"	"	कैशिक
२६ चारुक्शी	"	"	"	"	"	"	काकली
२७ सरसागी	"	"	"	"	चतुःश्रुति	"	कैशिक
२८. हरिकोमोजी	"	"	"	"	"	"	काकली
२९ धीरशंकराभरण	"	"	"	"	पटुश्रुति	"	"
३० नागानदिनी	"	"	"	"	शुद्ध	"	शुद्ध
३१. यागप्रिया	"	"	"	"	"	"	कैशिक
३२ रागवर्धिनी	"	"	"	"	"	"	काकली
३३. गागेयभूषणी	"	"	"	"	चतुःश्रुति	"	कैशिक
३४. वागधीस्वरी	"	"	"	"	"	"	काकली
३५. शूलिनी	"	"	"	"	पटुश्रुति	"	"
३६. चलनाट	"	"	"	"	शुद्ध	"	शुद्ध
३७. सालग	"	"	"	प्रति			

मेलकर्ता का नाम	स	ऋषभ	गान्धार	मध्यम	पञ्चम	धैवत	निषाद
३८ जलार्णव	स	षट्श्रुति	अन्तर	प्रति	प	शुद्ध	कैशिक
३९. झालवारी	"	"	"	"	"	"	काकली
४०. नवनीत	"	"	"	"	"	चतुःश्रुति	कैशिक
४१. पावनी	"	"	"	"	"	"	काकली
४२ रघुप्रिय	"	"	"	"	"	षट्श्रुति	"
४३ गवाबोधि	"	"	साधारण	"	"	शुद्ध	शुद्ध
४४ भवप्रिय	"	"	"	"	"	"	कैशिक
४५ शुभपतुवारी	"	शुद्ध	"	"	"	"	काकली
४६ षड्विधमार्गिणी	"	"	"	"	"	चतुःश्रुति	कैशिक
४७ सुवर्णिणी	"	"	"	"	"	"	काकली
४८. दिव्यमणि	"	"	"	"	"	षट्श्रुति	"
४९ धवलावरी	"	"	अन्तर	"	"	शुद्ध	शुद्ध
५० नामनारायणी	"	"	"	"	"	"	कैशिक
५१. कामवर्धनी	"	"	"	"	"	"	काकली
५२ रामप्रिय	"	"	"	"	"	चतुःश्रुति	कैशिक
५३. गमनश्रिय	"	"	"	"	"	"	काकली
५४ विश्वभरी	"	"	"	"	"	षट्श्रुति	"
५५. श्यामलांगी	"	चतुःश्रुति	साधारण	"	"	शुद्ध	शुद्ध

५६ षण्मुखप्रिय	"	"	"	"	"	"	कैशिक
५७ सिहेन्द्रमध्यम	"	"	"	"	"	"	काकली
५८ हेमवती	"	"	"	"	"	"	कैशिक
५९ धर्मवती	"	"	"	"	"	"	काकली
६० नीतिमती	"	"	"	"	"	"	"
६१ कातामणि	"	"	"	अन्तर	"	"	शुद्ध
६२ ऋषभप्रिय	"	"	"	"	"	"	कैशिक
६३. लतांगी	"	"	"	"	"	"	काकली
६४ वाचस्पति	"	"	"	"	"	"	कैशिक
६५ मेचकल्याणी	"	"	"	"	"	"	काकली
६६ चित्रावरी	"	"	"	"	"	"	"
६७ मुचरिब	"	"	"	"	"	"	शुद्ध
६८ ज्योति स्वरूपिणी	"	"	"	"	"	"	कैशिक
६९ धातुवर्धिनी	"	"	"	"	"	"	काकली
७० नासिकाभूषणी	"	"	"	"	"	"	कैशिक
७१ कोसल	"	"	"	"	"	"	काकली
७२. रसिकप्रिया	"	"	"	"	"	"	"

## हिन्दुस्थानी पद्धति

विदेशी आक्रमणों के कारण हमारी बहुत-सी धार्मिक और कलासंबंधी संप्रदाय-संस्थाएँ मिट गयी थी। लगभग १००० ईसवी से १२०० ईसवी तक आक्रमणकारियों की नीयत मदिरों को मिटाना, धन, आभूषण आदि को लूट ले जाना आदि ही थी। कुछ समय के बाद वे आर्थिक निधियों के साथ-साथ कला एवं विज्ञान की निधियों को भी ले जाने लगे। धीरे-धीरे उन्हें इसी देश में रहकर शासन करने की इच्छा हुई। महमूद गौरी ने दिल्ली में अपने एक प्रतिनिधि को नियुक्त करके उत्तर भारत के उत्तर-पश्चिमी भाग पर शासन किया था। उसके बाद उसका प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन, जो पहले उसका गुलाम था, दिल्ली का बादशाह हुआ। यह ई० सन् १२०६ की बात है। उस समय से दिल्ली के बादशाह, उनके वंशज और उनके परिजन, ये सब भारत को अपनी मातृभूमि मानने लगे। हिंदूधर्म की मूर्तिपूजा उन्हें पसंद न आयी परंतु भारतीय कलाएँ उनके मन को आकर्षित करने लगी। एक सौ वर्षों के बाद ही दिल्ली दरबार में भारतीय कलाकार स्थान पाने लगे। अलाउद्दीन खिलजी ने, जो अपने राज्य को सुदूर दक्षिण तक विस्तृत कर सका था, भारतीय गायक गोपाल नायक को बहुत आदर के साथ अपने दरबार के गवैयों में एक प्रतिष्ठित स्थान दिया। अलाउद्दीन के दरबार में अमीर खुसरो एक प्रसिद्ध कवि और गायक था। कहा जाता है कि गोपाल नायक और अमीर खुसरो में प्रतिस्पर्धा हुई। इसमें विजय किसकी हुई, यह विवादग्रस्त है। कुछ लोगों का कथन है कि यह घटना अलाउद्दीन के काल में नहीं, अपितु और बीस-तीस वर्ष पश्चात् हुई है।

बात कुछ भी हो, यह स्पष्ट है कि दिल्ली बादशाहों के दरबार में १४०० ई० से भारतीय कलाओं के पोषण करने का कार्य आरम्भ हुआ।

दक्षिण भारत में जिस तरह विजयनगर साम्राज्य के विशेष प्रयत्न से कर्नाटक संप्रदाय उत्पन्न होकर बढ़ा, उसी तरह दिल्ली बादशाहों के आश्रय में उत्तर भारत का अवशिष्ट संगीत संप्रदाय “हिन्दुस्थानी संगीत” नाम से बढ़ने लगा।

बादशाहों का मन बहलाने के लिए उनके आश्रय में रहनेवाले भारतीय गायक फारसी भाषा का भी थोड़ा-थोड़ा मिश्रण करने लगे। फारसी भाषा के प्रबंधों का अनुसरण करके भारतीय साहित्यकार प्रबन्ध रचने लगे। टप्पा, ख्याल, ठुमरी, ग़ज़ल इत्यादि इसी तरह उत्पन्न हुए हैं। इस तरह भारतीय-फारसी मिश्रित रीति की रचनाओं में अमीर खुसरो का साहित्य ही मुख्य है। स्वरों के उच्चारण की रीति में भी थोड़ा-सा परिवर्तन हुआ। हर एक स्वर के साथ उसके ऊपर के स्वर को छूकर

उच्चारण करने की यह रीति हो गयी। अब तक भारतीय संगीत कुछ-कुछ प्रातीय छायाभेद होने पर भी देशभर में एक-जैसा था। इसके बाद स्वरो के उच्चारण की रीति में भिन्नता होने के कारण दक्षिण के संगीत और उत्तर के संगीत के रागों में स्वरो की समानता रहने पर भी छायाभेद होने लगे।

परंतु वृन्दावन, अयोध्या आदि भारतीय पुण्यस्थलों में रहनेवाले सत् और भक्त दरबार के संगीत से सबध न रखकर गाते और साहित्य रचना करते आते थे। प्राचीन संगीत साहित्यों में जयदेव का गीतगोविंद, कवि विद्यापति का सङ्ग्रह इत्यादि प्रचार में थे और आज भी हैं।

संगीतशास्त्र में रागों का वादी-सवादीतत्त्व मात्र ही अवशिष्ट था। बाकी सब लक्षण—ग्राम, मूर्च्छना, जाति आदि—विस्मृत हो गये थे। रागों के मुख्य सचार “पकड़” नाम से प्रचार में थे।

प्राचीन काल में रागों का विभाग दो प्रकार से था। एक प्रकार में याष्टिक, दुर्गा, मतङ्ग आदि के मत के अनुसार राग, भाषा, रागाङ्ग, भाषाङ्ग, क्रियाङ्ग और उपाङ्ग इत्यादि विभाग थे। इसी को संगीतरत्नाकर में शाङ्गदेव ने दिया है। दूसरा विभाग राग-रागिनी पद्धति में है। राग-रागिनी मत के आदिकर्ता कौन हैं? यह नहीं जाना जाता है। कदाचित् इसकी उत्पत्ति शैव आगमों में से हुई होगी। चतुर दामोदर (१६०० ई०) कृत संगीतदर्पण में राग-रागिनी मत के तीन संप्रदाय दिये गये हैं। रागार्णव मत, सोमनाथ मत, हनुमन्मत ये ही तीन हैं। इन तीनों मतों में थोड़ा-थोड़ा भेद है। इन तीनों मतों के अनुसार राग विभाग इस प्रकार है—

**संगीतदर्पण में राग-रागिनीमत**

१. सोमेश्वर मत (प्राचीन मत)—यह मत पार्वतीजी के प्रति शिवजी के द्वारा उपदिष्ट माना जाता है।

**पुरुषराग—६**

१. श्रीराग—शिवजी के सद्योजात मुख से उत्पन्न।

२. वसंत— “ “ “ वामदेव “ “ “

३. भैरव— “ “ “ अधोर “ “ “

४. पंचम— “ “ “ तत्पुरुष “ “ “

५. मेघ— “ “ “ ईशान “ “ “

६. नटनारायण—पार्वतीजी के मुख से उत्पन्न।

ये सब शिव-पार्वती नर्तन के समय उत्पन्न हुए हैं।

## श्रीराग की रागिनियाँ—६

(१) मालवी	(४) केदारी
(२) त्रिवेगी	(५) मधुमाधवी
(३) गौड़ी	(६) पहाडी

## वसंत की रागिनियाँ—६

(१) देशी	(४) तोड़िका
(२) देवगिरि	(५) ललिता
(३) वराटी	(६) हिंदोली

## भैरव की रागिनियाँ—६

(१) भैरवी	(४) गुणकरी
(२) गुर्जरी	(५) बगाली
(३) रेवा	(६) बहली

## पंचम की रागिनियाँ—६

(१) विभास	(४) बडहसा
(२) भूपाली	(५) मालवश्री
(३) कर्नाटी	(६) पटमजरी

## मेघराग की रागिनियाँ—६

(१) मल्लारी	(४) कौशिकी—(कैशिकी)
(२) सोरठी	(५) गाधारी
(३) सावेरी	(६) हरिश्रृंगारा

## नट्टनारायण की रागिनियाँ—६

(१) कामोदी	(४) नाटिका
(२) कल्याणी	(५) सालगनाटी
(३) आभेरी	(६) हंवीरा

उस मत के अनुसार राग-गायन का समय

सबरे से—

मधुमाधवी  
देशी

भूपाली  
भैरवी



बेलावली	मेघराग
मल्हारी	पंचम
बगाली	देशकार
साम	भैरव
गुर्जरी	ललित
धनाश्री	वसत
मालवश्री	

### पहले प्रहर के बाद

गुर्जरी	गुणकरी
कौशिक (कैशिक)	भैरवी
सावेरी	रामकरी
षटमजरी	सोरठी
रेवा	

### दूसरे प्रहर के बाद

वैराटी	नाग गाधारी
तोडिका	देशी
कामोदी	शकराभरण
गुडायिका	

### तीसरे प्रहर के बाद—अर्धरात्रि तक गाने योग्य

मालव	केदारी
गौडी	कर्नाटी
त्रिवण	आभीरी
नटकल्याण	बडहंसी
सालगनाट	पहाडी

सरा नाट नामक राग

रागों को गाने में काल या समय का नियम अवश्य पालनीय है। राजाज्ञा से सब राग सदा गेय है।

१ देश भेद के अनुसार गुर्जरियाँ कई प्रकार की होती हैं।

## रागों के ऋतुनियम

श्रीराग और उसकी रागिनियाँ — शिशिर ऋतु में			
✓वसंत	”	”	— वसंत ”
✓भैरव	”	”	— ग्रीष्म ”
✓पंचम	”	”	— शरद ”
✓मेघराग	”	”	— वर्षा ”
✓नट्टनारायण	”	”	— हेमंत ”

रागों के गाने में जो ऋतुनियम कहे गये हैं वे इच्छानुकूल हैं ।

## २. हनुमन्मत

## पुरुषराग—६

(१) ✓भैरव	(४) ✓दीपक
(२) ✓कौशिक (कैशिक)	(५) ✓श्रीराग
(३) ✓हिंदोल	(६) ✓मेघराग

## भैरव की रागिनियाँ—५

(१) मध्यमादि	(३) ✓बंगाली
(२) ✓भैरवी	(४) वराटिका

## (५) सैधवी

## कौशिक की रागिनियाँ—५

(१) ✓तोड़ी	(३) ✓गौड़ी-
(२) ✓खंभावती	(४) गुणक्री

## (५) ककुभा

## हिंदोल की रागिनियाँ—५

(१) वेलावली	(३) देशाख्या
(२) रामक्री	(४) पटमजरी

## (५) ललिता

## दीपक की रागिनियाँ—५

(१) ✓केदारी	(३) ✓देशी
(२) कानडा	(४) ✓कामोदी

## (५) नाटिका

श्रीराग की रागिनियाँ—५

- |                   |             |
|-------------------|-------------|
| (१) वसती          | (३) मालश्री |
| (२) मालती (मालवी) | (४) धनाश्री |
| (५) असावेरी       |             |

मेघराग की रागिनियाँ—५

- |             |             |
|-------------|-------------|
| (१) मल्लारी | (३) भूपाली  |
| (२) देशकारी | (४) गुर्जरी |
| (५) टक्क    |             |

३. रागार्णवमत

पुरुषराग—६

- |          |             |
|----------|-------------|
| (१) भैरव | (४) मल्लार  |
| (२) पंचम | (५) गौडमालव |
| (३) नाट  | (६) देशाख्य |

भैरव की रागिनियाँ—५

- |             |              |
|-------------|--------------|
| (१) बंगाली  | (३) मध्यमादी |
| (२) गुणकरी  | (४) वसंता    |
| (५) धनाश्री |              |

पंचम की रागिनियाँ—५

- |             |           |
|-------------|-----------|
| (१) ललिता   | (३) देशी  |
| (२) गुर्जरी | (४) वराटी |
| (५) रामकृति |           |

नाट की रागिनियाँ—५

- |                |           |
|----------------|-----------|
| (१) नटनारायण   | (३) सालग  |
| (२) पूर्वगाधार | (४) केदार |
| (५) कर्णाट     |           |

## मल्हार की रागिनियाँ—५

- |                         |             |
|-------------------------|-------------|
| (१) मेघमल्लारिका        | (३) पटमजरी  |
| (२) मालवकौशिका (कैशिका) | (४) असावेरी |

## गौड़मालव की रागिनियाँ—४

- |             |           |
|-------------|-----------|
| (१) हिंदोल  | (३) आधारी |
| (२) ब्रवणा  | (४) गौड़ी |
| (५) पडहसिका |           |

## देशाख्य राग की रागिनियाँ—५

- |             |            |
|-------------|------------|
| (१) भूपाली  | (३) कामोदी |
| (२) कुडायी  | (४) नाटिका |
| (५) वेलावली |            |

हनुमन्मत की राग-रागिनियों के लक्षण

राग-रागिनी	अंश	न्यास	ग्रह	वर्ज्य	विशेष	मूर्च्छना	संचार
भैरव	, ध	ध	ध	रि, प	मा बहुत्व ध विकृत औडव सपूर्ण	ध आदि	धनिसगमधनि ।
मध्यमादि	म	म	म	रि, ध (कभी)		म आदि	पधमनिसरिगम (या) मम,पम,पनि,सनि गम ।
भैरवी	म	म	म		मध्यम ग्राह्य मतातर मे भैरव के समान	(सौबोरी) म आदि	मपधनि सरिगम (या) धनिसगमधप ।
बगाली	स	स	स	रिध	मन्त्रप्रयुत	स आदि	सगमपनिसा (या) मप- धनिसरिगमा ।
वराटी	स	स	स		कीर्तिवर्धनी सपूर्णा	स आदि	सरिगमपधनिसा ।
सैधवी	स	स	स	रि	मतातरे सपूर्णा वीरसवर्धनी	स आदि	सरिगमपधनिसा (या) सगमधनिसा ।
कौशिक (मालवकैशिका) तोडी	स	स	स		पूर्ण कालीयुत	स आदि	सरिगमपधनिसा सनि- धमगरिसा ।
खभावती	म स (मतातरे)	म स (मतातरे)	म स (मतातरे)	.	पूर्ण	म आदि	मपधनिसरिगमा (या) सरिगमपधनिसा
गौडी	ध स	ध स	ध स	प रिप	म ग्राह्य सुखप्रदा	ध आदि स आदि	धनिसरिगमधा । सगमधनिसा सनिधम गमा (गसा)

राग-रागिनी	अश	न्यास	ग्रह	वर्ज्य	विशेष	मूर्च्छना	सञ्चार
गुणक्री	नि स (मतांतरे) ध	नि स (मतांतरे) ध	नि स (मतांतरे) ध	रिध ..	औडव सपूर्णा	नि आदि ध आदि	निसगमपनि नियमग- सनि (या) सगमपनिसा । धनिसरिगमपधा ।
हिंदोल	स	स	स	रिध	मध्यम ग्राम काकलीयुत मध्यमग्राम वीररस	स आदि ध आदि	सगमपनिमपसा । धनिसरिगमपधा ।
वेलावली	ध	ध	ध	रिध (मतांतरे) प	पूर्ण करुणरस	स आदि	सगमपनि स (या) सरि- गमपधनिसा (या) सरिगमधनिसा ।
रामक्री	स	स	स	रि (अन्यमत) रि	मध्यमग्राम (मतांतरे सपूर्ण) मध्यमग्राम	गा आदि प आदि	गमपधनिसगा (या) गमपधनिसरिगा । पधनिसा रीगमपा
देसाख्या	ग	ग	ग	...	मध्यमग्राम (मतांतर मे सपूर्णा)	स आदि	सगमधनिसा (या) धनिसगमधा ।
पटमंजरी	प	प	प	रिप			
ललिता	स	स	स				
(द्वितीय ललिता)	ध	ध	ध				

दीपक	स	स	स	स	...	म	स	स	आदि	सरिगमपधनिसा
कैदारी	नि	नि	नि	नि	रि	"	नि	नि	"	निसगम पनिति पम- गसनि
कण्ठादी	नि	नि	नि	नि	.	म ग्राम	स	नि	"	निसरिगमपधनि
देशी	रि	रि	रि	रि	प	काकलीयुत म ग्राम	स	रि	"	रिमगधनिसरि
कामोदी	ध	ध	ध	ध		काकलीयुत म ग्राम	ध	ध	"	धनिसरिगमपधा
नाटिका	स	स	स	स		विकृत ऋषभ म ग्राम	स	स	"	सरिगमपधनिसा सनि- धपमगरिसा
श्रीराग	स	स	स	स		रित्रययुत	स	स	"	सरिगमपधनिसा (या) रिगमपधनिसा
वसंतिका	स	स	स	स	.		श्रीराग	श्रीराग	"	सरिगमपधनिसा
मालवी	नि	नि	नि	नि	परि	काकलीयुत	नि	नि	"	निसपसगनि (या) निस- रिमगनि
मालवश्री	स	स	स	स		शृगाररस	स	स	"	सरिगमपधनिसा
धनाश्री	स	स	स	स	रि	वीररस	स	स	"	सगमपधनिसा
असावरी	प	ध	ध	प	रिग	करुण	...	...	'	धनिसमपधा मधनि- सरिग धगारिसनिध

रागरागिनी	अंश	न्यास	ग्रह	वज्रं	विशेष	मूर्च्छना ,	सचार
मेघराग	ध	ध	ध	.	विकृत धैवत श्रुगार	ध आदि	धनिसरिगमपधा
मल्लारी	ध	ध	ध	सप	म ग्राम	ध "	धनिरिगमधा
देशकारी	स	स	स		वराटीमिश्रित	स "	सरिगमपधनिसा
भूपाली	स	स	स	रिम हीना (मतांतरमे)	शांतरस	स "	सरिगमपधनिसा
गुर्जरी	रि	रि	रि		बहुन्यास	रि "	रिगमपधनिसरि
टक्क	स	स	स			स "	सरिगमपधनिसा
कल्याणनाट	रि (प) (मतांतरमे)	रि (प)	रि (प)				रिगमपधनिसरि सरिग- मपधनिसा
सारंगनाट	स	स	स			स "	सरिगमपधनिस
देवक्री	सारङ्गमम	सारङ्गसम	सारङ्गसम				सरिगमपधनिस
सुरठी	प (स) (मतांतर)	प (स)	प (स)	रिक्कजं			पधनिसगमा (या) सग- मपधनिसा





सरस्वती महल पुस्तकालय मे “रागरत्नाकर” नामक एक ग्रंथ है। बताया गया है कि ग्रंथकर्ता का नाम गधर्वराज है। इस ग्रंथ मे हनुमन्मत के अनुसार रागरागिनी-मत और रागों के लक्षण दिये गये हैं। इसमे ‘संगीत रत्नाकर’ के अतिरिक्त दूसरे ग्रंथों का उल्लेख नहीं है। इस ग्रंथ मे दिये हुए लक्षण और संगीतदर्पण मे वर्तमान लक्षण दोनों समान हैं। परंतु संगीतदर्पण मे न पाये जानेवाले पुत्र, स्तुषारागों के नाम और रूप भी दिये गये हैं। लक्षण नहीं है। आजकल के हिंदुस्थानी संप्रदाय के बहुत-से रागों के लक्षण, इन दोनों ग्रंथों के लक्षणों के अनुसार हैं। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि हिंदुस्थानी पद्धति के प्रामाणिक ग्रंथ ये दो ही हैं। पुण्डरीकविट्ठल कृत “नर्तन निर्णय” मे भी रागरागिनी मत बताया गया है। इस ग्रंथ मे, इन तीनों मतों को मिश्रित करके ६ पुरुष राग, ३० स्त्रीराग और ३० पुत्रराग दिये गये हैं। हर एक राग का लक्षण और रूप भी दिये गये हैं।

हिंदुस्थानी संगीत का उच्च काल नायक, बैजूबावरा आदियों के काल से स्वामी हरिदास, तानसेन, सदारङ्ग, अदारङ्ग आदियों के काल तक का है। इस काल में दक्षिण के चतुर्दण्डी लक्ष्मी के अनुसार उत्तर भारत मे भी लक्ष्यसाहित्य संगीत का रक्षण किया जाने लगा। उस समय मे ही ‘चीजो’ की उत्पत्ति हुई। अनेक संप्रदाय होने के कारण कई घराने हो गये।

किंतु दक्षिण भारत के अनुसार उत्तर भारत मे भी मेल या थाट की सृष्टि हुई और उनके अदर प्रकृति-विकृतिस्वरों के अनुसार राग रखे गये। भावभट्ट (ई० १७००) ने, जो बीकानेर के नरेश के दरबार मे थे, अपने “अनूपसंगीतरत्नाकर” मे मेल या थाटों के नाम दिये हैं। (देखिए अनूपसंगीतरत्नाकर की मझली किताब पृष्ठ ३१)

कुछ दिन तक थाटों की सख्या पर अनेक मतभेद होने के बाद ऐसा निर्धारण हुआ कि थाटों की सख्या दस है। वे ये हैं—

थाट	बिलावल	थाट	मावर्ग
„	कल्याण या यमन	„	काफी
„	खमाज	„	असावरी
„	भैरव	„	भैरवी
„	पूर्वी	„	तोडी

पूना गायन समाज के प्रकाशन बालसंगीतबोध मे १५ थाटों का उल्लेख है।

हिन्दुस्थानी पद्धति में प्रचलित थाट  
(पूना गायन समान से प्रकाशित बाल संगीतबोध के प्रकार)

श्रुतियाँ	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	१	२	३
थाट का नाम	स	.	पु-ह्रस्व		पु-ह्रस्व	पु-ह्रस्व	पु-ह्रस्व	पु-ह्रस्व		म-ह्रस्व	म-ह्रस्व	म-ह्रस्व	म-ह्रस्व	म-ह्रस्व	म-ह्रस्व	म-ह्रस्व	म-ह्रस्व	म-ह्रस्व	म-ह्रस्व	पु-ह्रस्व	पु-ह्रस्व	पु-ह्रस्व
कल्याण	स									म												
शंकराभरण	स																					
श्रीराग	स																					
भैरव	स																					
तोड़ी	स																					
बागेशरी	स																					
भैरवी	स																					
पीछू	स																					
झिजोटी	स																					
मारवा	स																					
सोहनी	स																					
सारंग	स																					
भूप	स																					
विभास	स																					
मालकौंस	स																					
पौडव																						
औडव																						
औडव																						
औडव																						

षाडव

औडव

औडव

औडव

संख्या	रागो के नाम	पङ्क्ति	कोमल-रि	तीव्र (रि. प्र. शुद्ध रि.)	कोमल-ग	तीव्र-ग (या शुद्ध ग)	पङ्क्ति-म	कोमल-ध	तीव्र-ध (प्र. शुद्ध ध)	कोमल-नि	तीव्र-नि (या शुद्ध नि)	अक्षर स्वर	सप्तर्षि, पाण्डव या और्विच
१	भैरव	स	रि		ग		प	ध		नि	ति	अ	स
२	विभास	स	रि		ग		प	ध		नि	ति	ध	औ
३	रामकली	स	रि		ग		प	ध		नि	ति	ध	औ
४	गुणकली	स	रि		ग		प	ध		नि	ति	ध	षा
५	भैरवी	स	रि		ग		प	ध		नि	ति	ध	स
६	सिद्ध भैरवी	स	रि		ग		प	ध		नि	ति	ध	स
७	जोगी	स	रि	रि	ग		प	ध		नि	ति	स	पा
८	तोडी	स	रि	रि	ग		प	ध		नि	ति	ग	स
९	बिलासखानी (मिया की) तोडी	स	रि	रि	ग		प	ध		नि	ति	ग	स
१०	पीळू	स	रि	रि	ग		प	ध		नि	ति	ग	स

११	भासावरी	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
१२	बिलावल	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
१३	सारंग	(मध्याह्न)	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
१४	बृन्दावनी सारंग	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
१५	मधुमाद सारंग	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
१६	सौरठ	(तीसरा प्रहर)	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
१७	देश	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
१८	मल्हार (मेव)	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
१९	मिया का मल्हार	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
२०	भीमपलासी	(चौथा प्रहर)	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
२१	धनाश्री	(चौथा प्रहर)	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
२२	मारवा	,	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
२३	मुल्लानी	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
२४	श्रीराग	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
२५	गौरी	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
२६	पूर्वी	(सायकाल)	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि
२७	पुरिया कल्याण	"	स	रि	गु	ग	म	प	घ	नि

संकेत	रागों के नाम	षड्ज	कोमल-रि	तोष-रि (या शृङ्ग रि)	कोमल-म	तोष-म (या तोष म)	पञ्चम	कोमल-ध	तोष-ध (या शृङ्ग ध)	कोमल-नि	तोष-नि (या शृङ्ग नि)	अश रेवर	संपूर्ण, षड्ज या औज्ज्वल
२८	कल्याण	स		रि			प		ध		नि	ग	स
२९	यमन कल्याण	स		रि			प		ध		नि	ग	स
३०	भूप कल्याण	स		रि			प		ध		नि	ग	स
३१	हमीर कल्याण	स		रि			प		ध		नि	ग	स
३२	कामोद कल्याण	स		रि			प		ध		नि	ग	स
३३	झिजोटी	स		रि			प		ध		नि	ग	स
३४	खमाब	स		रि			प		ध		नि	ग	स
३५	काफी	स		रि			प		ध		नि	ग	स
३६	छायानाट ,	स		रि			प		ध		नि	ग	स
३७	बिहाग	स		रि			प		ध		नि	ग	स

मांड	३८
केदारा	३९
कानड़ा	४०
दरबारी कानड़ा (मध्यरात्रि)	४१
शहाणा (रात्रि का तीसरा प्रहर)	४२
अडाणा "	४३
मालकौंस (रात्रि का चौथा प्रहर)	४४
कालगडा "	४५
परज "	४६
सोहनी "	४७
हिंदोल "	४८
बागेसरी "	४९
बहार "	५०
वसत "	५१
पचम "	५२
ललत "	५३

संज्ञा	रागो के नाम	पङ्क्ति	कोमल-रि	तीव्र-रि (प्र. शुद्ध रि)	कोमल-म	तीव्र-म (प्र. शुद्ध म)	कोमल-म (प्र. शुद्ध म)	पञ्चम	कोमल-ध	तीव्र-ध (प्र. शुद्ध ध)	कोमल-नि	तीव्र-नि (प्र. शुद्ध नि)	अक्ष रेखर	समूर्ण, पञ्चम या अञ्जलि
५४	तिलक	स	रि	ग	म	म	म	प	ध	नि	म	ग	प	औ
५५	शंकराभरण	स	रि	ग	म	म	म	प	ध	नि	म	ग	प	औ
५६	नटना रायण	स	रि	ग	म	म	म	प	ध	नि	म	ग	प	औ
५७	आरभी	स	रि	ग	म	म	म	प	ध	नि	म	ग	प	औ
५८	नारायणी	स	रि	ग	म	म	म	प	ध	नि	म	ग	प	औ
५९	पूर्वकल्याणी	स	रि	ग	म	म	म	प	ध	नि	म	ग	प	औ
६०	आनंद भैरवी	स	रि	ग	म	म	म	प	ध	नि	म	ग	प	औ
६१	गरुडध्वनि	स	रि	ग	म	म	म	प	ध	नि	म	ग	प	औ
	(आखिर के सात राग कर्नाटक पद्धति में हैं)													



यह सब कुछ होने पर भी थाटों को अधिक मुख्यत्व नहीं था, क्योंकि रागों का संचार थाटों के विकृतस्वर विभाग का अतिक्रमण करके ही करना पड़ा। इससे यह निश्चित होता है कि “थाट” रागों में प्रयुक्त होनेवाले स्वरों को याद रखने के लिए कल्पित तात्कालिक प्रबन्धमात्र है, रागोत्पत्ति के शास्त्रीय मार्ग के अनुसार नहीं है। क्योंकि रागों की छाया के लिए मूर्च्छना, वादो, सवादी और वर्णालंकार इन तीनों का लक्षण ही प्राण है।

कुछ दिनों से कर्नाटक पद्धति के ७२ मेलकर्ता प्रबन्ध और दक्षिणी गवैयों के स्वर-ज्ञान ने विद्वानों को आकर्षित किया है। इसलिए थाटों को अधिक मुख्यत्व दिया जाने लगा। रागों के लिए थाट की सृष्टि हुई है। किंतु आजकल लोग यह समझते हैं कि थाट या मेल ही संगीत शास्त्र है। इसका कुफल यह हुआ है कि रागच्छाया और राग-भाव में ध्यान देने की प्रवृत्ति कम हुई और थाटों एवं उनके स्वरों पर ध्यान अधिक दिया जाता है। लोग यह नहीं जानते कि रागों के लिए स्वर है, बल्कि स्वरों के लिए राग नहीं है। मकान के लिए पत्थर है, मकान पत्थर के लिए नहीं है। बहुत-से रागों में स्वरों की स्पष्टतया विवेचना करना असाध्य है। इस तत्त्व को भूलकर स्थूल स्वरों पर ही पूरा ध्यान देने से रागों की रक्ति और आकर्षण शक्ति हर रोज कम होती जाती है। रक्ति के संरक्षण के लिए, मूर्च्छना, वादो, सवादी वर्णालंकार आदि लक्षणों पर गवैयों का ध्यान देना आवश्यक है। रागों में इन लक्षणों को ढूँढ़ने का क्रम अब दिया जाता है।

### राग यमन

इस राग में मुख्य संचार “मपगा, रि, सः—धपमगारीसा—निसरिगा, मपा, धपमगा रिसा—सनिसरिगा—मपा, धपमागा, रिसागा, रिसधा सरिगा।”

इसमें गांधार स्वर पर—राग का जीवन निर्भर है। ऊपर के संचार और नीचे के संचार दोनों गांधार में ही आकर स्थिर होते हैं। आरोह-संचार धैवत के ऊपर नहीं चलता। अवरोह में षड्ज से निषाद को पारकर धैवत तक चलता है। इनसे यह मालूम होता है कि राग की मूर्च्छना धैवत से शुरू होकर अवरोहण मार्ग पर निषाद तक आती है। आरोहण में नहीं, अपितु, अवरोहण में राग का प्रकाशन होता है। निषाद, मूर्च्छना के नीचे का सिरा है। यह इससे पता चलता है कि षड्ज से नीचे संचार करते समय निषाद को पारकर संचार करना पड़ता है। इसलिए यह निर्धारित होता है कि निषाद ही मूर्च्छना का एक सिरा है। क्रमसंचार षड्ज में आरंभ होकर षड्ज में समाप्त होता है। इसलिए मूर्च्छना और क्रमसंचार का रूप ऐसा है।

मूच्छना—निसरिगमपधमगरिसनि ।

क्रमसंचार—सनिसरिगा, मपधमगारिसा ।

इस राग का अशस्वर गांधार और न्यास षड्ज है। निषाद से शुरू करके ही गांधार में आकर खड़े रहने के कारण इस राग का ग्रहस्वर निषाद है। गांधार का सवादी सप्तक के ऊपरी भाग में धैवत और नीचे के सप्तक में निषाद है।

**मूच्छना, क्रमसंचार, अंश, न्यास, अपन्यासस्वरों को ढूँढ़ने का मार्ग**

१. राग के आरोह या अवरोह में, जिस स्वर पर आने के बाद आगे संचार करना साध्य न होकर लौटना पड़ता है।

या

२. जिस स्वर में आकर आगे संचार करना चाहे तो उसके बाद के स्वर को पार कर ही संचार करना पड़ता है।

या

३. जिस स्वर में आकर कुछ देर वहीं खड़े रहने के बाद ही ऊपर या नीचे का संचार साध्य होता है।

इन तीनों प्रकारों में मूच्छना के दोनों सिरों के स्वरों को निश्चित कर सकते हैं। राग के बहुत-से संचार जहाँ आकर सम्पन्न होते हैं उन स्वरों से शुरू करके मूच्छना-चक्र में संचार करने से राग का क्रमसंचार मिल जाता है। इसमें आरोहण क्रम से आकर रागसंचार का अंत होता हो तो उस स्वर से अवरोहण मार्ग में क्रमसंचार का आरम्भ करना है। अवरोह मार्ग में आकर रागसंचार का अंत होता हो तो उस स्वर से आरोह मार्ग में क्रमसंचार का आरम्भ करना है।

जिस स्वर में रागभाव निर्भर है, जिस स्वर को बार-बार छूए बिना रागभाव प्रकाशित नहीं होता और जिस स्वर के सवादी या निकट अनुवादी स्वरों में खड़े होकर ही रागसंचार किया जा सकता है उसी स्वर का नाम है अशस्वर। कई रागों में राग का आरम्भ अशस्वर में ही है। और कई रागों में दूसरे स्वर में शुरूकर अशस्वर तक पहुँचते हैं। अशस्वर से ही शुरू करे तो अंश ही ग्रहस्वर हो जाता है। अन्यथा दूसरा स्वर, जिसमें राग शुरू करते हैं, ग्रहस्वर है। अशस्वर में ही खड़े रहकर संचार करना पड़ता हो तो वही ग्रहस्वर भी है। जिन स्वरों में रहकर रागविस्तार करते हैं, उन स्वरों का नाम अपन्यास स्वर है।

इसी तरह सब रागो मे इन लक्षणो को ढूँढ सकते है। १९०६ ई० मे पूना गायन समाज से प्रकाशित “बालसंगीत बोध” नामक क्रमिक पुस्तकमाला मे तात्कालिक प्रसिद्ध हिन्दुस्थानी रागो के लक्षण दिये हुए है। (देखिए पुट ३३, ३४, ३५ संगीत-बालबोध)।

इन लक्षणो के साथ हरएक राग की मूच्छैना, ऋषसवार, रागप्रकाशन होनेवाले वर्ण, राग के स्थायी स्वर, अलंकार, अंश, ग्रह, न्यास और अपन्यास स्वर आदि को विद्वानो के सम्मिलित प्रयत्न के सहारे निश्चय करके ध्यान मे रखना आवश्यक है। तभी हमारा संगीत शास्त्र पूर्ण हो सकता है। तभी हमारा संगीत, जिसकी आर्कषण शक्ति दिन-प्रतिदिन घटती जाती है, पूर्ण जीवन से आनन्ददायक हो सकता है।

## आठवाँ परिच्छेद

### ताल प्रकरण

बालक आनन्दान्तरेक मे गाते, ताल बजाते और नाचते हैं। इससे यह जान पड़ता है कि गीत, ताल और नाच आनन्द की अभिव्यक्ति हैं। गीत और नाच की प्रतिष्ठा ताल से है। केवल ताल वाद्यों का वादन सुनते समय स्वतः हमारे हाथ, शिर या पैर हिलने लगते या ताल गति का अनुसरण करने लगते हैं। सकोच के कारण हम तो नहीं नाचते, परंतु सकोचहीन बालक नाचने लगते हैं। इसलिए यह कहना अत्युक्तिपूर्ण नहीं कि आनन्द ही ताल के रूप में विद्यमान है।

‘काल’ और ‘मान’ दोनों को मिलाने से ताल उत्पन्न होता है। ‘त.ल’ शब्द प्रतिष्ठार्थक ‘तल्’ धातु से उत्पन्न हुआ है। इससे ताल का नाम सार्थक होता है।

ताल में सशब्द और निशब्द क्रियाओं से काल का ‘मान’ या ‘नाप’ किया जाता है।

ताल का स्वरूप स्पन्द है। मसार में सारी शक्तियाँ स्पन्दन रूप में हैं। कहा गया है कि ताल शब्द का अर्थ शिवशक्ति (ता=शिव, ल=शक्ति) है।

#### तालोत्पत्ति

बहुत समय से ताल के अग, लघु, गुरु, प्लुत आदि के आधार पर हैं। ये तीनों शब्द अक्षरों के मात्राकाल के नाम हैं। इसलिए यह प्रतीत होता है कि तालों की उत्पत्ति वृत्तों के गुरु, लघु आदि के अक्षर-नियम अर्थात् छन्द से ही हुई है।

अक्षरों का नियम ऋग्वेद काल से चला आता है। इस नियम का नाम ‘छन्द’ है। ऋग्वेद में हर एक मन्त्र का अलग-अलग छन्द है। मन्त्र का ‘छादन’ या छिपाकर रक्षण करने के कारण इसका नाम छन्दम् पड़ा।

छन्दों की उत्पत्ति के विषय में बंदो में एक कहानी है। देवासुर-युद्ध में देवता मन्त्रबल के सहारे युद्ध करने लगे। असुर लोग इन मन्त्रों के रूप को अपनी आसुरी माया से अस्तव्यस्त करने लगे। मन्त्रों को अस्तव्यस्तता से बचाने के लिए हर मन्त्र का एक कवच रूप ‘छन्द’ अर्थात् गुरु, लघु और प्लुत के अक्षरों के नियम बनाये गये।

फलतः मन्त्रो का रक्षण हुआ। वेदो में देवता एवं असुर शब्द सात्विक, राजस या तामस स्वभावो के अर्थ में प्रयुक्त किये गये हैं। 'देवता' शब्द से वृद्धि का प्रकाश और मन का अवधान सूचित किया जाता है। 'असुर' शब्द इन्द्रियो के वश में पड़कर मन की इच्छा के अनुसार चलने के मनोभाव, असावधानी इत्यादि का सूचक है। इसलिए छन्द का लाभ यह हुआ कि असावधान लोगो से भी मन्त्र अस्तव्यस्त न हो पाया।

इसी तरह गीत, वाद्य और नृत्यो के स्वरूप के रक्षण के लिए वृत्ताक्षरो के नाम अर्थात् लघु, गुरु, प्लुत शब्दो से ही ताल के अंग उत्पन्न हुए हैं।

'तालवद्ध' और 'अनिबद्ध'—ये दो गीत के भेद हैं। इसलिए कुछ समय तक गीत के लिए ताल की आवश्यकता नहीं है। परन्तु नृत्य के लिए ताल प्राणरूप है। इसी लिए गीत शास्त्रो की अपेक्षा नर्तन शास्त्रो में तालो का विवरण अधिक मिलता है।

### ताल सम्बन्धी ग्रंथ

प्राचीन काल के ताल सम्बन्धी ग्रंथ जो आज उपलब्ध हैं वे भरत का नाट्यशास्त्र (अध्याय ३२), आदिभरतम्, दत्तिलम्, भरतार्णवम्, सगीतरत्नाकर—इत्यादि हैं। इनके अलावा तामिल भाषा में कई सहस्र वर्ष पूर्व गीत, ताल और वाद्य के शास्त्र अगस्त्य आदि आचार्यों के द्वारा रचे गये हैं। इनमें बहुत से ग्रन्थ नष्ट हो चुके हैं। अवशिष्ट रहने वाले ग्रन्थों में 'तालसमुद्र' नामक ग्रन्थ मुद्रित हो चुका है।

नाट्यशास्त्र के तालाध्याय में ताल के दस प्राण, आदिकाल में उत्पन्न पाँच तालों के नाम, ताल कलाओ की वृद्धि करके, तथा तालो को मिश्रित करके तालो की सख्या को अधिक करने का मार्ग, नर्तन में उपयोग करने के लिए तालशब्दो से बनाये हुए साहित्य या ताल प्रबन्ध का विवरण, नाटको में प्रयुक्त होनेवाले प्रबन्धों को उपयोग करने के अवसर इत्यादि दिये गये हैं।

प्राचीन नाट्य एवं नृत्यग्रन्थो से उद्धृत किये हुए भागो से सकलित ग्रन्थ आदिभरत है। यह ग्रन्थसंग्रह सभा में नाट्यआचार्यों से नाट्यकला के बारे में विचार विनिमय के लिए तैयार किया गया है। इस ग्रन्थ में तालों के दस प्राण, चच्चत्पुट आदि प्राचीन ताल, १०८ ताल, ध्रुव आदि सात सालगसूडक ताल—ये सब दिये गये हैं। यह बात उल्लेख योग्य है कि 'नाट्यशास्त्र' में १०८ तालो के नाम या विवरण नहीं है।

'दत्तिलम्' में नाट्यशास्त्र में पाये जानेवाले विवरण ही सक्षिप्त रूप में हैं।

सगीत रत्नाकर में नाट्यशास्त्र आदिभरत और दूसरे सगीत ग्रन्थो में लिखे हुए सब विषयो को मिलाकर विशद तालाध्याय लिखा हुआ है, परन्तु इस ग्रन्थ के १०८ ताल और आदिभरत तथा भरतार्णव में दिये हुए १०८ तालो में कुछ भेद है।

आदिभरत और भरतार्णव मे पाये जानेवाले १०८ ताल एक-से है। इन दोनों ग्रन्थो मे गुरु लघु आदि तालाङ्गों को हस्तकौशल से दिखाने का मार्ग दिया गया है।

परन्तु इन ग्रन्थो मे दिये हुए तालो मे बहुत से ताल आजकल उत्तर या दक्षिण भारत मे प्रचार मे नही है। 'अधकारयुग' मे अन्य कलाभागो के साथ इनका सप्रदाय भी नष्ट हो गया है।

दक्षिण भारत के पुनरुज्जीवित सप्रदाय मे 'सालगसूड' नामक प्रबन्ध मे प्रयुक्त किये हुए सात ताल मात्र प्रचार मे आने लगे। उनके नाम ध्रुवा, मठय, झम्पा, अड्ड, त्रिपुट, रूपक और एक ताल है। केवल यही सात ताल, नये साहित्य के लिए पर्याप्त नही हुए। इसलिए हर एक अंग को तिगुना, चौगुना, पचगुना, छगुना और नौगुना करके मातों तालो के ३५ ताल बना दिये गये। इसमे भी एक सकट था। अर्ध मात्रा वाले अंग को ३, ५, ७, ९ से गुणित करते हुए ताल को बढाते समय सार्ध सख्याएँ—याने १३, २३ इत्यादि—उत्पन्न हुई। इससे बचने के लिए नियमरहित एक सम्प्रदाय की सृष्टि हुई है। अर्ध मात्राओं को ३, ५, ७, ९ आदि से गुणित करने के अवसर पर उन अकों से उन्हे गुणित न करके सब जगह ४ से गुणित करना ही साम्प्रदायिक परम्परा है।

यही सप्रदाय दक्षिण भारत मे आज व्यवहार मे है। उत्तर भारत मे प्रायः चतुष्कला रूप मे ताल की सृष्टि १, २, ३, ४ मात्राओं के द्वारा नये नाम से की गयी। इनके साथ फारसी पद्धति मे होनेवाले कुछ ताल भी प्रचार मे आने लगे। दक्षिण और उत्तर भारत मे ताल शास्त्र जो बहुत विस्तृत रूप मे था आज बहुत संक्षिप्त बन गया है।

### ताल के दस प्राण

१. काल—सप्तार में काल की गणना क्षण<sup>१</sup>, लव, कला, त्रुटि या अनु-द्रुत, द्रुत, लघु, गुरु, प्लुत से की जाती है। अनुद्रुत, द्रुत, लघु, गुरु, प्लुत, काकपाद—

१. ८ क्षण	= १ लव
८ लव	= १ काष्ठा
८ काष्ठा	= १ निमेष
८ निमेष	= १ कला
२ कला	= १ त्रुटि या अनुद्रुत
२ त्रुटि या अनुद्रुत	= १ द्रुत
२ द्रुत	= १ लघु
२ लघु	= १ गुरु
३ लघु	= १ प्लुत

इनके द्वारा ताल में काल का नाप किया जाता है। लघु अक्षर का काल एक मात्रा है। इसलिए अनुद्रुत  $\frac{1}{2}$  मात्राकाल है। द्रुत  $\frac{1}{2}$  मात्राकाल है। गुरु २ मात्राकाल है। प्लुत ३ मात्रा और काकपाद चार मात्राकाल है।

भिन्न-भिन्न देशों के अलग-अलग संप्रदायों में मात्राओं का काल एक निमेष से चार पाँच निमेष तक का प्रयोग में आता था। प्राचीन ग्रन्थों में लिखा है कि मार्गताल में अर्थात् प्राचीन शास्त्रसम्मत ताल में एक मात्रा का पाँच निमेष काल है। लघु, गुरु, प्लुत इत्यादि अंगों का कालप्रमाण इस तरह के मात्रा-काल प्रमाण के अनुसार गिना हुआ है। तामिल ग्रन्थों में बताया गया है कि देशी ताल में मात्रा का काल चार निमेषों का है।

२. अंग—ताल में काल की गिनती करने के लिए प्रयुक्त किये जानेवाले प्रामाणिक नाप ही अंग कहलाते हैं। इन अंगों से ही हर एक ताल बनाया जाता है। अंगों के नाम अनुद्रुत, द्रुत, द्रुतविराम, लघु, लघुविराम, गुरु, प्लुत, काकपाद (हंसपाद) हैं। द्रुत काल के अंग के साथ उसके आधे भाग को मिलाना द्रुतविराम है। इसी तरह लघु के साथ लघुकाल के आधे भाग को मिलाना लघुविराम<sup>१</sup> है।

अंगों के साकेतिक चिह्न ये ही हैं—

अनुद्रुत	=	∪ (अर्धचन्द्र)
द्रुत	=	० (पूर्णचन्द्र)
द्रुतविराम	=	४ (द्रुत के ऊपर एक आंकड़ा)
लघु	=	। (बाण)
लघुविराम	=	। (बाण के ऊपर तिरछी रेखा)
गुरु	=	5 (झुका हुआ धनुष)
प्लुत	=	5 (बिजली)
काकपाद	=	† (कौए या हंस के पाँव)

इन अंगों को मिलाने का नियम<sup>२</sup>—

१. 'विराम' लघु या द्रुतकाल के प्रयोग करने के बाद सुख भाव के लिए थोड़ी विश्रान्ति के साथ समाप्ति करना है। विराम शब्द का अर्थ ही 'समाप्ति करना' है। लघु या द्रुत के विश्रान्तिकाल के आधे भाग में कुछ कमी भी हो सकती है। इसमें मतभेद भी है। उसके अनुसार लघुविराम में भी विराम का काल पाँच मात्रा का ही है।

२. ये नियम 'तालसमुद्र' नामक तामिल ग्रन्थ से लिये गये हैं। संगीत-दर्पण में भी इनका विवरण है, पर इतना विशदतर नहीं है।

विराम—यह अलग नहीं आता, द्रुत या लघु के साथ ही आता है; गुरु और प्लुत के साथ नहीं आता।

काकपाद या हसपाद—काकपाद अलग, पहले और बीच में; गुरु के आगे या पीछे या प्लुत के साथ नहीं आता, अपितु किसी ताल के अन्तिम भाग में लघु या द्रुत के साथ आता है। लघु, गुरु, प्लुत—ये तीन अलग-अलग या मिलकर और सब जगह आते हैं।

### हस्तचेष्टाओं से अंगों की सूचना

द्रुत के लिए चार अगुलो ( $\frac{3}{4}$  इंच) की ऊँचाई से हाथ का आघात होता है। लघु के लिए ८ अगुलो की ऊँचाई से हाथ का आघात है। गुरु के लिए ८ अगुल ऊँचे से आघात करके ८ अगुल नीचे तक हाथ ले जाना होता है। प्लुत के लिए ८ अगुल ऊँचे से हाथ का आघात करने के पश्चात् एक हाथ पर प्रदक्षिणा करके नीचे आठ अगुल ले जाना होता है। काकपाद के लिए ऊपर-नीचे और दाहिनी-बायी ओर हाथ दिखाना पड़ता है। शब्द न होने के कारण काकपाद का नाम नि शब्द भी है।

### नामों के पर्यायवाची शब्द

अनुद्रुत—अणु, अर्धचन्द्र, करज, अर्धबिन्दु, अर्धद्रुत, अकुश, धनु।

द्रुत—बिन्दु, व्यञ्जन, शून्य, द्रु, द्रुत, अर्धमात्र, सुवृत्त, आकाश, उत्तम, ख, कूप, वलय।

लघु—व्यापक, सरल, ह्रस्व, शर, दण्ड, ल, मात्रिक, द्यौ, लमेरु, वाण।

गुरु—दीर्घ, वक्र, द्विमात्र, पूज्य, ग, कला<sup>१</sup>, केयूर, नूपुर, हार, ताटङ्ग, ककण।

प्लुत—त्रिमात्रा, सामज, शृङ्गी, प्लुत, दीप्त, त्र्यङ्ग, सामोद्भव, तारस्थान।

काकपाद—हसपाद, नि शब्द, स्वस्तिक।

३. क्रिया—ताल की आनन्दजनक शक्ति क्रिया में है। क्रिया दो प्रकार की है—सशब्द क्रिया और नि शब्द क्रिया। सशब्द क्रिया चार प्रकार की है—ध्रुवा, शम्पा, ताल और सन्निपात। नि शब्द क्रिया चार प्रकार की है—आवाप, निष्काम, विक्षेप, प्रवेशक। सशब्द क्रिया का दूसरा नाम 'पात' है। निशब्द क्रिया का पर्याय 'कला' है।

१. 'कला' शब्द ताल शास्त्र में तीन अर्थों में प्रयोग किया जाता है—(१) दो मात्रा या गुरु का नाम (२) तालों के रूप का वर्धन करने के लिए हर एक अंग को दुगुना, तिगुना, चौगुना करने का एक कला, द्विकला, चतुष्कला आदि में प्रयोग है। (३) निशब्द क्रिया का नाम है।



सशब्द क्रिया—(१) ध्रुवा—चुटकी बजाने का शब्द है, (२) शम्पा—दाहिने हाथ के द्वारा आघात का नाम है, (३) ताल—बाये हाथ को ऊँचा करके उसके द्वारा आघात करने का नाम है, (४) सन्निपात—दोनों हाथों के परस्पर आघात का नाम है।

निशब्द क्रिया—आवाप—हाथ को ऊपर उठाकर अगुलियों को कुञ्चित करने का नाम 'आवाप' है। फिर हथेली को अधोमुख रखकर ही अगुलियों को फैलाने का नाम 'निष्काम' है। हथेली ऊपर करके अगुलियों को फैलाकर दाहिनी ओर हाथ ले जाने का नाम 'विक्षेप' है। हथेली को अधोमुख करके अगुलियों को कुञ्चन करने का नाम 'प्रवेश' है।

४ मार्ग—गुरु का नाम है कला। कला का कालप्रमाण विभिन्न देशों और सप्र-दायों में भिन्न-भिन्न रूप में है। इस कलाप्रमाण के भेदों से भिन्न होने का नाम 'मार्ग' है। मार्ग के तीन प्रकार 'नाट्यशास्त्र' में दिये गये हैं—'चित्र, वार्त्तिक और दक्षिण।' चित्र मार्ग में कला की दो मात्राएँ हैं। वार्त्तिक मार्ग में कला की चार मात्राएँ हैं। दक्षिण मार्ग में कला की ८ मात्राएँ हैं। 'संगीत रत्नाकर' में 'ध्रुव' नामक मार्ग भी कहा गया है। इसमें कला की मात्रा एक है।

'मणि दर्पण' नामक ग्रन्थ से उद्धृत भाग, 'संगीत दर्पण' में है। उसके द्वारा निर्दिष्ट प्रकार—'चित्रतर, चित्रतम, अतिचित्रतम, चतुर्भाग, त्रुटि, अनुत्रुटि, घर्षण, अनुघर्षण और स्वर' है। उनमें 'चित्रतर' मार्ग ही 'ध्रुवमार्ग' है। इसमें भी कला की मात्रा एक है। 'चित्रतम' में कला की मात्रा आधी है। 'अतिचित्रतम' में कला का मात्राकाल पाव है। 'चतुर्भाग' की मात्रा ४ है। त्रुटि में कला का मात्राकाल ३ है। अनुत्रुटि में ३/४ मात्रा है। घर्षण में १/४ मात्रा है और अनुघर्षण में ३/४ मात्रा है। स्वर में कला का मात्राकाल ३/४ मात्रा है।

'देशी पद्धति' में कला की हर एक मात्रा की प्रत्येक क्रिया भी बतायी गयी है जिसका नाम 'देशी क्रिया' है। मात्राओं का नाम भी दिया गया है। पहली मात्रा का नाम 'ध्रुवका' है। इसका सशब्द उच्चारण होता है। दूसरी मात्रा का नाम 'सर्पिणी' है। इसकी क्रिया 'बाई' तरफ हाथ फैलाना है। 'कृष्या' तीसरी मात्रा का नाम है। इसमें हाथ को नीचे लाना है। 'विसर्जिता' में हाथ को बाहर लाना है। विक्षिप्ता में 'कुञ्चन' करना है। 'पताका' में ऊपर ले जाना। 'पतिता' हाथ से आघात करने का नाम है।

'चित्र' मार्ग में 'ध्रुव' और 'पतिता' के प्रयोग हैं। वार्त्तिक मार्ग में ध्रुवा, सर्पिणी, विक्षिप्ता और पताका के प्रयोग हैं। दक्षिण मार्ग में आठ मात्राओं की क्रिया का भी प्रयोग है। सशब्द क्रिया का प्रयोग करते समय ही इनका विनियोग है। क्योंकि

निश्चब्द क्रिया-प्रयोगों में इन मात्राओं की निश्चब्द क्रियाएँ खलबली मचा देती हैं।

**५. जाति**—ताल की जाति नाट्यशास्त्र और संगीतरत्नाकर में दो प्रकार की बतायी गयी है—त्र्यश्र और चतुरश्र। चतुरश्र ताल चच्चत्पुट है। त्र्यश्रताल चाचपुट है। उनका अंग विभाग नामाक्षरों से ही प्रतीत होता है।

चच्चत्पुट का अंग चत्+चत्+पु+टम्<sup>१</sup> (गुरु, गुरु, लघु, प्लुतम् ऽ ऽ। ऽ) है। अनुस्वारान्त अन्तिम भाग को प्लुत करना है। चाचपुट का अंग (गुरु, लघु, लघु, गुरु ऽ।। ऽ)। इससे प्रतीत होता है कि जाति, ताल के अन्तर्गत गति है; क्योंकि 'चच्चत्पुट' में चतुरक्षर के दो भाग हैं। पहले भाग में दो-दो अक्षर मिलकर चतुरक्षर बना हुआ है। दूसरे भाग में एक और तीन अक्षर, मिलकर चार अक्षर बन गये हैं। ताल चार-चार पद रख कर चलता है। इस तरह रखने में भी दो प्रकार हैं। इस बात को चच्चत्पुट हमें समझा देता है कि चार पद रखकर चलने में भी दो प्रकार हैं। चाचपुट तीन-तीन अक्षरों से बनाया हुआ है। पहले भाग में दो और एक अक्षर मिलकर दूसरे भाग में एक और दो अक्षर मिलकर तीन अक्षर हुए हैं।

चतुरश्र और त्र्यश्र जाति को मिलाकर एक नयी गतिवाली जाति 'मिश्र' नाम से उत्पन्न हुई है। उस जाति का उदाहरण 'षट्पितापुत्रक' ताल है। उस ताल में आदि और अन्त में प्लुत है। बाकी नामाक्षर के प्रकार गुरु-लघु है। ताल का रूप ऐसा है—(ऽ। ऽ ऽ। ऽ) मिलकर १२ मात्राएँ हैं। इन १२ मात्राओं को तीन-तीन या चार-चार मात्राओं में बाँट सकते हैं। इसलिए इस जाति का नाम 'मिश्र' है।

'जाति' शब्द का यह अर्थ और प्रयोग 'अधयुग' में विस्मृत हो गये और जाति शब्द नये अर्थ में प्रयोग में आने लगा। लघु के अक्षरकाल या मात्राकाल का नाम 'जाति' हो गया। लघु के तीन मात्राकाल रहे तो उस ताल को त्र्यश्र जाति कहते हैं। ४ मात्राएँ हो तो चतुरश्र जाति, पाँच मात्राएँ हो तो खण्डजाति, सात मात्राएँ हो तो मिश्रजाति और नौ मात्राएँ हो तो संकीर्ण जाति कहते हैं। इस तरह कर्नाटक पद्धति में बचे हुए सात तालों से ३५ ताल बना दिये गये हैं।

**६. कला**—कला शब्द का अर्थ है 'भाग'। ताल शास्त्र में यह शब्द तीन अर्थों में प्रयुक्त किया गया है। एक कालप्रमाण का नाम है। इस अर्थ में कला ही गुरु है। आदिकाल में चच्चत्पुट, चाचपुट, षट्पितापुत्रक, सम्यक्वेष्टाक, उद्धट्ट नामक पाँच ताल ही थे। हर एक ताल के अंग को दुगुना, चौगुना और अठगुना करके नये तालों की कल्पना किया करते थे। इनको द्विकल, चतुष्कल, अष्टकल इत्यादि नाम

**१. संयुक्ताक्षर के पहले होनेवाला लघु अक्षर गुरु हो जाता है ('संयोगे गुरु')<sup>१</sup>**

(५) गोपुच्छा यति—द्रुत, मध्य और विलम्ब इस क्रम में लयों को मिलाना या द्रुत और मध्य, मध्य और विलम्ब—यही गोपुच्छा यति है।

१०. प्रस्तार—हर एक ताल के कई अंग हैं। इन अंगों के कालप्रमाणों को मिलाने से ताल का पूरा कालप्रमाण प्राप्त होता है। इसी पूरे कालप्रमाण को रखकर भिन्न-भिन्न रूप से अंगों का जोड़ना साध्य है। इस तरह भिन्न-भिन्न रूप से किये जाने-वाली अंग कल्पना का मार्ग 'प्रस्तार' है। प्रस्तार में यह रूप-कल्पना क्रम से की जाती है। क्रम का लाभ यह है कि सब रूपों की कल्पना निश्चयपूर्वक साध्य होती है। दूसरा प्रयोजन एक ही प्रकार के रूप को बार-बार न आने देना है।

प्रस्तार, चतुरङ्ग प्रस्तार, षडङ्ग प्रस्तार—इत्यादि हैं। चतुरङ्ग प्रस्तार में प्लुत, गुरु, लघु, द्रुत—इन चार अंगों से ही प्रस्तार करना होता है। षडङ्ग प्रस्तार में प्लुत, गुरु, लघुविराम, लघु, द्रुतविराम, द्रुत—इन छ अंगों से प्रस्तार करना होता है। प्रस्तार का क्रम ऐसा है—

१. प्रथमतः ताल का पूरा कालप्रमाण यथासम्भव बड़े अंगों से जोड़ लेना है।
२. दाहिनी ओर बड़ा अंग, बायी ओर छोटा अंग—इस क्रम में लिखना चाहिए। तब दाहिनी ओर से देखे तो क्रमशः छोटे-छोटे अंग रहते हैं। यह पहला प्रस्तार है।
३. दूसरा प्रस्तार लिखने का क्रम यह है—ऊपरी प्रस्तार के अंगों में से सब से छोटे अंग के नीचे उससे छोटा अंग हो, तो उसको लिखना चाहिए, अगर नहीं, तो इसके निकट के बड़े अंग के नीचे उससे छोटे अंग को लिखना चाहिए। उसके बाद उस अंग की दाहिनी ओर रहनेवाले ऊपरी अंगों को ज्यों का त्यों नीचे भी लिखना चाहिए। अब लिखे हुए सब अंगों को जोड़कर देखने पर पूर्ण कालप्रमाण की कमी होती हो तो पूरक अंग के बायी ओर यथासम्भव बड़े अंगों से ही पूर्ति करनी चाहिए। इसमें भी पूरक अंगों का क्रम बड़े अंग के बायी ओर ही छोटे अंग को लिखकर रखना चाहिए। इसी प्रकार तीसरे आदि अन्य प्रस्तारों को भी लिखना है। सर्वद्रुत होने के बाद प्रस्तार की पूर्ति समझनी चाहिए।

उदाहरणार्थ—

काल प्रमाण	प्रस्तारों का रूप और संख्या
१. एक द्रुत काल	०' एक ही प्रस्तार साध्य है।
२. एक लघु प्रमाण काल	१। पहला प्रस्तार
	० ० दूसरा प्रस्तार = प्रस्तार = २

१. प्रत्येक प्रस्तार में पहले लेखनीय अंग नीचे रेखांकित दिखाये गये हैं।

३. एक द्रुत और एक लघु

० १ पहला प्रस्तार  
१ ० दूसरा प्रस्तार  
० ० ० तीसरा प्रस्तार = प्रस्तार = ३

४. एक गुरु प्रमाण काल

५ पहला प्रस्तार  
१ १ दूसरा प्रस्तार  
० ० १ तीसरा ,,  
० १ ० चौथा ,,  
१ ० ० पांचवाँ ,,  
० ० ० छठा ,, = प्रस्तार = ६

५. एक द्रुत और एक गुरु  
प्रमाणकाल

० ५ पहला प्रस्तार  
० १ १ दूसरा ,,  
१ ० १ तीसरा ,,  
० ० ० १ चौथा ,,  
५ ० पांचवाँ ,,  
१ १ ० छठा ,,  
० ० १ ० सातवाँ ,,  
० १ ० ० आठवाँ ,,  
१ ० ० ० नवाँ ,,  
० ० ० ० ० दसवाँ ,, = प्रस्तार = १०

६. एक प्लुत प्रमाण काल

५ पहला प्रस्तार  
१ ५ दूसरा ,,  
० ० ५ तीसरा ,,  
५ १ चौथा ,,  
१ १ १ पांचवाँ ,,  
० ० १ १ छठा ,,  
० १ ० १ सातवाँ ,,  
१ ० ० १ आठवाँ ,,  
० ० ० ० १ नवाँ ,,



२०. हंसलील — १ १ = (२ $\frac{१}{२}$ )
२१. वर्णभिल्ल — ५ १ ० ० = (४)
२२. राजचूडामणि — ० ० १ १ १ ० ० १ ५ = (८)
२३. रङ्गद्योतन — ५ ५ ५ १ ५ = (१०)
२४. राजताल — ० ५ ० ० ५ १ ५ = (१९)
२५. सिंहविक्रीडितम् — १ ५ ५ १ ५ ५ ५ १ ५ = (१९)
२६. वनमाली — ० ० ० ० १ १ ० ० ५ = (७)
२७. चतुरश्रवर्ण — ५ १ १ ० ० ५ = (७)
२८. त्र्यश्रवर्ण — १ ० ० १ १ ५ = (६)
२९. मिश्रवर्ण — ० ० ४ ० ० ४ ० ० ४ ० ० ४ = (७)
३०. वर्णताल — ४ ० ० ० ० ० १ १ १ १ १ १  
१ १ १ १ ० ० ४ = (१५)
३१. खण्डवर्णताल — ५ ५ ५ ० ५ ५ १ ५ = (१५ $\frac{१}{२}$ )
३२. रङ्गप्रदीप — १ १ ५ ५ ५ = (९)
३३. हसनाद — १ ५ ० ० ५ = (८)
३४. सिहनाद — १ ५ ५ १ ५ = (८)
३५. मल्लिकामोद — १ १ ० ० ० ० = (४)
३६. शरभलील — १ ० १ ० १ ० १ ० १ १ = (८)
३७. रङ्गाभरण — ५ ५ १ १ ५ = (९)
३८. तुरङ्गलील — ० ० १ = (२)
३९. सिंहनन्दन — ५ ५ १ ५ १ ५ ० ० ५ ५ १ ५ १ ५  
५ १ १ + = (३२)
४०. जयश्री — ५ १ ५ १ ५ = (८)
४१. विजयानन्द — १ १ ५ ५ ५ = (८)
४२. प्रतिताल — १ १ ० ० = (३)
४३. द्वितीयक — ० ० १ = (२)
४४. मकरन्द — ० ० १ १ १ ५ = (६)
४५. कीर्तिताल — १ ५ ५ ५ १ ५ = (१२)
४६. विजयताल — ५ ५ ५ ५ = (१०)
४७. जयमङ्गल — १ १ ५ १ १ ५ = (८)
४८. राजविद्याधर — १ ५ ० ० = (४)

४९ मठ (मठ्य) ताल—	1 1 5 1 1 1 1 = (८)
५० नेत्रमठ	— 5 5 1 5 5 + = (१३)
५१ प्रतिमठ	— 1 1 1 1 5 1 1 = (८)
५२ जयताल	— 1 5 1 1 1 ० ० ० ५ = (१०)
५३ कुडुक्क	— ० ० 1 1 = (३)
५४ निस्सारक	— 1 ५ = (२ $\frac{१}{४}$ )
५५ निस्सानुक	— 1 1 5 5 1 1 = (८)
५६ क्रीडाताल	— ० ४ = (१ $\frac{१}{४}$ )
५७ त्रिभङ्गी	— 1 1 5 5 = (६)
५८ कोकिलप्रिय	— 5 1 ५ = (६)
५९ श्रीकीर्तिताल	— 5 5 1 1 = (६)
६० बिन्दुमाली	— 5 ० ० ० ० ५ = (६)
६१ नन्दन	— 1 1 ० ० ५ = (६)
६२ श्रीनन्दन	— 5 ० ० ५ = (५)
६३ उद्वीक्षण	— 1 1 5 = (४)
६४ मठिकाताल	— 5 ० ५ = (५ $\frac{१}{२}$ )
६५ आदि मठ्य	— 1 1 ५ ५ = (४ $\frac{१}{२}$ )
६६ वर्ण मठ्य	— 1 1 ० ० 1 ० ० = (५)
६७ ढेङ्कीताल	— 5 1 5 = (५)
६८ अभिनन्दन	— 1 1 ० ० ५ = (५)
६९ नवक्रीड	— ० ४ = (१ $\frac{१}{४}$ )
७० मल्लताल	— 1 1 1 1 ० ४ = (५ $\frac{१}{४}$ )
७१ दीपक	— ० ० 1 1 5 5 = (७)
७२ अनङ्गताल	— 1 ५ 1 1 5 ५ = (११)
७३ विषमताल	— ० ० ० ४ ० ० ० ४ = (४ $\frac{१}{२}$ )
७४ नान्दीताल	— 1 ० ० 1 1 5 5 = (८)
७५ मुकुन्दताल	— 1 ० ० 1 5 = (५), 1 ० ० ० ० ५ = (५)
७६ कर्षुक	— 1 1 1 1 5 = (६)
७७ एकताल	— ० = (३)
७८ पूर्णकंकाल	— ० ० ० ० ५ 1 = (५)

७९. खण्डककाल	—० ० ५ ५ = (५)
८०. समककाल	—५ ५ १ = (५)
८१. असमककाल	—१ ५ ५ = (५)
८२. झोबड	—१ १ १ = (३ $\frac{१}{४}$ )
८३. पणताल	—१ ० १ = (२ $\frac{१}{२}$ )
८४. अभङ्गताल	—१ ५ = (४)
८५. रायरङ्गाल	—५ १ ५ ० ० = (७)
८६. लघुशेखर	—१ = (१ $\frac{१}{४}$ )
८७. द्रुतशेखर	—४ = (३ $\frac{३}{४}$ )
८८. प्रतापशेखर	—५ ० ५ = (४ $\frac{१}{४}$ )
८९. गजझम्पा	—५ ० ४ = (३ $\frac{१}{४}$ )
९०. चतुर्मुखताल	—१ ५ १ ५ = (७)
९१. झंपाताल	—० ४ १ = (२ $\frac{३}{४}$ )
९२. प्रतिमठघ	—१ १ ५ ५ १ १ = (८)
९३. तृतीयताल	—१ १ ० ० ४ = (३ $\frac{३}{४}$ )
९४. वसन्त	—१ १ १ ५ ५ ५ = (९)
९५. ललित	—० ० १ ५ = (४)
९६. रतिताल	—१ ५ = (३)
९७. करणताल	—० ० ० ० = (२)
९८. षट्ताल	—० ० ० ० ० ० = (३)
९९. वर्धन	—० ० १ ५ = (५)
१००. वर्णताल	—१ १ ५ ५ = (८)
१०१. राजनारायण	—० ० १ ५ १ ५ = (७)
१०२. मदनताल	—० ० ५ = (३)
१०३. पार्वतीलोचन	—० ० १ १ ० ० ५ ५ १ १ १ ५ १ १ = (१६)
१०४. गारुगी	—० ० ० ४ = (२ $\frac{१}{४}$ )
१०५. श्रीनन्दन	—५ १ १ ५ = (७)
१०६. जयताल	—१ ५ १ १ ० ० ५ = (९)
१०७. लीलाताल	—० १ ५ = (४ $\frac{१}{४}$ )
१०८. विलोकित	—१ ५ ५ ० ० ५ ५ = (१२)



१०९ ललितप्रिय	— १ १ ५ १ ५ = (७)
११० जनक	— १ १ १ ५ ५ १ १ ५ = (१४)
१११ लक्ष्मीश	— ० ० ४ १ १ ५ ५ = (९ $\frac{३}{४}$ )
११२ भद्रबाण <sup>१</sup>	— १ ० १ = (२ $\frac{१}{२}$ )

### कर्नाटक पद्धति में प्रचलित ताल

१. ध्रुवताल = १०॥ = लघु, द्रुत, लघु, लघु = ३ $\frac{१}{२}$  मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	= ३ + २ + ३ + ३ = ११	अक्षर
चतुरश्र जाति ,, ,,	= ४ + २ + ४ + ४ = १४	,,
खण्ड जाति ,, ,,	= ५ + २ + ५ + ५ = १७	,,
मिश्र जाति ,, ,,	= ७ + २ + ७ + ७ = २३	,,
सकीर्ण जाति ,, ,,	= ९ + २ + ९ + ९ = २९	,,

२. मठचताल = १०॥ = लघु द्रुत, लघु = २ $\frac{१}{२}$  मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	= ३ + २ + ३ = ८	अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	= ४ + २ + ४ = १०	,,
खण्ड ,, ,, ,,	= ५ + २ + ५ = १२	,,
मिश्र ,, ,, ,,	= ७ + २ + ७ = १६	,,
सकीर्ण ,, ,, ,,	= ९ + २ + ९ = २०	,,

३. रूपकताल = ० १ = द्रुत, लघु = १ $\frac{१}{२}$  मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	= २ + ३ = ५	अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	= २ + ४ = ६	,,
खण्ड ,, ,, ,,	= २ + ५ = ७	,,
मिश्र ,, ,, ,,	= २ + ७ = ९	,,
सकीर्ण ,, ,, ,,	= २ + ९ = ११	,,

४. झंपाताल = १ ५ ० = लघु, अनुद्रुत, द्रुत = १ $\frac{३}{४}$  मात्राएँ

त्र्यश्र जाति में ताल अक्षर	= ३ + ३ = ६	अक्षर
चतुरश्र ,, ,, ,,	= ४ + ३ = ७	,,

१. इन तालों को '१०८ ताल' ही कहते हैं, पर यहाँ ४ ताल अधिक दिये गये हैं। ये ११२ ताल नन्दिकेश्वर कृत नर्तनग्रन्थ 'भरतार्णव' से उद्धृत हैं।

खण्ड	” ” ”	=	५ + ३	=	८ ”
मिश्र	” ” ”	=	७ + ३	=	१० ”
सकीर्ण	” ” ”	=	९ + ३	=	१२ ”

५. त्रिपुट ताल=। ० ०=लघु, द्रुत, द्रुत=२ मात्राएँ

त्र्यश्र जाति मे ताल अक्षर	=	३ + २ + २	=	७ अक्षर
चतुरश्र ” ” ”	=	४ + २ + २	=	८ ”
खण्ड ” ” ”	=	५ + २ + २	=	९ ”
मिश्र ” ” ”	=	७ + २ + २	=	११ ”
सकीर्ण ” ” ”	=	९ + २ + २	=	१३ ”

६. अडुताल= । । ० ० =लघु, लघु, द्रुत, द्रुत=३ मात्राएँ

त्र्यश्रजाति मे ताल अक्षर	=	३ + ३ + २ + २	=	१० अक्षर
चतुरश्र जाति मे ताल अक्षर	=	४ + ४ + २ + २	=	१२ ”
खण्ड जाति मे ” ”	=	५ + ५ + २ + २	=	१४ ”
मिश्र ” ” ”	=	७ + ७ + २ + २	=	१८ ”
संकीर्ण ” ” ”	=	९ + ९ + २ + २	=	२२ ”

७. एकताल=।=१ मात्रा

त्र्यश्रजाति मे ताल अक्षर	=	३ अक्षर
चतुरश्र ” ” ”	=	४ ”
खण्ड ” ” ”	=	५ ”
मिश्र ” ” ”	=	७ ”
सकीर्ण ” ” ”	=	९ ”

हर एक जाति मे अंग सशब्द और नि.शब्द क्रियाओं से गिने जाते हैं। लघु को एक शपा के बाद बाकी अक्षरों का अगुलियो के पातन से गणन करते हैं। द्रुत को एक शपा के बाद एक विक्षेपकर के गिनते हैं। अनुद्रुत को एक शपा से गिनते हैं।

हर एक ताल मे एक या दो जाति ही प्रायः व्यवहार में हैं।

ध्रुवताल मे चतुरश्रजाति  $(४ + २ + ४ + ४ = १४ \text{ अक्षर})$  व्यवहार मे है ।  
 मठच , , ,  $(४ + २ + ४ = १० , , ) , ,$   
 रूपक , , ,  $(२ + ४ = ६ , , ) , ,$   
 झपा , , मिश्र , ,  $(७ + १ + २ = १० , , ) , ,$   
 त्रिपुट , , चतुरश्र  $(४ + २ + २ = ८)$  और त्र्यश्र  $(३ + २ + २ = ७)$   
 जाति व्यवहार मे है

इस ताल मे चतुरश्रजाति को 'आदिताल' कहते हैं ।

“ , , त्र्यश्र , , त्रिपुट , , ,  
 अड्ड , , खण्ड , ,  $(५ + ५ + २ + २ = १४ \text{ अक्षर अमल मे है})$   
 एक , , चतुरश्र , , ४ अक्षर , , ,

कभी-कभी त्र्यश्रजाति के लघु को दो रापा और एक विक्षेप से गिनते हैं उसको 'चापु' कहते हैं । इस तरह प्रयोग मे त्र्यश्रजाति रूपकताल  $(२ + ३ = ५ \text{ अक्षर})$  प्रसिद्ध है । इसलिए त्र्यश्रजाति रूपकताल को 'चापुताल' कहते हैं ।

### तालों का अभ्यास मार्ग

व्यवहार मे रहनेवाली ताल जातियों का अभ्यास करने के लिये सप्ततालकार नामक 'स्वरवर्णालिकार' बनाये गये हैं ।

### हिन्दुस्थानी पद्धति के प्रचलित तालों का विवरण

हिन्दुस्थानी पद्धति मे तालो के अगो पर ज्यादा ध्यान न देकर तालो की मात्राओ और तालो मे 'पात' एव 'खाली' की जगह और ठेके एव बोल पर अधिक ध्यान दिया जाता है । प्रचलित मुख्य ताल ये हैं—

#### १. त्रिताल<sup>१</sup>—मात्रा १६

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
ना	धी	धी	ना	ना	धी	धी	ना	ना	तो	तो	ना	ना	धी	धी	ना
पा				पा			खा				पा				

१. प्राचीन सूडादि सप्ततालों मे त्रिपुटा एक है । 'त्रिपुटा' 'तिवटा' होकर 'त्रिताल' हो गया है । त्रिपुट के अंग '००१' है । चतुरश्रजाति त्रिपुट ताल ८ अक्षर काल से युक्त है । उसे दक्षिण के संप्रदाय में आदि ताल कहते हैं । इसमें हर एक अक्षर

२. एक ताल<sup>१</sup>—मात्रा १२

चार पात और दो खाली

१ धी	२ धी	३ धागे	४ त्रक	५ तु	६ ना	७ क	८ ता	९ धागे	१० त्रक	११ धो	१२ ना
पा		खा		पा		खा		पा		पा	

३. चौताल<sup>२</sup>—मात्रा १२

चार पात और दो खाली

१ धा	२ धा	३ धी	४ ता	५ किट	६ धा	७ धो	८ ता	९ किट	१० कत	११ गदा	१२ गन
पा		खा		पा		खा		पा		पा	

४. आड़ा चौताल<sup>३</sup>—मात्रा १४

चार पात और तीन खाली

१ धो	२ तुक	३ धी	४ ना	५ तु	६ ना	७ क	८ ता	९ धि	१० धि	११ ना	१२ धि	१३ धि	१४ ना
पा		पा		खा		पा		खा		पा		खा	

को दुगुना करके हिन्दुस्थानी संप्रदाय में १६ मात्राएँ बनायी गयी हैं। पर पात का स्थान प्राचीन अंगों का अनुसरण करता है। दोनों द्रुतों के लिए दो पात और एक लघु के लिए तीसरा पात और एक खाली।

१. एक ताल का प्राचीन अंग एक लघु है। उसकी त्र्यश्रजाति में ३ मात्राएँ हैं। हर एक मात्रा को चौगुनी करके पहली दो मात्राओं के लिए दो पात और तीसरी मात्रा को दो पात दिये गये हैं। इसी रीति से एक ताल का निर्माण हुआ है।

२. चौताल प्राचीन अड्डताल से उत्पन्न हुआ है। अड्डताल के अंग ॥ ०० है। इसकी चतुरश्रजाति में  $४+४+२+२=१२$  मात्राएँ हैं। पर अंगों का अनुसरण करके पात दिये गये हैं। हर एक लघु का एक पात और एक खाली और हर एक द्रुत का एक पात दिया गया है।

३. कर्नाटक संप्रदाय में अड्डताल की खण्डजाति और ध्रुवताल की चतुरश्रजाति प्रायः प्रयोग में है। दोनों की मात्राएँ १४ हैं। हिन्दुस्थानी पद्धति के आड़ाचौताल नामक ताल में अड्डताल के अनुसार  $५+५+२+२$  इस प्रकार विभाग न करके  $२+४+४+४$ —ऐसा विभाग किया गया है।

५. झपताल<sup>१</sup>—मात्रा १०

तीन पात और एक खाली

१ धी	२ ना	३ धी	४ धी	५ ना	६ ती	७ ना	८ धी	९ धा	१० ना
पा		पा			खा		पा		

६. रूपकताल<sup>२</sup>—मात्रा ७

तीन पात

१ ती	२ ती	३ ना	४ धी	५ ना	६ धी	७ ना
पा			पा		पा	

७. दादरा<sup>३</sup>—मात्रा ६

दो पात और एक खाली

१ धा	२ गे	३ ना	४ धा	५ ती	६ ना
पा		पा	खा		

संप्रदाय १

१ धी	२ ग	३ ना	४ ना	५ तु	६ न्ना
पा		पा		खा	

संप्रदाय २

१ धा	२ धी	३ ना	४ धा	५ ती	६ ना
---------	---------	---------	---------	---------	---------

संप्रदाय ३

१. झपताल के प्राचीन अंग । ०० है । कर्नाटक संप्रदाय के अनुसार मिश्रजाति झम्पताल की  $७+२+१=१०$  मात्राएँ हैं । अंगों के अनुसार करे तो तीन पात होते हैं । पर इन तीनों पातों के विनियोग में हिन्दुस्थानी पद्धति में कुछ अन्तर है ।

२. रूपकताल के प्राचीन अंग ० । है । खण्डजाति में इसके  $२+५=७$  अक्षर हैं । अंगों का अनुसरण करें तो दो पात ही होते हैं । पर यहाँ लघु के दो पात और द्रुत का एक पात दिया गया है ।

३. इनमें पहले दोनों संप्रदायों में मात्रा और पात व खाली के स्थान समान हैं । पर ताल की मात्राओं का 'पाद भाग' करने में अन्तर है । प्राचीन काल से ताल की मात्राओं का कई पादों जैसा विभाग करने की परम्परा थी, उसका नाम 'पाद भाग' है । दादरे

८. धमार—मात्रा १४

तीन पात

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
ता	धे	ऽ	धे	ऽ	धा	ऽ	त	कि	ट	कि	ट	त	क
पा					पा			पा					संप्रदाय—१

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४		
ता	धे	ऽ	धे	ऽ	धा	ऽ	त	धि	न	दि	न	धा	ऽ		
पा					पा		पा						खा. संप्रदाय—२		

इस ठेके के दूसरे प्रकार के बोल

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धा	ऽ	ऽ	धि	ट्ट	धा	ऽ	ग	दि	न	ति	ट्ट	ता	ऽ
पा					पा					पा		खा	संप्रदाय—२

तीसरे प्रकार के बोल

२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	
क	धी	न	धी	न	धा	ऽ	क	द्धो	न	तो	न	ता	ऽ
पा					पा					पा		खा	संप्रदाय—२

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
क	धी	न	धी	न	धा	ऽ	क	द्धो	न	तो	न	धा	ऽ
पा					पा		खा			पा			संप्रदाय—३

९. कहरवा—मात्रा ४

एक पात और एक खाली

१	२	३	४	
धागे	नति	नक	धो	ऽ
पा		खा		

जैसे पहले संप्रदाय में तीन-तीन मात्राओं के दो पाद हैं। दूसरे संप्रदाय में दो-दो मात्राओं के तीन पाद हैं। तीसरे संप्रदाय में पाद भाग पहले संप्रदाय के समान है। परन्तु पात व खाली में अन्तर है। पहले संप्रदाय में २ पात और एक खाली है। तीसरा संप्रदाय एक पात और एक खाली है।

## १०. झूमरा—मात्रा १४

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
क	धी	न	धी	न	धा	ऽ	क	धी	न	ती	न	ता	ऽ
पा			पा			खा		पा					सप्रदाय—१

इस ठेके के दूसरे प्रकार के बोल

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धि	धातृ	कट	धि	धि	धागे	तृकट	ति	तातृ	कट	धिधि	धागे	तृकट	
पा			पा				खा		पा				
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धा	तृक	धि	धि	धा	गि	तृक	धि	तातृक	धि	तागि	तृक	ति	
पा				पा		खा		पा					सप्रदाय—२

## ११. दीपचंदी—मात्रा १४

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धि	ऽ	धि	ऽ	धा	गे	ति	ति	ऽ	ति	ऽ	धा	गे	ति
पा				पा			खा		पा				सप्रदाय—१
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
धि	धि	ऽ	धातृ	कट	तूना	कत्ति	ऽ	धा	तृकट	तू	ना		
पा			पा			खा		पा					सप्रदाय—२

## १२. धीमा तिताल—मात्रा १६

तीन पात और एक खाली

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
धा	तृक	धा	धी	ना	धी	नि	ति	ता	तृक	धा	धी	ना	धी	धिधि	
पा				पा				खा				पा			

पजाबी ठेका

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
धी	न	धी	न	धा	धी	न	धी	न	धा	ती	न	ती	न	ता	धी
पा				पा				खा				पा			

१ २ ३ ४ तक्कधि — धा	५ ६ ७ ८ तक्कधि — धा	९ १० ११ १२ तक्कति — ता	१३ १४ १५ १६ तक्कधि — धा
पा	पा	खा	पा

१३. फरोदस्त—मात्रा १३

पाँच पात और एक खाली

१ २ ३ ४ धा ऽ धिन्ना	५ ६ ७ ८ ९ धिन्ना	१० ११ तिटिकित	१२ १३ गदि गन
पा	पा	पा	खा

१४. सूरफ़ाहता' (उसूले फ़ाहता)—मात्रा १०

तीन पात और दो खाली

१ २ ३ ४ धा गी	५ ६ ७ ८ ९ १० तिट धा गी	११ १२ धा गी	१३ १४ तीट
पा	खा	पा	पा

संप्रदाय—१

१ २ ३ ४ त्रिधि ना तू	५ ६ ७ ८ ९ १० ना क ता धा ती ना
पा	पा

संप्रदाय—२

१५. गजल का ठेका—मात्रा ६

दो पात

१ २ ३ ४ ति ऽ त क	५ ६ ७ ८ ९ धि ऽ ना ना ऽ
पा	पा

१६. होरी का ठेका—मात्रा १४

तीन पात और एक खाली

१ २ ३ ना धि ऽ	४ ५ ६ ७ ना क धि ऽ	८ ९ १० ना ति ऽ	११ १२ १३ १४ ना क धि ऽ
पा	पा	खा	पा

१. प्राचीन सालगसूड के मंठ या मठघताल के अंग '।०।' हैं। चतुरश्र जाति में  $४ + २ + ४ = १०$  अक्षर हैं। अंगों का अनुसरण करके यहाँ हर एक लघु के लिए एक पात और खाली तथा द्रुत के लिए एक पात दिया गया है।



## नवाँ परिच्छेद

### प्रकीर्णक अध्याय

= इस अध्याय में संगीत शास्त्र से सम्बद्ध प्रकीर्ण विषय बताये गये हैं।

#### वाग्गेयकार और उनके लक्षण

‘वाक्’ या ‘मातृ’ गीत साहित्य में शब्दों का नाम है। ‘गेय’ या ‘धातु’ गान के प्रकार का नाम है। इन दोनों में जो निपुण है वे ही ‘वाग्गेयकार’ कहे जा सकते हैं। शब्द-शास्त्र-ज्ञान, गानशास्त्र एवं वाद्य शास्त्र का ज्ञान, विविध भाषा-ज्ञान, मधुर-शारीर, नूतन साहित्य रचना करने में निपुणता इत्यादि में सामर्थ्य की कमी हो तो उन वाग्गेयकारों को मध्यम कहते हैं। ‘मातृ’ में समर्थ और धातु में असमर्थ हो तो ‘अधम’ कहलाता है। दूसरे कवियों की रचनाओं पर धातु रचनेवाले का नाम ‘कुट्टि-कार’ है। प्राचीन संगीत और नवीन संगीत दोनों का ज्ञान जिसे होता है वह ‘गान्धर्व’ कहलाता है। प्राचीन संगीत का ज्ञान-मात्र रखनेवाले का नाम ‘स्वरादि’ है।

#### गायकों का लक्षण

शारीर की मधुरता, राग का आरम्भ, राग विस्तार, राग को समाप्त करने का ज्ञान, विविध राग, रागाङ्ग, आदि मार्ग देशी रागों का रूप-भेद ज्ञान, तालबद्ध रूपकों को गाने में निपुणता, आलाप में मनोवर्धन शक्ति, तीनों स्थानों में गमक प्रयोग करने की अनायास शक्ति, कण्ठ की वशता, ताल का ज्ञान, अवधान की पूर्णता, श्रम को जीतने की शक्ति, गायकों के जो दोष शास्त्रों में बताये गये हैं उनसे विमुक्त रहना; सप्रदाय-शुद्ध गाने की पद्धति, धारणा शक्ति ये सब गुण उत्तम गायकों के लिए आवश्यक हैं। जो दोष रहित, परन्तु कम गुणवाले हैं, उन्हें ‘मध्यम गायक’ कहते हैं। दोषयुक्त गायक ‘अधम’ है।

गायकों के पाँच प्रकार हैं—

१. शिक्षाकार—किसी कमी के बिना शिक्षा देने की शक्ति रखनेवाले का नाम है ‘शिक्षाकार’।

२. अनुकार—किसी दूसरे गायक का अनुसरण करनेवाले का नाम ‘अनुकार’ है।

३. रसिक—गायक जो स्वयं रसानुभव करता है वह 'रसिक' है।
४. रञ्जक—कर्णमधुर गायक का नाम 'रञ्जक' है।
५. भावुक—गीत को आश्चर्यजनक शक्ति के साथ गानेवाला 'भावुक' है।

गायकों में एकल, यमल, वृन्दगायक—ये तीन प्रकार हैं। इन तीनों में 'एकल' दूसरे आदमी की सहायता के बिना गा सकता है। 'यमल' दूसरे गायक के साथ मिलकर गानेवाले का नाम है। 'वृन्द' गायक समुदाय के साथ ही गा सकता है। स्त्री गायकों में रूप, यौवन, कण्ठ का माधुर्य, चतुरता—ये सब आवश्यक हैं।

### गायकों के दोष

- १ सन्दष्ट—दात पीसकर गानेवाला।
- २ उद्धृष्ट—स्निग्धतारहित घोषण करनेवाला।
- ३ मूत्कारी—गाते समय मुँह से सॉस छोड़नेवाला।
- ४ भीत—भय के साथ गानेवाला।
- ५ शक्ति—जल्दी-जल्दी गानेवाला।
६. कपित—कण्ठ में अनावश्यक कम्पन से युक्त।
७. कराली—भयकर रूप में मुँह बनाकर गानेवाला।
८. विकल—स्वरों को, नियत श्रुति से ऊँचे और नीचे उच्चारण करनेवाला।
- ९ काकी—कौए की तरह कर्कश या मधुरता रहित आवाज करनेवाला।
१०. विताल—ताल को छोड़कर गानेवाला।
- ११ करभ—ऊँट की तरह गले को ऊँचा करके गानेवाला।
- १२ उद्धट—बकरी के समान कण्ठ से गानेवाला।
१३. झोबका—गाते समय गला, मुख इत्यादि की शिराओं को फुलानेवाला।
- १४ तूँबकी—गालों को तूँबे की भाँति फुलाकर गानेवाला।
- १५ वक्री—गले को ऐंठकर गानेवाला।
१६. प्रसारि—शरीर को लबा या प्रसारित करके गानेवाला।
१७. निमीलक—आँखें बन्द करके गानेवाला।
- १८ नीरस—रक्ति के बिना गानेवाला। इन्हें अधम गायक कहते हैं।
- १९ अपस्वर—वर्ज्य स्वरों का भी प्रयोग करके गानेवाला।
२०. अव्यक्त—अस्पष्ट उच्चारण के साथ गानेवाला।
२१. स्थानभ्रष्ट—तीनों स्थानों में गाने की शक्ति से हीन।

२२. अव्यवस्थित—तीनों स्थानों में गाने की शक्ति न रहने से एक स्थान में गाते समय ही दूसरे स्थान में आकर पूरा करनेवाला।

२३ मिश्रक—रागच्छायाओ के सूक्ष्मभेद से अपरिचय के कारण रागच्छायाओ को मिश्रित करके गानेवाला।

२४ अनवधान—पकड़ों को अवधान रहित प्रयुक्त करनेवाला।

२५ सानुनासिक—नाक से स्वरो को उच्चारण करके गानेवाला।

### कण्ठ ध्वनि के चार भेद

काहुल, नाराट, बोंबक और मिश्रक—कण्ठ ध्वनि के ये चार भेद हैं।

**काहुल**—कफ की अधिकता से उत्पन्न ध्वनि है। वह स्नेहयुक्त, मधुर, सुन्दर रहती है। मन्द्रमध्य स्थानों में पूर्ण सुखभाव के साथ रहे, तो उसका नाम 'आडिल्ल' है।

**नाराट**—पित्त की अधिकता से उत्पन्न कण्ठध्वनि का नाम है। तीनों स्थानों में गभीरता व लीनता से युक्त है।

**बोंबक**—वात की अधिकता से उत्पन्न ध्वनि का नाम है। स्नेहरहित, माधुर्य-रहित, ऊँची ध्वनि है।

**मिश्रक**—दोषों की अधिकता के मिश्रण से उत्पन्न होनेवाली ध्वनि का नाम है। मिश्रध्वनि में चार भेद हैं—नाराट काहुल, नाराट बोंबक, बोंबक काहुल, नाराट बोंबक काहुल। मिश्रित ध्वनि में दोनों ध्वनियों के दोष का थोड़ा परिहार हो जाता है। तीनों मिल जाते हैं तो दोषों का पूर्णपरिहार हो जाता है। ध्वनि उत्तमोत्तम बन जाती है। दो-दो के मिश्रण में नाराट काहुल मिश्रण उत्तम है अर्थात् कफ, पित्तज ध्वनि उत्तम है। काहुल-बोंबक अर्थात् कफवातज ध्वनि मध्यम है। बोंबक-नाराट मिश्रण या पित्तवातज ध्वनि अधम है।

कफ, पित्त, वात के अश भेद से दशविध ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

(१) मधुर, स्नेहयुक्त, घन (२) स्नेहयुक्त, कोमल, घन (३) मधुर, मृदु, त्रिस्थान व्यापक (४) मृदु, त्रिस्थान गभीर (५) स्नेहयुक्त, मृदु, घन (६) मधुर, मृदु, घन और त्रिस्थान व्यापक (७) मधुर, स्नेहयुक्त मृदु, त्रिस्थान व्यापक (८) मधुर, स्नेहयुक्त, गभीर, घन, त्रिस्थान व्यापक (९) स्नेहयुक्त, कोमल, गभीर, घन, त्रिस्थान, लीन (१०) स्नेहयुक्त, मधुर, कोमल, घन, लीन, त्रिस्थान व्यापक और गभीर।

इनके अतिरिक्त दो-दो भेदों के मिश्रण में अश भेद से बारह ध्वनि भेद, और तीन दोषों के मिश्रण में अश भेद से आठ भेद भी 'संगीत रत्नाकर' में दिये गये

हैं। अब तक शब्द स्वरूप का वर्णन हुआ है। अब शब्दगुण और शब्ददोष के बारे में विचार करेंगे।

### शब्दगुण और शब्ददोष

शब्दगुण —

१. मृष्ट—कान को सुख से भरनेवाली ध्वनि का नाम है।

२. मधुर—तीनों स्थानों में पूर्ण रूप से वर्तमान ध्वनि।

३. चेहाल—चेहाल ध्वनि में छ गुण हैं।

(१) शस्त—सुख से अनुभव करने योग्य ध्वनि।

(२) प्रौढ—असाधारण विशेषता से युक्त ध्वनि।

(३) नाति स्थूल—अतिस्थूल भी नहीं।

(४) नातिकृश—अति कृश भी नहीं।

(५) स्निग्धता—स्नेहयुक्तत्व।

(६) घन—घनत्व से युक्त।

‘चेहाल’ नामक गुण पुरुषों में कण्ठ पर्यन्त ही है। अर्थात् मध्यस्थान तक ही है। स्त्रियों के तो तीनों स्थानों में है।

४. त्रिस्थान—तीनों स्थानों में प्रकाश और रक्ति की पूर्णता रहना।

५. सुखावह—मन को सुखदायक ध्वनि।

६. प्रचुर—स्थूलता से युक्त।

७. कोमल—मृदुत्व और कोयल सरीखी रमणीयता से युक्त है।

८. गाढ—बल से युक्त।

९. श्रावक—बहुत दूर तक सुनने योग्य ध्वनि।

१०. करुण—सुननेवालों के हृदय में करुण रस की उत्पादक ध्वनि।

११. घन—अतर्बल से युक्त ध्वनि।

१२. स्निग्ध—रुक्षता रहित, स्नेहयुक्त।

१३. श्लक्ष्ण—लगातार सुन्दर रूप में बहनेवाली ध्वनि।

१४. रक्तिभाव—अधिक रञ्जन पैदा करना।

१५. छविमान्—निर्मल कण्ठ की विशेषता से अक्षरोच्चारण, स्पष्टता या प्रकाश से युक्त ध्वनि।

## शब्ददोष

१. रुक्ष—स्नेह-विहीन ध्वनि ।
२. स्फुरित—बीच-बीच में भग होनेवाली ध्वनि ।
३. निस्सार—आन्तरिक बल रहित ।
४. काकोलिका—कौओं के समूह की तरह शब्द करनेवाली कर्ण कठोर ध्वनि ।
५. केटि—तीनों स्थानों में व्याप्त होने पर भी गुणरहित ध्वनि ।
६. क्रेणि—तार, मन्द्र स्थानों में कठिनता से संचार कर सकनेवाली ध्वनि ।
७. कृश—अति सूक्ष्म ध्वनि ।
८. मग्न—सूक्ष्म, कृश, नीरस ध्वनि का नाम है ।

## शारीर

अभ्यास के बिना रागभाव की अभिव्यक्ति करने की शक्ति का नाम शारीर है । शरीर के साथ उत्पन्न होने के कारण इसका नाम शारीर पड़ा । यह जन्मान्तर की वासना-विशेष है ।

## सुशारीर के गुण

१. तार—दीर्घ ध्वनि
२. अनुध्वनि—अनुरणन के सहित होना ।
३. माधुर्य—सुनने में मधुरतापूर्ण ।
४. रक्ति—रञ्जन शक्ति ।
५. गाभीर्य—गहराई से युक्त ।
६. मार्दव—मृदुलता से युक्त या कर्कशता रहित ।
७. घनता—सारयुक्तता ।
८. कान्ति—प्रकाशन और अन्य शब्द गुण ।

## शारीर के दोष

१. निस्सारता—अन्तर्बल रहित होना ।
२. विस्वरता—शारीर वश में न रहने के कारण स्वरान्तर हो जाना ।
३. काकित्व—श्रुतिहीनता के कारण शारीर की अपुष्टता ।
४. स्थान विच्युति—शारीर स्वाधीन नहीं होने के कारण एक स्थान से दूसरे स्थान पर जा पड़ना ।

५. कार्य—आवश्यक स्थूलता से रहित रहना।

६. कार्य—मृदुता रहित होना।

सुशारीर की प्राप्ति विद्या, दान, तप और शिवभक्ति से होती है। पूर्वपुण्य-विशेष से ही सुशारीर प्राप्त होता है।

### रूपक आलप्ति

आलप्ति दो प्रकार की होती है। उनमें से रागालप्ति पहले ही बतायी गयी है। अब रूपक आलप्ति का विवरण किया जाता है।

‘रूपक’ या प्रबन्ध में मनोधर्म से रागों के विस्तार करने का नाम ‘रूपक आलप्ति’ है। इसमें रूपक के राग और तालों के नियमों का पालन करना आवश्यक है। इसके दो विभाग हैं। एक का नाम ‘प्रतिग्रहणिका’ दूसरे का नाम ‘भञ्जनी’ है।

‘प्रतिग्रहणिका’ में प्रस्तुत रूपक के ताल और राग में इच्छानुसार संचार करके रूपक के एक अवयव को ग्रहण करना चाहिए। इसे कर्नाटक संप्रदाय में ‘स्वरगान’ कहते हैं। और इसमें स्वरो को नामोच्चारणपूर्वक गाते हैं। पर हिन्दुस्थानी संप्रदाय में अकारादि उच्चारण से संचार करते हैं।<sup>१</sup>

‘भञ्जनी’ में दो प्रकार हैं—स्नाय भञ्जनी और रूपक भञ्जनी। स्नाय भञ्जनी में रूपक के एक पकड़ रूप अवयव को उसी राग ताल में रूपभेद करके गाना होता है। उसका नाम कर्नाटक पद्धति में ‘संगति’ डालना है। रूपक भञ्जनी में रूपक के किसी एक पूर्ण भाग को लेकर उसके पद, राग और ताल में इच्छानुसार रूप भेदों के साथ गाना होता है। इसका नाम कर्नाटक पद्धति में ‘निरवल’ है। ‘भञ्जनी’ का प्रयोग हिन्दुस्थानी पद्धति के ‘ख्याल’ नामक प्रबन्ध में बहुत है।

१. आजकल कुछ हिन्दुस्थानी विद्वान् लोग भी कर्नाटक विद्वानों की तरह स्व-रोच्चारण करके प्रतिग्रहणिका गाते हैं। पर हिन्दुस्थानी संगीत में रहनेवाले स्वरों का स्वभाव स्वरोच्चारण के लिए उपयुक्त होने के कारण इस तरह गाना सुनने में अच्छा नहीं लगता। अकारादि से गाना ही रमणीय है।

## दसवाँ परिच्छेद

### प्रबन्ध

प्रबन्धों के अग और धातु पहले ही चतुर्दण्ड-लक्षण में बताये गये हैं। प्रबन्ध के तीन नाम हैं—१ प्रबन्ध २ रूपक ३ वस्तु। और दो नाम, गीत और गेय भी लक्ष्य संप्रदाय में हैं।

धातुओं में 'अन्तरा' नामक धातु सलगसूड प्रबन्धों में ही प्रयुक्त किया जाता है। प्रबन्धों में तालनिबद्ध और अनिबद्ध के दो भेद हैं। प्रबन्धों में गुरु, लघु आदि अक्षरों का प्रयोग है। इनके प्रयोग करने में कुछ नियम भी हैं। इसी तरह प्रबन्धों के अवयवों की साहित्य रचना में भी आरम्भ विषयक अक्षर और गुरु, लघु इत्यादि के नियम हैं। वे अब कहे जाते हैं।

गुरु, लघु के प्रयोग-विषय 'गण' या गुरु एवं लघु से नियमित हैं। हर एक 'गण' में ३ अग हैं। गण आठ प्रकार के हैं। उनके नाम भी अक्षरों से सूचित किये जाते हैं।

यगण	=	।	५	५
रगण	=	५	।	५
तगण	=	५	५	।
भगण	=	५	।	।
जगण	=	।	५	।
सगण	=	।	।	५
मगण	=	५	५	५
नगण	=	।	।	।

इन आठों गणों में य, र, त गणों में एक लघु है। भ, ज, स गणों में एक गुरु है। 'म' गण में सर्वगुरु है। 'न' गण में सर्वलघु है। य र त में क्रमशः आदि, मध्य और अन्त में लघु है। इसी तरह भ ज स में क्रमशः आदि, मध्य और अन्त में गुरु है।

‘आदिमध्यावसानेषु भजसा यान्ति गौरवम्।

यरता लाघवं यान्ति मनौ तु गुरुलाघवम्।’

गणो के देवता और फल—

गण	देवता	फल
य	अप्	वृद्धि ।
र	अग्नि	मृत्यु ।
त	पृथ्वी	निर्धनता या गरीबी ।
भ	चन्द्र	कीर्ति ।
ज	सूर्य	रोग ।
स	वायु	स्थान भ्रष्टता ।
म	पृथ्वी	धन की प्राप्ति ।
न	इन्द्र	आयुर्वृद्धि ।

श्लोको और गीतो के आरम्भ मे प्रयोग किये जानेवाले गण से होनेवाला फल ऊपर बताया गया है। अक्षरो के देवता और फल—

अक्षर अवर्ग, कवर्ग, चवर्ग, टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग, यवर्ग, शवर्ग—इन आठ वर्गों मे विभाजित किये गये हैं। अवर्ग सब स्वर है। ‘कवर्ग’ क ख ग घ ङ। चवर्ग च, छ, ज, झ, ञ। टवर्ग ट, ठ, ड, ढ, ण। तवर्ग त, थ, द, ध, न। पवर्ग प, फ, ब, भ, म। यवर्ग य, र, ल, व। शवर्ग श, ष, स, ह। वर्गों के देवता और हरएक वर्ग मे श्लोक और गीतों के आरंभ करने का फल—

वर्ग	देवता	फल
अ	सोम	आयुर्वृद्धि
क	अङ्गारक	कीर्ति
च	बुध	धन-प्राप्ति
ट	गुरु	सौभाग्य
त	शुक्र	कीर्ति
प	शनैश्चर	मन्दता
य	सूर्य	मृत्यु
श	राहु	शून्यता

इनके साथ कुछ विशेष फल भी है। न, ह और म धन, कीर्ति और सर्वस्व नाश करते हैं। उद्ग्राह मे दकार, अन्तरा मे भकार, आभोग मे वकार—ये तीन लक्ष्मीप्रद हैं।



जैसे अक्षरो के गण आठ प्रकार के हैं, वैसे मात्रा के गण भी पाँच प्रकार के हैं जैसे—छगण (छ. मात्रावाला), पगण (पाँच मात्रावाला), चगण (चार मात्रावाला), तगण (तीन मात्रावाला) और दगण (दो मात्रावाला)।

### प्रबन्धों के भेद

सूड, आलि और विप्रकीर्ण—ये तीन प्रबन्ध के भेद हैं। सूड में दो भेद हैं, शुद्ध सूड और सालगसूड।

शुद्ध सूड में आठ भेद हैं। एला, करण, ठेकी, वर्तनी, झोबड़, लब, रास, एकताली।

सालगसूड में ध्रुव, मठच, प्रतिमठच, निस्सारक, अड्ड, रास, एकताली—ये सात भेद हैं।

आली प्रबन्ध में २५ भेद हैं। उनके नाम वर्ण, वर्णस्वर, गद्य, कैवाड, अकचारिणी, कन्द, तुरङ्गलीला, द्विपदी, चक्रवाल, क्रौचपद, स्वरार्थ, ध्वनिकुट्टिनी, आर्या, धाता, द्विपद, कलहंस, तोटक, घट, वृत्त, मातृका, नन्द्यावर्त, रागकदम्बक, पञ्चतालेश्वर और तालार्णव हैं। प्रकीर्ण प्रबन्धों में ३६ भेद हैं। उनके नाम श्रीरङ्ग, श्रीविलास, त्रिपदी, चतुष्पदी, षट्पदी, वस्तु, विजय, त्रिपत, चतुर्मुख, सिंहलील, हंसलील, दण्डक, झम्पट, कन्दुक, त्रिभङ्गी, हरविलास, सुदर्शन, स्वराक, श्रीवर्द्धन, हर्षवर्द्धन, वदन, चञ्चरी, चर्या, पद्मडी, राहडी, वीरश्रिय, मंगलाचर, धवल, मंगल, ओवि, लोलि, डोललरि, दन्ती हैं।

सब मिलाकर प्रबन्धों की संख्या ७५ है। हर एक प्रबन्ध के अनेक भेद हैं। जैसे—

**शुद्ध सूड प्रबन्ध**—एला = ३६५, करण = २७, ठेकी = ३०, वर्तनी = ४, झोबड़ा = ३५१०, लबक = १, रास = ७७, और एक ताली = १।

**सालग सूड प्रबन्ध**—ध्रुव = १६, मण्ड = ६, प्रतिमण्ड = ४, निस्सारकम् = ६, अड्ड = ६, रासताल = ४, एकताली = ३।

**आली प्रबन्ध**—वर्ण = १, वर्णस्वर = ४, गद्य = ३६, कैवाड = २, अकचारिणी = ६, कन्द = २९, तुरङ्गलीला = ५, गजलीला = १, द्विपदी = ८, चक्रवाल = २, क्रौचपद = १, स्वरार्थ = ८, ध्वनि कुट्टिनी = ३०, आर्या = २६, धाता = १, द्विपद = ९, कलहंस = २, तोटक = १, घट = १, वृत्त = १, मातृका = ३, रागकदम्बक = २, पञ्चतालेश्वर = २, तालार्णव = २।

**विप्रकीर्ण प्रबन्ध**—श्रीरङ्ग = २, श्रीविलास = ५, त्रिपदी = १, चतुष्पदी = १, षट्पदी = १, वस्तु = १, विजय = १, त्रिपत = १, चतुर्मुख = १, सिंहलील =

१, हंसलील = १, दण्डक = १, क्षम्पट = १, कन्दुक = १, त्रिभङ्गी = ५, हरविलास = १, सुदर्शन = १, स्वरांक = १, श्रीवर्द्धन = १, हर्षवर्द्धन = १, वदन = १, चच्चरि = १, चर्या = ४, पद्धडी = १, राहडी = १, वीरश्रिय = १, मंगलाचार = १, धवल = ३, मंगल = १, ओवि = १, लोलि = १, डोल्लरि = १, दन्ति = १।

अन्य प्रसिद्ध प्रबन्ध—वीरशृङ्गार = १, चतुरङ्ग = १, शरभलीला = १, सूर्यप्रकाश = १, चन्द्रप्रकाश = १, रणरङ्ग = १, नन्दन = १, नवरत्न प्रबन्ध = १।

प्रबन्धों का विभाजन, प्रबन्धों की प्रत्येक पाच जातियों से—अर्थात्, मेदिनी, आनदिनी इत्यादि से युक्त तथा कई दूसरी जातियों से अप्रधानतया मिश्रण करके किया गया है। वह विभाजन यो हुआ है।

### पहली मेदिनी जाति से युक्त प्रबन्ध—७

१. श्रीरग, २ श्रीविलास, ३ पचभगी, ४ पचानन, ५. उमातिलक, ६. करण, ७ सिंहलीलक ॥१॥

### दूसरी आनदिनी जाति से युक्त प्रबन्ध—१०

१. पचतालेश्वर, २. वर्णस्वर, ३ वस्त्वविधान या वस्तु, ४. विजय, ५. त्रिपदा, ६ हरविलास, ७. चतुर्मुख, ८ पद्धडि, ९ श्रीवर्धन, १०. हर्षवर्धन ॥२॥

### तीसरी दीपनी जाति से युक्त प्रबन्ध—५

१. सुदर्शन, २ स्वराक, ३ त्रिभगी, ४ कुन्तक, ५ वदन ॥३॥

### चौथी भाविनी जाति से युक्त प्रबन्ध—१६

१ वर्ण, २ गद्य, ३ कद, ४ कैवाड, ५. अकचारिणी, ६ वर्तनी, ७ आर्या, ८ गाथा, ९ कौचपद, १० कलहस, ११. तोटक, १२ हसलील, १३. चतुष्पदी, १४ वीरश्री, १५ मंगलाचार, १६ दडक ॥४॥

### पाँचवीं तारावली जाति से युक्त प्रबन्ध—२२

१. एला, २ डेकी, ३. झोपट, ४. लभ, ५. रास, ६ एकतालिक, ७ चक्रवाक, ८. स्वराक, ९ मातृका, १० ध्वनिकुट्टनी, ११. त्रिपदी, १२ षट्पदी, १३ झोपट, १४. चच्चरी, १५ चर्या, १६. राहटी, १७ धवल, १८ मंगल, १९ ओवी, २० लोली, २१. डोल्लरी, २२. दन्ती ॥५॥

पहले कहे हुए मार्ग के अनुसार दो-दो जातियों से युक्त प्रबन्धों का भी नीचे लिखे अनुसार विभाजन कर सकते हैं। जैसे—

तारावली व दीपनी जातियों से युक्त प्रबन्ध—२

(१) हयलीला और (२) गजलीला ।

भाविनी व तारावली से युक्त प्रबन्ध—३

(१) द्विपदी, (२) द्विपदक और (३) व्रत ।

दीपनी व भाविनी से युक्त प्रबन्ध —१

१. घट

कुलमिस्त्रर दोनों जातियों से युक्त प्रबन्ध छ' हुए । ऐसे ही पाचो जातियों से युक्त दो प्रबन्ध हैं । जैसे—तालार्णव व रागकदम्ब, अब क्रम से उनका लक्षण कहा जाता है ।

### प्रबन्धलक्षण

#### १. श्रीरंग

इस प्रबन्ध की चार खण्डिकाएँ हैं । हर एक खण्ड के लिए एक-एक राग एव ताल की आवश्यकता है । प्रत्येक खण्ड के अन्त में पदों का प्रयोग करना चाहिए । इसके अलावा स्वर इत्यादि पञ्चाग के प्रयोग में कोई नियम नहीं, इच्छा हो तो प्रयोग करेंगे । इन चारों खण्डों के पहले आधे भाग को उद्ग्राह कहते हैं । पिछले आधे भाग को ध्रुव कहते हैं । इसमें आलाप व आभोग नहीं होते । आभोग के न होने पर भी चौथी खण्डिका के अंत में, गायक तथा उद्दिष्ट नायक और प्रबन्धों के नाम का अंकन करना है । इसलिए यह द्विधातु प्रबन्ध, ताल आदि के नियमों के बिना रचे जाने के कारण अनिर्युक्त प्रबन्ध है ।

#### २. श्रीबिलासप्रबन्ध

इसमें पाँच खण्डिकाएँ हैं । प्रत्येक खण्ड के लिए राग व ताल अनिवार्य हैं । खण्डिकाओं के अंत में स्वरों का प्रयोग आवश्यक है । बाकी पाँच अंगों के प्रयोग इच्छानुसृत हैं । बाकी सब लक्षण श्रीरंग की भाँति हैं ।

#### ३. पंचभंगिप्रबन्ध

इसकी दो ही खण्डिकाएँ हैं । प्रत्येक के लिए अलग-अलग राग एव ताल होते हैं । प्रत्येक खण्ड के अंत में 'तेनक' का प्रयोग करना चाहिए । बाकी लक्षण श्रीरंग जैसे हैं ।

#### ४. पंचाननप्रबन्ध

पंचभंगी के समान इसमें भी दो खण्डिकाएँ हैं। एक मात्र विशेषता यह है कि प्रत्येक खण्ड के अंत में तेनक के बदले पदों का प्रयोग होता है। अवशिष्ट विशेषताएँ पंचभङ्गी जैसी हैं।

#### ५. उमातिलक

इसकी तीन खण्डिकाएँ हैं। राग-ताल प्रत्येक के लिए आवश्यक है। खण्डों के अंत में बिरुद की योजना करनी चाहिए। अवशिष्ट बातें श्रीरङ्ग के समान हैं।

#### ६. करण-लक्षण

इष्टस्वर में प्रबन्ध का आरम्भ करके अशस्वरों से मुक्त होकर रास-ताल तथा द्रुत-लय का संयोजन करना ही करण का लक्षण है। वे करण आठ प्रकार के होते हैं—(१) स्वरादि, (२) पाटपूर्वक, (३) प्रबन्धादि, (४) पदादि, (५) तेनादि, (६) बिरुदादि, (७) चित्र, (८) मिश्र।

##### १—स्वरादिकरण

जहाँ उद्ग्राह और ध्रुव मद्रस्वर में होकर गवैया, नेता, प्रबन्ध—इन तीनों के नाम से अंकित पदों का आभोग भी पाया जाता है वहाँ स्वरादि करण समझना चाहिए।

##### २—पाट (पूर्वक) करण

हस्त या हाथ के पाटों अर्थात् घातों से युक्त स्वरों से संबद्ध करण हो तो उसे पाटकरण जानना चाहिए। वह पाटकरण भी दो प्रकार के होते हैं—क्रमपाटकरण और व्यत्यासपाटकरण। पहले स्वर और पीछे हस्तपाट हो, तो उसे क्रमपाटकरण कहते हैं। पहले हस्तपाट और पीछे स्वर हो तो उसे व्यत्यासपाटकरण कहते हैं। यह विभाजन मतङ्ग एव भरत जैसे आचार्यों को भी समत है।

##### ३—प्रबन्धकरण

स्वरों से उद्ग्राह और मुरज याने मृदग के पाटों से ध्रुव की रचना हो तो उसे प्रबन्ध या बद्धकरण जानना चाहिए।

##### ४—पदादिकरण

उद्ग्राह और ध्रुव, क्रम से स्वरों या पदों से रचित होते हैं, तो पदादिकरण होता है।

## ५—तेनकरण

जिस प्रबन्ध के उद्ग्राह स्वरो से और ध्रुव तेनको से बनाये हुए हैं उसे तेनकरण कहते हैं।

## ६—बिरुदादिकरण

जिस प्रबन्ध के उद्ग्राह और ध्रुव, क्रमशः स्वरो और बिरुदो से निर्मित होते हैं उसे बिरुदकरण जानना चाहिए।

## ७—चित्रकरण

जिस प्रबन्ध के उद्ग्राह, स्वर और हस्तपाट दोनों से तथा ध्रुव मुरज के पाटों एवं पदों से रचित होते हैं, तो उसे चित्रकरण जानना चाहिए।

## ८—मिश्रकरण

स्वर, पाट और तेनक, इन तीनों के उद्ग्राह तथा ध्रुव की रचना जिस प्रबन्ध में पायी जाती है वही मिश्रकरण है। तिल एवं चावल के मिश्रण की भाँति जहाँ की संसृष्टि भली-भाँति प्रतीत होती है वहाँ चित्रकरण और दूध एवं पानी के मिलन की भाँति जहाँ का सकर, स्वरूपनाश के कारण, स्पष्ट नहीं देख पड़ता वहाँ मिश्रकरण होता है। “रास-ताल” नामक ताल नियम के कारण यह निर्युक्त-प्रबन्ध है। एक-लघु का आदिताल ही रासताल है। मेलापक के अभाव के कारण यह त्रिधातु है।

## ७. सिंहलील

स्वर, पाट, बिरुद और तेनक—ये चार करण इस प्रबन्ध में प्रयुक्त होते हैं। सिंहलील नामक ताल से युक्त होने के कारण इसका नाम सिंहलील है। सिंहलील ताल में १००० होते हैं। स्वर और पाट दोनों से उद्ग्राह, बिरुदो तथा तेनको से ध्रुव और पदों से आभोग निर्मित रहते हैं। इसीलिए यह त्रिधातु-प्रबन्ध है। ताल के नियम से युक्त होने के कारण निर्युक्त है। स्वरादि अंगों से रचित होने के कारण यह मेदिनी-जाति का है।

दूसरी आनदिनी आदि जातियाँ भिन्न-भिन्न प्रदेशों में प्रसिद्ध हैं। तो भी निश्चय श्रौशाङ्गदेव के ‘संगीत रत्नाकर’ में श्रौवर्धन-प्रबन्ध का उल्लेख है। तजौर के महाराष्ट्र राजा तुलजा के आचार्य “व्यासपाचार्यजी” ने, “जय कर्णटधारा” के पदों से आरम्भ होनेवाले एक श्रौवर्धन प्रबन्ध की रचना की है।

बिरुद, पाट, पद, और स्वर इन चारों से युक्त इस श्रौवर्धन-प्रबन्ध का उदाहरण—

### नाट्यराग

मामा पामा पाससनिपनिपनिपनिपम गममापाप सससनिमा पाससपससरी-  
ससससा ससमममपापममम मरिससा मसममरिसनिसा ममारिसारिसानिसा पम-  
पससानिपनिपम गाममा पासा ।

पीछे मध्यमान मे सस्स सस्स ससमगमपसससा सससपपपममपमपरि ससससस-  
साससपममपम ० ० डली इकरअग ० ० ० डा आ तु २—दु ५ तोगिण अंगिण थ  
३ दु ४ द्वि ३ तो २ तो ओ गिणणगिणमप ।

फिर विलबमान मे—पा पाससस सा सा वुशी पनि पसससा सा वुशी० मा मापांमा  
प नीपपमपापममामा रिसानि पामपससा; बिरुद और पाट से, सरीसरिसममरिस-  
निसा मा मा मा पा पा सा सा सपा पमममारिसा रिसानीसासमापा ।

इसके द्विगुणमान मे ससरि सससससनिपनिपनिम मगमपमपसनिपममरिस मगम-  
पपमपनिपपससा मपमममरिससनिप रिबिबे ससानिपाममारिसा पमापासनीसा  
रिसारीममरिससनिपमरिसरि मरेणे । ध्रुव ।

आभोग—ममपपनिप मममपममममरि समममरिसममरिसपममप सससरिग-  
मपपनिपमगम पपससपपसन्नपममरिसा ।

विलब मे—पनिपममामापापाममममा ममारिसारि सानीस पनिपमप-  
सासासरिसा रिगामामारिसानिसा ।

मध्यमान मे—सससममपसनिपमममरिससरिस सनिपमरिस सममपा ।

इस प्रबन्ध मे तीन धातु है; इसलिए यह त्रिधातु प्रबन्ध है । ताल के नियम नही,  
इसलिए अनिर्युक्त है । इसमे तेन्नक नही । आनदिनी-जाति का है ।

### आधुनिक प्रबन्ध

नवीन पद्धति मे, प्रबन्ध के छ. अंगो मे से (स्वर, पाट, ताल, तेन, पद, बिरुद)  
प्रायः तीन अंगों मे ही प्रबन्ध रचे जाने लगे । उनमें पद और बिरुद दोनों को ही मुख्यत्व  
दिया गया । स्वर, पाट, ताल, तेन—इनमे से एक ही अंग लिया जाता था ।

### हिंदुस्थानी पद्धति के प्रबन्ध

इस तरह के ३ अंगो से, ध्रुवपद और अन्य प्रबन्ध, तानसेन के द्वारा रचे गये ।  
पीछे, नये प्रबन्धों मे, दो अंगो से रचे हुए प्रबन्ध ही अधिक है । उनके अंग है पद और  
बिरुद । इनके साथ स्वर से युक्त प्रबन्ध, पाट से युक्त प्रबन्ध, ताल से युक्त प्रबन्ध और  
तेन से युक्त प्रबन्धों का नाट्य मे उपयोग करने के लिए अलग-अलग रचे गये । दोनों

अगों से रचे हुए प्रबन्धों में ध्रुवपद, प्रबन्ध, वगैरह हैं। प्रबन्ध में स्वर ही एक अंग है। बाकी प्रबन्धों में, पद और बिन्दु ही रहते हैं। आधुनिक प्रबन्धों में, प्रायः तीन अवयव हैं। हिन्दुस्थानी पद्धति में इन तीनों के नाम स्थायी, अन्तरा और आभोग हैं। कर्नाटक पद्धति में इनके नाम क्रमशः—पल्लवी, अनुपल्लवी तथा चरण हैं। कभी-कभी दो ही अवयव रहते हैं।

## प्रचलित प्रबन्ध

### ध्रुवपद ध्रुवपद

हिन्दुस्थानी पद्धति के प्रबन्धों में, ध्रुवपद श्रेष्ठ साहित्य माना जाता है। यह प्रबन्ध ध्रुपद नाम से प्रचार में है। यह प्रबन्ध प्रायः ब्रजभाषा या हिंदी में है। मराठी भाषा में भी कई ध्रुवपद हैं। यह शुद्ध राग-रागिनी में रचे गये हैं। तालों में चौताल, त्रिवट, धमार और कभी-कभी सूरफाक और झपाताल प्रयुक्त किये गये हैं। इस प्रबन्ध के प्रायः तीन अवयव हैं। वे स्थायी, अन्तरा और आभोग हैं। कुछ लोगो ने दो ही अवयवों से रचनाएँ की हैं। पद और बिन्दु अनिवार्य अंग माने जाते थे। कहीं-कहीं पाठ या स्वर का भी तीसरे अंग से प्रयोग किया है।

ध्रुपद, ध्रुवपद का बिगड़ा हुआ रूप है। ध्रुवपद प्राचीन काल से प्रत्येक नाटक का गीतांग होकर प्रधान हुआ था। भरतमुनि ने अपने नाट्यशास्त्र के ३२ वे अध्याय में ध्रुवपदों की विस्तृत रूपरेखा खींची थी। नाटकों के आदि, मध्य और अंत में ध्रुपदों का गाना प्रचार में था। उन पदों में, पात्र, सदर्भ तथा कभी-कभी देवताओं का वर्णन भी हुआ करता है। गाते समय, अभिनय के साथ गाना उन पदों की एक अलग विशेषता है। जब ध्रुवगान में, पात्रों का गुणवर्णन किया जाता है, तब वह पात्र अपने वर्णित गुणों के अनुसार चेष्टा और अभिनय करता है। उसके साथ नर्तन को भी जोड़ दिया गया।

दक्षिण भारत में, तेलुगु भाषा में, ध्रुवपद 'दरु' नाम से प्रचलित हुए थे। विजयनगर साम्राज्य के अधीन होने के बाद यानी १५०० ई० के बाद—तमिल देश में भी, तमिल नाटकों में वे पद अपने-अपने अभिनय और नर्तन के साथ प्रयोग में आने लगे। पर आजकल, 'दरु' का प्रयोग, उत्तर तथा दक्षिण भारत के नाटकों में क्रमशः कम होकर रुक गया। तथापि उत्तर के गायकों के संप्रदाय में ध्रुपद नाम से वह न केवल जीवित है, अपितु उच्चस्थान भी पा चुका है। इतने पर भी उन पदों को गाने में जो कठिनता होती है, उसके कारण उत्तर में भी उन पदों के गायकों की संख्या कम हो रही है।

दक्षिण भारत में, तो 'दरु' के गान ने गायकों के संप्रदाय में स्थान नहीं पाया,

लेकिन, अब भी, प्राचीन संप्रदाय के नाटकों में, जो विरल ही हुआ करते हैं, तथा नृत्यों में कुछ-कुछ प्रचलित हैं।

ध्रुपदों के विषय प्रायः भक्ति, ईश्वरस्तुति, राजाओं की प्रशंसा, मंगल उत्सवों का वर्णन, धर्मतत्व, पुराणविषय, मतसिद्धान्त और सगीतशास्त्रों की श्रुतिस्वर, ग्राम मूर्च्छना आदि के लक्षण वर्णन इत्यादि हैं। शृंगार आदि नव रसों में इनकी रचना हुई है।

ध्रुपद गाते समय, रागालाप, रूपकालाप, अलंकार, स्वर, करण बोलतान इनका भी उपयोग करना प्रचलित है। कप, आदोलित आदि बहुविध गमक के प्रयोग भी किये जाते हैं।

ध्रुपद गाने का नियम यह है कि पहले रागालाप बहुविध गमक अलंकारों के साथ विस्तार से करके, तत्पश्चात् ही ध्रुपदों के पदों का उच्चारण करना चाहिए। ध्रुपद में अश, ग्रह, न्यास तथा अपन्यास स्वरो को उनके उचित स्थान में रखकर शास्त्रोक्त रीति से रचना किये जाने के कारण उन्हें बहुत ध्यान देकर, कुछ भी अदल-बदल के बिना, गाना चाहिए। इन कारणों से ही जो विद्वान् ध्रुपद गा सकते हैं वे ऊँचे दर्जे के कलावंत माने जाते हैं। ध्रुपदों की रचना में गोपालनायक, नायक बैजू, राजा मानसिंह, तानसेन, चितामणि—ये ही सिद्धहस्त थे।

गवैयों के संप्रदाय में ध्रुपद का स्थान, ग्वालियर नरेश राजा मानसिंहजी (१४-८६-१५१६ ई०) से सुप्रतिष्ठित हुआ।

### नवीन ध्रुपद का प्रचार

नाटक के संबन्ध के बिना मौलिक रूप में, प्रभु तथा इष्टदेवताओं की प्रशंसा करने के लिए ध्रुपदों की रचना आरम्भ हुई। प्राचीन संप्रदाय के, तेलुगु तथा तमिल में रचे हुए 'दरु' कही-कही प्रचार में हैं।

#### ख्याल

ध्रुपद की तरह ख्याल भी एक विस्तारपूर्ण साहित्य है। पर ख्याल भावप्रधान है। विस्तार करने योग्य मुख्य रागों में ही ख्यालों की रचना की गयी है। ताल में भी पूर्ण अवधान दिया जाता है। ख्याल को गाते समय भाव के विस्तार करने के लिए स्थायभजनी, रूपकभजनी, प्रतिग्रहणिका—इन रूपकालाप के भेदों का अधिक प्रयोग किया जाता है। ख्याल का विषय विप्रलभशृंगार है। ख्याल में नायक-नायिकाओं के भेद, उनके गुण ये सब वर्णित किये जाते हैं। ध्रुपद से कुछ समय बाद यह रचना उत्पन्न हुई है। ध्रुपद केवल भारतीय रचना है; पर ख्याल भारतीय-फारसी मिश्रित



रचना है। कहा जाता है कि इस ख्याल का श्रीगणेश जौनपुर के सुलतान हुसेन शर्की (१५ वीं सदी) के समय में हुआ था।

ख्याल में, अस्थायी अतरे के दो अवयव और पद बिरुद ये दोनों अग ही रहते हैं। प्रायः विलंबित लय में त्रिताल में रचे जाते हैं। ध्रुपद की तरह, ग्रह, अंश, न्यास, वादी-सवादियों का स्थाननियम ख्याल में नहीं है। केवल रजन ही मुख्य है। ख्यालो के प्रमुख रचयिता सदारग एवं अदारग हैं। आजकल, हिंदुस्थानी संगीत में ख्याल का मुख्य स्थान है।

### होरी

शृंगार रसप्रधान और एक प्रबन्ध है, होरी। इसका विषय है राधाकृष्णलीला। ख्याल की तरह मुख्य रागों में ही रची गयी है। होरी में, स्थायी व अतरा के दो ही अवयव और “पद” एक ही अग है। ताल का मुख्यत्व है। होरी का ताल, प्रायः, “धमार” है। कभी झूमरा (१४ मात्रा) या दीपचंदी ताल भी प्रयोग किया जाता है। ख्याल के समान होरी भी मुख्य प्रबन्ध माना जाता है। होरी, कभी-कभी ताल के नाम “धमार” से पुकारी जाती है।

### टप्पा

शृंगाररस प्रधान साहित्य है। सकीर्ण राग में रचा गया है। विलंबित, तिवट या धीमा, तिवडा, तिलवाडा और झूमरा वगैरह तालों में होता है। इसमें स्थायी और अतरा दो अवयव हैं। पद और बिरुद दो ही अग हैं। स्फुरित, आहति, प्रत्याहति—इन गमकों से युक्त खटका, मुर्की, प्रयोग बहुत हैं। होरी मियाँ ही टप्पे के प्रमुख रचयिता हैं। कहा जाता है कि टप्पे की उत्पत्ति पंजाब में हुई और ऊँट पालनेवाले ही उसको गाते थे। उसकी भाषा पंजाबी या पंजाबी मिश्रित हिंदी है। टप्पे का मुख्य विषय है हीर व राजा का प्रणय।

### ठुमरी, दादरा, गजल

नर्तन के अनुकूल शृंगाररस प्रधान चीज हैं। त्रिवट और एकताल में रची गयी हैं। यह आम जनता को बहुत प्रिय हैं।

अश्रज्जाति के विलंबित लय में, एकताल में या दादरा नामक छः मात्राओं के ठेके से युक्त ताल में रची हुई चीज का मुख्य नाम है दादरा।

अश्रज्जाति में गजल नामक पांच मात्राओं के ठेके से युक्त रूपक ताल में रची हुई चीज का नाम गजल है।

### बैत, रुबाई, रेखता, कजरी, रसिया, लेज

ये सब फ़ारसी या उर्दू में, चतुरश्र जाति में बनायी गयी हैं। पिछली तीनों चीज़ें एकलाताल में रची हुई हैं। ये तीनों, नीचे दर्जे के नर्तन में प्रयोग करने लायक हैं। ये चीज़ें पीलू, खमाच, झिझोटी, काफ़ी वगैरह रागों में रची जाती हैं। इनमें कुछ चीज़ों के सचार को राग नाम देना युक्त नहीं है। अनिश्चित और अनियमित स्वरूप होने के कारण उनका धुन कहा जाना ही उपयुक्त है।

### **भजन**

ये चीज़ें भक्तिरस प्रधान हैं। सतों के द्वारा रचित हैं। ईश्वरस्तुति रूप में हैं। उत्तर हिन्दुस्थान की ब्रजभाषा, राजस्थानी और गुजराती में मीराबाई के भजन प्रसिद्ध हैं। पंजाब में नानक पंथ के भजन प्रसिद्ध हैं। बंगाल में, गौडीय संप्रदाय के भजन भी प्रसिद्ध हैं। इन भजनों में कर्णरस ही प्रधान है। राग, ताल, कर्णरस, ईश्वर की प्रार्थना, नम्रभाव आदि इनके अनुकूल रहते हैं। भजन में, पद और विरह ये दोनों अंग हैं।

### **प्रबन्ध**

ईश्वर और राजाओं के स्तोत्रों के रूप में, संस्कृत भाषा में रची हुई चीज़ें हैं। शांत, वीर, अद्भुत तथा भक्तिरस प्रधान हैं। प्रायः मुख्य रागों में ही हैं। तेवर और झंपा ताल में हैं। इस कारण इन प्रबन्धों को झंपा प्रबन्ध भी कहते हैं। इन प्रबन्धों में ध्रुव, अंतर और आभोग—ये तीन अवयव हैं। पद और विरह दो अंग हैं। कुछ प्रबन्धों में स्वर तथा पाठ भी हैं। इन प्रबन्धों को संस्कृत कविता प्रबन्ध कहते हैं।

### **गद्य**

संस्कृत भाषा प्रबन्ध है। ईश्वरस्तोत्र रूप में या सामान्य वर्णन के रूप में है। ताल का निबन्ध नहीं। इनमें ध्रुव और आभोग ये दो अंग हैं। अंग दो हैं, पर उनमें एक तो पद है; और दूसरा स्वर या पाठ। इनमें अनुप्रास आदि शब्दालंकार का विशेष है।

### **अष्टपदी**

प्रसिद्ध भक्तकवि जयदेव के गीतगोविंद और उनके अनुकर्ता दूसरे कवियों के द्वारा रचित प्रबन्ध है। इनमें ध्रुव और आभोग के दो अवयव हैं। पद और विरह दो अंग हैं। उनके राग और ताल भावों के अनुकूल रहते हैं। जयदेव की अष्टपदी में हर एक पद का राग और ताल कवि के द्वारा ही निश्चित किये गये हैं। परंतु

बहुत-से पंडितमन्य लोग दूसरे राग और तालों में गाकर इसके रस और भावों का भग करते हैं।

### तिल्लाना या तराना

स्वर, ताल और वाद्य शब्दाक्षर इन तीनों से बनाये हुए प्रबन्ध है। स्थायी और अंतरा दो अवयव हैं। गाने और नाचने में बहुत प्रयोग किये जाते हैं। परंतु मनोद्वर्तन चोज है।

पद<sup>१</sup>

इन प्रबन्धों में पद ही मुख्य अंग है। इनमें दो ही अंग हैं पद और बिरुद या ध्रुव और आभोग। ये मराठी, कन्नडी और हिंदी भाषा में हैं। हिंदी भाषा में तुलसीदास, सूरदास, नानक, चैतन्य कबीर इत्यादि साधुओं और कवियों ने तथा कनडी भाषा में पुरंदरदास वगैरह दासरू कवियों ने, मराठी भाषा में केशवस्वामी, रगनाथस्वामी, उद्धवचिद्धन, प्रेमाबाई, अमृतराव आदि ने बनाये हैं।

### द्विपदी, चतुष्पदी, षट्पदी

इन्हे हिंदी भाषा में क्रमशः दोहा, चौपाई, छप्पय कहते हैं। दोहे में पद एवं बिरुद दो अंग हैं। दो चरण हैं। इसका विषय सामान्यनीति और दृष्टान्त है। इनके प्रवर्तक तुलसीदास और कबीर वगैरह साधु कवि हैं। चौपाई व छप्पय में चार और छः चरण हैं। पद और बिरुद दो अंग हैं। इनका विषय राजाओं का पराक्रम वर्णन है। पृथ्वीराज के दबारी कवि चंदबर्दाई चौपाई और छप्पय शैली में प्रसिद्ध हैं। ये वीररस प्रधान हैं। उनमें राग और ताल का नियम है।

### लावणी, पोवाडा, कटाव, फटका

ये प्रबन्ध शुद्ध मराठी में हैं। इनमें ध्रुव और आभोग ये दो ही अवयव हैं। पद और बिरुद ये दो ही अंग हैं। मिश्रित रागों में त्रिवट, रूपक और एकताताल में हैं। लावणी शृंगाररस विषयक और वेदांतपरक है। पोवाडा, वीर, रौद्र, अद्भुत और करुणरस प्रधान है। इसमें आभोग का छौक नाम है। कटाव विविध सदभों में वर्णन करते हैं। इसमें अनुप्रास एवं यमक की प्रचुरता है। फटका, ससार में विरक्ति पैदा करके सन्मार्ग का अवलंबन करने के लिए प्रेरित करनेवाला है।

१. ये साहित्य-पद सरस्वती महल पुस्तकालय में बहुत हैं।

## भूपाली, आरती, पालना

ये तीनों प्रबन्ध इष्टदेवता की पूजा में उपयोग करने के लिए हैं। भूपाली देवता को जगाने का स्तोत्र है। 'आरती' नीराजन का साहित्य है। इसमें अवतार लीलाएँ वर्णित रहती हैं। पालना (हिंदोला) शयन कराने का साहित्य है। भूपाली प्रातः-काल के रागो में—अर्थात् भूप, विभास, भैरव, रामकली इत्यादि रागों में—गाते हैं। पालना, सारङ्ग, आरभी इत्यादि रागों में मध्याह्नकाल में गाते हैं। आरती मिश्र रागों में गाते हैं। इनके ताल रूपक और त्रिपुट है। ये साहित्य मराठी, गुजराती और हिंदी में हैं। इन साहित्यों में ध्रुव और आभोग के दो अवयव तथा पद और बिरुद दो ही अंग हैं।

## अभंग, ओवी, आर्या, साकी, दिण्डी, घनाक्षरी, अंजनीगीत

ये साहित्य मराठी भाषा में रचे गये हैं। इनमें एक ही अंग पद है। इनमें राग और ताल के नियम नहीं। तुकाराम का अभंग, ज्ञानेश्वर की ओवी, मोरोपंत की आर्या, रघुनाथपंडित की दिण्डी—ये प्रसिद्ध हैं। घनाक्षरी और अंजनीगीत मोरोपंत के साहित्य वृत्तांत के वर्णन रूप में हैं।

## कर्नाटक पद्धति में प्रचलित प्रबन्ध

### कीर्तना या कृति

ये प्रबन्ध, कर्नाटकी, तेलुगु, तमिल भाषा और संस्कृत भाषाओं में रचित हैं। प्रायः इष्टदेवता का गुणवर्णन या इष्टदेवता की प्रार्थना ये ही इनके विषय रहते हैं। इनमें ध्रुवा, अंतरा और आभोग ये तीन अवयव हैं, परंतु इनके नाम में परिवर्तन हुआ है। ध्रुवा का नाम पल्लवी है। अंतरा का नाम अनुपल्लवी है। आभोग का नाम चरण है। इनमें कुछ कीर्तना अनुपल्लवी रहित रहते हैं। ये सब कर्नाटक रागो में हैं। पद बिरुद दो ही अंग हैं। ये कीर्तन पुरंदरदास के पदों के अनुसार हैं।

पल्लवी, अनुपल्लवी, चरण के संप्रदाय के प्रवर्तक पुरंदरदास, भद्राचलं रामदास, तालप्पाक्क, चिन्नमार्थुल्ल, सहोदरुल्ल हैं। प्रचलित कीर्तनों के रचयिता श्रीत्यागय्या, श्रीमुत्तुस्वामि दीक्षितार, श्रीश्यामाशास्त्री, स्वातितिरुनाल महाराज, पट्टण सुब्रह्मण्य अय्यर, सदाशिव ब्रह्म, गोपालकृष्ण भारती, सुब्बराम दीक्षितार, पापनाश शिवन्, पौन्नय्या, पल्लवि गोपालय्यर, सदाशिव राव, मैसूर वापुदेवाच्चार, मुत्तय्या भागवतार, सीसु कृष्णय्यर, पूच्छि श्रीनिवास आय्यगार, लक्ष्मण पिल्लै, कोटीश्वर अय्यर इत्यादि हैं।

इनमें से पहले के—त्यागय्या, श्यामाशास्त्री और मुत्तुस्वामि दीक्षितार—इन तीनों को संगीत की त्रिमूर्ति कहते हैं। कीर्तन में दो पद्धतियाँ हैं। एक में “चरण”, पिछली आधी अनुपल्लवी की धातु में ही रहते हैं। दूसरी पद्धति में इस तरह नहीं रहते। त्यागय्या और श्यामाशास्त्री ने पहले की पद्धति का अनुसरण किया है। दीक्षितार ने दूसरी पद्धति का अनुसरण किया है। दीक्षितार की कृतियाँ संस्कृत भाषा में हैं। त्यागय्या और श्यामाशास्त्री की कृतियाँ तेलुगु में हैं।

कई कीर्तनों में तीसरा अग स्वर भी जोड़ा गया है। इसे चिट्टास्वर कहते हैं। अनुपल्लवी तथा चरण के बाद इसे गाते हैं। कई कीर्तनों में चिट्टास्वर को अनुपल्लवी के बाद गाकर चरण के बाद चिट्टास्वर के अनुसार पदसाहित्य रूप में गाते हैं। श्यामाशास्त्री की कृतियों की यह एक विशेषता है। श्रीत्यागय्या के कीर्तनों में, पंचरत्न-कीर्तन नामक कीर्तनाएँ विशेष रचनाओं का एक गुच्छा हैं। इसमें पल्लवी तथा अनुपल्लवी गाने के बाद चरण में चिट्टास्वर के अनुरूप रचित मातु को भी गाकर पल्लवी या चरण के पहले भाग का ग्रहण करना अर्थात् मुक्तायि करना होता है।

प्रायः कीर्तनों को गाते समय पहले गवैये लोग, प्रायः उस कीर्तन के राग का आलाप करके फिर कीर्तन आरम्भ करते हैं। रूपक तथा आलाप के दोनों भेदों का भी प्रयोग करते हैं। प्रतिग्रहणिका स्वराक्षर के रूप में गाते हैं। इसका अन्त पल्लवी या चरण में करते हैं।

### १. गीतम्

यह प्रबन्ध सालगसूड प्रबन्ध के अनुसार उसके राग और तालों में ही रचा गया है। आजकल के प्रचलित गीतों में उद्ग्राह, ध्रुवा, आभोग—ये तीनों अवयव हैं। इनमें स्वर, पद और विरुद ये तीनों अंग हैं। स्वर रूप धातु के अनुसार सब धातुओं की रचना है। गीतों को प्रारम्भिक शिक्षा में रागों से परिचय कराने के लिए सिखाते हैं। प्राचीन गीतों में पुरंदरदास और वेकट मल्ली दोनों के गीत ही प्रचार में हैं। इनका अनुसरण करके समीपकाल में गीतों की रचना हुई है।

### २. वर्ण

यह प्रबन्ध ३०० वर्ष पहले उत्पन्न रचना है। प्रत्येक राग के योग्य आरोही, अवरोही, संचारी, स्थायी इन चारों वर्णों में राग के प्रकाशन करने के लिए रचे जाने के कारण इस प्रबन्ध का नाम ‘वर्ण’ पड़ा। आजकल, रागस्वरूप को निर्धारित करने के लिए वर्ण एक मुख्य साधन है। इसमें उद्ग्राह और आभोग दो ही अवयव हैं। प्रद स्वर और विरुद ये तीन अंग हैं। हर एक अवयव में पद, पद के बाद चिट्टास्वर, प्रति-

ग्रहणिका के रूप में रचे गये हैं। शिक्षा देते समय, पद के धातु को सिखाने के लिए उनको स्वररूप में पहले सिखाते हैं। इनके रचयिता वेकट मखी, सुब्बराम दीक्षितार, वीण कुप्पय्यर, कुलशेखर, पल्लवि गोपालय्यर, पट्टण सुब्रह्मण्य अय्यर, गजपति राव, पूच्छि अय्यगार, पोन्नय्या आदि हैं। वर्ण मुख्य रागो में ही रचे जाते हैं।

वर्णों में दो प्रकार हैं। एक का नाम तानवर्ण है। दूसरा है पदवर्ण। पहला भेद रामप्रधान है। वह केवल गाने के लिए है। पदवर्ण भाव ताल प्रधान है और नृत्य में उपयोग करने के लिए रचा गया है।

### ३. पद

पद ज्यादातर नीति, भक्ति और शृंगाररस प्रधान है। भाव ही इसके प्राण है। इसी कारण से रसभाव-प्रकाशक राग के सचारो को पदों से ही जान सकते हैं। इसमें भी पल्लवी, अनुपल्लवी और चरण ये तीन अवयव हैं। चिट्टास्वर और जाति भी जोड़ते हैं। पद, तमिल, तेलुगु तथा कन्नड़ भाषाओं में रचे गये हैं। क्षेत्रज्ञर, सुब्बराम-य्यर, मुत्तुताण्डवर, कविकुजर भारती, शाहजी राजा (तजौर के महाराष्ट्र राजा), चिन्नय्या, पोन्नय्या, आदि के द्वारा रचे हुए पद आज प्रचार में हैं। ये विशेषतया नृत्य में उपयुक्त किये जाते हैं। गाने में भी उपयोग होता है। मुख्य रागों में ही पद रचे जाते हैं।

### ४. जावलि

यह शृंगाररस प्रधान छोटा-सा प्रबन्ध है। इसकी गति मध्य और द्रुत है।

### ५. चिन्दु

यह मध्य और द्रुतगति के मिश्र रागों तथा आम जनता को पसंद आनेवाली रीति में, तमिल भाषा में रची जाती है। इसमें कई भेद हैं। कावडिचिन्दु, नोडिचिन्दु, ईरडिचिन्दु, ओरडिचिन्दु, वलिनडैचिन्दु वगैरह हैं। कावडिचिन्दु रचना में सेन्नि-कुळं अण्णामलै रेड्डियार बहुत प्रसिद्ध हैं। दूसरी चिन्दुओं में सिरुमणऊर मुनुस्वामि प्रसिद्ध हैं। प्रायः शृंगाररस प्रधान और सभववर्णनात्मक भी हैं।

### ६. तिरुप्पुकळ

अनेक तरह के तालों में, अनुप्रासयुक्त तमिल और संस्कृत पदों से रचित प्रबन्ध है। राग का नियम नहीं पर ताल का नियम है। हर एक चीज में ताल के रूप—“तन तन तनताना” के रूप—में दिये गये हैं। इस तरह की रचना के प्रवर्तक और

प्रमुख रचयिता “अरुणगिरिनाथ” हैं। उन्होंने स्कंद पर ही तिरुप्पुकळ की रचना की है। हर एक तिरुप्पुकळ के पहले भाग में शृंगार का वर्णन करके उसे छोड़कर इष्ट-देवता स्कंद की उपासना और स्तोत्र करने का मार्ग पिछले भाग में है। इन्हें अनुसरण करके दूसरी तिरुप्पुकळ भी रची गयी है।

### ७. ओडम्

यह नाव को खेने का अनुसरण करके पुन्नागवराळी जैसे रागों में गाया जाता है। ध्रुवा विलंबकाल में रहता है। आभोग का नाम है मुडुगु और द्रुत काल में रहता है।

### ८. लाली ऊंजलें

यह झूला-गान है। लाली तालबद्ध है। ऊंजल अनिबद्ध है। लाली और ऊंजल, प्रायः नवरोज, रीति-गौड़ तथा भैरवी में, क्रमशः गाये जाते हैं।

### ९. तालाट्टु

पालना गान है। नीलावरी राग में ही प्रायः गाते हैं।

### १०. देवार

तमिल देश की तमिल संगीत पद्धति का प्रबन्ध है। ये सातवीं या आठवीं शताब्दी की रचनाएँ हैं। इनके राग प्राचीन तमिल राग हैं। उनके नाम हैं फण् और तिरम्। इनके रचयिता ३ शैव आचार्य हैं। वे हैं ज्ञानसबधर अप्पर या वागीशर् और सुदरमूर्ति। प्रचलित देवारों में २४ राग या फण हैं। उन २४ फणों के नाम प्रायः मतग, दत्तिल और शाङ्गदेव के ग्रंथों में पाये जानेवाले रागों के जैसे हैं। गाने की पद्धति अब भी प्रचार में है। शिवजी के मंदिरों में प्रतिदिन गाये जाते हैं।

### ११. चार हजार दिव्यप्रबन्ध-

जैसे शैव-संप्रदाय को लेकर देवार रचे गये हैं वैसे ही प्रायः उसी काल में वैष्णव-संप्रदाय को लेकर दिव्यप्रबन्ध रचे गये हैं। उनके रचयिता १२ विष्णुभक्त हैं। उनके नाम आलवार हैं। शुरू में, ये चार हजार पाशुर या छंद, देवार के जैसे प्राचीन तमिल रागों में—अर्थात् फणों में—रचे गये हैं। पर, बाद में, फण को भूल जाने के कारण वे देवगांधारी और आरभी मिश्रित रागों में गाये जाते हैं।

### १२. मंगलम्

सभा के सामने या मेले में होनेवाले गान, नाच या नाटक के अंत में, शुभ प्रार्थना रूप में गाये जानेवाले गीत को मंगल कहते हैं। यह चीज कीर्तना-रूप में है। तालबद्ध है। प्रायः, सुरटी व मध्यमादि रागों में रचे गये हैं।

## ग्यारहवाँ परिच्छेद

### वाद्याध्याय

वीणो आदि तन्त्री वाद्य, वेणु, काहल आदि सुपिर वाद्य, पटह, मुरज, मृदङ्ग, आदि अवनद्ध वाद्य, कास्य, तालादि धनवाद्य हमारे देश में वैदिककाल से रहे हैं। वेदप्रोक्त यज्ञ करते समय वीणा-वादन के साथ सामवेद का गान विहित है। सामवेद के साथ बजाई जानेवाली वीणाओं के दस प्रकार रहते थे। उनके नाम ये हैं—

“आघाटी, पिच्छोला, कर्कटिका, अलाबु, वक्रा, कपिशिर्षणी, शीलवीणा, महा-वीणा, काण्डवीणा, बाण।” इनमें आघाटी लोह शलाका से बजायी जाती थी।

कर्कटिका दो तन्त्रियों की वीणा है।

अलाबु कद्द्रु से युक्त वीणा है।

वक्रा और कपिशिर्षणी नाम के अनुरूप हैं। अर्थात् वक्र वीणा वक्र है और कपिशिर्षणी बन्दर के सिर के समान होती है।

‘बाण’ वीणा में १०० तन्त्रि थी। औदुम्बर (अञ्जीर या गूलर) पेड़ की लकड़ी से बनायी जाती थी। लाल रंग की गाय के चर्म से मढ़ी होती थी। पीछे दस द्वार होते थे और हर एक द्वार के जरिये दस तन्त्रियों को बाँध देते थे। सौ तन्त्रियों को तीन भागों में बाँट देते थे। दर्भ और मूँज से इनका विभाजन करते थे। मध्य में ३४ तन्त्री, और तिरछी ३३ तन्त्रियों के दो समूह रहते थे। इस वाद्य को एक बारीक वक्र पलाश की शलाका से बजाते थे।

सामगायको और उनकी स्त्रियों के द्वारा भी वीणा बजायी जाती थी। नारदीय शिक्षा में वेणु वाद्य स्वरों की तुलना सामगायको के स्वरों से की गयी है।

‘यस्सामगानां प्रथमं स वेणोर्मध्यमस्वरः’

यज्ञ में नर्तन भी विहित है। तैत्तिरीय ब्राह्मण के सप्तम (?) काण्ड में इसका उल्लेख है। नृत्य के उपयुक्त मृदङ्ग या पुष्कर वाद्य और कास्य ताल भी रहे होंगे। इसलिए यह निश्चित होता है कि हमारे भारतवर्ष में विविध वाद्य—गीत और नृत्य के साधनरूप में रहकर—विकसित हुए हैं।



वाद्यो के बारे में लिखे हुए प्रथम ग्रन्थ के कर्ता नारद और स्वाति हैं। यह तथ्य भरतमुनि के द्वारा ही नाट्यशास्त्र में स्पष्टतया बताया गया है। वाद्याध्याय के आरम्भ में (अध्याय ३३ नाट्यशास्त्र) भरतमुनि कहते हैं—

‘मृदङ्ग पणवानाञ्च दर्दुरस्य तथैव च ।

गान्धर्वञ्चैव वाद्यञ्च स्वातिना नारदेन च ।

विस्तारगुणसम्पन्नमुक्तं लक्षणकर्मतः ।

अनुवृत्त्या तदा स्वातेरातोद्यानां समासतः ।

पौष्कराणां प्रवक्ष्यामि निर्वृत्तिं सम्भवं तथा ।’

(नाट्यशास्त्र अध्याय ३३ श्लोक २-४)

‘गान्धर्वमेतत् कथितं मया हि,

पूर्वं यदुक्तं त्विह नारदेन ।

कुर्याद्य एव मनुजः प्रयोगं,

सम्मानयोग्यं कुशलेषु गच्छेत् ।’

(नाट्यशास्त्र, अध्याय ३२, श्लोक ४७८)

इसका तात्पर्य यह कि “स्वाति और नारद ने मृदङ्ग, पणव, दर्दुर आदि अवनद्ध वाद्यों, तन्त्रीवाद्यो और अन्य वाद्यो के भी विस्तारपूर्वक सुस्पष्ट लक्षण और वादन-क्रम बताये हैं। उनका अनुसरण करके मैं भी पुष्कर (तीन मुख युक्त अवनद्ध वाद्य) आदि वाद्यों की उत्पत्ति, बनाने का क्रम और वादनक्रम बताऊँगा।”

‘स्वातिनारदसंवाद’ नामक एक ग्रन्थ अब भी खोज करे तो मिल सकता है। ‘संगीत मकरन्द’ नामक एक मुद्रित ग्रन्थ नारदोक्त कहा जाता है। पर इसमें बहुत से पश्चाद्वर्ती संप्रदाय भी जोड़ दिये गये हैं। उपलब्ध ग्रन्थों में नाट्यशास्त्र ही वाद्यों पर भी प्रामाणिक आदि ग्रन्थ है। उसके ३३ वे अध्याय में पुष्कर, पणव, दर्दुर, मुरज, झल्लरी, पटह आदि के वादनक्रम उनमें बोलनेवाले अक्षर इत्यादि अवनद्ध वाद्यों के विवरण के रूप में विस्तारपूर्वक दिये गये हैं।

वाद्यो में चार भेद हैं। तत, सुषिर, अवनद्ध और घन। तन्त्री वाद्य को ही ‘तत-वाद्य’ कहते हैं। छिद्रों में फूँक मारने से ध्वनित होनेवाले वाद्यो का नाम ‘सुषिरवाद्य’ है। चमड़े से मढ़े हुए वाद्यो का नाम ‘अवनद्ध’ है। कास्यादि धातुओं से निर्मित घन रूप करताल आदि वाद्यो का नाम है ‘घन’।

ततवाद्य अनेक तरह की बीणाएँ—अर्थात् एक तन्त्री, नकुल, त्रितन्त्रिका, चित्रा, विपञ्ची, मत्तकोकिला, आलापिनी, किन्नरी, पिनाकी, और आधुनिक तन्त्री वाद्य

अर्थात् जन्त्र, चतुस्तन्त्री, विचित्र वीणा, रुद्रवीणा, सितार, सरोद, स्वरवत, बाल-सरस्वती, स्वरमण्डली, सारङ्गी, दिलरुबा, वायलिन, तबूरा या तानपूरा, मोरसिंह आदि हैं।

सुपिर वाद्यों में बशी आदि विविध प्रकार की बाँसुरियाँ, शहनाई, सुन्दरी, नाग-स्वर, मुखवीणा या छोटा नागस्वर, काहल, श्रीचिह्न (तिरुच्चिन्न), शंख, शृङ्ग, क्लारिनेट, ट्रम्पेट, साक्सफोन आदि हैं।

अवनद्ध वाद्यों में प्राचीन काल के वाद्य मृदङ्ग या मार्दल या मद्दल, मुरज, पणव, दर्दुर, हुडुक्का, पुष्कर, घट, डिडिम, ढक्का, आवुज, कुडुक्का, कुडुवा, ढवस, घडस, रुञ्जा, डमरुक, मण्डि ढक्का, ढक्कुलि, सेल्लुका, झल्लरी, भाण, त्रिवली, दुन्दुभि, मेरी, निस्साण, तुम्बकी आदि हैं।

इनमें प्रायः सब किसी न किसी जगह आज भी प्रयुक्त किये जा रहे हैं। इनके साथ ढोल, ढोलक, तबला, खञ्जरी, ड्रम, कुन्तल, किरिक्कट्टी, जुमिडिका, दासरीका तप्पट्टा, तमुक्कु, पम्बै, तबुल (डिडिम), शुद्ध, मद्धल, ढोलकी आदि भी हैं।

घन वाद्यों में ब्रह्मताल, कांस्यताल, घण्टा, क्षुद्रघण्टा, जयघण्टा, कम्प्रा, शक्ति पट्ट आदि हैं।

### तन्त्री वाद्य

वीणा वादन में नारद और तुम्बुरु आदिकाल से अति प्रसिद्ध हैं। भरतमुनि ने भी अपने नाट्यशास्त्र में नारदस्वाति के मत का ही अनुसरण किया है। नारदरचित कहे जानेवाले मुद्रित ग्रन्थ 'संगीत मकरन्द' में वीणा के उन्नीस भेद बताये गये हैं। उनके नाम कच्छपी, कुब्जिका, चित्रा, वहन्ती परिवादिनी, जया, घोषावती, ज्येष्ठा, नकुली, महती, वैष्णवी, ब्राह्मी, रौद्री, कूर्मी, रावणी, सारस्वती, किन्नरी, सैरन्धी, घोषका हैं। पर इनका विवरण नहीं दिया गया है।

वीणा वादन के अगों को पुरुषाकृति रूप में वर्णित किया गया है। तीन ग्राम तीन शिर हैं (नारदजी तीनों ग्रामों का वादन कर सकते थे)। मन्द्र मध्य आदि तीन स्थान तीन मुख हैं। वादी, सवादी, अनुवादी और विवादी चार जिह्वाएँ हैं। दूसरे तन्त्री वाद्यों, सुषिरवाद्यों और मृदङ्गादि अवनद्ध वाद्यों, कांस्य तालादि घन वाद्यों का वादन उपाङ्ग है। सात स्वर आँखे हैं। रागालप्ति और रूपकालप्ति दो हाथ हैं। षाडव, औडव, सपूर्ण राग, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र रूप हैं। विविध राग संदर्भ त्रिमूर्ति की सन्तान हैं। १९ गामक पाँव हैं। वीणावादन और श्रवण का परिणाम पापक्षय, पुत्रपौत्र, धन, धान्य आदि की प्राप्ति, शत्रु की निवृत्ति, राज्य वृद्धि और मोक्ष भी हैं।

नारदजी के मत का अनुसरण करके ही याज्ञवल्क्य भी सगीत की प्रशंसा करते समय कहते हैं कि 'वीणावादन का ज्ञान मोक्ष को भी प्राप्त कराता है।'

नाट्यशास्त्र में सप्ततन्त्री चित्रा, नवतन्त्री और विपञ्ची ये दो वीणाएँ बतायी गयी हैं। उँगलियों से चित्रा का वादन विहित है। धातु से बनाये एक 'कोण' नामक उपकरण को उँगली में धारण कर विपञ्ची का वादन करना विहित है।

एक तन्त्री का वर्णन 'सगीतरत्नाकर' में अच्छी तरह किया गया है। वीणा के दण्ड की लंबाई तीन हस्त अर्थात् ७२ अंगुल (५४ इंच) होती थी। दण्ड की परिधि या घेरे का नाप एक वितस्ति या बित्ता (९ इंच) होता था। दण्ड का छिद्र पूरी लंबाई में  $1\frac{3}{4}$  अंगुल ( $1\frac{3}{4}$  इंच) व्यास का रहता था। एक सिरे से १७ अंगुल की दूरी पर अलाबु या कद्दू को बाँधना होता था। दण्ड आबनूस की लकड़ी से बनाया जाता था। कद्दू का व्यास ६० अंगुल (४५ इंच) होता था। दूसरे सिरे में ककुभ रहता था। ककुभ के ऊपर धातु से बनायी हुई कूर्म पृष्ठ की भाँति पत्रिका होती थी। कद्दू के ऊपर नागपाश सहित रस्सी बाँधी जाती थी। ताँत अर्थात् स्नायु की तन्त्री को नागपाश में बाँधकर ककुभ के ऊपर की पत्रिका के ऊपर लाकर शकु या खूँटो से बाँधा जाता था। तन्त्री और पत्रिका के बीच में नाद सिद्धि के लिए वेणु निर्मित 'जीवा' रखते थे। इस वीणा में सारिकाएँ नहीं हैं। बाये हाथ के अंगूठा, कनिष्ठिका और मध्यमा पर वेणुनिर्मित कन्निका को धारण कर तर्जनी से आघात करके सारण किया जाता था। तन्त्री को ऊर्ध्वमुख करके तथा कद्दू को अधोमुख करके, ककुभ को दाहिने पाँव पर रखकर, कद्दू को कंधे के ऊपर रहने की स्थिति में रखकर, जीवा से एक बित्ता की दूरी पर उँगली से वादन किया जाता था।

इस वीणा को 'घोष' या 'ब्रह्मवीणा' भी कहते हैं। यह सब वीणाओं की जननी है। इसके दर्शन एवं स्पर्श भी भुक्तिमुक्तिदायक है। यह सब पापों से विमुक्त कर सकती है, क्योंकि इसमें शिवजी दण्ड रूप, पार्वतीजी तन्त्री रूप, ककुभ विष्णु रूप, लक्ष्मीजी पत्रिकारूप, ब्रह्मा तुँब (कद्दू) रूप, सरस्वती कद्दू की नाभिरूप, दोरक वासुकि रूप हैं, चन्द्र जीवा रूप और सूर्य (सारि से युक्त वीणा में) सारिका रूप है। इसलिए वीणा सर्वदेवमयी होने के कारण सारे मंगलों का स्थान है।

### एकतन्त्री वीणा या घोषक का वादन क्रम

कन्निका (बाये हाथ में धारण करने का साधन) की क्रिया के चार भेद हैं—

१. उत्क्षिप्ता—इसमें तन्त्री का स्पर्श करके हाथ ऊपर उठाकर तन्त्री पर तत्काल पात करना।

२. सन्निविष्टा—तन्त्री का स्पर्श के साथ ही सारणा करना ।
३. उभयी—उत्क्षिप्ता और सन्निविष्टा को जोड़कर प्रयोग करना ।
४. कम्पिता—स्वरस्थानों में कम्पन देना ।

### बादन में हाथों का व्यापार

दाहिने हाथ के व्यापार ९ हैं—

१. घात—मध्यम उँगली को भी जोड़कर तर्जनी से आघात करना ।
२. पात—मध्यम उँगली के बिना तर्जनी मात्र से पातन करना ।
३. सलेख—तन्त्री को उँगली के अन्दर रखकर बजाना ।
४. उल्लेख—मध्यम उँगली के अन्दर रखकर तन्त्री को बजाना ।
५. अवलेख—मध्यम उँगली को तन्त्री के बाहर रखकर बजाना । मतान्तर के अनुसार उल्लेख और अवलेख तर्जनी मध्यमा और अनामिका दोनों से या तीनों से संयुक्त रूप में बज सकते हैं ।
६. भ्रमर—चार उँगलियों से क्रमशः वेगपूर्वक बजाना ।
७. सधित—मध्यमा और अगूठे को बाहर रखकर बजाना ।
८. छिन्न—तर्जनी के पार्श्व भाग से तन्त्री का स्पर्श करते समय अनामिका के द्वारा बाहर से बजाने का नाम है 'छिन्न' ।
९. नखकर्तरी—चार नखों से वेगपूर्वक क्रमशः बजाना ।

बाये हाथ के व्यापार २ हैं—

१. स्फुरित—कम्पन देने के समान तन्त्री के पिछले भाग का स्पर्श करके सारण करना ।

२. खसित—तन्त्री से हाथ न उठाकर घर्षण कर सारण करना ।

उभय हाथों का व्यापार :—

१. घोष—दाहिने हाथ के अंगूठे के पार्श्व भाग से और दूसरी उँगली से कैची की तरह एक को सामने से, दूसरी को अपनी ओर से, एक ही समय बजाना । इसका नाम है घोष । अथवा बाये हाथ की छोटी उँगली दाहिने हाथ की छोटी उँगली और बाये हाथ की कम्पिका से कैची की तरह परस्पर विपरीत दिशाओं में वादन ।
२. रेफ—दाहिने हाथ की अनामिका को अन्दर रखकर और बायें हाथ की मध्यम उँगली को बाहर रखकर एक ही समय बजाना ।
३. बिन्दु—दाहिने हाथ की अनामिका से बजाकर उस ध्वनि को तर्जनी उँगली से धारण करना अर्थात् स्पर्शस्पर्श से शब्द को एकरूप बढ़ाना ।

४. कर्तरी—दोनों हाथों की चारो उँगलियों को कैची की तरह रखकर बाहर की ओर क्रमशः वेग से बजाना ।

५. अर्धकर्तरी—दाहिने हाथ की उँगलियों से कैची की तरह बजाने के बाद बायें हाथ की कन्निका से तन्त्री पर आघात करना ।

६. निष्कोटित—बाये हाथ की तर्जनी उँगली से सारण न करके उसी उँगली से तन्त्री पर आघात करना ।

७. स्खलित—बाये हाथ से उत्क्षिप्त सारण करके वेग से दाहिने हाथ से कर्तरी के तुल्य बजाना ।

८. शुकवक्त्र—अगूठा और तर्जनी दोनों उँगलियों से तन्त्री को पकड़ कर छेड़ना है ।

९. मूर्च्छना—तर्जनी को पहले उठाकर दाहिना हाथ घुमाने का नाम 'उद्वेष्टन' और छोटी उँगली को पहले नीचे लाकर घुमाने का नाम 'परिवर्तन' है । इन दो प्रकारों से दाहिने हाथ को घुमाकर तन्त्री को बजाते समय बाये हाथ से स्वरस्थानों में वेगपूर्वक कन्निका से सारण करना ।

१०. तलहस्त—दाहिनी हथेली से बजाते समय बाये हाथ की तर्जनी के द्वारा तन्त्री का स्पर्श करना या धीरे बजाना ।

११. अर्धचन्द्र—दाहिने हाथ के अगूठे और तर्जनी को अर्धचन्द्र रूप में रखकर तन्त्री का स्पर्श करना ।

१२. प्रसारक—दाहिने हाथ के अगूठे को हथेली पर रखकर बाकी चारो उँगलियों को संयुक्त करके तर्जनी और छोटी उँगली से बजाना ।

१३. कुहर—सब उँगलियों को सिकोड़कर छोटी उँगली से बजाना ।  
दशविध वाद्य (क्रियाओं के जोड़ने का क्रम)—

१. छन्द—खसित (बाये हाथ की क्रिया २) और स्फुरित (बा० १) करके चतुरन्त तारस्थान के स्पर्श करने का नाम 'छन्द' है ।

२. धारा—स्खलित (उ० ७), मूर्च्छना (उ० ९), कर्तरी (उ० ४) और रेफ (उ० २), उल्लेख (दा० ४) और रेफ इनको जोड़ने का नाम है 'धारा' ।

३. कैकुटी—शुकवक्त्र (उ० ८), स्फुरित (बा० १), घोष (उ० १), अर्ध-कर्तरी (उ० ५), इनको क्रमपूर्वक जोड़ने का नाम है 'कैकुटी' ।

४. कंकाल—स्फुरित (बा० १), मूर्च्छना (उ० ९) इनके साथ तीन बार कर्तरी (उ० ४) के भी प्रयोग करने का नाम है 'कंकाल' ।

५. वस्तु—स्पष्टतया तारस्वरो के साथ कर्तरी (उ० ४), खसित (बा० २) और कुहर (उ० १३) का प्रयोग करना।

६. द्रुत—कर्तरी (उ० ४), खसित (बा० २), कुहर (उ० १३), रेफ (उ० २), भ्रमर (दा० ६), घोष (उ० १) इनको क्रम से जोड़ना।

७. गजलील—मूच्छना (उ० ९), स्फुरित (बा० १), कर्तरी (उ० ४), खसित (बा० २) इनको जोड़ना।

८. ढण्डक—स्खलित (उ० ७), मूच्छना (उ० ९), कर्तरी (उ० ४), रेफ (उ० २), खसित (बा० २) इन्हें जोड़ना।

९. उपरिवाद्य—ऊपर और नीचे सारण करके रेफ (उ० २), कर्तरी (उ० ४), निष्कोटित (उ० ६) और तलहस्त (उ० १०) का प्रयोग करना।

१०. पक्षिरुत—इसमें सब हस्त-व्यापारों का मिलन है।

### सकल-निष्कल वादन प्रकार

तन्त्री-सलग्न जीवा के कारण जब ध्वनि स्थूल रूप में उत्पन्न होती है, तब वह सकल 'वाद्य' कहलाता है।

नाद की स्थूलता के लिए तन्त्री-पत्रिका के बीच जीवा को स्पृश्यास्पृश्य रूप में रखना चाहिए। इसे 'कल' कहते हैं। कला स्थापित किये बिना वादन किया जाय, तो नाद सूक्ष्म रहता है। इस तरह के वादन का नाम 'निष्कल' है।

एक-तन्त्री वीणा के पर्यायवाची नाम ब्रह्मवीणा या घोष हैं। एक-तन्त्री वीणा ही विविध वीणाओं की जननी है। एक-तन्त्री वीणा के अनुसार ही दूसरी वीणाओं का भी वादन विहित है।

दो तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'नकुल' और तीन तन्त्रीवाली का नाम त्रितन्त्री या जन्त्र है।

सात तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'चित्रा' और नौ तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'विपञ्ची' है। चित्रा और विपञ्ची में कोण और नख दोनों से वादन विहित है। इक्कीस तन्त्रीवाली वीणा का नाम 'मत्तकोकिला' है। इसे 'सुरमण्डल' भी कहते हैं। यह वीणा सब वीणाओं में मुख्य कही गयी है, क्योंकि इसमें हर एक स्थान या सप्तक के सातों स्वरों के लिए सात-सात तन्त्रियाँ हैं।<sup>१</sup>

१. मतंग की वीणा चित्रा है। स्वाति की वीणा विपञ्ची है। नारदजी की वीणा महती (२१ तन्त्रीवाली) है। इन इक्कीस तन्त्रियों में तीन ग्राम स्थापित किये जाते थे। नारदजी के सिवा और कोई गान्धार ग्राम का वादन नहीं कर सकता। विपञ्ची

### वृन्द में वीणा का वादन-प्रकार

विविध वीणाओं का वादन करते समय मुख्य स्थान 'मत्तकोकिला' का ही है। अन्य वीणाएँ उसी की अंगरूप हैं। मुख्य वीणा के वादन के अनुसार दूसरी वीणाओं में कुछ-कुछ गति भेद करके बजाने की परम्परा है। ऐसा भेदन 'करण' कहलाता है।

करण के छः भेद हैं। उनके नाम—(१) रूप (२) कृतप्रतिकृत (३) प्रतिभेद (४) रूपशेष (५) ओष और (६) प्रतिशुष्क हैं।

१. रूप नामक करण में एक ही समय में जब मुख्य वीणा में गुरु-लघु आदि के प्रयोग किये जाते हैं तब अंगवीणा में गुरु स्थान पर दो लघु, लघुस्थान में दो द्रुत का—इस प्रकार भञ्जन युक्त प्रयोग विहित है।

२. इसी प्रकार वादन करने में एक ही समय के बदले मुख्य वीणा के बाद अंगवीणा के वादन करने का नाम 'कृतप्रतिकृत' है।

३. रूप के विरुद्ध प्रकार में वादन करना 'प्रतिभेद' है। अर्थात् मुख्य वीणा में दो लघु का प्रयोग करते समय अंगवीणा में एक गुरु का प्रयोग करना इत्यादि।

४. मुख्य वीणा के वादन के समय विद्वारी विच्छेद के अवसर पर, अर्थात् 'चीज' के एक भाग के अंत और दूसरे भाग के आरम्भ के मध्य को अंगवीणा के वादन से पूर्ण करना 'रूपशेष' है।

की नौ तन्त्रियों में सात स्वर तथा अन्तर एवं काकली स्वर स्थापित थे। यज्ञों में उपयोग करने के लिए ४ तन्त्री, १२ तन्त्री और शत-तन्त्री वीणाएँ थीं। नान्यभूपाल ने, जो 'संगीत रत्नाकर' में आचार्यों में उद्धृत किये गये हैं, अपने 'सरस्वतीहृदयालंकार हार' नामक भरत भाष्य में वीणाओं को शैव आगमों के प्रमाण के अनुसार तीन भेदों में विभाजित किया है। उनके नाम वक्रा, कूर्मा और अलाबु हैं। विपञ्ची, वल्लकी, मत्तकोकिला, ऐन्द्री, सरस्वती, गान्धर्वी, ब्रह्मिका ये सात वक्रवीणा हैं। उनकी तन्त्रियाँ ९ हैं। संवादिनी, वितन्त्री, किन्नरी, परिवादिनी, घ्रासक्ता—ये पाँच कूर्मवीणा हैं। वितान, नकुल, त्रितन्त्रिका, विशोका, ईश्वरी, परिवादिनी—ये सात अलाबुवीणा हैं।

'संगीत नारायण' में रत्नाकर में कही हुई वीणाओं के अलावा वल्लकी, ज्येष्ठा, जया, हस्तित्रा, कुब्जिका, कूर्मा, सारंगी, त्रिसरी, शततन्त्री, ऐन्द्री, कर्तरी, औदुम्बरी, रावण-हस्त, रुद्रवीणा, स्वरमण्डल, कपिलासी, मधुस्यन्दी और घोणा के नाम भी दिये गये हैं।

५ मुख्य वीणा में विलंबित लय में वादन करते समय अंगवीणा में अतिद्रुत लय में वादन करने का नाम 'ओघ' है। इस तरह के वादन के लिए राग एवं स्वरों का पूर्ण ज्ञान और अभ्यास तथा हस्तलाघव आवश्यक है।

६. मुख्य वीणा के स्वरों के सत्रादी या निकट अनुवादियों को अंगवीणा में प्रयुक्त करके वादन को सुशोभित करना 'प्रतिशुष्क' है।

### विविध वादनों के धातु

विविध वादनों की समीचीन योजना के द्वारा रक्ति और दोषरहित पुष्टि उत्पन्न कराने की विधि 'धातु' है। धातु के चार भेद हैं—विस्तार, करण, आविद्ध और व्यञ्जन।

विस्तार धातु के चार प्रकार हैं—विस्तारज, सघातज, समवायज और अनुबन्ध।

विस्तारज प्रकार में एक ही बार तन्त्री को छेड़ना है। सघातज प्रकार में दो बार छेड़ना है। समवायज प्रकार में तीन बार छेड़ना है। अनुबन्ध प्रकार में इन तीनों प्रकारों को यथोचित जोड़ना है।

सघातज प्रकार के चार भेद हैं। समवायज प्रकार के आठ भेद हैं। विस्तारज और अनुबन्ध के प्रकार के एक-एक भेद हैं। कुल मिलकर विस्तार धातु के १४ प्रकार हैं।

विस्तार धातु के छेड़ने में दो प्रकार हैं—उत्तर और अधर। वीणा के उत्तर भाग में छेड़ने से मन्द्रस्थानीय स्वर की उत्पत्ति होती है। अधर भाग में छेड़ने से तार-स्थानीय स्वर की उत्पत्ति होती है।

सघातज प्रकार में उत्तर में दो बार छेड़ना पहला भेद है। अधर में दो बार छेड़ना दूसरा भेद है। अधर के बाद उत्तर में छेड़ना तीसरा भेद है। उत्तर के बाद अधर में छेड़ना चौथा भेद है।

समवायज प्रकार के आठ भेद हैं—(१) तीन उत्तर (२) तीन अधर (३) दो उत्तर और एक अधर (४) दो अधर और एक उत्तर (५) एक उत्तर के बाद दो अधर (६) एक अधर के बाद दो उत्तर (७) अधर के बाद उत्तर और उसके बाद फिर अधर (८) उत्तर के बाद अधर और उसके बाद उत्तर।

१. ये छः करण तंजौर के राजा सरफ़ोजी (१८०० ई०) के द्वारा परिष्कृत तंजौर बैण्ड में आज भी सुने जा सकते हैं। यह बैण्ड पाश्चात्य वाद्यों के द्वारा भारतीय संगीत का वादन करनेवाली वाद्यगोष्ठी है।



करण धातु के पाँच प्रकार हैं। इनके नाम—रिभित, उच्चय, नीरटित, ह्लाद और अनुबन्ध हैं।

आविद्ध धातु के पाँच भेद हैं—क्षेप, प्लुत, अतिपात, अतिकीर्ण और अनुबन्ध।

करण और आविद्ध प्रकारों में छेड़ने के लघु-गुरुत्व कालप्रमाण भेदों से धातु बनाये गये हैं। करण में गुरु का प्रयोग अधिक नहीं है। आविद्ध में प्रायः गुरु या गुरु की विहीनत्व है।

**करण धातु**—‘रिभित’ में दो लघु के बाद एक गुरु है। ‘उच्चय’ में चार लघु के बाद एक गुरु है। ‘नीरटित’ में छः लघु के बाद एक गुरु है। ‘ह्लाद’ में आठ लघु के बाद एक गुरु। ‘अनुबन्ध’ में इन प्रयोगों का मिश्रण है।

**आविद्ध धातु**—आविद्ध धातु के पाँच भेद हैं—(१) क्षेप—एक लघु के बाद दो गुरु। (२) प्लुत—लघु, गुरु और लघु (३) अतिपात—लघु, गुरु लघु गुरु या लघु लघु गुरु गुरु (४) अतिकीर्ण—लघु गुरु, लघु गुरु, लघु गुरु, लघुगुरु, या लघुलघु, लघुलघु गुरुगुरु, गुरुगुरु (५) अनुबन्ध—इन चारों प्रकारों का मिश्रण। मतान्तर के अनुसार आविद्ध के पहले चार भेदों में क्रमशः दो, तीन, चार और नौ लघु होते हैं।

**व्यञ्जन धातु**—व्यञ्जन धातु में उँगलियों के विविध प्रयोग से विचित्रता का संपादन करते हैं। इसमें दस भेद हैं—पुष्प, कल, तल, बिन्दु, रेफ, अनुस्वनित, निष्कोटित, उन्मृष्ट, अवमृष्ट और अनुबन्ध।

अंगूठे और छोटी उँगली से समकाल में मारना ‘पुष्प’ है।

दो तन्त्रियों पर एक ही स्वर को भिन्न-भिन्न स्थानों पर दोनों अंगूठों से बजाने का नाम है ‘कल’।

बाये हाथ के अंगूठे से तन्त्री को छेड़ने का नाम है ‘तल’।

एक ही स्वर पर क्रमशः हर एक उँगली से छेड़ना ‘रेफ’ है।

‘तल’ का प्रयोग करके उसके बाद अवरोह में स्वर प्रयोग करना ‘अनुस्वनित’ है।

बाये हाथ के अंगूठे से ऊपर और नीचे छेड़ने का नाम ‘निष्कोटित’ है।

तर्जनी के द्वारा अति मधुरता के साथ धीरे से छेड़ने का नाम है ‘उन्मृष्ट’।

तीन तन्त्रियों में तीन जगहों पर दाहिने हाथ की छोटी उँगली और दोनों हाथों के अंगूठों से एक ही स्वर का उत्पादन करने का नाम है ‘अवमृष्ट’। इन सब का मिश्रण है ‘अनुबन्ध’।

इन धातुओं के समस्त भेदों का योग ३४ है। ये धातु सब तन्त्रीवाद्यों में प्रयुक्त क रन्त्रेयोग्य हैं। पर एक नियम यह है कि जिस धातु से जिन रागों की रक्ति बढ़ती है उसी धातु को उन रागों में प्रयुक्त करना चाहिए।

## वृत्ति

गीत, वाद्य और नृत्य में भिन्न-भिन्न देश की जनता के रचि-भेद के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार का प्रयोग हुआ करता है। इन प्रकारों का नाम 'वृत्ति' है। ये वृत्तियाँ तीन हैं। अर्थात् चित्रवृत्ति, वार्त्तिकवृत्ति और दक्षिणवृत्ति।

चित्र वृत्ति में वाद्य का मुख्यत्व है। वाद्यों का अनुसरण करने में ही गीत का महत्त्व है। वार्त्तिक वृत्ति में गीत का प्राधान्य है। गीत का अनुसरण ही वाद्यों की श्रेष्ठता है। एक दूसरा मत यह है कि द्रुत, मध्य और विलम्ब लय; सम, स्रोतोगत, गोंपुच्छ यति; मोंगधी, संभाषिता और पृथुला गीति; ओघ, अनुगत और तत्त्व वाद्य; (इन तीनों का विवरण ऊपर देखिए) चित्र, वार्त्तिक और दक्षिण ताल का मार्ग; अनागत, सम और अतीत ग्रह, इन्हे इन तीनों वृत्तियों में क्रमशः मुख्यत्व देते हैं।

## वाद्यवादन का प्रकार

वाद्यों के वादन में तीन प्रकार 'तत्त्व', 'ओघ' और 'अनुगत' हैं।

१. गीत के लय, ताल, विराम (अन्त करने की जगह), उस राग की जाति, अंश, ग्रह, न्यासादि के प्रकाशन करने के मार्ग का अवलंबन करके गीत में लीन होकर वाद्यों के वादन करने का प्रकार 'तत्त्व' है।

२. गीत का थोड़ा-थोड़ा अनुसरण करके वादन करने का नाम 'अनुगत' है।

३. गीत के अन्त में तो वाद्य मिल जाता है, पर अवशिष्ट प्रयोगों को दूसरे प्रकार में विभाजित करके वादन करने का नाम 'ओघ' है।

## निर्गीत प्रबन्ध

वाद्यों के गीतरहित वादन का नाम 'निर्गीत' है। इसका पर्यायवाची शब्द 'शुष्कवाद्य' है। रवित और मनोहरता के साथ वाद्यों का वादन करने के लिए शास्त्र-रीति से धातुओं एवं तालों और वादी-सवादी स्वरों का भी संयोजन करना चाहिए। इस तरह के संयोजन प्रबन्धरूप में हैं। इसके दस भेद हैं—आश्रावणा, आरम्भ-विधि, वक्त्रपाणि, संघोटना, परिघट्टना, मार्गसारित, लीलाकृत और त्रिविध आसारित। इनके लक्षण 'संगीत रत्नाकर' के वाद्याध्याय में (श्लोक १८२ से २४० तक) दिये गये हैं।

हर एक निर्गीत वाद्य-प्रबन्ध के विवरण में धातुओं का विवरण, गुरु, लघु आदि के प्रयोग का विवरण, ताल कलाओं का विवरण, तालों तथा सशब्दादि क्रियाओं के

विवरण दिये गये हैं। इस संप्रदाय का अत्यन्त लोप हो जाने के कारण इनकी सम्यक् जानकारी रखना और इनके अनुसार वादन करना तब तक साध्य नहीं है जब तक कि इसके अनुसार लक्ष्य-साहित्य की खोज न हो जाय।

### आलापिनी

आलापिनी का दण्ड बाँस से बनाया जाता था और नौ मुष्टि लंबा होता था (लगभग ४५ अंगुल—३४ इंच)। छिद्र का व्यास दो अंगुल था, तन्त्री बकरी की आंत से बनी होती थी। मतान्तर के अनुसार दण्ड दस मुष्टि लंबा है और रक्त चन्दन, खैर या आबनूस की लकड़ी से भी बनाया जाता है। तन्त्री रेशम या कपास की है।

इस वीणा के ककुभ में पत्रिका नहीं है। परन्तु ककुभ पिण्डयुत है। तुम्ब या कद्दू का परिणाह एक वितस्ति है। उसका मुख चार अंगुल का है। उसकी नाभि हाथीदात से बनायी जाती है। नीचे से पौने दो मुष्टि की दूरी पर तुम्ब या कद्दू का स्थान है। इसका विशिष्ट लक्षण यह है कि नारियल का कर्पर, दोरक एवं सारिका इसमें नहीं है।

### आलापिनी का वादन-क्रम

तुम्ब या कद्दू को वक्ष पर रखकर दण्ड के निचले भाग को बाये हाथ के अंगूठे और मध्यमा उँगली से धारण करके बाये हाथ की चार उँगलियों से चार स्वर और दाहिने हाथ की तीन उँगलियों से तीन स्वर का वादन करना है। बिन्दु (उभय हस्त व्यापार) की तरह वादन करना चाहिए। इसमें तालबद्ध गीतों का वादन उल्लेख्य है।

### किन्नरी

किन्नरी के दो भेद हैं—लघ्वी और बृहती। इसके दण्ड की लंबाई तीन बित्ता और पाँच अंगुल है। दण्ड बाँस का रहना चाहिए। उसके घेरे का नाप पाँच अंगुल है। उसके ककुभ में धातु की पत्रिका है। उसमें कास्य, गीघ (के वक्ष) की हड्डी या लोहे की चौदह नलिकाएँ (सारिकाएँ) छोटी उँगली के परिमाण की स्थापित करनी चाहिए। स्थापना के लिए वस्त्र और मसी (स्याही) का मिश्रण कर और कूटकर लगाना है। नीचे से पहली सारिका दूसरे स्वर-सप्तक के निषाद का स्थान है। उससे एक अंगुल दूर पर दूसरी सारिका रखना है और क्रमशः दूरी को बढ़ाते हुए सारिकाओं का स्थापन करना है। आठवीं सारिका की दूरी दो अंगुल हो जाती है।

उसके बाद की ६ सारिकाओं की दूरी उससे ४ अंगुल तक रहनी चाहिए। ककुभ के नीचे एक कद्दू का स्थापन करना चाहिए। तीसरी और चौथी सारिकाओं के बीच में दूसरे कद्दू को रखना चाहिए। यह कद्दू पहले कद्दू से जरा बड़ा रहना चाहिए। नीचे दण्ड के सिरे से दो अंगुल की दूरी पर छेद करके, उसमें भ्रमण करने योग्य खूँटी रखनी चाहिए। उसके आगे एक अंगुल ऊँची एक स्थिर खूँटी रखनी है। उसका ऊपरी भाग तन्त्री को धारण करने योग्य बाण-पुख के आकार का होना चाहिए। तन्त्री लोहे की हो जो हाथी के बाल के समान मोटी हो। तन्त्री को ककुभ से बाँधकर सारिकाओं के ऊपर लाते हुए स्थिर खूँटी के ऊपर रखकर घुमाई जा सकनेवाली खूँटी से बाँध देना है।

दाहिने हाथ की उँगलियों से तन्त्री को छेड़ना और बाये हाथ की उँगलियों से स्वरस्थान में दबाना चाहिए।

**बृहती किलरी**—यह किलरी एक बित्ता ज्यादा लंबाई की है। तन्त्री इसमें स्नायुनिर्मित है। कद्दू तीन है। तीसरे कद्दू को आलापिनी के समान रखना है।

किलरी के देशी भेद तीन हैं—बृहती, मध्यमा और लघ्वी। इनके परिमाण के विषय में अनेक मत हैं।

### पिनाकी

पिनाकी आधुनिक वायलिन की जननी है। उसका रूप धनुषाकार है। इसी आकार में उसे स्थिर रखने के लिए एक रस्सी से दोनों सिरे बाँध रखे गये हैं। हर एक सिरे में एक-एक शिखा है। उसका निचला सिरा एक कद्दू पर स्थापित किया जाता है। शिखाओं पर स्नायु की तन्त्री बाँधी जाती है। तन्त्री की दोनों शिराओं के मध्य में तन्त्री से नीचे पौने दो अंगुल विस्तार का एक साधन स्वरस्थानों पर तन्त्री को दबाने के लिए रखा जाता है। इसका वादन धनुषाकार कोण से होता है, जो घोड़े की पूँछ के बालों से बँधा हुआ है। इस पर राल (रेजिन) रगड़कर वादन किया जाता है। कद्दू को पाँव से पकड़े हुए ऊपर की शिखा को कन्धे पर रखकर बाये हाथ से तन्त्री को दबाकर वादन करना है।

### वैणिकों के लिए आवश्यक गुण

अंगों का सौष्ठव, स्थिर बैठने की शक्ति, श्रम को जीतने की शक्ति रखनेवाले हाथ, भय रहितता, इन्द्रियों को जीतना, प्रगल्भता, गीत-वाद्य में होशियारी, अवधान से युक्त मन आदि वैणिकों के लिए आवश्यक गुण हैं।

## प्रचलित तन्त्री वाद्य

**रुद्रवीणा**—यह वीणा अब उत्तर भारत में प्रचलित है। सोमनाथ (१६०० ई०—रागविबोध कर्ता) के ग्रन्थ में भी इसका विवरण है। अहोबल (संगीतपारिजात कर्ता—१७ वीं शताब्दी) और नारायण (संगीतनारायण कर्ता—१६ वीं शताब्दी) इन दोनों ने भी रुद्रवीणा का विवरण दिया है। इसका दण्ड ११ मुष्टि का है। रन्ध्र अगूठे के व्यास का है। दोनों सिरो में कास्य की टोपी लगी हुई है। दण्ड का घेरा साढ़े पाँच अंगुल है। उसके ककुभ के तीन सिरे हैं, वे उच्च, उच्चतर तथा उच्चतम हैं। ऊर्ध्व सिरे में चार मूल तन्त्रियों का स्थापन करना है। दाहिने सिरे में 'सुर' देने वाली दो या तीन तन्त्रियों का स्थापन करना है। ककुभ से सात अंगुल दूर एक कद्दू का स्थापन करना है। ३४ अंगुल की दूरी पर दूसरे कद्दू का स्थापन करना है। दोनों कद्दूओं के मुख के घेरे १८ अंगुल के हैं। उसके ऊपर कुम्भ का स्थापन करना है। पिछले कद्दू की ऊँचाई कुछ अधिक चाहिए। इस वीणा में सारिकाएँ १८ हैं। दस बड़ी हैं और आठ छोटी। छोटी सारिकाएँ तारस्थान के लिए हैं। चारों मूलतन्त्रियाँ क्रमशः षड्ज, पञ्चम, षड्ज-पञ्चम का वादन करती हैं।

**तंजौर वीणा या दक्षिणात्य वीणा**—इसमें एक ही कद्दू है। पर दाहिने सिरे में लकड़ी का घट दण्ड के साथ जोड़ दिया जाता है। एक ही लकड़ी में भी दण्ड और घट खुदवाये जाते हैं। तब उसे 'एकाण्ड वीणा' कहते हैं। कद्दू का स्थान बायीं ओर है। सारिकाएँ २४ हैं। हर एक स्थान की बारह सारिकाएँ हैं। मूलतन्त्रियाँ चार हैं और चिकारियाँ तीन हैं। चिकारी दण्ड के पार्श्व में रहती हैं। मूल तन्त्रियों पर मुक्तावस्था में मध्य षड्ज, मन्द्र पञ्चम, मन्द्र षड्ज, अति मन्द्र पञ्चम बोलते हैं। चिकारियों पर तारस्थानीय षड्ज, पञ्चम और अतितारस्थानीय षड्ज बोलते हैं। तीनों चिकारियाँ और मूल तन्त्रियों में पहली दो तन्त्रियाँ लोहे की हैं। बाकी दो मूलतन्त्रियाँ पीतल की हैं।

**महानाटक वीणा या गोदट्टुवाद्य**—कर्नाटक पद्धति का यह एक नवीन वाद्य है। इसमें अनुध्वनि के लिए सात तन्त्रियाँ दण्ड के अन्दर हैं। आकार वीणा के अनुसार है। उँगली से बजायी जाती है, पर सारण उँगलियों से नहीं किया जाता। एक लकड़ी के टुकड़े से तन्त्री को दबाकर स्वरों का उत्पादन करते हैं। यह काष्ठदण्ड लबाई में ३ इंच है और १ इंच इसका व्यास है। यह आवनूस की लकड़ी से बनाया जाता है। इसमें विविध गमकों को अच्छी तरह उत्पन्न किया जा सकता है, परन्तु वीणा के कुछ विशेष प्रयोग इसमें साध्य नहीं हैं।

**सारङ्गी**—सारङ्गी का विवरण 'सगीत नारायण' में बताया गया है। यह विवरण प्रायः आधुनिक सारङ्गी के समान है। सगीत नारायण में पाये जानेवाले विवरण यों हैं—उसका वदन साल, पनस या घनता से युक्त अन्य लकड़ी से बनाया जाता है। उसकी लंबाई तीन बित्ते की है। सिर का विस्तार १५ अंगुल है (लगभग ११ इंच), सिर सर्पफणाकार है। सिर के मध्य भाग में एक शिखर है। गला पतला है। दण्ड गले के नीचे है। उसकी लंबाई १७ अंगुल है। ऊपर स्थूल होता जाता है और नीचे क्रमशः कृश है। दण्ड और सिर इन दोनों का गर्भ खुदा हुआ है। दण्ड के पिछले भाग में और सिर के गर्भ भाग में सारण करने का स्थान चतुरश्र रूप में है। उसकी लंबाई छ अंगुल और चौड़ाई चार अंगुल है।

उसके सिर का प्रदेश चमड़े से मढ़ा जाता है। उसकी तीन तन्त्रियाँ रेशमी धागे की हैं। धनुष (गज) से इसका वादन करना है। धनुष (गज) घोड़े की पूँछ के बालों का रहता है। इसमें राल रगड़कर वादन करना है। धनुष की लंबाई ३० अंगुल (२२½ इंच) है।

आधुनिक सारङ्गी का रूप इसके समान है, पर वादन करते समय बाद्य को रखने में अन्तर है। सिर को नीचे रखकर वादन करते हैं। इसकी तीन तन्त्रियाँ तोंत की हैं और चौथी तन्त्री लोहे की है। इसके अतिरिक्त अनुध्वनि के लिए मुख्य तन्त्रियों के नीचे लगभग लोहे की १५ तन्त्रियाँ हैं। सब तन्त्रियाँ धूम सकनेवाली खूँटी से बाँधी जाती हैं।

**सितार**—सितार भारतीय त्रितन्त्री वीणा का एक भेद है। कहा जाता है कि उसके नाम और रूप की कल्पना अमीर खुसरो ने की। सितार का 'घट' पनस की लकड़ी से या कदू के आधे भाग से बनाया जाता है। घट के ऊपरी भाग पर पतला तख्ता लगाया जाता है। उसका ककुभ सीधा रहता है। इसमें कदू नहीं है। घट के ऊपरी भाग में छोटे-छोटे द्वार हैं। तन्त्रियाँ चार हैं। दण्ड और उसके ऊपर की पीतल की सारिकाएँ कूर्मपृष्ठ के आकार की हैं। कुछ सितारों में अनुध्वनि के लिए मुख्य तन्त्रियों के नीचे तन्त्रियाँ रखी जाती हैं। सारिकाएँ सरकने योग्य रखने के लिए कमानी स्प्रिङ्ग से बाँधी जाती हैं। सारिकाएँ अठारह से बीस तक होती हैं।

**सरोद**—सारङ्गी, सितार और वीणा के गुणों से युक्त है और लंबाई दो हाथ की है। घट से ककुभ तक की चौड़ाई में क्रमशः कमी होती है।

**दिलरबा**—सारङ्गी के आकार में रहता है, पर दण्ड की लंबाई कुछ ज्यादा है। धनुष (गज) से बजाया जाता है, इसमें सारिकाएँ हैं। सारङ्गी की तरह इसके घट-स्थान के नीचे के भाग चमड़े से मढ़े जाते हैं। चार मुख्य तन्त्रियाँ हैं और अनुध्वनि

के लिए उनके नीचे २२ तन्त्रियाँ रहती हैं। सारिकाएँ १९ हैं और वे सरकने योग्य हैं। चार मुख्य तन्त्रियों में दो लोहे की और दो पीतल की हैं।

**सुरबहार**—सितार के आकार में रहता है, परंतु इसकी सारिकाएँ सरकने योग्य नहीं हैं, स्थिर रहती हैं। इसे उँगलियों से और कोण से बजाते हैं।

**इसराज**—सारङ्गी के आकार और प्रकार में रहता है। पर सब तन्त्रियाँ लोहे की हैं।

**तंबूरा**—भारतीय सगीत का, 'सुर' देने का वाद्य है। आकार में वीणा के समान है। पर इसमें कद्दू और सारिकाएँ नहीं हैं। घट मात्र है। इसमें चार तन्त्रियाँ हैं। उन्हें क्रमशः बजाने से 'प स स स' बोलते हैं।

## सुषिर वाद्य

**बाँसुरी**—वेणु (बाँस), आबनूस की लकड़ी, हाथी दाँत, चन्दन, रक्त चन्दन, लोहे, कासे, चाँदी या सोने से बनायी जा सकती है। यह ग्रन्थि, भेद, और व्रण से रहित रहती है। इसका रध्र-प्रमाण छोटी उँगली का व्यास है। यह रंध्र पूरी बाँसुरी में एक-सा रहता है। सिर स्थल बद रहता है। दो, तीन या चार अंगुल की दूरी पर फूँकने के लिए एक उँगली के प्रमाण का पहला रध्र बनाना है।

अग्र भाग में एक या दो अंगुल छोड़कर उसके पीछे बदरी-बीज के समान परिधि-वाले आठ रंध्र करना है। इन आठ में से पहला रध्र वायु के निर्गमन या बाहर जाने के लिए नियत है। बाकी सात रंध्र सात स्वरो के लिए निर्धारित हैं। ये आठ रंध्र उनके बीच में समान दूरी के स्थान छोड़कर करना है।

मुखरध्र के निकटतम रध्र से, सप्त स्वररध्रो को मूँदकर उत्पन्न होनेवाले स्वर का तारस्वर निकलता है। मुखरंध्र और ताररंध्र के बीच में जो जगह छोड़ी जाती है उस जगह की दूरी से विविध भेद होते हैं। सगीत रत्नाकर में इस बात पर पहले एक नियम बताया है, उस नियम को शास्त्रीय नियम कहा गया है। उसके बाद देशी-मत नाम का दूसरा नियम बताया, परंतु उसी ग्रन्थ में बताया गया है कि ये दोनों नियम ठीक नहीं। ऐसा कहकर स्वकल्पित नये नियम को प्रस्तुत किया गया है।

पहले-पहल बताया हुआ शास्त्रीय नियम यह है—“स्वररध्रो का परस्पर अंतर आधा अंगुल और मुखरध्र से ताररध्र की दूरी एक, दो, तीन, चार, पाँच, छ., सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह, बारह, चौदह, सोलह या अठारह अंगुल हो सकती है। इन पंद्रह प्रकार के वशों के अलग-अलग नाम—एकवीर, उमापति, त्रिपुष्प, चतुर्मुख,

पचवक्त्र, षण्मुख, मुनि, वसु, नाथेन्द्र, महानन्द, रुद्र, आदित्य, मनु, कलानिधि और अष्टादशाङ्गुल दिये गये हैं।

मुखरध्र तारस्वर रंध्र की दूरी को बढा सकते हैं। मुखरध्र से १३, १५ और १७ अंगुल दूरी पर यदि ताररध्र रहता है, तो स्वरों का अन्तर स्पष्ट नहीं होता। बीस या बाईस अंगुल की दूरी पर भी कुछ लोग ताररध्र बनाते हैं, पर उनमें शब्द अतिमन्द्र होने के कारण वे मान्य नहीं हैं। यह दूरी पाँच अंगुल के नीचे होती है तो ध्वनि अतितार रहती है। इसलिए इनके प्रयोग विरल हैं।”

“इनमें सप्त स्वरों के द्वारों को मुद्रित किया जाय अर्थात् बद कर दे, तो अष्टादशाङ्गुल नामक बाँसुरी में मन्द्रषड्ज उत्पन्न होता है। दूसरी बाँसुरियों में क्रमशः मन्द्रऋषभ, मन्द्रगान्धार, मन्द्रमध्यम, मन्द्रपञ्चम, मन्द्रधैवत और मन्द्रनिषाद उत्पन्न होते हैं। उसके बाद की आठ बाँसुरियों में क्रमशः मध्यस्थानीय षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पञ्चम, धैवत, निषाद और तारस्थानीय षड्ज क्रमशः उत्पन्न होते हैं।”

“इसी प्रकार इन बाँसुरियों के अन्तिम दो रंध्रों को खुला रखे तो, क्रमशः हर एक बाँसुरी में मन्द्रऋषभ, मन्द्रगान्धार—इत्यादि अग्रिम स्वर की उत्पत्ति होती है। तीन रंध्रों को खुला रखे तो बाँसुरी में तीसरा स्वर उत्पन्न होता है। इस तरह सात रंध्र तक खुले रहने से क्रमशः हर एक बाँसुरी में सातवाँ स्वर तक उत्पन्न होता है।” इसी को शास्त्रीय नियम कहते हैं।<sup>१</sup>

प्राचीन तमिल ग्रन्थों में पाये जानेवाले विवरण और आज कर्नाटक संप्रदाय में प्रचलित पद्धति—ये दोनों भी प्रायः समान हैं। इसके अनुसार बाँसुरी की लंबाई २० अंगुल (१५ इंच) है। उसके सिर से दो अंगुल (१½ इंच) छोड़कर फूँकने का रंध्र बनाया जाता है। उससे सात अंगुल (५½ इंच) दूर छोड़कर और अन्त में दो अंगुल (१½ इंच) छोड़कर बाकी जगह में समान दूरी के आठ छिद्र बनाये जाते हैं। इन आठ रंध्रों में अन्तिम रंध्र वायु संचार के लिए है। बाकी सात द्वारों में दाहिने हाथ की चार उँगलियाँ और बाये हाथ की तर्जनी से अर्थात् तर्जनी, मध्यमा और अना-

१. संगीत रत्नाकर में बताये हुए ‘शास्त्रीय मत’ के विषय में ग्रन्थकार का कथन है कि यह मत ठीक नहीं है। हमें मूल ग्रन्थों को ढूँढ़कर उसके असली स्वरूप का निश्चय करना है। क्योंकि हमारी संगीतकला का विकास शास्त्रीय (वैज्ञानिक) आधार पर हुआ है। इसलिए बाँसुरी के बारे में भी सच्चे शास्त्र का पता लगाना आवश्यक है।



मिका उँगलियों से बंद और खुला रखकर बजाते हैं। बायें हाथ की अनामिका को खोलने से षड्ज, मध्यमा उँगली को खोलने से ऋषभ, सब द्वारों को खुले रखने से गान्धार, बायें हाथ की तर्जनी उँगली को खोलने से मध्यम, दाहिने हाथ की अनामिका से पञ्चम और मध्यमा को खोलने से धैवत, तर्जनी को खोलने से निषाद—उत्पन्न होते हैं। इनके साथ शास्त्र वचन के अनुसार चतुःश्रुति स्वर, त्रिश्रुति स्वर और द्विश्रुति स्वर के उत्पादन का प्रकार भी अनुभव के अनुसार प्रयुक्त करना है। शास्त्र का वचन है कि उँगली को हटाकर रंध्र को पूरी तरह खुले रखने से चतुःश्रुति स्वर की उत्पत्ति होती है। उँगली में द्वार को बार-बार खुला और बंद रखने से त्रिश्रुति स्वर और आधा खोलने से द्विश्रुति स्वर की उत्पत्ति होती है। कभी-कभी फूँकने के बल में कमी करके त्रिश्रुति स्वर उत्पन्न किया जाता है।

### फूँकने के प्रकार

मुँह को रंध्र के अति निकट में रखकर फूँकने से तार स्वर की उत्पत्ति होती है। इसका नाम 'टीपा' है। मुँह को थोड़ी दूर पर रखकर फूँका जाय तो, मन्द्र स्वर की उत्पत्ति होती है। फूँकने में वायु को वेगयुक्त या मन्द रखना, पूर्ण या अपूर्ण रखना, बढ़ाते जाना या कम करते आना इत्यादि क्रियाओं से एक ही स्वरस्थान में विविध स्वरों की उत्पत्ति हो सकती है।

### बाँसुरी की गतियाँ

बाँसुरी की पाँच गतियाँ हैं; कम्पिता, वलिता, मुक्ता, अर्धमुक्ता, निपीडिता—इन गतियों से विविध वर्णालंकारों का प्रकाशन होता है।

बाँसुरी को अधर में रखकर कम्पन करे तो 'कम्पिता' गति उत्पन्न होती है।

उँगलियों को टेढ़ी करके चालन करने से 'वलिता' गति हो जाती है।

रंध्र पूरा खोल दिया जाय तो 'मुक्ता' गति है।

आधा खोलने का नाम 'अर्धमुक्ता' है। शब्द को कुछ देर धारण करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है।

सब रंध्रों को बंद करके जोर से बजाने का नाम 'निपीडिता' है।

### नाटक में बाँसुरी का प्रयोग

शृङ्गार रस में मध्य, द्रुत लय में बाँसुरी के द्वारा ललित ध्वनि का प्रयोग करना विहित है। शोक भाव प्रदर्शन के लिए मध्य लय में मृदुत्व के साथ बाँसुरी बजाना है।

क्रोध और अभिमान की अवस्था का प्रदर्शन करने के लिए द्रुत लय में कम्पित, एवं स्फुरित गति में बजाना है। यह मतङ्ग मुनि का कथन है।<sup>१</sup>

### बाँसुरी के नाद अर्थात् फूँकार के गुण

१. स्निग्धता—रूखापन न रहना।
२. घनता—स्थूलता।
३. रक्ति—रञ्जन शक्ति।
४. व्यक्त—स्पष्टता।
५. प्रचुरता—नादपूर्णता।
६. लालित्य—ललित भाव।
७. कोमलत्व—मृदुलता।
८. अनुरणन—अनुरणनत्व।
९. त्रिस्थानत्व—तीनों सप्तकों में बिना सँकावट के संचार करना।
१०. श्रावकत्व—सुनने में रमणीय रहना।
११. माधुर्य—मधुरता।
१२. सावधानता—अनवधान राहित्य अर्थात् फूँकने में न्यूनाधिकता के बिना एक सा फूँकना।

### फूँकने के दोष

१. यमल—फूँकार के साथ प्रतिफूँकार की उत्पत्ति।
२. स्तोक—फूँकार की कमी, नाद स्थूल होने पर भी स्थान को पाने की शक्ति का लोप।

३. कृश—स्थान प्राप्ति होने पर भी नाद का अस्थूल रहना।

४. खलित—बीच-बीच में ध्वनि स्थगित होना।

मतान्तर के अनुसार और पाँच दोष हैं—

१. कम्पित—कफ की युक्तता के कारण ध्वनि का विकृत भाव।
२. तुम्बकी—कहूँ के नाद की तरह रहना।

१. बताया गया है कि बाँसुरी वाद्य मतंग मुनि ने ही परिष्कृत किया और बाँसुरी वादन में उनका मत ही प्रमाण माना जाता है, परन्तु मतंग मुनि के उपलब्ध ग्रन्थ 'बृहद्देशी' में वाद्याध्याय लुप्त है।

३. काकी—तारप्राप्ति के अभाव के कारण कौए-जैसी ध्वनि रहना ।
४. सन्दष्ट—दाँत पीसने की तरह फूँकना ।
५. अव्यवस्थित—नाद की एकरूपता न होना ।

### बाँसुरी बजानेवाले के गुण

उँगलियों के चलाने का अभ्यास, अच्छी तरह स्थानों की-प्राप्ति, मधुरता से रागभाव को व्यक्त करने की शक्ति, वेग से आगे और पीछे संचार करने की शक्ति, गीत और वादन में कुशलता, गवैयाँ को सुर देना, गायक के दोष को छिपाना, मार्ग और देशी रागों की अच्छी जानकारी, अपस्थान स्वरों में भी रागभाव को उत्पन्न करने की शक्ति—आदि ही बाँसुरी बजानेवाले के गुण हैं ।

### बाँसुरी बजानेवाले के दोष

मिथ्या प्रयोग अर्थात् अनुचित स्थान में आलाप करना या गमक का ज्यादा प्रयोग करना, इष्ट स्थान तक पहुँचने में अशक्तता, सिर का कम्पन आदि बाँसुरी बजानेवाले के दोष हैं ।

### बाँसुरी का वृन्द

एक मुख्य बाँसुरी बजानेवाला और चार लोग अग-बाँसुरी बजानेवाले रहने चाहिए ।

**मुरली**—मुरली की लंबाई दो हस्त की है । वादन करने के लिए मुखरध्र है और स्वरों के लिए ४ द्वार हैं । नाद रमणीय है । शृङ्ग से या लकड़ी से बनायी जाती है । आकार काहल के समान है । लंबाई २८ अंगुल है ।

**काहल**—पीतल, ताम्र और चाँदी से बनाया जाता है । धतूरे के फूल के आकार में रहता है । लंबाई तीन हाथ की है । उससे उत्पन्न होनेवाले शब्द 'हा' और 'हू' हैं । वीर-विरुद्ध के प्रकाश के लिए इसका प्रयोग करते हैं ।

**तुण्डकी या तुष्टुरी या तित्तिरी या तुष्टि**—दो हस्त की लंबाई का जोड़ेवाला सुषिर वाद्य है । ४ हस्त की लंबाई हो तो उसका नाम 'चुक्की' है ।

**शृङ्ग**—भैंस के शृङ्ग से बनाया जाता है । उसके मूल में साँड़ का आठ अंगुल लंबा सींग रखना चाहिए । उसके मूल में फूँकने का छिद्र करना चाहिए । इसका आकार हाथी की सूँड की तरह और इसके अन्तिम भाग का आकार धतूर के फूल की तरह रहता है । वादन में 'तुथुकार' उत्पन्न होता है । इसकी ध्वनि गंभीर है । गोपकेलि में इसका उपयोग होता है ।

**शंख**—दोपरहित ११ अगुल लबाई के एक शंख की नाभि को खुदवाकर उसके शिखर में एक रध्र बाहर से आधा अगुल और अंदर से उरद के प्रमाण का करना है। उसे कर्कट मुद्रा हस्त से पकड़कर पूर्ण बल से फूँक मारना चाहिए। इसके शब्द 'हु, धु तो, दिगिद् दी'—इत्यादि हैं।

**नागस्वर या तूर्य**—ये दक्षिण भारत के देवालयों में उत्सव, शादी, जुलूस आदि मंगल अवसरों पर बजाये जाते हैं। इनका आकार लंबे धतूर जैसा है। 'आच्चा' (द्राविड़ी) नामक लकड़ी से बनाये जाते हैं। इनकी लबाई डेढ़ हाथ होती है। मुख का व्यास धीरे-धीरे बड़ा होता जाता है। अन्त में फूल के खिलने की जगह व्यास दो अगुल का रहता है। उसमें सप्त स्वरों के रध्र १ अगुल व्यास के बनाये जाते हैं। वायु-संचार के लिए सातों रध्रों के नीचे कुछ दूर पर आठवाँ रध्र है। सातवें रध्र के नीचे दोनों तरफ दो रध्र हैं, और आठवें रध्र के नीचे इसी तरह के और दो रध्र दोनों तरफ रहते हैं। फूँकने का एक उपकरण शीवाली नामक है। वह शीवाली गोलाकार न रहकर उभरा हुआ एवं खुलने तथा बंद करने योग्य छोटे नाल जैसा है। उसका अधर भाग वाद्य के मुँह में सलग्न करने योग्य एक शलाका जैसा है। उसे वाद्य के मुख में लगाकर बजाते हैं। अधर के चालन से विविध घन, नय आदि ध्वनि, स्वरों के वर्णालंकार उत्पन्न कर सकते हैं। और इसी क्रिया से स्वरों की एक या दो श्रुतियाँ ऊँची और नीची भी कर सकते हैं। नागस्वर सुर देने के लिए है। 'ओत्तु' नामक स्वर-द्वारों से रहित, नागस्वर के आकार का वाद्य और ताल रखने के लिए कास्य ताल, अवनद्ध वाद्य के लिए 'डिडिम' रहते हैं। वाद्यवादकों में पूर्ण संगीत-संप्रदाय-विशारद बहुत हैं।

**मुखवीणा**—यह छोटा नागस्वर है। इसका उपयोग नाट्य में है। पर आजकल इसका स्थान क्लारिनेट ले रहा है।

**शहनाई**—नागस्वर का प्रतिरूप है शहनाई। यह उत्तर भारत में बजायी जाती है, परंतु उसकी लबाई नागस्वर से आधी है। उसका नाद कोमलतर है। नागस्वर-वालों की तरह शहनाई बजानेवालों में संप्रदायकुशल लोग बहुत हैं।

**क्लारिनेट**—पाश्चात्य नागस्वर है। इसमें स्वरस्थानों को बंद करने या खोलने के लिए उँगलियों का प्रयोग सीधे नहीं करते हैं। हर एक रध्र को बंद करने और खोलने का एक उपकरण है। उसे दबाकर स्वरों का उत्पादन करते हैं। दक्षिण भारत में आज इस वाद्य में कर्नाटक और हिन्दुस्थानी संगीत को अच्छी तरह बजाया जाता है। इसके साथी साज दूसरे पाश्चात्य वाद्य हैं। उनके नाम साक्सफोन, ट्रम्पेट आदि हैं।

### अवनद्ध वाद्य

मृदङ्ग शब्द आदिकाल मे 'पुष्कर' वाद्य का नाम था। पुष्कर वाद्य में चमड़े से मढ़े हुए तीन मुख थे। दो मुख बायी और दाहिनी ओर रहते थे, तीसरा मुख ऊपर रहता था। उसका पिण्ड मृत् या मिट्टी से बनाया जाता था। इसी कारण इसका नाम मृदङ्ग पड़ा। कुछ समय के बाद बायी और दाहिनी ओर दो ही मुख वाले वाद्य की सृष्टि हुई। फिर उसका पिण्ड लकड़ी से बनाया गया। इन पुष्कर आदि वाद्यों की उत्पत्ति के बारे मे नाट्यशास्त्र मे एक वृत्तान्त है।

पहले भी बताया गया है कि स्वाति और नारद ही सगीत वाद्यों के आदि ग्रन्थे-कर्ता हैं। इनमे स्वाति एक बार छुट्टी के दिन (अनध्ययन दिन) एक सरोवर पर पानी लाने के लिए गये थे। आकाश बादलों से घिरा हुआ था, वेगपूर्वक वर्षा होने लगी। तब वायु वेग से सरोवर मे पानी की बड़ी-बड़ी बूंदों के पड़ते समय पद्म की बड़ी, छोटी और मझोली पखुड़ियों पर वर्षा-बिन्दुओं के आघात से विभिन्न ध्वनियाँ उत्पन्न हुईं। उनकी अव्यक्त मधुरता को सुनकर आश्चर्यचकित स्वाति ने उन ध्वनियों को अपने मन मे धारण कर लिया और आश्रम पहुँचने पर विश्वकर्मा से कहा कि इसी तरह के शब्द उत्पन्न करने के लिए एक वाद्य बनाना चाहिए। फलतः पहले-पहल तीन मुख से युक्त 'मृत्' से पुष्कर की सृष्टि हुई। बाद मे उसका पिण्ड लकड़ी या लोहे से बनाया गया। तब हमारे मृदङ्ग, पटह, झल्लरी, दर्दुर आदि चमड़े से मढ़े हुए वाद्यों की सृष्टि हुई।

आगमों मे बताया गया है कि लकड़ी से बनाये हुए मृदङ्ग की सृष्टि ब्रह्मा ने की है और शिवताण्डव का साथ देने के लिए ही उसकी उत्पत्ति हुई। पुष्कर आज व्यवहार में नहीं है। पर मृदङ्ग आदिकाल से अब तक अवनद्ध वाद्यों मे मुख्य स्थान पाता रहा है।

मृदङ्ग का पिण्ड बीजवृक्ष (तमिल मे वेङ्गै) या पनस की लकड़ी से बनाया जाता है। उसकी लंबाई २१ अंगुल (१५ $\frac{1}{2}$  इंच) है। लकड़ी का दल आधे अंगुल का है। दाहिना मुख १४ अंगुल और बाया मुख १३ अंगुल है, मध्य मे १५ अंगुल है। दोनों ओर के मुख चमड़े से मढ़े जाते थे। किनारे पर चमड़ा घनता से युक्त रहता था। उस चमड़े के घेरे मे २४ छिद्र रहते थे। छिद्रों का पारस्परिक अन्तर एक अंगुल रहता था। उन छिद्रों मे से वेणी की तरह चमड़े की रस्सी (वध्र, बद्धी) से बाँधा जाता था। इन दोनों 'पुडियो' को चमड़े की रस्सी से दोनों ओर खींचकर दृढता से बाँधा जाता था। रस्सी के बंधन को ढीला करने या तानने से मृदङ्ग के स्वर को ऊँचा या नीचा कर सकते थे। पकाये हुए चावल को अपामार्ग के भस्म के साथ मिलाकर दोनों पुडियों के मध्य

मे लगाया जाता था। उसका नाम 'बोहण' है। संगीतरत्नाकर मे कहा गया है कि बायीं ओर अधिक और दाहिनी ओर थोड़ा कम लगाया जाता था। पर आजकल बाये मुख मे, बजाने से पूर्व गुंथा हुआ आटा छोटी आकृति में लगाते हैं और दाहिने मुख मे मृदङ्ग बनाते समय ही लकड़ी का कोयला, पकाया हुआ चावल, गोंद—इनको मिश्रित कर तीन इंच व्यास के चक्राकार मे लगाते हैं। उसे स्थिर रहने देते हैं।

इस तरह के मृदङ्गो मे तीन प्रकार है। आङ्गिक, आलिङ्ग्य, ऊर्ध्वक। आलिङ्ग्य भूमि मे रखकर बजाने योग्य है। आङ्गिक कटि मे बाँधकर बजाने योग्य है। ऊर्ध्वक छाती मे बाँधकर बजाने योग्य है। रक्तचन्दन और आबनुस की लकड़ी से भी मृदङ्ग बन सकते हैं। पर उनकी मोटाई एक अंगुल (३ इंच) रहनी चाहिए। लंबाई तीस अंगुल रहती है। दाहिना मुख ११ इंच अंगुल और बायां मुख १२ अंगुल व्यास का रहता है। इस वाद्य का देवता नन्दिकेश्वर है।

इस वाद्य में बोलनेवाले पाठ या वाद्यशब्द ये हैं—दाहिने मुख में तद्धि, ये, टें, हे, नं, दे। बाये मुख मे त, ट, ल्ला, द, ध, ल—इनका नाम 'शुद्ध सज्ञा' है। इनके सिवा इस वाद्य से उत्पादित किये जा सकनेवाले अक्षर भी शास्त्रो मे बताये गये हैं। उन्हें 'कूट सज्ञा' कहते हैं। क, ख, ग, घ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, य, र, ल, ह, म, झ—ये सब व्यञ्जन कई स्वर अक्षरो के साथ बोलते हैं।

ककार अ, ई, उ, ए, ओ, अं से युक्त बोलता है। उसके रूप क, कि, कु, के, को, कं हैं।

खकार इ, उ, ओ के साथ आता है, इसके रूप खि, खु, खो है।

गकार से उ, ए, ओ के साथ गु, गे, गो बनते हैं। घकार अ, ए, ओ के साथ घ, घे, घो, के रूप मे आता है।

टकार से अ, ई, ओ, अ के साथ ट, टि, टो, टं बनते हैं।

ठकार अ, ई, ओ, अ के साथ ठ, ठि, ठो, ठ के रूप में आता है।

डकार अ, ओ, के साथ ड, डो बन जाता है।

ढकार आ, ए, अ के साथ ढा, ढे, ढं बन जाता है।

तकार अ, आ, इ, ए के साथ त, ता, ति, ते बनता है।

थकार अ, आ, इ, ए के साथ थ, था, ति, थे के रूप मे बोलता है।

दकार अ, उ, ए, ओ के साथ द, दु, दे, दो के रूप में ध्वनित होता है।

धकार अ, इ, ओ, अं के साथ ध, धि, धो, धं के रूप मे आता है।

रकार या रेफ अ, आ, इ, ए के साथ र, रा, रि, रे बन जाता है।

लकार अ, आ, ई, ए के साथ ल, ला, लि, ले बन जाता है।

हकार यकार के साथ अर्थात् ह और य मिलकर आते हैं।

मकार अं के साथ 'मं' के रूप में आता है और झकार अ, ए और अं के साथ झ, झे, झं बोलता है।

क, घ, त, ध—इनके साथ रेफ का अनुबन्ध होता है, अर्थात् क्रं, घ्रं, त्रं, ध्रं—इस तरह रूप होते हैं। ककार, पकार और तकार के साथ लकार भी आता है, जैसे—क्लां, प्लां, त्लां—आदि।

उन्हे उत्पादन करने का मार्ग—

दोनों हाथों से एक ही समय बजाने से 'ध' शब्द निकलता है। एक मुख से भी 'धकार' की उत्पत्ति होती है।

दोनों मुखों में उँगलियों को सरकाने से 'कु' शब्द निकलता है।

दोनों मुखों में अवष्टम्भ (उठाने की तरह की क्रिया) करने से 'यकार' शब्द निकलता है।

बजाते समय पुड़ी के आधे भाग में ही हाथों को खींच लेने से 'थ' कार शब्द निकलता है।

दाहिने मुख में पीडन करने से 'क्ल' कार, उँगलियों से घर्षण करने से 'क्षकार', दोनों तर्जनियाँ बलपूर्वक रखने से 'क्ले', एक मुख में नख के द्वारा 'र', बाये मुख में 'द' कार।

दाहिने मुख के ऊपरी भाग में 'म' कार और बाये मुख के ऊपरी भाग में ओकार की उत्पत्ति होती है।

### पञ्च पाणि प्रहतम्

अक्षरों की उत्पत्ति के लिए कराघात पाँच प्रकार के हैं—समपाणि, अर्धपाणि, अर्धार्धपाणि, पार्श्वपाणि, प्रदेशिनी। नाम से ही उनकी क्रिया स्पष्ट है।

समपाणि से मारकर हाथ खींच लेने से मकार की उत्पत्ति होती है।

अर्धपाणि से मारते समय हाथ को आधा खींच लेने से गकार, दकार, धकार आदि शब्द निकलते हैं।

पार्श्वपाणि से मारकर खींच लेने से ककार, खकार, णकार, उकार आदि शब्द निकलते हैं।

•१. वाद्य शब्द-अक्षरों का विवरण और उनका उत्पत्ति-क्रम नाट्यशास्त्र, ३३वें अध्याय से उद्धृत है।

अर्धार्धपाणि से मारने से त, थ, ह कार शब्द निकलते हैं।  
प्रदेशिनी से बजाते हैं तो गकार, थकार, णकार शब्द निकलते हैं।

### हस्तपाट या वाद्यशब्दों की योजना

१. आदि हस्तपाट—शिवजी के पाँच मुखों में हरएक से सात संयुक्त हस्त-  
पाट उत्पन्न हुए हैं। उनमें **सद्योजात** मुख से उत्पन्न हस्तपाट—

वनगिन गिननगि	—	इसका नाम है	नागबन्ध
ननगिड गिडदगि	—	„	पवन
गिडगिडगिडदत्था	—	„	एक
किटतत किटतत	—	„	एक सर
नखु नखु	—	„	दुस्सर
खिरंतकिट	—	„	सचार
थोगि थोंगि	—	„	विक्षेप

### वामदेव मुख से उत्पन्न हस्तपाट

ततकिट	—	इसका नाम है	स्वस्तिक
थोंहता	—	„	बलिकोहल
थोंगिन थों थोंगिन	—	„	फुल्लविक्षेप
थों थो गो गों	—	„	कुण्डली विक्षेप
थोगिण तत्ता	—	„	सचारविलिखी
किटथोथो गिनखेखे	—	„	खण्ड नागबन्ध
टकुक्षेजे	—	„	पूरक

### अघोरमुख से उत्पन्न हस्तपाट

ननगिडगिडदगिदा	—	इसका नाम है	अलग्न
दत्थरिकि दत्थरिकि	—	„	उत्सर
तकिधिकि तकिधिकि	—	„	विश्राम
टगुनगु टगुनगु	—	„	विषमखली अथवा विषमस्खलित
खिरिट खिरिट	—	„	सरी
खिरि खिरि	—	„	स्फुरी
नरकिक्थरिकि	—	„	स्फुरण



**तत्पुरुष मुख से उत्पन्न हस्तपाठ**

दरिगिड गिडदगिदा	—	इसका नाम है	शुद्धि
टटकुटट	—	”	स्वरस्फुरण
ननगिनखिरिखिरि	—	”	उच्छल्ल
दखे दखे दखे खे	—	”	वलित
थोभिनगि थो गिनगि	—	”	अवघट
तत्ता	—	”	तकार
धिधि	—	”	माणिक्यवल्ली

**ईशान मुख से उत्पन्न हस्तपाठ**

तझे तझे ज्ञे	—	इसका नाम है	समस्खलित अथवा समस्खली
गिरिगड गिरिगड	—	”	विकट
किण किणकि	—	”	सदृश
धिधि किटकि	—	”	अड्डुखली अथवा स्खलित
गिदिनगि दिगिनगि	—	”	खली
घरकट घरकट	—	”	अनुच्छल अथवा अनुच्छल्ल
दो नकट दो नकट	—	”	खुत्त

मृदङ्ग वादकों में चार कोटियाँ हैं। वादक, मुखरी, प्रतिमुखरी और गीतानुग। ‘वादक’ का वादन इस प्रकार रहना चाहिए—

पहले ‘त्राटन’ नामक वादन करना चाहिए। मृदङ्ग में ताल का अनुसरण न करके ‘वोहण’ लगाने से पहले ‘देहडङग’—इत्यादि ध्वनियों की उत्पत्ति करनी चाहिए।

उसके बाद ‘ओडवाड’ नामक घन ध्वनि की अधिक उत्पत्ति करनी चाहिए।

उसके बाद ‘उधार’ नामक अनुरणन ध्वनि रूप ‘देहडडाद’ आदि शब्दों का वादन करना उचित है। उसके बाद ‘स्थापन’ का वादन करना है। बाये मुख में वोहण को लगाकर बाये मुख में ‘गडदग धो’ और दाहिने मुख में ‘गडदग धां’ इत्यादि शब्द उत्पन्न करना चाहिए। उसके बाद द्वितीय ताल (१०८ ताल देखिए) के मध्य लय में दोनों मुखों में तीन बार क्रमशः शब्दों की अधिक करते हुए वादी संवादी का संयोग करके वादन करना चाहिए। उसके बाद विलम्ब, मध्य, द्रुत लय में क्रमशः एक, द्रो, तीन थोंकार से अत करके वादन करना चाहिए। उसके बाद तीनों स्थानों में आलाप करने की तरह विलम्ब, मध्य, द्रुत लय में मनोधर्म का विस्तार

करते हुए मधुरता और सुन्दर रचना के साथ वादन किया जाना चाहिए। इस प्रकार के वादन का नाम 'स्थापन' है।

इसके बाद 'अन्तर' नामक वादन करना चाहिए, इसमें थोंकार का बहुत्व है। उसके बाद 'टाकणी' और 'वाद' का वादन करना चाहिए। टाकणी में दो प्रकार—सर टाकणी और जोड़ा टाकणी है। बाद में भी एक सरवाद, जोड़ा वाद होता है। इनमें चतुरश्र, त्र्यश्र, मिश्र, खण्ड तालों में एक तरह का ताल लेकर वादन करना। टाकणी में पहले श्रमवहनी नामक शब्द समूह का वादन करना। इसका रूप यह है—

० तद्धितोटे

तत धिधि थोंथों टेटे

ततत धिधिधि थोंथोंथों टेटेटे

तततत धिधिधिधि थोंथोंथोंथों टेटेटेटे

उसके बाद एक सर टाकणी में 'तकधिकट तकधिकट, धिकटतक, तकधिकट, ततकतकधिकट, धिकटकतधिकट'—इत्यादि के रूप में आठ वाद्यखण्डों का ताल की आठ कलाओं में वादन करना चाहिए। जोड़ा टाकणी में ऐसा वादन दो बार करना चाहिए।

'वाद' में पहले श्रमवहनी का वादन करके शुद्ध वर्णाभ्यास से 'दं द टिरिटिटि कड्—कड्दगझेक-उदवाझे-थरिक्कुथरि टगणगणथरि-गणगण धरि-धथरिगडदग-धथरिगडदग-हथरिगडदग-धतरि धतरि-तर्गड्दक्-तरिक्क टक्तक—इत्यादि ताल के सोलह खण्डों में वादन करना चाहिए।

'जोड़ावाद' में इसी प्रकार का दो बार वादन करना है। उसके बाद 'ताट' और 'वाद' का वादन करना उचित है। इनमें अतिद्रुत लय में दिगि दिगि दिग्दिग्—इत्यादि शब्दों का वादन करना। इसी प्रकार दूसरे वादन क्रम भी ऊहनीय है। इस तरह वादन करने से मृदङ्गवादक स्पर्धा में विजयी होता है।

**मुखरी**—वाद्य प्रबन्ध का रचयिता, नर्तन की शिक्षा में कुशल, गीत और वादन में पारङ्गत, सुस्वरूप, अवधान के साथ रहने के लिए अंतर्मुख रहनेवाला, नृत्य के अर्धाङ्ग के समान नृत्य में लीन होनेवाला, दूसरे वादकों के आगे खड़ा होनेवाला वादक 'मुखरी' कहलाता है।

इससे कुछ न्यून कोटि के वादक का नाम 'प्रतिमुखरी' है। शुद्ध, सालग गीतों के वर्ण, कठिन, कोमल, सम, विषम, मन्द्र, मध्य, तार, प्रौढ़ या मधुर शब्दों का अनुसरण वादन के द्वारा भली-भाँति करनेवाला, सालगगीत के उद्ग्राह नामक पूर्वभाग में तथा आभोग में, निस्सारक ताल में अनुलोम, प्रतिलोम, उभयमिश्र गति रचना से वादन

करनेवाले, तकार से आरंभ करके थोंकार से अंत करनेवाले वादक का नाम है 'गीतानुग'।

### महल आदि वाद्यों के प्रबन्ध

गीत प्रबन्ध के समान उद्ग्राह आदि खण्डो के साथ वाद्य शब्दों का प्रबन्ध भी बनाया गया है। उनके भेद ४३ हैं। वाद्य प्रबन्धों के अन्त में 'दे' कार रहता है।

### मृदङ्ग वादकों के गुण

अक्षरों की स्पष्टता, मुख आदि अंगों की सुरूपता, दूसरे वाद्यों का अनुसरण करने की पटुता, मधुर और गंभीरता के साथ वादन करने का कौशल, हस्तलाघव, सावधानी, श्रम को जीतने की शक्ति, मुख (आरम्भ) वाद्य में पटुता, रञ्जनशक्ति, दूसरे अवनद्ध वाद्यों का अनुसरण करना, शब्दों की बहुलता, यति, ताल और लय की अच्छी जानकारी, गीत का अनुसरण करना—ये मृदङ्ग वादकों के गुण हैं। इनसे रहित होना 'दोष' है।

### पञ्च संच

वादन करते समय वादकों के पाँच अंग हिलते हैं। इन्हीं कन्धे, कोहनी, अंगूठा, कलाई और बाये पाँव में होनेवाले कम्पन का नाम 'पञ्च संच' है। श्रेष्ठ वादकों के अंगूठे और मणिबन्ध (कलाई) ही हिलते हैं। मध्यम वादकों की कोहनी हिलती है। कन्धा अधम वादकों का हिलता है। बाये पाव का कम्पन होता वह सर्वश्रेष्ठ है।

### मृदङ्ग वृन्द

दो, तीन या चार मृदङ्ग वादक वृन्द में रह सकते हैं। सब वादक 'मुखरी' का अनुसरण करते हैं।

मृदङ्ग के अलावा पटह, आवुज आदि प्राचीन अवनद्ध वाद्य हैं। पर आज इन सब का प्रयोग नहीं हो रहा है। ढूँढा जाय तो कहीं देखने को मिल सकते हैं।

**पटह**—आबनूस की लकड़ी से बनाया जाता था। उसकी लंबाई २½ हाथ की है। मध्य में घेरे का नाप ६० अंगुल है। दाहिने मुख का व्यास ११½ अंगुल है। बायें मुख का व्यास १० अंगुल है। दाहिनी ओर लोहे का पट्टा होता है। बायी ओर लताओं का पट्टा लगाना होता है। उससे चार अंगुल दूर पर लौह-निर्मित तीसरा पट्टा लगता है। दोनों ओर मृत बछड़े के चमड़े से मढ़ाया जाता है। बायी ओर के चमड़े के घेरे में सात छिद्र बनाकर उनमें पतली रस्सी से, सोने चाँदी आदि से बनाये हुए चार अंगुल लम्बे सात कलशों को ढीला बाँधा जाता है। दाहिनी

ओर से उन्हे फिर उस चमड़े से बाँध दिया जाता है। इसे 'कोण' नामक साधन से या हाथ से बजाते हैं। इसी तरह का पटह कुछ छोटा रहे तो उसे 'देसी पटह' या 'अड्डावुज' कहते हैं। पटह का देवता स्कन्द है।

**हुडुक्का**—इसकी लंबाई एक हस्त की होती है। परिधि या घेरे का नाप २८ अंगुल होता है। पिण्ड का दल एक अंगुल होता है। दोनों मुखों का व्यास ७ अंगुल होता है। हर एक मुख में चमड़े से बनी हुई मण्डली बाँधी जाती है। मण्डली का व्यास ग्यारह अंगुल है। दोनों मण्डलियों को रस्सी से बाँध दिया जाता है। रस्सी के मध्य में रूहनेवाली स्कन्ध-पट्टिका को बाये हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ से बजाया जाता है। उसमें बोलनेवाले १६ अक्षर हैं, पर देकार नहीं है। हुडुक्का की देवी सप्त माता है—ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी और चामुण्डा।

**करटा**—लंबाई में २१ अंगुल और घेरे का नाप ४० अंगुल है। मुख का व्यास १४ या १२ अंगुल है। दोनों मुखों में चमड़े से मढ़ी हुई लोह-मण्डली है। मण्डली की परिधि ४२ अंगुल है। दोनों मण्डलियाँ चमड़े से मढ़ी हुई हैं। हर एक चमड़े में १४ छिद्र हैं। दो-दो छिद्रों के बीच में विग्निका नामक लोह-कर्पर रहते हैं, जो कपाल की तरह हैं। 'कुडुप' नामक कोण से इसका वादन करते हैं। इसके पाट 'करट' और 'तिरिकिरि' हैं। इसका देवता 'चच्चिका' (देवी का एक रूप) है।

**घट**—घट का उदर बड़ा रहता है। मुख छोटा है। इसका पिण्ड घनतायुक्त है। अच्छी तरह पका रहता है। हाथों से इसका वादन किया जाता है। मर्दल में बोलनेवाले पाट घट में भी बोलते हैं।

**घडस**—इस बाद्य का दाहिना मुख मात्र चमड़े से मढ़ा जाता है। बाया मुख रस्सी से बाँधा जाता है। बाये हाथ की तर्जनी से रस्सी को दबाते हैं। दाहिनी ओर हाथ से और बायी ओर उँगली से वादन किया जाता है। वादन करते समय हाथ में मोम लगा लेते हैं। इसका पाट 'धोकार' है। दाहिने हाथ से घर्षण के द्वारा धोकार की उत्पत्ति होती है।

**ढवस**—इसकी लंबाई एक हस्त की है। परिधि ३९ अंगुल और मुख का व्यास १२ अंगुल है। लता का वलय है। चमड़े से मढ़ा रहता है। चमड़े में सात छिद्र रहते हैं। यह छिद्रों के द्वारा रस्सी से बाँधा जाता है। मध्य भाग को हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ से 'कुडुप' नामक कोण के द्वारा वादन किया जाता है। इसका पाट 'ढकार' है।

**ढक्का**—ढवस के समान है, परन्तु मुख का व्यास १३ अंगुल है। उसका पाट 'ढँकार' है।

**कुडुक्का**—हुडुक्का का एक भेद है। हाथ से या कोण से बजाया जाता है।

**कुडुवा**—इसकी लंबाई २१ अंगुल है। बीज वृक्ष या लोहे का बनाया जाता है। दो मुख रहते हैं। पिण्ड और दोनों मुखों का व्यास सात अंगुल है। दोनों मुखों में चमड़े के अन्दर लता का वलय रहता है। उन्हे भी रस्सी से बाँध देते हैं। कोण से मोम को रगड़कर बजाना होता है। इसका पाट 'कैकार' है।

**डमरूका**—इसकी लंबाई एक बित्ता है। मुखों का व्यास ८ अंगुल है। मुख को मण्डली से बाँधा करते हैं, जो मण्डली चमड़े से मढ़ी जाती है। मध्य में व्यास कम है। मध्य में कटि-प्रदेश के आकार में रस्सी से बाँधना होता है। वादन के लिए मध्य में मिट्टी और मोम की गोली से लिपटी हुई एक रस्सी टाँगी जाती है। मध्यभाग को हाथ से पकड़कर वादन किया जाता है। इसका पाट 'डग' है। मतान्तर के अनुसार 'कख, रट' भी है।

**डक्का**—इसकी लंबाई एक बित्ता है। मध्य भाग कृश रहता है। मुखों का व्यास आठ अंगुल है। पिण्ड की घनता आधा अंगुल है। हर एक मुख में दो-दो तन्त्रियाँ हैं। तन्त्रियों को बाँधने के लिए हर एक मुख में ताम्र की दो-दो खूंटियाँ हैं। अन्य विषयों में हुडुक्का के समान है।

**दिण्डिमा या तबुल**—यह वाद्य नागस्वर की भाँति है। एक या सवा हाथ की लंबाई है। दोनो मुखों का व्यास पौन हाथ है। बदन कठोर लकड़ी से बनाया जाता है। दोनो मुख चमड़े से मढ़े जाते हैं। दोनों मुखों के घेरे में चमड़े की डेढ़ अंगुल घनता की मण्डली बाँधी जाती है। बायी ओर का मुख मण्डली के अंदर है। दाहिनी ओर की मण्डली सीधी है। दाहिने मुख को हाथ से बजाते हैं और बाये मुख को एक बित्ता की लंबाई की लकड़ी से। इस लकड़ी की घनता एक अंगुल से क्रमशः ३ अंगुल हो जाती है। इस वाद्य को गले और दाहिने पार्श्व में टांगकर बजाते हैं। इसके शब्दों में 'डि डि' मुख्य है। इसी कारण से इसका नाम 'डिडि' पड़ा।

**तबला**—तबले में मृदङ्ग के दो भाग अलग-अलग हैं। दोनों भागों में मुख रहते हैं। दाहिने भाग में मृदङ्ग की दाहिनी ओर उत्पन्न होनेवाले शब्द उत्पन्न होते हैं। उसी तरह बनाया जाता है। बाये में मृदङ्ग की बायी ओर के शब्द बोलते हैं। दाहिना भाग लकड़ी से और बाया भाग धातु से बनाया जाता है। उत्तर भारत में तबला मृदङ्ग के स्थान में है।

**पखावज**—मृदङ्ग से कुछ बड़ा रहता है। उत्तर भारत में ध्रुपद गाते समय बजाया जाता है।

**ढोलक**—मृदङ्ग की तरह है। पर इसके मध्य भाग का व्यास मुखों के समान है।

दोनों मुखों के ऊपर से कोई लेप नहीं किया जाता। कपास की रस्सी से दोनों मुख बाँधे जाते हैं। रस्सी को ढीला करने या तानने के लिए दो दो रस्सियों के बीच में पीतल के छल्ले रहते हैं। उन्हें सरकाने से इसकी ध्वनि को चढ़ाया उतारा जा सकता है।

**कञ्जिरा (खजरी)**—एक ही मुख से युक्त है। मूल्य और वादन दोनों दृष्टियों से सस्ता वाद्य है। बाये हाथ से पकड़कर दाहिने हाथ से बजाया जाता है। इसका व्यास पौन बिन्ता है। लंबाई तीन या चार अंगुल की है। मुख गोधिका (Varanus) (गोह) के चमड़े से मढ़ा जाता है। पिण्ड में तीन या चार द्वार हैं जिनमें दो ताम्र के स्निग्ध शब्द की उत्पत्ति के लिये लगाये जाते हैं।

### घनवाद्य ताल

कांस्य-धातु से बनाया जानेवाला वाद्य घनवाद्य है। इस धातु को आग में भली-भाँति पकाकर, पहले चक्राकार कर लेते हैं। इस चक्र का मुख सवा दो अंगुल का होता है। उसका मध्यभाग अंगुल-भर नीचा रहता है। उस निम्न-देश के ठीक बीच में एक रध्र होता है जिसमें डोरा पिरोया जाता है। जो उन्नत भाग निम्न-प्रदेश को घेरे रहता है वह डेढ़ अंगुल का बनाना चाहिए, जिससे तालों की ध्वनि कानों को अच्छी लगेगी। उसी रध्र में टिका रखने के लिए सूत्र को एक ग्रथि से ग्रथित करते हैं।

ऐसे दोनों तालों को, दोनों हाथों की तर्जनी व अंगूठे से सूत्रों को पकड़कर बजाते हैं। ध्वनि कम उत्पन्न होती हो तो वह शक्ति है; अधिक होती हो तो वह शिव है। बाये हाथ के ताल से उत्पन्न होनेवाली ध्वनि अल्प होनी चाहिए। वैसे ही दाहिने हाथ के ताल से उत्पन्न ध्वनि घनता से युक्त होनी चाहिए। ऐसे नियम से वादन करने में वादक को अश्वमेध का फल प्राप्त होता है। अन्यथा वादक का अमङ्गल होता है। इन दोनों तालों का देवता तुबुह है; अलग-अलग रूप में शक्तिताल का देवता शक्ति और शिवताल का देवता शिव है। इस तालवाद्य को बजाने में भी कल्पना होती है, जो अंगुलियों को ऊँचा करके बजाने से सिद्ध होती है।

### कांस्यताल

पंकज के नालों जैसे कांस्य-धातु के बने हुए, एक-से-आकार वाले दो वाद्यों को कांस्यताल कहते हैं। उनके मुखभाग १३ अंगुलों के तथा नीचे के तलभाग दो

अंगुलों के होते हैं। मध्यभाग तो अंगुल भर के ही होते हैं। उनके पाट 'झनकटा' आदि हैं।

### घण्टा

घण्टा कांस्य की बनी हुई है। उन्नति ८ अंगुल तक की होती है। मूलभाग से मुख-भाग की परिधि ज्यादा होती है। प्रासाद के ऊपर एक दण्ड है। प्रासाद के गर्भ में लोह का बना हुआ 'लालक' लटक रहा है। दण्ड को हाथ में लेकर वादन करते हैं। खासकर देवताओं के पूजन में इसका वादन करना अभीष्ट मात्र नहीं, आवश्यक भी है।

## बारहवाँ परिच्छेद

# वाग्गेयकारों का संक्षिप्त इतिहास

### १. श्रीशार्ङ्गदेव

यह, “दौलताबाद” के राजा सिंहण, जिन्होंने ई० १२१० से १२४७ तक राज्य किया था, के समकालिक थे। काश्मीरी भास्कर देव के पुत्र और सोढलदेव के पौत्र थे। इन्होंने “सगीतरत्नाकर” नामक ग्रंथ की रचना संस्कृत भाषा में की, जिसके सातों अध्यायों में संगीतशास्त्र के सारे विषय, क्रम से यों प्रतिपादित हैं; जैसे—१ अध्याय स्वरगताध्याय, २ अ० रागविवेकाध्याय, ३ अ० प्रकीर्णाध्याय, ४ अ० प्रबन्धाध्याय, ५ अ० तालाध्याय, ६ अ० वाद्याध्याय, ७ अ० नृत्याध्याय।

इसकी सात व्याख्याएँ हैं जिनमें गगाराम की ब्रजभाषा-व्याख्या भी एक है, जो सरस्वती महल पुस्तकालय में भी उपलब्ध है। शार्ङ्गदेव की दूसरी रचना “अध्यात्म-विवेक” वेदांत विषयक है।

उन्होंने भरत, मतंग, कीर्तिधर, कोहल, कबल, अश्वतर, आजनेय, अभिनव गुप्त और सोमेश्वर जैसे प्राचीन आचार्यों के मतों की विवेचना की है।

### २. अहोबल पंडित

यह अहोबल में कोई ४५० वर्षों के पहले रहे होंगे। इन्होंने शार्ङ्गदेव व आजनेय के मतानुसार “सगीतपारिजात” की रचना की, जिसके कई लक्ष्य-लक्षण आजकल की पद्धति से मेल खाते हैं।

### ३. रामामात्य

यह, नियोगी तेलुगु ब्राह्मण तिम्मामात्य के पुत्र थे। इन्होंने “स्वरमेलकलानिधि” की रचना वेकटाद्विराय की इच्छा के अनुसार की, जो विजयनगर सम्राट् कृष्णदेव राय के दामाद का भाई था। इन्होंने दूसरे कई प्रबंधों की—जैसे एला, रागकदंब, गद्यप्रबंध, पंचतालेश्वर, स्वराक, श्रीरगविलास इत्यादि की रचना की थी, लेकिन उन प्रबंधों में किसी एक का भी पता नहीं। स्वरमेलकलानिधि के अनुसार इनका समय १५५० ई० है।



#### ४. गोविंद दीक्षित

यह पंडित तंजौर के नायकराजा अच्युतय्य एवं उनके पुत्र रघुनाथ नायक दोनों के दरबार के मुख्य मंत्री थे। प्रसिद्ध अप्पय्य दीक्षित के समकालिक होने के कारण इनका समय ई० १५५४ से १६२६ तक है। शिष्ट व नयनिष्ठ ब्राह्मण-मन्त्री होने के कारण इनकी शासन-पद्धति की प्रसिद्धि अब भी सुनाई पड़ती है। इन्होंने रघुनाथ नायक के साथ सगीतशास्त्र में “सगीतसुधा” की रचना की। इस लक्षणग्रन्थ का उल्लेख मात्र, इनके पुत्र वेकट मखी की “चतुर्दण्डप्रकाशिका” में पाया जाता है।

#### ५. वेकट मखी

यह गोविंद दीक्षित के कनिष्ठ पुत्र और अपने बड़े भाई यज्ञनारायण दीक्षित के शिष्य भी है। इन्होंने तातप्पाचार्य से संगीत की शिक्षा पायी। इनकी पहले-पहल की रचना “गधर्वजनता खर्व दुर्वार गर्वभजनु रे” अब भी गायी जाती है। तंजौर के नायकराजा रघुनाथ के पुत्र विजयराघव राजा की प्रेरणा से “चतुर्दण्डप्रकाशिका” नामक लक्षणग्रन्थ की रचना इन्होंने की। इसमें वेकट मखी ने वीणा, श्रुति, स्वर, मेल, राग, आलाप, ठाय, गीत, प्रबध और ताल—इन दस विषयों को दस प्रकरणों में बाँटा है। इन्होंने कई गीत और प्रबध निर्मित किये हैं।

#### ६. गोविंदामात्य

यह षट् सहस्र-नियोगी ब्राह्मण थे। इन्होंने सगीतशास्त्र की रचना तेलुगु भाषा में की। उसमें, कई स्थानों पर सगीतरत्नाकर का तथा मेल एवं राग के विषय में स्वरमेलकलानिधि का अनुसरण किया है। ये वेकट मखी से पहले और रामामात्य से पीछे रहे होंगे।

#### ७. पुरंदर विट्ठलदास

ये कर्णाटक ब्राह्मण एवं भक्तकवि थे। सरलि, अलंकार तथा गणेशगीत—इनके प्रवर्तक ये ही महानुभाव हैं। इन्होंने प्रायः सूलादि प्रबधों और हजारों की संख्या में पदों की रचना की है। दक्षिण भारत में आज भी इनकी कृतियों का अधिक सम्मान होता है। इनका काल सोलहवीं शताब्दी का मध्यभाग है।

#### ८. रामदास

ये नियोगी ब्राह्मण गोपन्नामात्य के पुत्र हैं। इन्होंने रामभक्त होने के कारण सगीतसाहित्य में आत्मनैपुण्य के निदर्शक कीर्तन प्रायः श्रीराम की सेवा के रूप में बनाये हैं। वे कीर्तन तेलुगु भाषा में हैं।

### ९. ताळपाकं चित्रय्य

ये तैलंग ब्राह्मण थे और वेकटाचलपति के भक्त। ये ही भजनपद्धति के प्रवर्तक माने जाते हैं। उस पद्धति में प्रातःकाल के प्रबोधन से, रात के शयन तक के भिन्न-भिन्न समय में किये जानेवाले कार्य-कलापों के साथ गाये जानेवाले कीर्तन इन्होंने रचे हैं और ये अब भी गाये जाते हैं।

### १०. क्षेत्रज्ञ

यह त्रिलिंग ब्राह्मण एवं कृष्णभक्त है। इनके पद तेलुगु भाषा एवं साहित्य में सर्वश्रेष्ठ हैं एवं अपनी-अपनी अलग विशेषताओं से संबद्ध हैं। हर एक पद में प्रयुक्त श्रृंगार रसानुसारी कैशिकी रीति, अर्थ पुष्टि, संदर्भानुसारी राग, धातु और पदविन्यास, गाने एवं सुननेवालों को मुग्ध कर लेते हैं, जो कि “मुव्वगोपाल” की मुद्रा से अंकित हैं। ये तजौर के विजयराघव के समकालीन हैं।

### ११. श्रीनिवास

यह तमिलब्राह्मण और मीनाक्षी के भक्त हैं। तमिल में, इन्होंने जो पद व कीर्तन रचे हैं, उनमें “विजयगोपाल” की मुद्रा है। वे अर्थपुष्टि, शब्द व धातु शय्या के कारण मनोहर हैं। इनका जीवन-काल चोक्कनाथ नायक भूपाल के समय (ई० १६५०) में है।

### १२. जयदेव

यह गोवर्धनाचार्य के शिष्य एवं कृष्णभक्त हैं। संस्कृत भाषा में इन्होंने “अष्ट-पदी” या “गीतगोविंद” की रचना की है। यह संस्कृत भाषा तथा संगीत-साहित्य में उच्चकोटि का ग्रंथ होने के कारण अद्वितीय है। इन्होंने “प्रसन्नराघव नाटक” इत्यादि दूसरी कई रचनाएँ की हैं; (?) तो भी उनकी ख्याति “गीतगोविंद” से ही हुई है। यह शार्ङ्गदेव के समकालिक हैं।

### १३. धनं सोनय्य

इन्होंने “शशांक विजय” नामक श्रृङ्गाररस का प्रबंध रचा है। संगीत और संस्कृत एवं तेलुगु भाषा में प्रवीण थे। इस प्रबंध के अलावा “मन्नाररंग” की मुद्रा से अंकित कई कीर्तनों एवं पदों के भी रचयिता हैं। यह बात उनके “शशांक विजय” से मालूम होती है। क्षेत्रज्ञ के समकालिक हैं।

### १४. मार्गदर्शी शेषय्यंगार

वैष्णव ब्राह्मण एवं रंगनाथ के भक्त हैं। संस्कृत पंडित हैं और संगीतशास्त्रज्ञ भी। इनके ६० कीर्तन श्रीरंग के रंगनाथ स्वामी के बारे में रचे हुए हैं। इनकी चातुरी

देखकर पण्डित लोगों ने, 'मार्गदर्शी' के विरुद्ध से इन्हें सम्मानित किया है। कहा जाता है कि अय्यंगरजी सोनय्य के पूर्वकालिक हैं।

### १५. गिरिराज कवि

यह तैलंग ब्राह्मण हैं और इनका वासस्थान तंजौर जिले में तिरुवारूर था। प्रसिद्ध सत त्यागराज के दादा हैं। तंजौर के दूसरे महाराष्ट्र राजा शाहजी ने इनका सम्मान किया था। इनके कीर्तन भक्तिरसपूर्ण व वेदांतप्रधान हैं।

### १६. शाहजी महाराज

यह तंजौर-महाराष्ट्र-राजवंश के स्थापक एकोजी राजा के पुत्र हैं। संस्कृत, महाराष्ट्र, हिंदुस्थानी तथा तेलुगु भाषा के प्रकांड पंडित थे। साथ ही संगीत-साहित्य-विद्या के पंडित होने के कारण इन्होंने बहुत-से कीर्तनो एवं पदों की रचना की। तिरुवारूर के त्यागराज स्वामी के बारे में, इन्होंने एकपालकी-नाटक तेलुगु भाषा में रचा, जो "पल्लिक सेवा प्रबध" नाम से प्रसिद्ध है। इनका शासनकाल ई० सन् १६८४ से १७११ तक है।

### १७. वीरभद्रय्य

तंजौर के महाराष्ट्र राजा प्रतापसिंह की, जिन्होंने ई० सन् १७४१ से १७६५ तक शासन किया था, संगीतरसिकता एवं उदारता को सुनकर, यह वाग्गेयकार उत्तर से तंजौर पधारे। यह तैलंग ब्राह्मण हैं; संगीत-साहित्य की रचना में सिद्धहस्त भी हैं। इन महाशय के आने का समाचार सुनते ही, राजा ने स्वयं ही इनके पास जाकर इनका भली-भाँति आतिथ्य किया। इन्होंने बहुत-से कीर्तन तरह-तरह के रक्ति-पूर्ण रागों में रचे हैं, जो "प्रतापराम" की मुद्रा से मुद्रित हैं। इनके अलावा इस राजा के प्रशस्तिगान के रूप में कई द्रु, पद, तिल्लाना इत्यादि की रचना की हैं। हर एक कृति गेय कल्पनाओं से सज्जित है। इन्हीं महाशय को दक्षिण देश की गानरीति के परिष्कर्ता कहे तो यह अतिशयोक्ति या अत्युक्ति न होगी।

### १८. कवि मातृभूतय्य

ये त्रिशिरपुरीवासी तैलंग ब्राह्मण और भक्तकवि हैं। इन्होंने नीति व भक्ति-मार्ग के कीर्तन रचे हैं। पारिजातापहरण नामक गांधर्वनाटक की भी रचना की है। "त्रिशिरगिरि" की मुद्रा से युक्त इनके कीर्तन, वहाँ की देवी सुगधिकुतलांबा की सेवा के रूप में रचित हैं। अपनी विकराल दरिद्रता से छुटकारा पाने के लिए भी देवीजी के पदों में ही भरोसा रखकर इन्होंने भक्ति की थी और सफलता भी पायी

थी। कहा जाता है कि देवीजी की आज्ञा से तजौर के राजा प्रतापसिंह ने ही, दस हजार रुपये देकर उन्हें बचाया था।

### १९. आदिप्पय्य एवं उनकी संतान

यह आदिप्पय्य कर्णाटक ब्राह्मण है। तेलुगु तथा संस्कृत के पंडित है। इन्होंने वीरभद्रय्य के मार्ग पर चलकर, रक्तिपूर्ण देशी रागों में अनेक कीर्तन, विशेष गमक-जातियों से युक्त रचे हैं जो “श्रीवेकटरमण” की मुद्रा से मुद्रित हैं। रागालापन की मध्यमकाल-पल्लवी का परिष्कार इन महाशय के द्वारा हुआ है। इनका तानवर्ण “विरिबोणि” जो भैरवी राग का है, बहुत प्रसिद्ध है। वह वर्ण मौखिक व वीणागान में सप्तानरूपेण रजक है।

आदिप्पय्य के पुत्र वीणा-कृष्णय्य हैं, जो प्रसिद्ध वैणिक हैं। इनके तीन प्रबंध, जो “सप्ततालेश्वरम्” नाम से प्रसिद्ध हैं, मैसूर, विजयनगर तथा पुदुक्कोट्टे के राजाओं के विषय में रचे हुए हैं। इनके पुत्र वीणा-सुब्बुकुट्टि अय्य भी प्रसिद्ध वैणिक थे, इनका तालज्ञान, जो वैणिकों में थोड़ा ही पाया जाता है, बेजोड़ था।

### २०. सोंटि वेंकटसुब्बय्य

यह तैलंग ब्राह्मण है। तेलुगु भाषा में तथा संगीतशास्त्र में निपुण थे। वेकट मखी के रागागादि रागों के सप्रदायज्ञ थे। तजौर के महाराष्ट्र राजा तुलजा के बारे में इनका बिलहरी राग में रचित एक वर्ण, विचित्र कल्पनाओं से युक्त एवं मनोरंजक है। इनके पुत्र वेकटरमणय्य भी संगीत-साहित्य तथा गान दोनों मार्गों में अपने पिता की अपेक्षा भी निपुणतर निकले थे।

### २१. रामस्वामी दीक्षित

ये द्राविड ब्राह्मण हैं। संस्कृत व तेलुगु भाषा के पंडित हैं। पहले वीरभद्रय्य से तथा पीछे वेकटवैद्यनाथ दीक्षित से इन्होंने शिक्षा पायी। इनकी तथा इनके पुत्र मुद्दस्वामी दीक्षित की कई रागतालमालिकाओं, तानवर्णों और कीर्तनों ने इनकी आर्थिक परिस्थिति की श्रीवृद्धि की और वे ही इनकी ख्याति के कारण भी हुए।

### २२. श्यामाशास्त्री

इन्होंने १७६३ ई० में जन्म लिया, संस्कृत व तेलुगु के पंडित होकर एक यतीन्द्र से संगीत का भी अभ्यास किया था। श्रीविद्या के प्रसाद से प्राप्त इनकी प्रखर प्रतिभा की झलक इनके प्रत्येक कीर्तन में पायी जानेवाली गेय-कल्पना व साहित्य-चमत्कार के कारण स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इनकी रचनाएँ “श्यामकृष्ण” की मुद्रा से अंकित हैं। ये महानुभाव संगीत की त्रिमूर्तियों में अन्यतम हैं।

### २५. वीणा कुप्पय्य और उनके पुत्र

गायन एव वीणावादन मे ये बहुत श्रेष्ठ हैं। इन्होंने गेयचमत्कृति से युक्त तानवर्ण कीर्तनों की रचना की है। इनके पुत्र त्यागय्य ने, जिसका नामकरण अपनी गुरुभक्ति के कारण कुप्पय्या ने किया था, कई तानवर्ण रचे थे। इनके अलावा “पल्लवी स्वरकल्पवल्ली” के रचयिता भी ये ही हैं।

### २६. वैकुण्ठ शास्त्री

शास्त्रीजी सस्कृत वाग्गेयकारों मे प्रमुख हैं। अन्य काव्य नाटक अलंकारशास्त्रों की तरह संगीतशास्त्र भी इनके अध्ययन का विषय था। गेयकल्पनायुक्त सस्कृत-कीर्तन, रक्ति एव देशी रागों मे इन्होंने रचे थे। “वैकुण्ठ” की मुद्रा से इनके कीर्तन अंकित हैं।

### २७. कुप्पुस्वामी अय्यर

यह द्रविड ब्राह्मण हैं। तेलुगु भाषाविज्ञ भी थे। इनके कीर्तन प्रायः भक्ति रस के हैं। कई एक शृंगार रस के भी हैं। दोनों गेयकल्पनाएँ बहुत चमत्कारयुक्त हैं। पदविन्यास ललित है। “वरदवेकट” की मुद्रा से मुद्रित हैं।

### २८. पल्लवि गोपालय्यर

इनकी इस “पल्लवि” पदवी का मुख्य कारण इनकी प्रतिभा थी, जिससे ये पल्लवी के गाने मे बेजोड़ हुए थे। इनके रचे हुए एक “वनजाक्षी” कल्याणी नामक तानवर्ण से ही, संगीतकल्पनाचमत्कार, गमक, स्वरकल्पनाशय्या इत्यादि का पता चलेगा। इन्होंने “वेकट” की मुद्रा से अंकित अन्य कई तानवर्णों की रचना भी की है। ये अमरसिंह तथा शरभोजी के समकालिक हैं।

### २९. मुद्दुस्वामी दीक्षित

ये रामस्वामी दीक्षित के पुत्र थे। ई० सन् १७७५ मे उत्पन्न हुए थे। सोलह बरस में ही साङ्गवेदाध्ययन कर चुके थे। ज्योतिष, वैद्यक तथा मंत्रशास्त्र मे भी विशेष प्रज्ञा थी। सौभाग्य से चिदंबरनाथ योगी नामक एक सिद्धपुरुष ने इनको श्रीविद्या का उपदेश दिया था। पीछे सुब्रह्मण्य का अनुग्रह भी इन्हें मिला था। इन्होंने प्रायः सभी तीर्थों की यात्रा की है। वहाँ के देव-देवियों के स्तोत्ररूप विविध कीर्तन रचे हैं। इनकी भाषा पूर्णरीति से सस्कृत है, तो भी गेयकल्पना, अर्थपुष्टि, ललितप्रदविन्यास आदि से युक्त है। इनके कीर्तन “गुरुगुह” की मुद्रा से अंकित हैं। इनके कीर्तन

वेकट मखी के संप्रदाय के अनुसार है। रागों के नाम से भी शोभित हैं। अर्थपुष्टि, विन्यासचातुरी इत्यादि उच्चकोटि की है। इनके अलावा मूडादि सात ताली में रचे हुए नवग्रह कीर्तन और कमलांबा देवीजी की नवावरणपूजा के अनुसार रचित नौ कीर्तनों से इनकी प्रशस्ति सर्वतोमुखी हुई।

ये महानुभाव सगीत की त्रिमूर्ति में अन्यतम हैं। ई० सन् १८३५ में, एट्टयपुर राजा के अनुरोध से वहाँ चले गये थे। वही उसी साल में उनका वियोग हुआ था।

### ३०. चिन्नस्वामी दीक्षित

यह मुद्दुस्वामी दीक्षित के भाई हैं। संस्कृत और आध्र भाषा के विद्वान् हैं। संगीतशास्त्र का अध्ययन करके वैणिकश्रेष्ठ हुए थे। कई राजसभाओं में इन्होंने वैणिकश्रेष्ठ के रूप में प्रशंसा पायी है। तोड़ी तथा कल्याणी के इनके दो कीर्तन प्रसिद्ध हैं।

### ३१. बालस्वामी दीक्षित

ये भी मुद्दुस्वामी दीक्षित के भाई हैं। वीणा ही नहीं, इनके लिए सितार, फिडिल, मृदंग इत्यादि वाद्यों का बजाना वाये हाथ का खेल था। मणलि मोदलियार के सौजन्य से इन्होंने एक अंग्रेजी फिडिल वादक का शिष्य होकर पाश्चात्य सगीत की शिक्षा भी पायी थी। एट्टयपुर राजा के सभापंडित होकर उस राजा के बारे में कई कीर्तन रचे थे। उस राजा के पुत्र को सगीत सिखाया था। पीछे उस कुँवर राजा के द्वारा रचित विविध रागों के संस्कृत कीर्तनों को, विशेष चमत्कार व कल्पनायुक्त मुक्तायिस्वरो से सज्जित किया था। इनके नाट तथा दूसरे रागों के तानवर्ण, जो चमत्कृतिजनक स्वरों और जातियों से युक्त हैं, बेजोड़ हैं। इनका समय ई० सन् १७८६ से १८५९ तक है।

### ३२. चौकं सीनु अय्यर

यह द्रविड ब्राह्मण एव सगीत के चतुर विद्वान् थे। रागालाप आदि को बहुत विलंब से गाने में चतुर थे। इसी कारण “चौकं सीनु अय्यर” नाम से प्रसिद्ध हुए थे। शरभोजी तथा उनके पुत्र शिवाजी के समय हुए थे।

### ३३. मध्यार्जुन प्रतापसिंह महाराज

तंजौर के महाराष्ट्र राजा अमरसिंह के पुत्र हैं। संस्कृत तथा महाराष्ट्री में विचक्षण थे। इनके मृदंगवादन का कौशल प्रसिद्ध है। इनकी साहित्य रचना में,

“नवरत्नमालिका” नाम की रागतालमालिका वर्णक्रम और स्वरचमत्कृति से लसित है।

### ३४. कुलशेखर पेरुमाळू

तिरुवनतपुर के राजा कुलशेखर सस्कृत, केरली, तेलुगु, हिंदुस्तानी, अंग्रेजी इत्यादि भाषाओं में प्रवीण थे। साथ ही संगीत के प्रतिभावान् विद्वान् थे। इनके द्वारा रचित तरह-तरह के रक्ति व देशी रागों के सस्कृत-चौकवर्ण, जो गेयकल्पना तथा चातुरी से रंजित और “पद्मनाभ” की मुद्रा से अंकित हैं, असंख्य हैं। इनके अलावा तेलुगु तथा केरली भाषा में भी संगीत साहित्य की रचनाएँ इन्होंने की हैं।

### ३५. शेषाचल भागवत

यह पुदुक्कोट्टै के आस्थानपंडित थे। प्राचीन संप्रदाय के रागालापन और कीर्तन के गाने में अद्वितीय थे। प्रसिद्ध श्यामाशास्त्रीजी के शिष्य थे। इनके भाई, पुत्र तथा पौत्र, सब वशानुगत संगीतविशारद थे और उसी आस्थान के विद्वान् भी हुए थे।

### ३६. सदाशिव ब्रह्म

संत सदाशिव ब्रह्म अमानुषिक विभूतिवाले महानुभाव थे। ब्रह्मानंद में निमग्न ये योगिराट् अखड कावेरी के प्रान्तों में गाते-गाते विचरते थे। गेय वाक्-रूप इनके सस्कृत कीर्तनों में पदलालित्य व श्रवणमुख के अलावा अलौकिक शक्ति भी सुननेवाले अनुभव करते हैं। विविध रागों में इनके सस्कृत कीर्तन, सस्कृतज्ञों और असंस्कृतज्ञों में प्रसिद्ध हैं। इनकी समाधि नेरूर में है, जो आजकल एक तीर्थस्थान है।

### ३७. अक्किल स्वामी

ये यतींद्र कृष्णभक्त थे। चिदंबरं के पास रहा करते थे। सस्कृत में इन्होंने कीर्तन रचे थे। कहा जाता है, श्रीकृष्ण के प्रसाद से इनकी एक शारीरिक व्याधि नष्ट हुई थी। उसी समय इन्होंने एक कीर्तन रचा था जो कल्याणी राग का “तावक-करकमले” कीर्तन है।

### ३८. शिवरामाश्रमी

ये तैलंग ब्राह्मण थे। इन्होंने संगीतकीर्तन और भक्तिमार्ग के पदों को सीखकर “निजभजनमुखपद्धति” की रचना की और बीस ही वर्ष की आयु में प्रब्रज्या ग्रहण की थी। सारे देश का भ्रमण करके, अन्ततः तिरुवारूर में रहकर त्यागराज स्वामी की भक्ति की। इनकी रचनाएँ तेलुगु और संस्कृत, दोनों में पायी जाती हैं।

### ३९. सारंगपाणि

इनके पद शृंगार और हास्यरस-प्रधान हैं। हास्यरस की रचनाओं में ग्राम्यो-क्तियाँ तथा चाटु मुख्य हैं। “वेणुगोपाल” की मुद्रा से अंकित है। यह भी तैलंग ब्राह्मण है।

### ४०. मेलटूर वेंकटराम शास्त्री

यह तैलंग ब्राह्मण और शरभोजी के समसामयिक एवं तेलुगु भाषा के पंडित थे। इनके पद, कैशिकी रीति के पदविन्यास से युक्त शृंगाररस-प्रधान हैं।

### ४१. तोडि सीतारामय्य

तोडी राग इनकी संपत्ति थी। कहा जाता है कि आर्थिक परिस्थिति जब बिगड़ जाती, तब तोडी को धरोहर रखकर उससे प्राप्त धन द्वारा ये कालयापन करते थे। राजा-रईसों की सहायता से ऋण चुकाकर ही तोडी गाते। इनके तोडीराग को सुनने के लिए लोग तरसते रहते थे। इन्होंने कई और रचनाएँ भी की थी, जो कल्पना की खान हैं।

### ४२. तच्चूरु शिगराचार्य

यह आध्र वैष्णव ब्राह्मण थे। फिडिल बजाने में बहुत समर्थ थे। इनके कई सस्कृत कीर्तन गेय कल्पनाओं से युक्त हैं। स्वरमंजरी, गायकपारिजात, सगीतकलानिधि, गायकलोचन और गायकसिद्धाजन आदि पुस्तकों के प्रकाशन में इनका बड़ा हाथ था।

### ४३. अरुणगिरिनाथ

इनका वासस्थान शीयाळि था। तमिल भाषा के पंचलक्षणों के विज्ञ थे। इनके समय में तुलजा राजा ने तजौर का शासन किया था। यह सगीत शास्त्र में दक्ष थे। श्रीमद्रामायण के प्रत्येक कथासदर्भ को सदर्भानुसृत रसों के ह्लादजनक रागों में, तमिल कीर्तन के रूप में इन्होंने रचा था। प्रत्येक कीर्तन वर्णक्रमचातुरी से निबद्ध है। इन रामायण-कीर्तनों को इन्होंने मणलि मुद्दूकृष्ण मोदलियार की सभा में गाकर उनके हाथों कनकाभिषेक पाया था। तमिल प्रात में इनकी बहुत ख्याति है।

### ४४. मुत्तुतांडवर्

यह द्रविड भाषा और सगीत के पंडित और शिवभक्त शिखामणि हैं। चिदंबर के सभापति के बारे में, भक्ति और शृंगाररस के विविध पद तथा कीर्तन इन्होंने रचे हैं। इनका समय अरुणगिरिनाथ के पूर्व है।



#### ४५. पापविनाश मोदलियार

तजौर के तुलजा राजा के समकालिक मोदलियारजी तमिल तथा संगीत के विशारद थे। उनके पद “पापविनाश” की मुद्रा से अंकित हैं। वे निंदास्तुति के रूप में रचे हुए हैं।

#### ४६. घनं कृष्णय्यर

यह प्रसिद्ध त्यागय्य के समकालिक ब्राह्मण हैं। इनका पल्लवि-गायन बहुत रजक होता था। इनके पद शृंगाररस में प्रसिद्ध हैं। इनका स्थान उडधार पालयम् थी। वहाँ के राजा को सम्बोधित करके कई पद रचे हैं। उन पदों में सारी विशेषताएँ पायी जाती हैं।

#### ४७. शंकराभरणं नरसय्य

शरभोजी के समकालिक इन सज्जन ने तमिल भाषा में कई पदों की रचना की थी जो गेय कल्पनाओं से रंजक हैं। इन ब्राह्मण-विद्वान् का शंकराभरण राग अनुपम है। इसी कारण इनका नाम शंकराभरण नरसय्य पड़ा है।

#### ४८. आनतांडवपुरं बालकृष्ण भारती

यह ब्राह्मण शिवभक्त हैं। रक्ति व देशी रागों के अलावा और कई रागों के कीर्तन गेय कल्पना एवं चमत्कार से युक्त रचे थे, जो “गोपालकृष्ण” की मुद्रा से मुद्रित हैं। इस भक्त-ब्रह्मचारी ने “नंदनार” नाम के प्रसिद्ध शिवभक्त का चरित रचा था।

#### ४९. वैद्येश्वरनकोइल सुब्बरामय्य

इन्होंने शृंगाररस के कीर्तन, “मुदूक्कुमरन” की मुद्रा से अंकित रचे हैं। द्राविड़ी भाषा और संगीत शास्त्र के विद्वान् थे।

#### ५०. ब्रैकटेश्वर एट्टप्प महाराज

इनका शासन समय ई० सन् १८१६ से १८३९ तक का था। यह राजा संस्कृत, आंध्र और द्राविड के पंडित थे। संगीत शास्त्र के मर्मज्ञ थे। वैणिक श्रेष्ठ भी थे। “शिवगुरुनाथ” की मुद्रा से अंकित मुखारि राग का द्राविड कीर्तन इन्हीं का है। इन्होंने कई द्राविड वृत्त रचे थे।

#### ५१. सुब्बराम दीक्षित

मुदुस्वामी दीक्षित के दत्तक पुत्र हैं। इन्होंने संस्कृत तथा तेलुगु भाषा की और संगीत शास्त्र की भी ऊँची शिक्षा पायी थी। वीणा की शिक्षा पिता से मिली थी।

पहले-पहल श्री कार्तिकेय के बारे में दरबार राग का एक तानवर्ण रचकर राजसभा में गा सुनाया था। इसके कर्तृत्व में सदेह होने के कारण, सदेह को दूर कराने के लिए यमुना राग का एक जातिस्वर इनसे रचाया गया था। इनकी रचनाओं में कीर्तन, तानवर्ण, चौक-वर्ण, रागमालिका आदि हैं।

### ५२. पट्टणं सुब्रह्मण्यय

यह तमिल ब्राह्मण १९ वीं सदी के उत्तरार्ध में थे। इनका वासस्थान तंजौर के आस-पास का पचनद क्षेत्र था। आध्र भाषा और सगीत शास्त्र दोनों की शिक्षा पायी थी। इनके तेलुगु कीर्तन बहुत प्रसिद्ध हैं।

### ५३. वेकटेश्वर शास्त्री

संस्कृत और तमिल के पंडित थे। साथ ही सगीत शास्त्रज्ञ तथा श्रेष्ठ वैणिक भी। सगीतस्वरबोधिनी के प्रकाशक हैं। इनके रचे हुए संस्कृत-कीर्तन कई एक मिलते हैं।

### ५४. गर्भपुरी धर्मपुरी वाले

ये यमल विद्वान् “गर्भपुरी” और “धर्मपुरी” की मुद्राओं से अंकित शृंगाररस की जावलियों के रचयिता हैं।

### ५५. रावबहादुर नागोजीराव

यह महाराष्ट्र ब्राह्मण बहुभाषाविज्ञ तथा सगीतज्ञ भी थे। रागविबोधिनी तथा दूसरी सगीत पुस्तकों के प्रकाशक हैं। इन्होंने पाठशालाओं के इंस्पेक्टर के पद पर रहकर सगीत पुस्तकों के प्रकाशन में काफी दिलचस्पी ली थी।

## कल्लिनाथ

सगीतरत्नाकर की प्रसिद्ध व्याख्या “कलानिधि” के रचयिता हैं। विद्यानगर के महाराज इम्मडि देवराय के आस्थान पंडित थे। इनका समय ई० सन् १५५० के आसपास था।

## वैकटरामय्य

जातीय ज्ञान के साथ कीर्तनों के गाने में जो कठिनता होती है उसका तनिक भी अनुभव किये बिना, यह महाशय गाते थे। इसलिए “इनुपसनिगेल”—अर्थात् “लोहे के चने” की उपाधि इन्हें मिली थी। बोधेद्र स्वामी के बारे में रचा हुआ इनका “सत-

मनि' तोड़ी कीर्तन प्रसिद्ध है। इनकी कृतियों में "गोपालकृष्ण" की मुद्रा सुनाई पड़ती है। इनका समय भी आदिप्पय्य का अंतिम काल है।

### त्यागराज्य के शिष्य

१. वीण कुप्पय्य (२५ देखिए)

२. बालाजीपेट वेंकटराम भागवत

इनके शिष्य प्रायः सौराष्ट्रभाषी थे। उनके द्वारा त्यागराज्य के कीर्तन का प्रचार व प्रसार इन्होंने कराया था।

अन्य शिष्य—

अय्या भागवत

सुब्बराम भागवत

तिल्लस्थान रामय्यंगार

उमयापुरं कृष्णभागवत

सुंदर भागवत

गोविंदसामय्य

यह तैलंग ब्राह्मण थे। इनकी रचनाएँ शृंगाररस प्रधान हैं। कावेरी नगर सस्थान के राजा के प्रति मोहनराग में एक वर्ण इन्होंने रचा था। इनके कई अन्य वर्ण देवताओं के विषय में रचे हुए हैं। नवरोज व केदारगौड़ राग के इनके वर्ण बहुत प्रसिद्ध हैं।

### विजयगोपाल

ये भक्त-विद्वान् थे। संस्कृत तथा तेलुगु में इनके कीर्तन भक्तिरस-स्निग्ध हैं। इनकी कृतियाँ "विजयगोपाल" की मुद्रा से अंकित हैं। इनका समय १७ वीं सदी का अंतिम भाग है।

### मुद्दुस्वामी दीक्षित (२९) के शिष्य

(१) संगीत व द्राविडी के पंडित तिरुक्कडयूर भारती।

(२) आवडयार कोयिल वीणा वेंकटरामय्यर।

(३) तेवूर सुब्रह्मण्यय्य।

(४) संगीत-मृदंग-लक्ष्य-लक्षणदक्ष तिरुवारूर शुद्ध मृदंग तबियप्पा।

(५) भरतश्रेष्ठ तंजाऊर पोन्नय्या।

(६) वडिवेलु।

- (७) भरतलक्ष्यलक्षणविशारद कोरनाडु रामस्वामी ।
- (८) नागस्वरप्रज्ञ तिरुवळुदूर बिल्लवन ।
- (९) तानवर्णपद रचयिता तिरुवारूर अय्यास्वामी ।
- (१०) नाट्यगानविद्या विदुषी तिरुवारूर कमल ।
- (११) गानयशस्विनी वळळलार कोडल अभ्मणि ।

### दोरसामय्य

इनकी तेलुगु कृतियों में “सुब्रह्मण्य” की मुद्रा से अकित कीर्तन प्रसिद्ध है। सहज, शैली और रजनयुक्त है। ये द्रविड ब्राह्मण हैं। इनका समय शरभोजी का अंतिम तथा शिवाजी का आदिम काल है।

### रामानंद यतींद्र

ये संस्कृत साहित्य रचना में दक्ष थे। इनके गौरीराग-प्रबन्ध को देखने से इनके पांडित्य की स्पष्ट झलक दिखाई पड़ती है। ये अहोबल पंडित के पिछले समय में थे।

### नारायण तीर्थ

इनकी रची हुई तरंगो से संस्कृत साहित्य की रचना का पता चलेगा। प्रायः ३५० वर्षों के पहले इनका समय है।

### स्वयंप्रकाश यतींद्र

मायूर क्षेत्र के रहनेवाले ये यतिराट् संस्कृत तथा तेलुगु के प्रकाण्ड पंडित थे। साथ ही सगीत शास्त्र निष्णात भी थे। इनके संस्कृत कीर्तन प्रसिद्ध हैं।

### युवरंगपद

उडयारपालय संस्थान के अधीश युवरंग, रसिकशिखामणि एवं उदार दाता थे। इनके बारे में, कई वाग्गेयकारों के द्वारा गेयकल्पनायुक्त पद रचे गये। वे ही युव-रंगपद नाम से प्रसिद्ध हैं। तुलजा राजा के समकालिक थे।

### परिमलरंग

“परिमलरंग” की मुद्रा से जो पद, प्रास तथा गमक से युक्त सुनाई पड़ते हैं उनके रचयिता यही परिमलरंग हैं। इन्होंने तेलुगु भाषा में रचना की थी। प्रायः २५० वर्ष पहले, चेन्नपुरी के उत्तर प्रांत में रहते थे।

## शृंगारपद के रचयिता तेलुगु कवि

१. घटपल्लिवाला	—	कैलासपति की मुद्रा से युक्त पदों के रचयिता				
२. बोल्लपुरवाला	—	बोल्लवर	"	"	"	"
३. जटपल्लिवाला	—	जटपल्लिगोपाल	"	"	"	"
४. शोभनगिरिवाला	—	शोभनगिरि	"	"	"	"
५. इनुकोडवाला	—	इनुकोडविजयराम	"	"	"	"
६. शिवरामपुरीवाला	—	शिवराम पुरम्	"	"	"	"
		रामपुर				
७. वेणगिवाला	—	वेणगि	"	"	"	"
८. मल्लिकार्जुन	—	मल्लिकार्जुन	"	"	"	"

ये कवि आंध्रदेशस्थ तैलंग ब्राह्मण थे। लगभग २५० वर्ष पहले रहे होंगे।

## **अनुबन्ध १**

**(कर्नाटक पद्धति के रागों का आरोहण-अवरोहण-क्रम)**

## कर्नाटक संप्रदाय की आधुनिक पद्धति (शिङ्गाराचार्य के गायकलोचन के अनुसार)

राग	आरोही	अवरोही	श्री मुंबराम दीक्षित की संगीत सम्प्रदाय प्रदर्शनी के अनुसार
(१) कनकांगी मेल-जन्य--९ (दि० ग० म० ध० नि०)			
१. कीर्तिप्रिय	सरिमपधस-	सनिधपमगरिस ।	
२. कनकाबरी	सरिगमपधनिधस-	सनिधपमगरिगरिस ।	सारिमपधसा । सानीधपमगरिरीरसा ।
३. वागीश्वरी	सरिगमपधस-	सधपमगरिस ।	
४. मुक्ताबरी	सरिगमपनिधस-	सनिधमगरिस ।	
५. शुद्धमुखारी	सरिगमपधनिधस-	सनिधमगरिस ।	
६. भोगवितामणि	सरिमपधनिधस-	सधपमगरिगरिस ।	
७. मोहनमल्लार	सरिगमपधनिधस-	सधनिधपमगरिस ।	
८. खड्गप्रिय	सरिगमपधनिधस-	सधपधमगरिस ।	
९. तपोल्लासिनी	समरिगमपधनिधस-	सधपगरिस ।	सरिमपधसा । सनिधपमगरिस ।
(२) रत्नांगी मेल-जन्य--११ (दि० ग० म० ध० नि०)			
१. ऋषभांगी	सरिमपधनिधस-	सनिधपमगरिस ।	
२. वसंतभूपाल	सरिगपधनिधस-	सनिधपमधमगरिस ।	
३. फेनद्युति	सरिमपधनिधस-	सनिधमगरिस ।	
४. गौरीगांधारी	समरिगमपधनिधस-	सनिधपमगरिस ।	सरिमपधपनिधस । सन्निधपममगरिस ।
५. जयसिन्धु	सरिगमपधस-	सपनिधमगरिस ।	

६. श्रीमणि सतिगपधस- सनिधपमगरिस ।  
 ७. वसंतमनोहरी सरिगमधनिस- सनिधमगरिस ।  
 ८. जीवरंजनी सरिगमपधनिस- सधपमगरिस ।  
 ९. घंटास्व सरिसगमपनिस- सनिधपमगरिस ।  
 १०. भूपालचिंतामणि सरिगमपधनिधस- सधनिधपमगरिस ।  
 ११. पुष्पवसत सरिगपमधनिस- सधनिपमगरिस ।

सगरिगम पधपनि धनिस । सनिधपमगरिस ।

(३) गानमूर्ति मेल-जन्य—९ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. गिरिकर्णिक सरिमपधनिस- सनिधपमगरिस ।  
 २. सुरटिमल्लारु सरिमपनिस- सनिधपमगरिस ।  
 ३. सामवराली सरिमपधनिस- सनिधपमगरिस ।  
 ४. छायागौड़ सरिगारिमपधनिस सधनिपमगरिस ।  
 ५. ललिततोड़ी सरिगमपस- सनिधमगरिस ।  
 ६. मंगलगौरी समपधनिस- सनिपधमगरिस ।  
 ७. भिन्नपंचम सगमपधनिस- सनिधपमगरिस ।  
 ८. सारगललित सरिगमारिमपनिस- सनिधपमगरिस ।  
 ९. त्र्यंबकप्रिय समरिगमपस- सनिसधपमगरिस ।

सरिगारिमपधपनिनीस्सा । सनिधमागगरिस ।

(४) वनस्पति मेल-जन्य—९ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. वीरविक्रमी सरिगमपधनिस- सनिपधमगरिस ।  
 २. कण्टिकसुरटी सरिगमपधस- सनिधपमगरिस ।



राग	आरोही	अवरोही
३. सुररूपणी	सरिगमपस-	सनिधनिपमरिस ।
४. भानुमती	सरिगरिमपस-	सनिधपमगरिस ।
५. इन्दुशीतल	सरिगमपधनिधस-	सधनिपमगरिस ।
६. लीलारंजनी	समरिगमपस-	सनिधपमगरिस ।
७. रसाली	सरिमपधनिप-	सधपमरिस ।
८. सुगात्री	समपधनिस-	सधपमगरिस ।
९. स्वैतावरी	सरिगमपमधनिस-	सनिपमगरिस ।

(५) मानवती मेल-जन्य--१ (रि<sub>१</sub> ग<sub>१</sub> म<sub>१</sub> ध<sub>२</sub> नि<sub>३</sub>)

१. मानलोचनी	सरिगमपधनिपस-	सनिधमगरिस ।
२. मंगलदेशिक	सरिगमपनिधस-	सनिधमगरिस ।
३. देव्यगौरी	सरिगमधपनिस-	सधनिपमगरिस ।
४. मनोरंजनी	सरिमपधनिस-	सनिधपमगरिस ।
५. जयसावेरी	समरिगमपधनि-	धपमगरिसनिसा ।
६. मंगलभूषणी	पधसनिस्सरिगमप-	मगरिसनिधप ।
७. घनश्यामल	सगमपधस-	सनिधपमगरिस ।
८. पूर्वकन्नड	सरिगमपमपस-	सधनिधपमगरिस ।
९. पूर्वसिंधु	सरिगमपसनिस्-	सधपमधमगरिस ।

सरिमपधनीस । सनिसधप मपम रिग रिस ।

(६) तान्त्रयी मेल-जन्य—९ (रि० ग० म० ध० नि०)

०. १. तिलकप्रकाशिनी सनिपमगरिस ।
२. देखनारायणी सनिधनिपमगरिस ।
३. सिंधुमालवी सनिपमरिस ।
४. तनुकीर्ति सनिधनिपमगरिस । अ० सनिधनिपमगरिस ।
५. छायानारायणी सपमगरिस ।
६. श्रीमालवी सनिधपमगरिस ।
७. शृंगारिणी सनिधपमगरिस ।
८. देखसुरटी पमगरिसनिस ।
९. गौडमालवी सपधनिपमगरिस ।

(७) सेनावती मेल-जन्य—१० (रि० ग० म० ध० नि०)

१. संधवगौड सनिधमगरिस ।
  २. सेनाग्रणी सनिधपमगरिस ।
  ३. सिंधुगौरी सधपमगरिस ।
  ४. ईशगौड सधपधमगरिस ।
  ५. भोगी सनिधपमगरिस ।
  ६. छायागौरी सनिधपमगरिस ।
  ७. गौडचंद्रिक सनिधपगरिस ।
- सरिगागतिम गमप निधस्सा । सानीधप म  
गमागगरिस ।

श्री सुव्वराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

राम	आँरोही	अवरोही
८. चिंतामणि	सरिगमसमपधनिस-	सधनिपमगरिस ।
९. छायामालवी	सगरिगमपधनिधस-	सनिधपमगमरिस ।
१०. भानुगौड़	धसरिगमपधनि-	धपमगरिसनिधप ।

### (८) हनुमत्तोडी मेल-जन्य--१९ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. हिमांगी	सरिगमपधनिधस-	सनिपधमगरिस ।	सरिगमपधनीस । सनिधपमगरिस ।
२. तोडी	सरिगमधनिस-	सनिधमगरिस ।	
३. चंद्रिकागौड़	सरिगमपधस-	सधपमरिस ।	
४. भूपाल	सरिगपधस-	सधपगरिस ।	
५. भानुचंद्रिक	समधनिस-	सनिधमगस ।	सरिगमप मधनिस । सनिधमपगरिस ।
६. नागवराली	निसगरिगमपध-	पमगरिसनि ।	
७. छायाबौली	सरिगामसपमधनिस-	सनिपधमगरिस ।	
८. शुद्धसामत	धसरिमपध-	धपमगरिस ।	
९. इंदुसारंगनाट	सरिगमपमधनिस-	सधपमगरिस ।	सरिमपधसा । सनिधपमगरिस ।
१०. असावेरी	सरिमपधस-	सनिसपधमपरिगरिस ।	
११. शुद्धमारुव	सगमपधस-	सधपमरिगरिस ।	
१२. पुत्रागवराली	सरिगमपधनि-	निधपमगरिसनि ।	निसरिगमपध । धपमगरिसनि ।
१३. शुद्धसीमंती	सरिगमपधस-	सधपमगरिस ।	
१४. आहिरी	सरिसगमपधनिस-	सनिधपमगरिस ।	सरिसगमपधनिस । सनिधपमगोरिस ।

१५. देशिकाबंगाल  
१६. धन्यासि  
१७. नाधनालि  
१८. चद्रकान्त  
१९. कलासावैरि

सरिगमपमधनिस-  
सगमपनिस-  
सरिगमपनिस-  
सरिगमपमधनिस-  
सरिगमपमधनिस-

निसगामपनीस्ता । निधपमगरिस ।

२०

### (९) धेनुक मेल-जय-१० (रि, ग, म, ध, नि)

१. धैर्यमुली  
२. ललितश्रीकंठी  
३. सिधुचितामणि  
४. भिन्नषड्ज  
५. देस्यआधाली  
६. पूर्वफरजु  
७. शोकवरालि  
८. गौरीबंगाल  
९. देशिकारुद्रि  
१०. टक्क

सरिगमपमधस-  
सरिगमपमधनिस-  
सरिमगमधपधस-  
सरिरिगमपनिस-  
सरिगमपनिधस-  
सगममधनिस-  
सगमनि-  
धसरिमपधनि-  
समरिगमपनिस-  
सगमपमधनिस-

सनिपमपरिगरिस ।  
सनिधपमधमगरिस ।  
सधपमगरिस ।  
सधपमगरिस ।  
सधपमगरिस ।  
सनिधपमगरिस ।  
धपमगरिस ।  
धपमगरिसनिधप ।  
सनिधमगरिस ।  
सनिधपमगरिस ।

सरिगामपधनिस । सनिधपमगरिस ।

- १ सगमधधनिधस । सधमगरि गस ।  
२. सगमप मग मधनिस । सनिधमपम गम-  
रिस ।

(१०) नाटकप्रिय मेल-जन्य—१० (रि० ग० म० ध० नि०)

१. निरजनी सारिगमपधस— सनिधपमगरिस ।
२. कन्नडसौराष्ट्र सरिमगमधपधनिस— सनिधपमगस ।
३. पूर्वरागक्रिय सारिगमपनिधनिस— सनिपधमगरिस ।
- ४ दीपर सारिगमपधनिस— सनिधनिपमगरिस ।
५. वसतकन्नड सारिगमपनि— धमपगरिसति ।
६. सिधुभैरवी मपधनिधसारिगम— गरिसनिधपमगम ।
७. नटाभरण सारिगमपधपनिस— सनिधपमगमरिस ।

८. सारगबौलि समगमपधनिधस— सनिधपमगरिस ।
९. हिन्दोलदेशिक समारिगमपधनिस— सपनिधमगरिस ।
१०. मागधत्री सगरिमपधस— सनिपगस ।

सगमप्पानिध निससा । सनिधनिपा निपपम-  
गग रिरिसा ।

(११) कोकिलप्रिय मेल-जन्य—९ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. कौमारी सारिगमपधस— सनिधपमगरिस ।
२. माखदेशिक समपधपनिस— सनिधपमपमगरिस ।
३. वसंतनारायणी सारिगमपस— सनिधपमगरिस ।
४. कोकिलारव सारिगमपधनिस— सनिधपमगरिस ।
- ५ छायसैधवी सारिगमपधपनिस— सधनिपमगरिस ।

सारिमप मपधनिसा । सनिधप मगरिस ।

६. शुद्धमंजरी सगमपमधनिस- सनिपधमगरिस ।
  ७. वर्धनी सगमपमधनिस- सनिपधपमगस ।
  ८. सिधुक्रिय सरिगमपमधनिस- सधपमगरिस ।
  ९. शुद्धलित सपमधनिस- सनिसधपमगरिस ।
- (१२) रूपवती मेल-जन्य-१ (रि, ग, म, ध, नि, ) सरिमप पससा । सनिधनिप मगस ।
१. रेखावती रूपवती राग- सनिधपमगरिस ।
  २. प्रतापवसंत समरिगमपनिस- सनिपमरिस ।
  ३. भोगवराली सरिगमपनिस- सनिपमगरिस ।
  ४. भानुकोकिल समपधनिस- सधनिपमगस ।
  ५. रौप्यसग समपधनिस- सधनिपमगरिस ।
  ६. पूर्णस्वरावलि सगमपधनिस- सधनिपमरिगस ।
  ७. सामकुंरजि सगपधनिस- सनिधनिपमगरिस ।
  ८. सोमभैरवी सरिगमपस- सनिपधनिपमगरिस ।
  ९. श्यामकल्याणी समगमपधनिस- सनिपधनिपमगरिस ।

(१३) गायकप्रिय मेल-जन्य-१५ (रि, ग, म, ध, नि, )

१. गीतप्रिय सरिगमपधनिस- सधपमगरिस ।
  २. सामनारायणी सरिमपधनिस- सपधनिपमरिस ।
  ३. हेज्जजि सरिगमपधस- सनिधपमगरिस ।
  ४. कुंतलकांभोजी सगमपधनिस- सनिधपमगस ।
- अव० सनिधपमगरिस ।
- सरिम गमपधस । सनीधपमगरिस ।

५. देवमुखारी	सरिमपधनिस-	अवरोही	सनिधपमगरिस ।
६. मेघराग	सरिमपनिधपस-		सनिधपमगरिस ।
७. कल्याणकेसरी	सरिगपधस-		सधपमगरिस ।
८. नवरसचंद्रिक	सरिगपमधस-		सधपमगरिस ।
९. सुजस्कावली	समगमपधनिस-		सधनिधपमगस ।
१०. सुरवराली	समपधनिस-		सनिधपमस ।
११. कलकंठी	सरिमपधनिस-		सनिधपमगरिस ।
१२. भुजगचिंतामणि	सपमपधनिधस-		सनिधपमगरिस ।
१३. कलतड	सरिगपधनिस-		सनिधपमगरिस ।
१४. नागसार्पंत	सरिमपधस-		सधपमगरिस ।
१५. जुजाहुलि	समगमपधनिस-		सधनिधपमगस ।

## (१४) वकुलाभरण मेल-जन्य—११ (रि१ ग१ म१ ध१ नि१)

१. विजयोल्लासिनी	सरिगमपमधनिस-	सनिधपमगरिस ।
२. रागवसंत	सरिमपनिधस-	सनिधपमगरिस ।
३. हंसकांभोजी	सरिगमधनिस-	सनिधपमगरिस ।
४. वसंतभैरवी	सरिगमधनिस-	सनिधपमगरिस ।
५. श्यामचिंतामणि	सरिमपधस-	पनिधपमगरिस ।
६. सोमराग	सरिमपमधनिस-	सनिधपमगरिस ।

सरिगम मधनिस । सनिध ,मगमप मगरिस ।

७ निटलप्रकाशिनी

समपधनिस-

सनिपमगरिस ।

८ कर्णाटक आधाली

सरिमपधनिस-

सधपमगरिस ।

९. सुधाकाभोजी

सरिमपनिस-

सनिपमगरिस ।

१०. वसतमखारी

समगमपधनिस-

सनिधपमगरिस ।

११. पूर्वदर्शी

सरिसगमपधनि-

धपमगरिसनिस ।

(१५) मायामालवगौड़ मेल-जन्य--४१ (रि० ग० म० ध० नि०) मायामालवगौड़राग--सरिगमपधनिस । सनिधपमगरिस ।

१. मित्रकरण

सरिगमपधनिस-

सधपमगरिस ।

२. सावेरि

सरिमपधस-

सनिधपमगरिस ।

३. जगन्मोहिनी

सगमपनिस-

सनिपमगरिस ।

४. गौड़

सरिगमरिमपनिस-

सनिपममगरिस ।

५. बौलि

सरिगपधस-

सनिधपगरिस ।

६. सारगनाट

सरिमपधस-

सनिसधपमगरिस ।

७. मारुवकन्नड

सरिमगमपनिस-

सनिपमरिगरिस ।

८. नादनामाक्रिय

सरिगमपधनि-

निधपमगरिसनि ।

९. मेचबौलि

सरिगपधस-

सुनिधपमगरिस ।

१०. गुम्मकाभोजी

सरिगपधनिधस-

सनिधपमगरिस ।

११. रेगुप्ति

सरिगपधस-

सधपगरिस ।

१२. मलहरि

सरिमपधस-

सधपमगरिस ।

१३. ललितगौरी

सरिगमपधनिस-

सधपगरिस ।

सरिमपधसा । सनिधपमगरिस ।

सा रिमपनिस । सनिपमरिग मरीस्सा ।

सरिगपधनिस । सनिधपगरिस । (अल्पनिषाद)

सरिगमपधनिस । सनिधप मागरिरिस ।

सरिगसधस । सनिधपमागरिस ।

अव० सधपगरीस ,



राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
१४. सालंगनाट	सरिसमपधस-	सधपसनिधपमगरिस ।	सरिसपधस । सनिधपमगरिस ।
१५. मंगलकैशिक	समगमपमधानिस-	सनिधपमगरिस ।	सरिगमपमग पधानिस सरिसमधपस सनिधपमगरिस ।
१६. ललितपंचम	सरिगमधनिस-	सनिधमपमगरिस ।	रिसगा मधनिस । सानिधपमगरिस ।
१७. मारुव	सगमपधनिधपस-	सनिधपमधमपमगरिस ।	सगमधनिस । सनिधपमग गरिस रिगरिस ।
१८. शुद्धक्रिय	सरिसमपधस-	सधपमगरिस ।	
१९. देश्य रेगुप्ति	सरिगरिमपधनिस-	सधनिधपमगस ।	
२०. मेघरंजि	सरिगमनिस-	सनिमगरिस ।	अव० सनिमगसरिस ।
२१. पाडि	सरिसमपनिस-	सनिधपमगरिस ।	रिसमपधपनिस । सनिप धा पमरीस ।
२२. पूर्णपंचम	सरिगमपध-	धपमगरिस ।	सरिगमपधस । सधपमगरिस ।
२३. सुरसिंधु	समगमधपधनिधस-	सनिधपमगरिस ।	
२४. देश्यगौड़	सरिसपधनिस-	सनिधपसरिस ।	सरिसपधनिस । सानिध पम मगरिस ।
२५. शुद्धमलहरी	सरिगममधस-	सधपगरिस ।	सरिगमपधधनीस्सा । सनिधपमगरिगस ।
२६. गौरी	सरिसपनिस-	सनिधपमगरिस ।	
२७. सिंधुरामक्रिय	सगमपधनिस-	सनिधपममगस ।	अव० सनिधपमगरिस ।
२८. गौड़िपंतु	सरिगरिमपधपनिस-	सनिधपमगरिस ।	१. सरिगमपधनिस । सनिधपमगगरिस ।
२९. सौराष्ट्र	सरिगमपधनिस-	सनिधपमगरिस ।	२. (रिसनिध) निसरिगमपधप । (धस)
३०. आर्द्रदेशिक	सरिगमपधनिस-	सधपमगरिस ।	धपमगगरिस । धधधसनिस ।

३१. वसतप्रिय	सरिगमपध्वनिस-	सनिपमरिस ।	सरिगमपध्वनिस । सनिध्वपमगरिस । <sup>३</sup>
३२. गुडजरि	सरिगमपध्वनिस-	सध्वनिपमगरिस ।	सरिमपध्वस । सध्वपमगरिस ।
३३. कल्लडबगाल	सरिमगमध्वपध्वस-	सध्वपमगरिस ।	सारिगमपध्वनिस । सानिपमगम ध्वपमगरिस ।
३४. गुण्डक्रिय	सरिमपनिस-	सनिध्वपमगरिस ।	सरिगरि गध्वमपध्वस । सध्वमपगरिस ।
३५. मार्गदेशिक	सरिगपध्वस-	सध्वमपगरिस ।	अव० सनिध्वपमगरिस ।
३६. फरलु	सरिगमपध्वनिस-	सनिध्वपमगारीस ।	
३७. ललितक्रिय	सरिगमपमध्वनिस-	सनिध्वमगरिस ।	सरिगमपध्वनिस । सनिध्वपमगरिस ।
३८. पूर्वी	सरिगमपध्वनिध्वस-	सनिध्वपमध्वमगरिस ।	रिसगमध्वनिस । सानिध्वनिध्वमाग मम पम-
३९. वसत	सगमध्वनिस-	सनिध्वमगरिस ।	गरिस ।
४०. घनसिन्धु	समगमपध्वनिध्वस-	सनिध्वपमगरिस ।	
४१. छायागौड़	सरिमपनिस-	सनिध्वपमगरिस ।	

(१६) चक्रवाक मेल-जन्य--२८ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. चिन्मय	सरिगामपमध्वनिस-	सनिध्वनिपमगरिस ।
२. शुद्धश्यामल	सगपध्वनिस-	सनिध्वपमगरिस ।
३. बिंदुमालिनी	सगरिमपध्वनिपनिस-	सपनिध्वपगारिस ।
४. मलयमार्हत	सरिगपध्वनिस-	सनिध्वपगरिस ।
५. गणितविनोदिनी	सगमपनिस-	सनिध्वपमगरिस ।
६. चंद्रकिरण	सगमपमध्वनिस-	सनिध्वनिपमगमरिस ।

## राग

७. वीणाधरौ

८. शशिप्रकाशी

९. कलावती

१०. कुतल

११. भक्तप्रिय

१२. शातस्वरूपी

१३. घोषणी

१४. वेगवाहिनी

१५. नभोमार्गिणी

१६. मन्तसिजप्रिय

१७. शिवानदी

१८. सुभाषिणी

१९. पूर्णगाधरी

२०. कुवल्यानंदी

२१. रविकरणौ

२२. भुजगिनी

२३. रसकलानिधि

२४. कुसुमांगी

आरोही

सरिगपधनिस-

सरिगमपधनिस-

सरिसपधस-

सरिगमपधनिस-

सगमपधनिस-

सगरीमपधनि-

सगमपधनिधस-

सरिगमपधनिधस-

सगमपधनिस-

सरिगमपधनिधपमधनिस- सधनिपमगरिस ।

सगमपधनि-

सधनिसरिगमप-

पधनिधसरिगमपधा-

सरिगमनिधनिपनिस-

सगमनिधनिस-

सरिसमगमनिधनिस-

सपमधनि-

सरिसपधनिस-

अवरोही

सनिधपमगरिस ।

सनिधपगारिस ।

सधपमगसरिस ।

सधनिपमगमरिस ।

सनिधपमरिमगस ।

सनिधनिपमरिस ।

सनिधपमगमरिस ।

सनिधपमगरिस ।

सधापमगरिस ।

धपमगरिसनिस ।

मगरिसनिधनिस ।

पमगरिसनिधनिप ।

सनिधमगस ।

सनिधपमगरिस ।

सनिधमगरिस ।

धपमगमरिसनिस ।

सनिधपमगरिस ।

श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

सारिगम, पधनिधपधसा । सानीधसम रिग

मरिस ।

सारिगमपधनिसा । सानिधपमगरिसा ।

२५. भुवनमोहिनी  
२६. गृहप्रिय  
२७. जनाकर्षणी  
२८. धनपालिनी

सगमनिधिस-  
सरिगामसपमधनिस-  
सरिगपमधनिस-  
सरिगमपमपस-

सनिपधमगारिस ।  
सनिधपमगसरिस ।  
सधनिपमधमगारिस ।  
सनिधपमधमगारिस ।

(१७) सूर्यकान्त मेल-जन्य--१ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. सेनामणि  
२. सामकन्नड  
३. ललित  
४. सुप्रदीप  
५. सोमतरंगिणी  
६. नागचूड़ामणि  
७. भैरव  
८. सामतमल्लार  
९. दिव्यतरंगिणी

सरिगामपधस-  
सरिमगमपधनिस-  
सरिगमधनिस-  
सरिमपधनिस-  
सरिसगमपमधनिस-  
सगामपधनिस-  
सरिगमपधनिस-  
सगमपनिस-  
सरिगमपस-

सनिधपमगारिस ।  
सनिधपमरीस ।  
सनिधमगारिस ।  
सनिधपमगारिस ।  
सनिधपमगमरीस ।  
सनिधपमगस ।  
सधपमगारिस ।  
सनिधमगारिस ।  
सनिधपमगारिस ।

सरिगमधधनिस । सनिधमामगारिस ।

अव० सधपमपमगारिस ।

(१८) हाटकंबरी मेल-जन्य--११ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. हितभाषिणी  
२. नागतरंगिणी  
३. शुद्धमालवी  
४. भानुचूड़ामणि

सरिगमपनिधनिस-  
सरिगमपनिस-  
सगरिगमपधनिस-  
सरिगमपस-

सनिपमगारिस ।  
सनिधनिपमगास ।  
सधनिपमगारिस ।  
सनिधनिपमगारिस ।

सरिगमपनिस । सनिध निपमगारिस ।

## रंग

५. सिहोल
६. चद्रचूड़प्रिय
७. हंसनटनी
८. भूपालतरंगिणी
९. कल्लोल
१०. शुद्धकन्नड
११. दिव्यगाधारी

## आरोही

- सरिगमपधनिस-  
सगमपनिधनिस-  
सगमपस-  
सरिमपनिस-  
सपधनिस-  
समपधनिस-  
समगरिपधनिस-

## अवरोही

- सनिधनिपमगरिस ।  
सनिपमरिस ।  
सपमगरिस ।  
सनिधनिपमगमरीस ।  
सनिधनिपमगस ।  
सनिपमगस ।  
सधनिपमगसरिस ।

श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

## (१९) झंकारध्वनि मेल-जन्य—१० (दि० ग० म० ध० नि०)

१. झंकारी
२. प्रभातरगिणी
३. देश्यबेगड
४. झंकारभ्रमरी
५. छायार्सिंधु
६. सिंधुसाल्वि
७. पूर्णलित
८. अमृततरंगिणी
९. पूर्वसाल्वि
१०. चित्तरजनी

- सरिगमपधस-  
समरिगमपस-  
सगमपस-  
सरिगमपधनिधस-  
सरिमपधस-  
समपधनिधस-  
सरिगमपस-  
सरिगमधनिस-  
सगमधनिस-  
सरिगरिमपध-

संगीत शास्त्र

सारिगमपधनिधपधसा । सनिधपम गरिगरिरीसा ।

(२०) नटभैरवी मेल-जन्य--३४ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. नीलवेणी सखिमपधनिधस- सधपमगरिस ।
२. भैरवी सखिमनिधनिधस- सनिधमगरिस ।
३. रीतिगौड़ सखिमनिधमपनिधस- सनिधमपधमगरिस ।
४. जयंतश्री सगमधनिधस- सनिधमपमगस ।
५. नारायणदेशादि सरिसगमपधपनिधस- सनिधपमगरिस ।
६. कमलातरिणिणी सरिसमपधनिधस- सनिधपमगरिस ।
७. ह्रिदोल सगमधनिधस- सनिधमगस ।
८. आभेरी सगमपनिधस- सनिधपमगरिस ।
९. उदयरविचंद्रिक सगमपनिधस- सनिधमगस ।
१०. आनदभैरवी सखिमपधनिधस- सनिधपमगरिस ।
११. कन्नड सखिमधस- सनिधमगस ।
१२. देवक्रिय सरिमनिधनिधस- पधमगरिसनि ।
१३. इंद्रगुण्डारव सगमपधपनिधस- धापमगरिसनि ।
१४. वसतवराळ सरिमपधनिधस- निधापगरिसनि ।
१५. नागाधारी सरिमपधनिधस- निधापमगरिसनि ।
१६. दिव्यगाधारी सगमपधनिधस- सनिधमगस ।
१७. मांजी सरिमपधनिधस- सनिधपमगरिस ।
१८. शुद्धदेवी सरिमपधनिधस- सनिधपमगरिस ।

सा रिगमपधनिधस । सनिधपुमगरिस ।  
सरीगम्म पध पनिधस । सानिनीध मागग-  
रिस ।

सगमनिधनिधस । सानिनीधमगस ।  
सगमपमपपसस । सानिधपमगरिस ।  
सगमपनिधनिधस । सनिधमगस ।  
सगमपध पसनिधस । सानिधपममसागगरिस ।

सरिमपधस । सधपमरिस ।

सरिमगमपधनिधस । सनिधपमगरिस ।

निसरीगमपधनिधस । सनिधपमगरिस ।  
सरिमपधनिध स, सनिधपधममगरिस ।

श्री मुञ्जराय दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

राग	आरोही	अवरोही
१९ मार्गहिंदोल	सरिगमपधनिस-	सनिधपमगस ।
२० नायकी	सरिमपधनीधपस-	सनीधपमगारिस ।
२१ शुद्धसाल्वि	सगमपनिस-	सनिपमरिस ।
२२ कनकवसंत	सगमपनिधस-	सनिधपमगारिस ।
२३ पूर्णवड्ज	सपमपधपस-	सनिधमगारिस ।
२४ गोपिकावसंत	समपनिधनिधस-	सनिधपमगस ।
२५ चापघटारव	सगमपनि-	धमगारिसनि ।
२६ भुवनागधारी	सरिमपनिस-	सनिधपमगस ।
२७ हिंदोलवसंत	सगमपधनिधस-	सनिधपमगधमगस ।
२८ सारंगकापि	सरिपमारिपरिमपनिस-	सनिधपमगारिस ।
२९ सारमती	सरिगमपधनिस-	सनिधमगस ।
३० शुद्धतरंगिणी	सगमपनिस-	सनिधमगारिस ।
३१ अमृतवाहिनी	सरिमपधनिस-	सनिधमगारिस ।
३२ जल	सरिगमपधनिधपस-	सनिधपमगारिस ।
३३ पूर्वभैरवी	सरिगमनिधनिस-	सनिधपमगारिस ।
३४ कोकिलवाली	सरिगरिमपधनिधस-	सधनिधपमरिगारिस ।
(२१) कौरवाणी मेल-जय्य-	१३ (दि० ग० म० ध० नि०)	
१. कुलभूषणी	सरिगमपनिस-	सधपमगारिस ।

रि सरिगमपध पनिनीस्सा । सनिधपमगारि  
मगस ।

सगमपधसस । सनिधपधनीधमगस ।

२. सामंत्तालवि	सरिगमपधस-	सनिधपमगरिस ।
३. जयश्री	सरिगमपधनिधस-	सनिधपमगरिस ।
४ इन्द्रधवली	सरिगमसमपधनिस-	सनिधपमगस ।
५. किरणावली	सरिगमपधनिस-	सधपमगरिस ।
६ सोमगिरि	निसारिगमपध-	पमगरिसनिस ।
७. माधवी	समगमपधनिस-	सनिधपमसमगरिस ।
८. हंसपंचम	सगमपधनिपस-	सनिधमगरिस ।
९. कल्याणवसंत	सगमधनिस-	सनिधपमगरिस ।
१०. गगनभूपाल	समगमपधनिस-	सनिधमगरिस ।
११. कर्णाटकदेवगाधारी	निसगमपा-	धापमगरिसनि ।
१२. नागदीपक	सरिगमपस-	सनिधमगस ।
१३. संजीवनी	सरिसगमपनिस-	सनिधनिपमगरिस ।

सरिमप धपधनिस । सनिपधपमप गरिस ।

(२२) खरहरप्रिय मेल-जन्य—५६ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. खलावली	सरिगमपस-	सनिपमगरिस ।
२. सुगुणभूषणी	सगमपमधनिस-	सनिधपमगमरिस ।
३. स्वरंजनी	सरिगमधनिस-	सनिपमगामरिस ।
४. भगवत्प्रिय	सरिगामरिमपधनिस-	सनिधपमरिस ।
५. स्वरकलानिधि	समगमपधनिस-	सनिधनिपमरिस ।



राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बरास दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
६. श्रीराग	सरिमपनिस—	सनपधनिपमरिगरिस। रोमपनिस। सनिष धनिपगरिग रिस।	{ साय गेय—आमराग या रागाग अल्पधैवत; सरिगम और मगरिस प्रयोग नहीं—साराभूत। सचार—रिमपनिसानिपधनिपमरिगरिस —सपादक। मुख्यसंचार—रिगारि सनिपानीसा।
७. मालवश्री	सगमपनिधनिपधनिस—	सनधपमगस।	{ रि वज्रं—मपधनिसा; सनिनि धनि धपममस- गसा —साराभूत। सदा गेय—रागाग
८. कन्नडगौड़	सरिमपनिस—	सनधपमगस।	{ उपांग—दिन का पश्चिम याम, आरोह और अवरोह में वक्रसंचार, उदाहरण— सनिपधनिसनिनिस। रिगमगमपनिपम। पनि निस मगस। मधनिस। निरीगमम, सनिप—साराभूत।

१. मध्यमावती	सरिमपनिः-	सनिपमरिस ।	सतिपमरिस ।
१०. फलमंजरी	सगमपधस-	सनिधपमगामरिस ।	सारिमपधनिनिःसा । सन्नीपमगारीसा ।
११. रुद्रप्रिय	सरिगमनिः-	सनिपमगरिस ।	
१२. वृन्दवनसारग	सगरिमपनिः-	सनिपमगरिस ।	
१३. नटनप्रिय	सगरिगमधनिः-	सनिपमगरिस ।	
१४. ललितमनोहरी	सगमपधनिः-	सनिपमगरिस ।	
१५. मणिरगु	सरिमगामपनिः-	सनिपमगरिस ।	रिममपनिनिःसा । सनिपमगरिरिस ।
१६. जयतसेन	सगमपधस-	सनिधपमगस ।	
१७. सैन्धवी	निधनिःसरिगम-	पमगरिसनिधनिःसा ।	सारिगमपनिधनिःसा । सनिधपमगरिस ।
१८. शुद्धधन्यासी	सगमपनिपस-	सनिपमगस ।	सगमपनिःसा । सनिपमगस ।
१९. पूर्णकलानिधि	सगमपधनिः-	सधपमगरिस ।	
२०. हरितारायणी	सरिगामपमधनिः-	सनिपमगरिस ।	
२१. पूर्वमुखारी	सगमपधनिधस-	सनिपमगरिस ।	
२२. ललितगांधारी	सरिगामपनिः-	सनिपमगामरिस ।	
२३. शुद्धभैरवी	सगमनिधस-	सनिधमगरिस ।	सारिमपधसा । सनिधमगरिस ।
२४. आमोनी	सरिगमधस-	सधमगरिस ।	सारिगमपधपसा । निसधपमगरिस ।
२५. सालगभैरवी	सरिमपधस-	सनिधपमगरिस ।	
२६. जयनारायणी	सरिगामपधस-	सनिधपमगरिस ।	
२७. मनोहरी	सगरिगमपधस-	सधपमगरिस ।	सगमपनिःसा । सनिधपमगसा ।

श्री मुञ्जराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

राग	आरोही	अवरोही
२८. मारुधन्यासी	सगमपधनिधपमपनिस-	सनिधपमपधमगरिस।
२९. कलानिधि	सरिगमसपमधनिस-	सनिधपमगरिस।
३०. नागरी	सरिमपधनिस-	सनिधपमगस।
३१. स्वरभूषणी	सगमपधनिस-	सनिधपमगरिस।
३२. वज्रकाति	सगमपनिस-	सनिधपमगरिस।
३३. पंचमराग	सरिधधपनिस-	सनिधपमगरिस।
३४. शुद्धबंगल	सरिमपधस-	सधपमरिगरिस।
३५. मंजरी	सरिगमपनिधनिस-	सनिधपमगरिस।
३६. हुसेनी	सरीगामपधनिस-	सनिधपमगरिस।
३७. कापि	सरिगमरिपमपधनिस-	सनिधपमगरिस।
३८. श्रीरंजनी	सरिगमधनिस-	सनिधमगरिस।
३९. शुभांगी	समरिगमपधनि-	धपमगरिसनिस।
४०. कलास्वरूपी	सरिगामपधनिपस-	सनिपमगरिस।
४१. शुद्धवेलावल	सरिमपनिस -	सनिधनिपमगरिस।
४२. दरबार	सरिमपधनिस -	सनीधपमगरिस।
४३. देवरंजनी	सरिमपधनिस-	सधपमगरिस।
४४. बालचंद्रिका	सगमपधनिस-	सनिधमगरिस।
४५. मंडमारि	सरिमपधस-	सनिधपमगस।

सरिगमापधनिसा। निधपमागरिस।  
सारिमपधनिस। निधपमगरीस्सा।

सारिमपधनिसा। नीधपमगरिसा।  
समपध पनिध पनिस। सनिधपमसा।  
धनिस धसस।

४६. शुद्धमनोहरी	सरिगमपधस-	सनिपमरिगस।
४७. सिद्धसेन	सगरिगमपधस-	सनिधमपमरिगरिस।
४८. कालिंदी	समगामपस-	सनिधमगरिस।
४९. कल्लार	सरिसगमपधपस-	सधपमरिस।
५०. नादमूर्ति	सगमधनिस-	सनिपमरिगस।
५१. मुलारि	सरिमपधनिधस-	सनिधपमगरिस।
५२. धातुमनोहरी	सपमपधनिस-	सनिपमगरिस।
५३. कुमुदप्रिय	सरिगामपस -	सनिधनिपमगस।
५४. देवमनोहरी	सरिमपधनिस-	सनिधनिपमरिस।
५५. बालवोषी	सरिगपमनिधस-	सनिधपमगरिस।
५६. नादवराणिणी	सपमरिगरिस-	सपनिधपमगरिगस।

(२३) गौरीमनोहरी मेल-जय्य—९ (दि० ग० म० ध० नि०)

१. गभोरिणी	सरिगमपधनिधस-	सनिधपमगरिस।
२. सालिविबाल	सरिमपधस-	सनिधपमरिस।
३. हसदीपक	सरिमधस-	सनिधपमगरिस।
४. नागभूपाल	सरिगमनिस-	सनिमगरिस।
५. वेलावली	सरिमपधस-	सनिधपमगरिस।
६. सामसालवी	सरिगमपस-	सनिधपमगरिस।
७. कोकिलदीपक	सगमधनिस-	सनिधमगरिस।

सरिगस रिममपधससा सनिधपमगरिस।

श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

राग	आरोही	अवरोही
८. सिंहमेलमैरवी	सगमपधस-	सनिधपमगरिस।
९. नागपंचम	समपनिधस-	सधमगरिस।
(२४) वरुणप्रिय मेल-जन्य--१ (दि० ग० म० ध० नि०)		
१. वीरवसंत	सरिगमपस-	सनिधपमगरिस।
२. भानुदीपक	सरिगमपधनिरु-	सनिपमरिस।
३. गौड़पंचम	सरिसपनिरु-	सनिपमगरिस।
४. हंसभूपाल	सरिगमपस-	सनिधनिपमगस।
५. सिद्धेलकापि	सरिसपधनिस-	सनिधनिपमगस।
६. हंसभूषणी	सगमधनिस-	सनिपगरिस।
७. गंधर्वनारायणी	समपधनिस-	सनिधनिपमस।
८. सोमदीपक	सगपधनिस-	सनिपमगस।
९. नवनीतपंचम	सगमधपधनिस-	सनिपमरिस।
(२५) माररंजनी मेल-जन्य--१० (दि० ग० म० ध० नि०)		
१. मित्ररंजनी	सरिगमपधपस-	सनिधपमगरिस।
२. रम्यपंचम	सरिगमपधनिस-	सधमगरिस।
३. शरद्भुति	सरिगमपधनिरु-	सनिधपमगरिस।
४. सिद्धेलवसंत	सरिगमपमधनिरु-	सधपमगरिस।
५. कल्लोलसावेरी	सरिमपधम-	सनिधपमगरिस।

रिममपनिध निम। सनिपमरिगस।

६. देशमुखादी

सरिगमपधनिधस-

सधनिधपमगरिस।

७. भानुप्रताप

समगमपधस-

सधपमगरिस।

८. हसपाधारी

सरिगमपस-

सनिधपधमगरिस।

९. कैसरी

सरिगमपमधपधस-

सधनिधपमगरिस।

१०. देवसालग

सगपधनिस-

सपनिधपमगरिस।

(२६) चाबकेशी मेल-जन्य--८ (रि<sub>६</sub> ग<sub>६</sub> म<sub>६</sub> ध<sub>६</sub> नि<sub>६</sub>)

१ चित्स्वरूपी

सरिगमपधनिस-

सनिधपममगरिस।

२. सोमप्रताप

सपमधनिस-

सनिधपमगरिस।

३ सिद्धोलवराली

सरिगमपमधनिस-

सधपममगरिस।

४. तरंगिणी

सरिमगरिमपधनिधस-

सनिधपमगरिस।

५ कन्नडपचम

सरिगमपनिस-

सनिधनिपमगस।

६. कोकिलप्रताप

सगमपमधनिस-

सनिपमगस।

७. गधर्वमनोहरी

सरिमपस-

सनिधमगरिस।

८ शुक्रज्योति

सरिगमपधनिस-

सनिपधमगरिस।

(२७) सरसंगी मेल-जन्य--२९ (रि<sub>७</sub> ग<sub>७</sub> म<sub>७</sub> ध<sub>७</sub> नि<sub>७</sub>)

१. सिंहवाहिनी

सगमपधनिस-

सनिधपमगरीस।

२ नादविनोदिनी

सरिगमपमधानिस-

सनिधपमगरीस।

३. नादस्वरूपी

सगमपमधानिस-

सनिधपमगरीस।

रंग

- ४ पद्मराग
५. सोममुहूर्ती
- ६ भानुकिरणौ
- ७ सुरसेन
- ८ जलजवासिनी
९. सारसप्रिय
- १० जयाभरणी
११. हरिप्रिय
१२. रत्नमणि
- १३ नादप्रिय
- १४ मानाभरणी
१५. दिव्यपञ्चम
- १६ नयनरंजनी
१७. मणिमय
- १८ मंजुल
१९. माधुर्य
- २० मधुकरी
२१. कमलामनोहरी
२२. भिन्नगाधारी

आरोही

- सरिगमपधनिस-  
सगमपधनिस-  
सगमधानिस-  
सरिमपधस-  
सगमपनिस-  
सरिमगामपधनिस-  
सगमपमरिगमपसा-  
सरिगमपस-  
समगामरीगमपधनिस-  
समगामपधनिस-  
सरिगममधानिस-  
सरिगमपधनिस-  
सरिगमपधपनिस-  
सनिसरिगमपधा-  
पसनिसरिगमप-  
पनिसरिगमप-  
समगमपधनि-  
सगमपनिस-  
सरिगमपधनी-

अवरोही

- सनियपमगस  
सनियपमरिमगस।  
सनियपमगरीस।  
सनियपमगरिस।  
सनियपमरिस।  
सतिपधामगरिस।  
सनिधायमरिस।  
सनियपमगस।  
सनिधायमरिगस।  
सनिसमगस।  
सनियपमगरिस।  
सनियपमगरिस।  
सनियपमगरिस।  
सनियपमगरिस।  
पमगरिसनिस।  
मगरिसनियप।  
मगसनियप।  
पमगरिसनिस।  
सनियपमगस।  
धपमगमरिस।

कुरजिच्छाय

श्री सुब्बराम दीक्षिण की सं० सं० प्र० के अनुसार

२३. दिनकरकाति

२४. दिव्यांबरी

२५. नागाभरणी

२६. नलिनकाति

२७. रत्नाभरणी

२८. कुसुमप्रिय

२९. भोगलील

समगमपदस-

सपमपधनिस-

सरिपमपरिपद-

सरिपमनिस-

सरिपधनिस-

सरिपमपधनिस-

समगमपधनिस-

सनिधपमगस।

सपनिधमगरिस।

सधपमगरिस।

सनिपमगरिस।

सनिधपगस।

सनिपमगरिस।

सनिधपगरिस।

(२८) हरिकर्माभोजी मेल-जय--५३ (दि० ग० म० ध० नि०)

१. हितप्रिय

२. कामोजी

३. केदारगौड

४. नवरसकलानिधि

५. नारायणी

सरिगमधनिस-

सरिगमपधर-

सरिपमनिस-

सरिपमनिस-

सरिपमधर-

सरिमग पधनि धसा। सनिधपमगरिस।

सरिमपनिस। सानिधपमगरिस।

सरिमगरिम पधसा। सनिप निधपधमपमग-

रिस।

रिमपनिधनिस। निधपमगरिस।

सनिधपमगरिस।

सनिधपमगरिस।

सनिधपमस।

सनिपधमगरिस।

६ नारायणगौड

७. प्रतापचिन्तामणि

८. सुरभैरवी

९. द्वैतचिन्तामणि



श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

राग	आरोही	अवरोही
१०. मालवी	सरिगमपनिमधनिःस-	सनिधनिपमगरिस।
११. प्रतापरुद्री	समगमपधनिःस-	सनिपमगरिस।
१२. छायातरंगिणी	सरिसममपनीस-	सनिधपमगरिस।
१३. बलहस	सरिमपधस-	सनिधपमरिसगस।
१४. नटनारायणी	भरिगमधनिःस-	भनिधपममगरिस।
१५. मोहन	सरिगपधस-	सधपगरिस।
१६. प्रबालशोधी	सरिमपधनिःस-	सनिधनिपमगस।
१७. सिधुकन्नड	समगमरिगमपस-	सनिधपमगरिस।
१८. कापिनारायणी	सरिमपधनिःस-	सनिधपमगरिस।
१९. जङ्गाटि (क्षिप्पोटो)	धसरिगमपधनिः-	धपमगरिसनिधपधस।
२०. शहन (शहाना)	सरिगमपमधनिःस-	सनीधपममगरिस।
२१. प्रतापनाट	सरिगमधपधनिःस-	सनिधपमगस।
२२. स्वराचतामणि	सरिगमपनिधनिपस-	सनिधपमरिस।
२३. द्वैतानदी	सरिगमपस-	सनिधनिपमरिस।
२४. रत्नाकरी	सगमपनिधनिःस-	सनिधपमरिस।
२५. ईशमनोहरी	सरिगमपधनिःस-	सनिधपमरीमगरिस।
२६. प्रतापवराली	सरिमपस-	सधपमगरिस।
२७. कुतलवराली	समपधनिधस-	सनिधपमस।
२८. सरस्वतीमनोहरी	सरिमधस-	सधनिपमगरिस।

अव० सनिधपमगरिसास्स।

सरिगममधधनिःस। सनिधपममगरिस।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
४७. मुरट्टी	सरिमपनिस-	सनिधपमगपमरीस ।	निसरिमपनीस्सा । सनीधपमा गरीस्सा ।
४८. खमास	सगपधनिस-	रिसनिधपमगस ।	सारिमपमधनिसा । सनिधपमगरिसा ।
४९. नाटकुरजी	सरिममधनिस-	सनिधमगस ।	सारिमप धनिसा । सनिधमगसा ।
५०. कुलपवित्री	सरिममधपनिस-	सनिपमरीस ।	
५१. मायातरणिणी	सरिमगपमनिस-	सनिधपमगरिस ।	
५२. उमाभरण	सरिममपधनि-	सनिपमरिमगरिस ।	
५३. देशाक्षी	सरिममपधस-	सनिधमगमरिस ।	

(२९) धीरशंकराभरण मेल-जन्य—३१ (रि० ग० म० ध० नि०) धीरशंकराभरण—सरिमपमधनिस । सनिधपमगरिस ।

१. धूर्वाकी	सरिमपधस-	सनिपधपमगरिस ।	सारिमगमपमपनिनीस्सा । सनिपनिध धपमग-
२. कुरजी	सनिसरिममपध-	धपमगरिसनिस ।	रिसा ।
३. केदार	समगमपनिस-	सनिपमगमधमगरिस ।	समग मपनिनीस्सा । सनिपममगारिस ।
४. आहिरीनाट	समगमपधनिस-	सनिपधनिपमगस ।	
५. माडुरी	सरिमरिमपनि-	धपमगरिस ।	सरिमगरिमपधसा । सनिधपमगरि सारि-
			गरिस ।
६. कोलाहल	सपमगमपधनिस-	सनिधपमगरिस ।	
७. जनरजनी	सरिममपधपनिस-	सधपमरिस ।	
८. सिधुमदारो	सरिममपस-	सनिधपमगमधपमरिस ।	

९ व्यागु	सगमपनिधनिस-	सनिधपमगारिस ।	सरिगपनिसं । सनिपगरिस ।
१० हसध्वनि	सरिगपनिस-	सनिपगरिस ।	सरिगमपधनिस । सनिपमगारिस ।
११ पूर्णचन्द्रिक	सरिगमपधपस-	सनिपधपमगारिस ।	सरि सगम पध पनिस । सनिधपममग-
१२ देवगाधारी	सरिगरिमपधनिस-	सनिधपमगारीस ।	रिस । (२)
			सरिमपधवास्सा । सनिधपमगरी, सरिगरी-
			सा (दे)
१३ आरभी	सरिमपधस-	सनिधपमगारिस ।	अव० पमगरिसनिधप ।
१४ नवरोज	पधनिसरिगमप-	मगरिसनिधप ।	सरिगमपधनिस । सनिधपमगारिस ।
१५ गरुडध्वनि	सरिगमपधनिस-	सधपगरिस ।	
१६ अठाण	सरिमपनिस-	सनिधपमगारिस ।	
१७ जुलावु	पनिसरिगमप-	पमगरिसनिप ।	
१८ कन्नड	गरिसरिगमपमधनिस-	सनिसधपमपमगरिस ।	सरिगमपधनिस । सनिधपमगारिस ।
१९ बिलहरी	सरिगपधस-	सनिधपमगरिस ।	सरिमपधसा । सनिधपमगरिस ।
२० शुद्धसावेरी	सरिमपधस-	सधपगरिस ।	सरिमपधसा । सधाधपपमरिसा ।
२१ नागध्वनि	सरिसमगमपनिधमपनि-	सनिधनिपमगस ।	सरिसमगमपधनिस । सनिध निपमगारि
	धनिस-		गस ।
२२ कोकिलभाषिणी	सरिगमपधनिस-	सनिपमगमरिस ।	सरिगमपधमिस । सनिधपमगारिस ।
२३ शुद्धवसत	सरिगमपनिस-	सधनिपमगरिस ।	सगमपनिनीस्स । सनिधपमगारिस ।
२४ वेगड	सगरिगमपधनीधपस-	सनीधपमगारिस ।	

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार
२५. विवर्धनी	सरिमपस-	सनिधपमगरिस।	
२६. सिंधु	सरिगरिमपस-	सनिधपनिधपमगरिस।	
२७. पूर्वगौड़	सरिमगरिमपनिधनिस-	सनिधपमगरिस।	सगरिग सरिमपधनिस। सनिधपमगरिस।
२८. शम्भुक्रिय	सगरिमपनिस-	सनिपनिमगरिस।	
२९. गौडमल्लाह	सरिमपधस-	सनिधमगरिस।	
३०. नागभूषणी	सरिमपधनिस-	सधपमरिस।	
३१. धीरमती	सगरिगमपमनिधस-	सनिपधसपमगरिस।	

(३०) नागान्दिनी मेल-जन्य--९ (रि२ ग१ म१ ध१ नि१)

१. निर्मलांगी	सरिमपधस-	सनिधनिपमगरिस।	
२. सामत	सरिगमपधनिस-	सनिधनिपमगरिस।	अव० सनिधपमगरिस।
३. नागभाषिणी	सगरिगमधनिस-	सनिपमरिस।	
४. सिद्धेशावेरी	समगमपधनिस-	सनिधनिपमगस।	
५. ललितगधर्व	सरिगमपधनिस-	सनिपगरिस।	
६. प्रतापकोकिल	सपमपधनिस-	सनिपमगस।	
७. हसगधर्व	सरिगमपस-	सनिधनिपमरिस।	
८. सोमभूपाल	सरिमपमधस-	सधनिपमगरिस।	
९. भानुक्रिय	समगमपधनिस-	सनिपधनिपमरिस।	

(३१) यागप्रिय मेल-जन्य—१ (रि, ग, म, ध, नि)

१. योवनी सधपमरिमगस ।
- २ कलहस सनिधपमरिस ।
३. प्रतापहसी सनिधपमगमरिस ।
४. नागगधव सधनिपमरिस ।
५. गधर्वकषड सनिधपमगमरिस ।
- ६ सोमक्रिय सधपमगमरिस ।
७. कोकिलगधर्व सधपमगरिमगस ।
- ८ कल्लोलबगाल सनिपधमगरिस ।
९. हिंदोलकषड सनिपधमगस ।

(३२) रागवर्धनी मेल-जन्य—१ (रि, ग, म, ध, नि)

१. रीकारी सनिपमरिस ।
- २ जिह्लामैरवी सनिधपमगमरिस ।
- ३ हिंदोलदबीर सनिधपमरिस ।
४. हिंदोलकापि सनिधपमगस ।
५. कुसुमकल्लोल सधपमगमरिस ।
६. सामतजिह्व सनिपधनिपमगमरिस ।
- ७ कुसुमचक्रिक सधपमरिस ।
८. हिंदोलसारग सनिधपनिधमगमरिस ।
- ९ रागचूडामणि सनिधमगरिस ।

सामरिमगप ग्रनिनीरसा । सनिधपममरिस ।

(३३) गंगेयभूषणी मेल-जन्य--९ (रि<sub>३</sub> ग<sub>३</sub> म, ध<sub>१</sub> नि<sub>१</sub>) श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

१. गीतमूर्ति सारिगमपधनिस- सनिधपमगस ।
२. गगातरगिणी सारिगमपस- सनिधपमगमरिस ।
३. हिंदोलसावेरी सगमपमधनिस- सनिधमरिस ।
- ४ कन्नडद्वार सारिगमपधपर- सनिधपमरिस ।
- ५ हिंदोलमालवी समपधनिधस- सनिधमपमरिस ।
६. शुद्धजल सगमपधनिस- सनिपमगस ।
- ७ हिंदोलनायकी सगमपस- सनिधपमगमरिस ।
- ८ शैलदेवाक्षी सारिगमपमधनिस- सनिपमगमरिस ।
- ९ नागहिंदोल सगमपम- सनिधपमरीम ।

(३४) वागाथिवरी मेल-जन्य--१० (रि<sub>३</sub> ग<sub>३</sub> म, ध<sub>३</sub> नि<sub>१</sub>) समगपधस । सनिधसनिपमरिस ।

१. विमली सारिगमपधनिधम- मनिधपमगस ।
२. शुद्धघंटाण सगमपधस- सनिधपमरिस ।
३. मेचनीलांबरी सगमपधनिस- सनिपमरिस ।
४. छायानाट सारिगमपमपस- सनिधनिपमरिस ।
५. कुसुमभ्रमरी सारिगमपमधनिस- सनिधपमरिस ।
६. भानुदीपर समरिगमपस- सधपमगमरिस ।

सारिग रिगमप निनिस्सा । सनिध नि पसनिपममरिस । ३

- ७ भानुमजरी सारिगमपनिस- सनिपमरिगरिस ।  
 ८. नलिनमुखी समगमपधनिधस- सनिधपमगमरिस ।  
 ९. मेचगाधारी सारिगमपधनिस- सनिधनिपमगमरिस ।  
 १० शारदाभरण समगमपमधनिस- सनिधमपमरिस ।

(३५) शूलिनी मेल-जन्य--८ (रि३ ग३ म१ ध२ नि३)

१. शोखरी सारिगमपधनिस- सधनिपमरिगस ।  
 २. मारुक्कन्नड सारिगमपधपनिस- सनिपमरिस ।  
 ३. सोमदीपर सगमपमधनिस- सधपमगमरिस ।  
 ४. नलिनहृसी सारिगमपनिधस- सनिधपमरिस ।  
 ५. मेचनारायणी सारिगमपधस- सधनिपमरिस ।  
 ६. गानवारिधि समरिगमपधनिस- सधनिपमरिस ।  
 ७ शुद्धनीलाबरी समरिगमपस- सनिधपमगस ।  
 ८ हसघटाण सारिगमपधनिस- सनिपमगमरिस ।

(३६) चलनाट मेल-जन्य--६ (रि३ ग३ म२ ध१ नि३)

- १ चिदानदी सारिगमपधनिस- सनिधनिपमगमरिस ।  
 २. नागनीलाबरी समगमपधनिस- सनिधपमगस ।  
 ३ मंजुल सारिगमपधनिस- सनिधपमगरिस ।  
 ४. नाट सारिगमपधनिस- सनिपमरिस ।

चलनाट--सारिग, मप धनिस । सनिपममरिस्ता ।

श्री मुब्वराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

२३  
२४  
२५

## संगीत शास्त्र

राग	आरोही	अवरोही
५. श्रुतिरजनी	सरिगमपधनिस-	सपमगस ।
६. गंभीरनाट	सरिगमपधनिस-	सनिधपमगरिस ।
(३७) सालग मेल-जन्य--१० (रि, ग, म, ध, नि, ति)		
१. सिंधुनाट	सरिगमपधनिस-	सनिधमगरिस ।
२. सिंधुघटाण	सरिगमपधस-	सधमगरिस ।
३. नादभ्रमरी	सरिगमपधनि-	धपमगरिसनिस ।
४. सालवी	सरिगमपधनिधस-	सनिधपमगरिस ।
५. शुद्धभोगी	सरिगमपनिधस-	सधनिपमगरिस ।
६. ललितभारव	सरिगमपधनिस-	सनिधमगरिस ।
७. भोगसावेरी	सरिमपधनि-	धपमगरिस ।
८. सोमप्रभावी	सरिगमपधस-	सधपमगरिस ।
९. भोगवराली	सरिगमपनिधनिस-	सनिधमगरिस ।
१०. आलापी	सरिगमपधनिस-	सनिधपमगरिस ।

(३८) जलार्जव मेल-जन्य--८ (रि, ग, म, ध, नि, ति)

१. जीवरत्नभूषणी	सरिगमपधनिधन्य-	सनिधपमगरिस ।
२. नागदीपर	सरिगमधनिस-	सनिधनिमगरिगम ।
३. रविप्रभावल	सरिगमधस-	सधपमगरिगस ।



मागमपधनिस । सनिधपमगरिस ।

सरिमपधसनिध- सनिधपमगरिस ।  
 सनिसरिगमपधनि- निधपमगरिस ।  
 सरिमपनिधरु- सधनिपमगरिस ।  
 सरिमपधनिस- सनिधपमगरिस ।  
 सरिमपधनिस- सनिधनिपमगरिस ।

(३९) शालकवरात्ती मेल-जय-९ (रि, ग, म, ध, नि)

१. क्षिनालि सगरिमपधनिधस- सनिधपमगरिस ।  
 २. नागघटाण सगरिमनिधरु- सनिधमगरिस ।  
 ३. हसनीलाबरी सरिमपधनिस- सनिधपमगरिस ।  
 ४. कोकिलपचम पधनिसरिगरि- सनिधपधनिस ।  
 ५. अमृतवर्षिणी सरिमपधनिपस- सनिधपमगरिस ।  
 ६. नटनवेलावली सरिमपधनिस- सनिधपमगरिस ।  
 ७. भूपालपचम सगरिमपधस- सपमधमसरिस ।  
 ८. नागभोगी सरिमपधनि- धपमगरिसनिस ।  
 ९. माखबगाल सपमपधनिस- सनिधपमगरिस ।

सगमपनिस । सनिपमगस ।

(४०) नवनीत मेल-जय-८ (रि, ग, म, ध, नि)

१. निषादप्रिय सरिमपनिधस- सनिपमगरिस ।  
 २. नागवेलावली सरिमपधस- सनिधमगरिस ।  
 ३. सोमघटाण सगरिमनिधनिस- सनिधपमगरिस ।

राग

४ नभोमणि

५. सुखनीलांबरी

६ सुखप्रिय

७. नवरसकुतली

८ सिधुनाटकुलजी

आरोही

सरिगरिमपस-

सरिगमपधस-

सगरिगमनिस-

समपधनिस-

सरिगमधनिधस-

अवरोही

सनिधपमगरिस।

सनिधपमगरिस।

सनिधमगरिस।

सनिधपधमगरिम।

सनिधपमगरिस।

(४१) पावनी मेल-जय—९ (रि<sub>१</sub> ग<sub>१</sub> म<sub>२</sub> ध<sub>२</sub> नि<sub>३</sub>)

१ पीतांबरी

२ कोकिलस्वरावली

३. कुतलभोगी

४. प्रभावली

५. शुद्धगीवर्णी

६ नटनदीपर

७ चंद्रज्योति

८. हसरसाली

९. श्यामनीलावरी

सनिधपमगरिस।

सधमगरिस।

सनिधनिमगरिस।

सनिधमपमगरिस।

सधपमगरिस।

सनिमगरिस।

मधपमगरिस।

सनिधपमगस।

मधनिधमगरिम।

(४२) रघुप्रिय मेल-जय—११ (रि<sub>१</sub> ग<sub>१</sub> म<sub>२</sub> ध<sub>३</sub> नि<sub>१</sub>)

१ ऋषभवाहिनी

सनिधमगरिस।

सरिगमपधनिम-

श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार  
सागरि मपध पनिस। सनिधपमगरिस।

२ रघुलील	समरिपमगमपमरिमप- निस-	सनिधनिपमगमरिमग- रिस ।
३ हंसवेलावली	सरिगमपमपधनिस-	सनिपमगरिस ।
४. इन्दुगीर्वाणी	सरिगमपस-	सनिपधनिपमगरिस ।
५ ललितदीपर	सरिगमपधनिस-	सनिधनिपमगरिस ।
६. गधवं	मपधनिसरिग-	रिसनिपमपधनिस ।
७ मेघसावेरी	सरिमपनिस-	सनिपमगरिस ।
८ आनदमोमी	सरिगमपनिधनि-	धपमगरिसनिस ।
९ गोपति	सरिगमपधनि-	पमरिगरिस ।
१०. मारुवल्लित	पधनिसरिगमप-	पमगरिसनिप ।
११. हसदीपर	सरिगमपनिस-	सनिपधनिपमगरिस ।

(४३) गवांभोधि मेल-जन्य--९ (रि<sub>१</sub> ग<sub>२</sub> म<sub>३</sub> ध<sub>४</sub> नि<sub>५</sub>)

१ गोर्वाणी	सरिगरिमगमधनिपनिधस-	सनिधपमगरिस ।	सरिगमप धनिधपधसमा । सनिधपमगगरिस ।
२. विजयमूषावली	सरिगमपमपस-	सनिधपमगरिस ।	
३. जयवेलावली	सरिगमपधपधनिस-	सनिधमगरिस ।	
४ कोकिलदीपर	सरिगमनिधस-	सनिधमगरिस ।	
५ मारुवगौड़	सरिगपमधनिस-	सनिधपमगरिस ।	
६. कलवसत	सगमपधनिस-	सनिपमगस ।	
७ कोकिलगीर्वाणी	सरिगमपधस -	सनिमगरिस ।	

## राग

८. सामस्वराली

९. मेचकाभोजी

## आरोही

सरिगमपनिधस-

सरिगमधनिस-

## अवरोही

सधपधमगरिस ।

सनिधमगरिस ।

(४४) भवप्रिय मेल-जन्य—९ (रि<sub>१</sub> ग<sub>२</sub> म<sub>३</sub> ध<sub>४</sub> नि<sub>५</sub>)

१. भीकरधोषणी

२. कन्नडदीपर

३. भवानी

४. सरसीरुह

५. सारंगमारुव

६. मेचबंगाल

७. सामंतवेलावली

८. भ्रमरभोगी

९. धवलसरसीरुह

सनिधमपमगरिस ।

सनिधपधमगरिस ।

सनिधपधमगरिस ।

सनिधमगरिस ।

सनिधमपमगरिस ।

सधपमगरिस ।

सधनिपमगरिम ।

मगरिमनिधप ।

सनिधमगरिम ।

सरिगमपध पनीसा । सानि धपमगरिस ।

(४५) शुभपंतुवराली मेल-जन्य—९ (रि<sub>१</sub> ग<sub>२</sub> म<sub>३</sub> ध<sub>४</sub> नि<sub>५</sub>) शिवपंतुवराली—सरिगमपधनिस । सनिधपमगरिस ।

१. शोवरचंद्रिक

२. शुद्धस्वरावली

३. मेचमनोहरी

४. रामकसामत

सनिधमगरिस ।

मनिधमगम ।

सनिधमगरिस ।

सनिधपमगरिस ।

५. कनकदीपर सगमपधनि- धपमगरिसनिस ।
६. भानुधन्यासी सरिगमनिधनि- धपमगरिसनिस ।
७. मारुववसंत समगमपधनिस- सनिपधमगरिस ।
८. भानुगीवर्णी सरिगमपधनिस- सनिधमगरिस ।
९. कमलाभरण सरिगमपनिधस- सनिधपनिधमगरिस ।

(४६) षड्विधसार्गिणी मेल-जन्य—९ (रि१ ग१ म१ ध१ नि१)

१. षिद्राक्षी सरिसगरिमपधनिस- सनिपधपमगरिस ।
२. तीव्रवाहिनी सरिगमपधनिस- सनिधपमगरिमरिस ।
३. कुंतलस्वरावली सगमपधनिस- सनिधनिपमगरिस ।
४. लोकदीपर सरिगमपनिधनिस- सनिधमपमगरिस ।
५. विजयाभीरु सगरिगमपनिधस- सधपमगरिस ।
६. श्रीकण्ठी सगमपधनिस- सनिधपमगस ।
७. इदुधन्यासी सगमधनिस- सनिधपधमगरिस ।
८. मारुवगौरी सगरिगमपधनि- धमपमगरिसनि ।
९. इंदुभोगी सगरिगमपधस- सनिधनिपमगरिस ।

(४७) सुवर्णांगी मेल-जन्य—१० (रि१ ग१ म१ ध१ नि१)

१. सेतानमोहरी सरिगमपधनिधस- सनिधपमगरिस ।
२. सालगवेलावली सरिगमपनिधनिस- सनिधपमगस ।
३. कुंतलधन्यासी सरिगमपमधनिस- सनिधनिपमगरिस ।

## रंग

४. सौवीर

५. मारुनारायणी

६. नवरसबंगाल

७. रतिक

८. मारुदसारंग

९. आभीर

१०. विजयश्री

(४८) दिव्यमणि मेल-जल्य—११ (रि, ग, म, ध, नि)

१. दुन्दुभिप्रिय

२. भोगधव्यासी

३. कुंतलदीपर

४. जीवतिनी

५. शुद्धाचारो

६. मारुददेवी

७. भोगिमिधु

८. अमृतपंचम

९. आदिपचम

१०. कन्नडवेलावली

११. सुखस्वरावली

## आरोही

सरिगरिमपधनिम्—

सरिगमपधम्—

सरिगमधपधनिम्—

सरिगमपधनिम्—

सनिसरिगमपधनिम्—

पधनिममगम्—

मगरिगमपनिम्—

## अवरोही

मनिपधपमगरिस ।

मधनिपमगरिगम् ।

मनिधमगम् ।

मनिधपमगरिस ।

धपमगरिगम् ।

पमगमनिधनिम् ।

मनिपमगरिस ।

श्री मुखराम दीक्षित की स० मं० प्र० के अनुसार  
सरिगमपधनिसे । सनिधमगरिस ।

मरिगमपधनिम् । मनिपमगरिस ।

(४९) धवलांबरी मेल-जन्य—११ (रि० ग० म० ध० नि०)

- |                 |              |                |
|-----------------|--------------|----------------|
| १. धीरस्वरूपी   | सरिगमपधनिस-  | सधनिधपमगस ।    |
| २. स्वराभरण     | सगमपधनिस-    | सनिधपमस ।      |
| ३. कन्नडकुरजी   | सगरिगमपधनिस- | सधपमरिस ।      |
| ४. धवलागी       | सगमपधनिधस-   | सनिधपमगरिस ।   |
| ५. भिन्नहेरावली | समपधनिधस-    | सनिधपमगस ।     |
| ६. देवाभरण      | सगरिगमधनिस-  | सनिधनिपमगरिस । |
| ७. नवरसआंधाली   | सगरिगमपधस-   | सधपमगरिस ।     |
| ८. छायामारुव    | सगरिगमधनिधस- | सनिधमगरिस ।    |
| ९. देवगिरि      | सरिमपधस-     | सनिधपमगरिस ।   |
| १०. धर्माणी     | सरिगमधनिस-   | सनिधमगरिस ।    |
| ११. नवरसचक्रिक  | सरिगमधनिस-   | सधपगरिस ।      |

सरिगमपधस । सनीधपमगरिस ।

(५०) नामनारायणी मेल-जन्य—१० (रि० ग० म० ध० नि०)

- |               |               |               |
|---------------|---------------|---------------|
| १. निर्मद     | सरिगमधनिस-    | सनिधमपमगरिस । |
| २. मंदारी     | सरिगमपनिस-    | सनिपमगरिस ।   |
| ३. नवरसगाधारी | सरिगमपमधनिस-  | सनिधमगरिस ।   |
| ४. मेचकन्नड   | समपधनिस-      | सनिधपमगस ।    |
| ५. गौरीमारुव  | सरिमपधस-      | सनिधपमगरिस ।  |
| ६. कन्नडभोगी  | सरिगमपनिधनिस- | सनिधमगरिस ।   |

श्री मुव्वराम दीक्षित को सं० सं० प्र० के अनुसार

राग	आरोही	अवरोही
७. प्रताप	सगमपञ्चनिस-	सनिधपमसरिस ।
८. मारनारायणी	सरिगमपञ्चस-	सधपमगरिगम ।
९. कुसुमभोगी	सरिगमञ्चनिस-	सधनिधमगरिगम ।
१०. मधुकरी	सरिगमपञ्चनिस-	सनिधपमगरिम ।
(५१) कामवर्धनी मेल-जय्य—१० (रि <sub>१</sub> ग <sub>१</sub> म <sub>१</sub> ध <sub>१</sub> नि <sub>१</sub> )		
१. किरणौ	सरिगमपनिधनिस-	सनिधमगरिम ।
२. गमकप्रिय	सरिगमपनिधस-	सधपमगरिम ।
३. हंसनारायणी	सरिगमपस-	सनिधमगरिम ।
४. रामक्रिय	सरिगमपञ्चनिस-	सनिधपमगरिम ।
५. दीपक	सगमपञ्चपस-	मञ्चपमगम ।
६. वसंतमास्व	सरिगमपञ्चनिधम-	मञ्चपमगरिम ।
७. केनकरसाली	सरिगमञ्चनिस-	मनिधमगरिम ।
८. भोगवसंत	मरिगमञ्चनिस-	मधनिधमगरिम ।
९. भोगसामंत	मगमपञ्चपम-	मनिधपमगम ।
१०. इंदुमती	सगमञ्चनिस-	
(५२) रामप्रिय मेल-जय्य—२६ (रि <sub>१</sub> ग <sub>१</sub> म <sub>१</sub> ध <sub>१</sub> नि <sub>१</sub> )		
१. रीतिचंद्रिक	सरिगमपञ्चस-	सनिधपमगरिस ।
२. नयनभाषिणी	सरिगमपनिधनिस-	सनिधनिधमगस ।

मगरि गममधनिस । मनिधपमगरिम ।



३. कंकणालकारी	सगपधनिस-	सनिधपमगरिस ।
४. लोकरजनी	सगमपमधनिस-	सनिधनिपमगरिस ।
५. श्रीकरी	सरिगपधनिस-	सनिधापमगस ।
६. तपस्विनी	सगमपनिस-	सनिधपमगस ।
७. मेघमल्लार	सगमपधनिस-	सनिधपमगमरीस ।
८. राममनोहरी	सरिगमपधनिधस-	सनिधपमगरिस ।
९. सुप्रकाशी	सरिगमपमपस-	सनिधनिपमगरिस ।
१०. जटाधरी	सगरिमपधनिस-	सनिधपगरिस ।
११. योगानंदी	सरिगपमपधनिस-	सनिधपमगस ।
१२. प्रताप	सपमपधनिस-	सनिधपमगरिस ।
१३. चिंतामणि	सगमपधनि-	धापमपगरिसनिस ।
१४. नखप्रकाशिनी	सरिगमपधनिधपस-	सधनिपमगरिस ।
१५. कलाभरणी	सगरिगमपनिधनि-	धपमगरिसनिस ।
१६. पवित्री	पमपधनिसरिगमप-	पमगरिसनिधप ।
१७. रक्षितमार्गिणी	सपमधनिस-	सनिधपमपगरिस ।
१८. रसविनोदिनी	सगमपधनिधस-	सनिधपमगस ।
१९. हसगमनी	सगमपनिधस-	सनिधपमधपमगरिस ।
२०. कामरूपी	सगमपमधनिपस-	सनिधपमगरिस ।
२१. वेदस्वरूपी	सरिगमपधनिपस-	सनिधनिपमगस ।
२२. मदहसिनी	सरिगमपमधनिस-	सनिधपमगमरीस ।

सरिगमपधनिस । सनिधपमगरिस ।

## राग

२३. सुखकरी

२४. गाम्भीर्यघोषिणी

२५. सौन्दर्य

२६. मेघदशमल

(५३) गमस्तश्च मेल-जन्य—९ (गि, ग<sub>१</sub>, म<sub>१</sub>, ध<sub>१</sub>, नि<sub>३</sub>)

१. गीतनटनी

२. शुद्धरमालि

३. कन्नड़मारव

४. गमनक्रिय

५. मेघकांगी

६. हंमानदी

७. पूर्वकल्याणी

८. सुखध्वनि

९. गगनमरमीरुह

(५४) विरवंशरी मेल-जन्य—८ (गि, ग<sub>१</sub>, म<sub>१</sub>, ध<sub>१</sub>, नि<sub>३</sub>)

१. वैशाख

२. पूषाकल्याणी

## आरोही

सरिमपधनिम-

सरिमपधनिम-

सरिमपधनि-

नगमपधनिधपम-

## अवरोही

मनिधपमगसगिस ।

मनिधपमगारिगम ।

पमगरिमनिम ।

मधनिममनरीम ।

मनिधनमगिम ।

मधपमनगारिम ।

मनिधनमगम ।

मनिधपमनगसगिम ।

मनिधपमनगारिम ।

मनिधनगारिम ।

मनिधपमनगारिम ।

मधनिपमगारिम ।

धपमनगारिमनिम ।

मनिधनिपमगारिम ।

सनिपमगारिम ।

श्री सुव्वराम दीधित की सं० स० प्र० के अनुसार

"

५४४

संगीत शास्त्र

नरिमपधनिम (धनिम अल्प) मनिधपम-  
गरिम ।

३. सिधुमारुव सारिगमपस- सनिधनिपमगरिस ।  
 ४. नागसरसीरुह सगमपस- सनिधनिपमगरिस ।  
 ५. अमरछ्वनि सगमधनिस- सधनिपमगरिस ।  
 ६. विजयवसत समपधनिस- सनिपमगस ।  
 ७. देश्यमारुव सारिगमनिस- सनिपमगरिस ।  
 ८. अमरनारायणी सारिगमपनिधनिस- सनिमगरिस ।

(५५) श्यामलांगी मेल-जन्य-१ (रि३ ग३ म३ ध३ नि३)

१. शीतकिरणी सारिगमपधनिस- सधनिधपमगस ।  
 २. नागगीर्वाणी सारिगमधनिधस- सनिधपमगरिस ।  
 ३. कमलनारायणी सरिमपधनिस- सनिधपमगमगरिस ।  
 ४. श्यामल सगरिगमपधनिधस- सनिधपमगरिस ।  
 ५. हुसगीर्वाणी सारिगमपधम- सधपमगस ।  
 ६. नागप्रभावली सगमपधनिस- सनिधभगरिस ।  
 ७. देशनाटकुरजी सारिगमपधनिस- सनिधपमगरिस ।  
 ८. हुसप्रभावली सनिसारिगमपधनि- धपमगरिस ।  
 ९. देगात्रली सरिगमधनिधस- सनिधभगरिस ।

सा रिगमपधस । सनीधपमगरिस ।

(५६) षण्मुखप्रिय मेल-जन्य-११ (रि३ ग३ म३ ध३ नि३)

१. शिंकारि सगरिगमपधनिधस- सनिधमगरिस ।  
 २. कोकिलानदी रगमधनिम- सनिधपमगस ।

## राग

३. त्रिमूर्ति
४. भ्रमरसारंग
५. वसुकी
६. भ्रमरकुसुम
७. कुसुमसारंग
- ८ भाषिणी
९. सारंगभ्रमरी
१०. देवमालवी
११. गुरुगद्य

## आरोही

- सरिगमपधनिस-  
सरिगमपमधनिस-  
सगमपधनिम-  
सगमपनिस-  
सरिमपधनिस-  
सगरिगमपनिधिस-  
ममपधनिधिम-  
सरिगमपधनि-  
नियगमपधनि-

## अवरोही

- सनिधमगरिस ।  
सधपमगरिम ।  
मनिधमगम ।  
मनिधपमगरिम ।  
मनिधपमगरिम ।  
मनिधपमगरिम ।  
सनिधपमगम ।  
निधपमगरिमनि ।  
धपमगरिमनिस ।

(५७) सिंहद्वसध्यस मेल-जय्य—१३ (रि० ग० म० ध० नि०)

१. सुनादप्रिय
२. सीर्मतिनी
३. भ्रमरमुखी
४. माधवमनोहरी
५. पद्ममुक्ती
६. शेषनाद
७. भ्रमरहंसी
८. घंटाण

- सरिगमपम-  
सरिगमपधनिम-  
सरिगमपधनिस-  
सगरिगमपनिधनिम-  
सरिगमधनिम-  
सरिगमपधम-  
सरिगमपनिम-  
सरिगमधनिस-
- सनिधपमगरिम ।  
मपमगरिम ।  
मधपमगरिम ।  
मनिधमगरिम ।  
मधपमगम ।  
मनिधपमगरिम ।  
सनिधपमगम ।  
सनिधमगरिस ।

सरिगमपनिध निम । मनिधमगरिम ।

१. विजयसरस्वती

१०. सर्वांगी

११. धवलहृसी

१२. शुद्धराग

१३. भ्रमरकोकिल

(५८) हेमवती मेल-जन्य—८ ( रि<sub>३</sub> ग<sub>१</sub> म<sub>१</sub> ध<sub>१</sub> नि<sub>२</sub> )

१. हैमावरी

२. हंसभ्रमरी

३. विजयसामत

४. सिंहाख

५. कनकभूषावलि

६. विजयसारंग

७. भ्रमरकुत्तरि

८. नलिनभ्रमरी

(५९) धर्मवती मेल-जन्य—९ ( रि<sub>२</sub> ग<sub>३</sub> म<sub>३</sub> ध<sub>३</sub> नि<sub>१</sub> )

१. धीराकारी

२. विजयनागरी

३. ललितसिंहाख

४. धौम्य

सगमपधनिस-

सरिमधनिस-

सरिमपधस-

सरिगमपनिस-

सरिमपनिधनिस-

सपमगरिस ।

सनिधपमगरिस ।

सनिधमगरिस ।

सनिपमरिगरिस ।

सनिपमगरिस ।

सनिधपमगस ।

सधपमरिस ।

सनिधनिपमरिस ।

सधनिपमगरिस ।

सधपमगरिस ।

सनिपमगरिस ।

सनिधपमगरिस ।

सरिगमपधनिस । सनिधपमगरिस ।

## राग

५. वसंतगीवर्णिनी
६. शुद्धनवनीत
७. रजनी
८. विजयश्रीकंठी
९. धीरकुतली

## आरोही

- सरिगमपनिधम-  
सरिगनधनिम-  
सरिगमधम-  
मगमपस-  
समपत्रनिम-

## अवरोही

- सधनिपमगरिम ।  
सनिपमगरिम ।  
ननिधममगरिम ।  
सनिधमगरिम ।  
सनिधमगरिम ।

श्री मृद्वराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

## (६०) नौतिमती मेल-जन्य—११ (रि० ग० म० व० नि०)

१. नूतनचंद्रिका
२. विजयरत्नाकरी
३. निषाद
४. कनकश्रीकंठी
५. हसनाद
६. शुद्धगौरीक्रिय
७. कुंतलरजनी
८. देशगानवारिधि
९. देवकुमुमावल्लि
१०. गौरीक्रिय
११. कौकवली

- सरिगमपधनिम-  
सरिमपधनिम-  
मगरिमपम-  
सरिगमपम-  
सरिमपधनिम-  
मगमपनिधनिम-  
ममगनपधनिम-  
नरिगमपधनिम-  
ममगमपम-  
मगमनधनिम-  
सरिगमपधनिम-

मनिपधनिपमगम ।

सनिपमगम ।

मनिधमपनिपमगरिम ।

मनिधनिपमरिम ।

ननिधममगम ।

मनिधममगरिम ।

सनिमपमगरिम ।

सनिपमगरिम ।

मनिधनिपमगम ।

मनिपमगरिम ।

मनिधममगरिम ।

मनिपमगरिम ।

सरिगमपधनिम । सनिपमगरिम ।

(६१) कांतामणि मेल-जन्य—९ (रि० ग३ म३ ध३ नि३)

- १ कीर्तिविजय सरिगमपनिधस— सनिधपमगरिस ।
- २ कनककुसुमावलि सरिगमपधस— सधपमगरिस ।
- ३ कण्टकतरंगिणी सरिगमपनिस— सपमगरिस ।
- ४ कुंतल सरिगमपधनिधस— सनिधपमगरिस ।
- ५ विजयदीपिका सरिगमपनिधस— सधनिपमगरिस ।
- ६ शुद्धज्योतिष्मती सगमपस— सनिधपमगरिस ।
- ७ श्रुतिरजनी सरिगमपधनि— निधपमगरिस ।
- ८ रामकुसुमावली सगमपनिधपनिस— सनिधपमगरिस ।
- ९ कनकसिंहाव सगमपनिस— सनिधपमगरिस ।

सरिगमपधस । सनीधपमगरिस ।

(६२) ऋषभप्रिय मेल-जन्य—९ (रि० ग३ म३ ध३ नि३)

- १ रुचिरमणी सगमपधनिधस— सगपमगरिस ।
- २ रत्नभास सरिमगरिमपनिधनिस— सनिधपमगरिस ।
- ३ पद्मकान्ति सरिगमपधनिस— सनिपमगरिस ।
- ४ सोममंजरी सरिमपधनिधस— सनिपमरिगरिस ।
- ५ वृन्दावनदेशाक्षी सरिगमपधस— सधपमगरिस ।
- ६ कनकनासामणि सरिगरिमपधनिस— सनिधपमगरिस ।
- ७ शुद्धसारग सगमपनिस— सधपमगरिस ।
- ८ विजयगोत्रारि सरिगमपधनिस— सनिधपमगरिस ।
- ९ शुद्धवृत्तरी सनिसरिगमपध— धपमगरिसनिस ।

राम	आरोही	अवरोही
(६३) लतांगी मेल-जन्य—२६ (रि० ग० म० ध० नि०)		
१. लीलाविनोदिनी	सरिगमपधनिधस—	सनिधपमगरिस ।
२. रत्नकान्ति	सरिगमपनिस—	सनिपमगरिस ।
३. रविस्वरूपी	सगमपधानिस—	सनिधपमगस ।
४. भिन्ननिषाद	सनिसरिगमपधनि—	पमगरिसनीस ।
५. नागवाहिनी	सरिगपमधानिस—	सनिधपमगरिस ।
६. रमणी	सगमपनिस—	सनिधपमगस ।
७. कालनिर्णिक	सगमपनिधस—	सपमगरिस ।
८. नवरत्नभूषणी	सरिगमपधस—	सनिधपमगरिस ।
९. पूर्णनिषाद	पधनिधसरिगम—	पमगसरिसनिधप ।
१०. कशणाकरी	समपधनिधस—	सनिधपमस ।
११. शुद्धकलानिधि	सगपधनिध—	पमगरिसनिस ।
१२. स्वर्णकांति	सगपमधनिस—	सनिपमगस ।
१३. सुजनरंजनी	सगरिमपधानिस—	सनिधपमगरिस ।
१४. चामुण्डी	सगरिमपनिधस—	सधनिपमगरिस ।
१५. क्षणाकारी	सरिगमपनिधस—	सधपमगरिस ।
१६. सज्जनानंदी	सरिगमपधनिस—	सनिधपमगरिस ।
१७. गोत्रारि	सरिमपधस—	सनिधपमगरिस ।
१८. दोषरहितास्वरूपी	पमपधनिसग—	रिसनिधपमप ।

श्री मुब्बरां दीक्षित की सं० प्र० के अनुसार



१९. छत्रधरी	सगमपमपरिस-	सनिधपमगरिस ।
२०. धातुप्रिय	सरिपमपधस-	सनिधपमगरिस ।
२१. नैमप्रिय	सरिमगपधस-	सनिधपमगपरिस ।
२२. षड्विधस्वरूपी	सगरिगमनिस-	सनिधपमगरि ।
२३. काननप्रिय	सरियमपमधनिस-	सधनिपमगरिस ।
२४. तानरजनी	सरियमपधस-	सधपसनिधपमगरिस
२५. कोमली	सरियमपनिधमपस-	सधनिमगरिस ।
२६. घननायकी	सगमनिधपधनिस-	सनिधपमगरिस ।

(६४) वाचस्पति मेल-जन्य--२४ (रि, ग, म, ध, नि)

१. विजयाभरणी	सरियमपधनिधस-	सनिधपमगरिस ।
२. देवामृतवाहिनी	सगमपनिधनिस-	सनिधनिपमगरिस ।
३. कुटुबिनी	सगमपधनिस-	सनिपमगरिस ।
४. फलदायकी	सगपमधनिस-	सधनिपमगरिस ।
५. बर्बर	सगमरियमधनिस-	सनिधमगरिस ।
६. उत्तरी	सगमपधनिस-	सनिधमगस ।
७. सिंहस्वरूपी	सगमधनिस-	सनिपमगस ।
८. केतकप्रिय	सगमपनिस-	सनिधपमगरिस ।
९. पंचमूर्ति	सरियमपधनि-	धपमपगरिसनिस ।
१०. नादब्रह्म	सपमपधनिस-	सनिधपमगस ।

श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० सं० प्र० के अनुसार

राग	आरोही	अवरोही
११. प्रणवाकारी	पनिधनिमरिगम—	पमगरिसनिधनिप ।
१२. शरदिदुमुखी	मगमपनिधनिपम—	मनिधपमगरिम ।
१३. भूपावली	मरिगमपधम—	मनिधपमगरिम ।
१४. सारंग	सरिगमपधनिस—	सनिधपमरिस ।
१५. रत्नाबरी	सगमपम—	मनिधपमरिम ।
१६. गृहप्रिय	सरिगमैधनिस—	मनिधमगरिस ।
१७. परिसलानंदी	सरिगमपधनिस—	मनिधमगम ।
१८. विजुंभिणी	सगपनिधनिस—	सनिधनिपमगरिम ।
१९. सरस्वती	सरिसपधम—	मनिधपमगरिस ।
२०. भोगीश्वरी	सरिगपधनिधस—	मनिधपमगरिम ।
२१. तरुणीप्रिय	मगरिगमपनिधस—	मनिधपमगरिम ।
२२. मंगलकरी	मरिपमपधनिस—	मनिधपमगरिस ।
२३. गगनमोहिनी	मगपधनिस—	मनिधपमगम ।
२४. सामंतदिव्यामणि	मगमपधनिस—	मनिधपमगम ।

(६५) मेक्कल्याणी मेल-जय्य—१० (रि० ग० म० ध० नि०)

१. मैत्रभाविनी	सरिगमपधनिस—	मधपमगरिम ।
२. कौमोद	सरिमनिस—	सनिधपमगरिम ।
३. शुद्धरत्नमानु	सरिमपस—	सनिधपमगस ।

- ४ कुतलश्रीकठी सगमपथनिस- सनिपमगरिस ।  
 ५ शुद्धकोसल सगमपस- सनिधमगरिस ।  
 ६ हमीरकल्याणी सपमपथनिस- सनिधपमगरिस ।  
 ७ सुनादविनोदिनी सगमधनिस- सनिधमगस ।  
 ८ कुतलकुसुमावली सरिगमपमपस- सनिधनिपमगस ।  
 ९ यमुनाकल्याणी सरिगपमपधस- सधपमगरिस ।  
 १० चद्रकान्त सरिगमपथनिस- सनिधपमगरिस ।

सरिगमपधनिस । सनिधपमगरिस ।

सरिगमपधनिसा । सानिधपमगारीसा ।

### (६६) चित्रांबरी मेल-जन्य-९ (रि० ग० म० ध० नि०)

- १ चूर्णिकाविनोदिनी सरिगमपथनिस- सनिधनिपमगरिस ।  
 २ चतुरगिणी समगमपनिस- सनिधनिपमगरिस ।  
 ३ विजयकोसल सरिगमपमपस- सनिपमगस ।  
 ४ गगनरजनी सगमपस- सधनिपमगरिस ।  
 ५ नागकुतल सरिगमपनिस- सनिपधनिपमगरिस ।  
 ६ कनकभवानी समगमपधनिस- सनिपमरिस ।  
 ७ कनकगिरि सरिगमपसनिस- सनिधनिपमगस ।  
 ८ देवगीर्वाणी सगरिमपस- सपमगरिस ।  
 ९ शुद्धनिर्मद सरिगमपधनिपस- सनिपमगस ।

सरिगमपधनिस । सनिपमगरिस ।

### (६७) सुचरित्र मेल-जन्य-९ (रि० ग० म० ध० नि०)

- १ सेनाजयती सरिगमपथनिस- सधपमगरिस ।

श्री मुञ्जरास दीक्षित की म० म० प्र० के अनुसार

राग	आरोही	अवरोही
२. सत्यवती	सरिमपधनिधम-	सनिधपमगरिम ।
३. कुंतलभवानी	सरिगमपमपम-	सनिधनिपमरिम ।
४. सोमजरी	सगमपधम-	सधपमगरिम ।
५. कनकगीर्वाणी	सरिमपमधनिस-	सधपमरिस ।
६. भानुज्योतिष्मती	सरिगमपधनिधम-	सनिधपमगरिमरिम ।
७. कनकनिर्मल	सरिगमपमधम-	सनिधपमगरिम ।
८. रामकुंतली	सरिगमपधनि-	धपमगरिमनिस ।
९. शुद्धसिहरव	सरिमगमपधनिस-	सधनिधपमरिम ।

(६८) ज्योतिस्स्वरूपिणी मेल-जन्य—९ (रि, ग, म, ध, नि,३)

१. जौडगांधारी	सरिगमपधम-	मनिधपमगरिम ।
२. ज्योतिष्मती	सरिमपम-	मनिधमपमरिगम ।
३. कुंतलरंजनी	सरिमपनिधनिस-	मनिधपमगरिम ।
४. भुवतकुंतली	सरिगमपधम-	मधपमगम ।
५. कुमुमभवानी	सरिमपधम-	मनिधमपमरिम ।
६. रामगिरि	सरिमगमपधनिस-	मधनिधपमगरिम ।
७. कुंनलगीर्वाणी	सरिगमपधनिस-	मधमपमगरिम ।
८. ह्रिदोलदेशाक्षी	सनिसरिगमपध-	निधपमगरिस ।
९. शुद्धश्रुतिरंजनी	सरिमपधनिधम-	सनिधपमगरिस ।

सरिगमपधनिस । मनिधपमगम ।

(६९) धातुवर्धनी मेल-जन्य—९ (रि<sub>३</sub> ग<sub>३</sub> म<sub>१</sub> ध<sub>१</sub> नि<sub>३</sub>)

१. धीरसावेरी सखपमगरिस । सखपमगरिस ।
२. नलगकुसुमावली सरिगमपमपस- सनिधनिपमरिस ।
३. धीतपचम सरिगमपनिपस- सनिधपमरिगमरिस । सनिधपमरि गस ।
४. वृदावनकन्नड सगमपधस- सधपमगरिस ।
५. कुतलसिहारव सरिमपमधनिस- सधपमरिस ।
६. ललितकोसली सरिगमपधनिधस- सनिधपमगमरिस ।
७. पद्मभवानी सरिगमपमधस- सनिधपमगरिस ।
८. ईशगिरि सरिगमपधनि- धपमगरिसनिस ।
९. कुसुमज्योतिष्मती सरिमगमपधनिस- सधनिधपमरिस ।

(७०) नासिकाभूवर्णी मेल-जन्य—६ (रि<sub>३</sub> ग<sub>३</sub> म<sub>२</sub> ध<sub>२</sub> नि<sub>२</sub>)

१. निगमसचारी सगमपधनिस- सनिधनिपमरिस ।
  २. कुतलघटाण सरिगमपमपस- सनिपमरिस ।
  ३. नासार्मणि सरिगमपमपस- सनिधनिपमरिस ।
  ४. गौरीसीमंती सरिगमपधनिस- सनिपमगस ।
  ५. नीतिकुतली सगमपधनिस- पधनिपमगस ।
  ६. हसकोसली सरिगमपधनिधम- सनिधपमगमरिस ।
- (७१) कोसल मेल-जन्य—६ (रि<sub>३</sub> ग<sub>३</sub> म<sub>२</sub> ध<sub>२</sub> नि<sub>२</sub>)
१. कौस्तुभप्रिय सरिगमपधनिस- सधपमगमरिस ।

सरिगमपधनिस । सनिधपमरि गस ।

राग	आरोही	अवरोही	श्री सुब्बराम दीक्षित की सं० म० प्र० के अनुसार
२. प्रतापसारा	मरिगमपधम-	मनिधपमगम।	
३. नागगिरि	मगमपधम-	मधपमगम।	
४. गौरीनिवाह	सगमपनिधम-	मनिधनिपमगम।	
५. सत्यभूषणी	मगमपधनिम-	मनिधपमगम।	
६. कुमुमावली	मगमपधम-	मनिधपमगमरिम।	मरिगमपधनिम। मनिधपमरि गम।

### (७२) रसिकप्रिय मेल-जन्य—५ (रि<sub>१</sub> ग<sub>१</sub> म<sub>३</sub> ध<sub>३</sub> नि<sub>१</sub>)

१. रीतिमल्लार	मरिगमपम-	मनिधनिपमगम।	
२. गिरिकुंतली	मरिगमपमगमपम-	मनिधनिपमगम।	
३. हंसगिरि	मरिगमपधनिम-	मनिधनिपमगम।	
४. कनकज्योतिष्मती	ममपधनिम-	मनिधपमम।	
५. रसमंजरी	मरिगमपधनिम-	मनिगमरिम।	मरिग. ममपम, निध, निमा। मनिध, निप, पमप, रिगम।

यद्यपि ये राग—वृत्त—कुंतलरजनी, विनामणि नवरसचंद्रिक, प्रताप, भोगवगलि, मजुल, मधुकरी, मासकल्लड, श्रुति-रजनी, सोममंजरी—दो-दो मेलों में उत्पन्न हैं, तथापि उनमें मेलभेद के अनुसार लक्षणभेद अवश्य है।

## अनुबन्ध २

हिन्दुस्थानी पद्धति के रागों का आरोहण  
और अवरोहणादि विवरण

राग नाम	धाट	वादी संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
१. अडाणा	आमावरी	सा प	प सारेमप धनिमा	मां धनिपमप गम रेसा	रात्रि तीसरा प्रहर	
२. अलहैया विलावल	विलावल	सां प	निमा रेमप नि रे मा	माध, निप, मप, ग, म, रेमा		
३. अरज	भैरव	ध ग	सारेग धनिमा	नानिधप मगरेमा	प्रातःकाल	
४. अहीर भैरव	"	म सा	सारेग मपमप धनिमा	नरिमानि धपमग रेमा	"	
५. आभेरी	आमावरी	म नि	सारेग मप धनि मां	मानि ध प म ग रेमा	"	
६. आमा	विलावल	म मा	मा रे म प ध मा	मानि ध प म ग रे मा	रात्रि दूसरा प्रहर	
७. आमावरी	आमावरी	ध ग	मा रे म प ध मा	मानि ध प म ग रे मा	दिन दूसरा प्रहर	
८. आनंदभैरव	भैरव	म मा	सारेग म प ध- नि सां	मानि ध प म ग रे सा	प्रातःकाल	
९. आनंदभैरवी	आमावरी	प सा	सा रे ग म प ध सां	सां नि ध प म ग रे सा	रात्रि तीसरा प्रहर	



१०. आभोसी      काफी      सा      म      सा रे ग म प ध सा      सा ध म ग रे सा      प्रातः काल
११. आभोसीकान्होरा      "      म      सा      सा रे ग म प ध सा      सा ध म ग म- मध्यरात्रि  
रे सा
१२. उत्तरी गुणकली      भैरवी      सा      म      सा रे ग म प ध      सा नि ध प म ग      प्रातः काल  
नि सा      रे सा
१३. कलावती      खमाज      प      सा      सा ग प ध      सानिधप गप मध्यरात्रि  
निधपधसा      धप गसा
१४. कमलरजनी      बिलावल ध      ग      सा      सा ग प ध      सानिध निपमग      प्रातः काल  
नि सा      सा
१५. कुकुभ      "      म      सा      सा रे ग म प ध      सां नि ध प म ग      "      रे सा
१६. कामोद      कल्याण      प      रे      सारेप मप धप      सा निध प मप- रात्रि प्रथम प्रहर  
निधसां      धप गमरेसा
१७. काफी      काफी      प      सा      सारेग म प ध-      सा नि ध प म ग मध्यरात्रि  
निसा      रे सा
१८. कालिगडा      भैरव      प      सा      सारेगम प ध-      सानिधप मग- रात्रि अतिम प्रहर  
निसा      रेसा
१९. केदार      कल्याण      सा      म      साम मप धप      सा निध प मप रात्रि प्रथम प्रहर  
निध सा      गमरेसा

राग नाम	थाट	वादी सवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
२०. कोमल ऋषभ आसावरी	भैरवी	घ ग	मा, रेसप. धमा	मानिध्र. प, मग, रेमा	मान समय	रे म प ध म ग रे म प
२१. कोमलदेशी	आसावरी	प रे	मा रे मप निमा	मा निध्रप मग- रेमा	दिन दूसरा प्रहर	
२२. कौशिकध्वनि	खमाम	ग नि	मा ग म ध्र निमा	मां नि ध्र म ग मा		मध्रनिध्र मध्रमगमा
२३. कौशिकध्वनि	काफी	म मा	मा ग म ध्र निमा	मानिध्रमग मा		गमगमा मध्रनिध्र मगम निम निध्र
२४. कौंसी कान्हरा	आसावरी	म मा	मा रे ग म प ध्र नि मां	मानि ध्र प मग- रेमा	मध्यरात्रि	
२५. कौंसी भैरव	भैरव	म मा	माम गमपम नि- ध्रनिमा	रेनिध्रय मग म- रेमा		
२६. खमाज	खमाज	ग नि	मा ग म प ध्र नि मा	मानि ध्र प म ग रेमा	रात्रि दूसरा प्रहर	
२७. खंबावती	खमाज	ग ध्र	मा रे ग म प नि- ध्र मां	मानिध्रय मग- ममा	रात्रि दूसरा प्रहर	
२८. खट	आसावरी	घ ग	मारोगम प निध्र- नि सा	मानि ध्रप मग- रेमा	दिन दूसरा प्रहर	

२९. खटतोडी	आसावरी ध	ग	रे नि सा ग म प ध ध सा	सानिधप गमप निधप मगरेसा	दिन का दूसरा प्रहर	रे निस गमप धनि- धप म्पु ग म गं रे स रे नि स
३०. खोकर	खमाज रे	प	सारेपम निधप मपधसा	सानिधप धनिप मगरे गरेसा	"	"
३१. गाधारी	आसावरी ध	ग	सारेमप धनिसा	सानिधप मग- रेसा	"	"
३२. गारा	खमाज ग	नि	सारेगरे गमपध निसा	सानिधनि पम- गरे गरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
३३. गुणकरी	भैरव ध	रे	सारे मप धसा	साधप म रे सा	दिन प्रथम प्रहर	
३४. गुणकली	बिलावल सा	प	सारे ग म पध निसा	सानिधप म ग रे सा	"	"
३५. गुर्जरी तोडी	तोडी ध	रे	सा रे ग म ध नि सा	सानिध म ग रे गरेसा	दिन दूसरा प्रहर	
३६. गोपी वसत	आसावरी सा	प	सा ग म प ध निसा	सानिध प म ग सा प्रात काल		
३७. गोरख कल्याण	खमाज म	सा	सारे म धनि ध सा	सा नि ध प म रे सा	रात्रि दूसरा प्रहर	
३८. गौड मल्लार	काफी म	सा	सा रे म प ध सा	सानिप मपगम रे सा	वर्षा ऋतु	

राग नाम	थाट	वादी संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
३९. गौरी (थैती)	पूर्वी	प सा	सा रे न प म य नि ना	मानि ध प म य मधम	मायकाल	निधनममममम
४०. गौरी (भैरव)	भैरव	रे प	मा रे म प नि मा	गरे नरे मा	"	गरेगरेमा
४१. गौरी (पूर्वी)	पूर्वी	रे प	मा रे म प नि मा	मानि ध प नग	"	
४२. चन्द्रकान्त	कल्याण ग	नि म	म रे ग प ध नि मा	मानि ध प म पगरे	मायकाल	
४३. चंद्रकौम	काफी	म मा	मा ग म ध नि मा	गरे मा	रात्रि प्रथम प्रहर	
४४. चंद्रकौम	"	म मा	सा ग म ध नि मा	मानि ध म ग मग		गम गमा, मधनिध, मगमा निम निधा
४५. चंद्रकल्याण	पूर्वी	प मा	मा रे म प नि मां	नि रे निधन म-	मायकाल	
४६. चद्रिका	द्विलावल प	मा	मा रे म प नि मा	धामरे निना	मध्यरात्रि	
४७. चक्रवर्	"	म सा	सा रे ग म ध नि मां	पमरे निना	"	"
४८. चंपक	खमाज म	सा	मा रे म प ध मा	सा नि प ध मय	रात्रि दुमरा प्रहर	

४९. चंपाकली

” सा प सा ग म प नि सा सानिधप मप मध्यरात्रि

५०. छायातट

कल्याण प रे सारे गमप नि-धसा सानिधप मपधप रात्रि प्रथम प्रहर

५१. जयराज

बिलावल म सा सारेमप मव-निसा साधपम धप मध्यरात्रि

५२. जलर केदार

” म सा सा सारे साम मप साधप म रे सा रात्रि दूसरा प्रहर

५३. जैजैवती

खमाज रे प सारे गमप निसा सानिधप धम ”

५४. जैत

मारवा प सा सा रे ग प धप सा सा पधपम रे सा सायंकाल

५५. जैत कल्याण

कल्याण प सा सा रे ग प ध सा रे सां धप गरेसा रात्रि प्रथम प्रहर

५६. जैतश्री

पूर्वी ग नि सा ग म प नि सा सानिधप मग सायंकाल

५७अ. जोगिया

भैरव म सा सा रे म प ध सा सा नि ध प ध म प्रातःकाल

५७ब. जोगी आसावरी

आसावरी सा प सा रे म प ध सा सां रे निधप धम दित्र प्रथम प्रहर रे निधप धपम गरेसा

राग नाम	थाट	वादी मंवादी	आरंही	अवर्गही	गाल मयय	पकड़
५८. जौनपुरी	आसावरी	ध ग	सा रे म पध नि मा	मा निध प मग रेमा	दिन हुमरा प्रहर	
५९. जंगला	"	मा प	मा रे ग म प ध नि मा	मा निध पध पम ग रेमा	रात्रि नौमरा प्रहर	
६०. झिझोटी	खमाज	ग नि	सा रे ग म पध नि मां	मा निध प म ग रे ना	रात्रि हुमरा प्रहर	
६१. झीलफ (भैरव)	भैरव	ध ग	मा ग म प ध मा नि मां	मां ध प म ग मा	प्रात काल	
६२. झीलफ (आसावरी)	आसावरी	ध ग	मा रे ग म प ध- नि मा	रे मा निध प गपमगरेमा	"	
६३. टंकी	पूर्वी	प रे	मा रे ग प धप नि मां	मा निध प म ग प- गरेमा	मायकाल	
६४. तिलक कामोद	खमाज	रे प	मा रे ग मा रे म- पध मयसा	मा पधमग मारेग मानि	रात्रि हुमरा प्रहर	
६५. तिलंग	"	ग नि	माग मप निमा	मानि प मगमा	"	
६६. त्रिवेणी	पूर्वी	रे प	मा रे ग प ध निमां	मा नि ध प ग रे सा	मायंकाल	

राम नाम	थाट वादी मंवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड
७७. देगकार	थालावल घ ग	मा रे ग प ध मा	मांघ प गपधप गरेसा	दित प्रथम प्रहर	
७८. देशाख्य	काफी प मा	निमाभरे पम निपमा	मां निप मप गम रेसा	गत्रि दूसरा प्रहर	
७९. देश	खमाज रे प	सारे मप नि मा	मनिधपमगरे- गमा	"	
८०. देशी	आमावरी प रे	गारे मप नि मां	नानि धपमगरेमा	दित दूसरा प्रहर	
८१. घनाश्री	काफी प मा	मागम पनिमां	मानिधपमगरेमा	दित तीसरा प्रहर	
८२. घानी	काफी ग नि	साग म प निमा	मां निप मगमा	मर्वकालिक	
८३. नट	बिलावल म मा	मारेगमपधनिमा	मानिपमरेमा	गत्रि दूसरा प्रहर	
८४. नट बिलावल	" म मा	सा गमपमग मप धन्ना	मानिधनिपमग नरेसा	दित दूसरा प्रहर	
८५. नट बिहाग	" मा प	मारे गम तनिमां	मानिधपमपम- गरेमा	गत्रि तीसरा प्रहर	
८६. नट मङ्गार	काफी म सा	मा रेग मरे गमप निधसां	मां निधनिपमगम रेसा	वर्षाबाल	

८७.	नट हमीर-नट	कल्याण	प	सा	सा रे सा गमध निसा	सधमपगमरे नि- रेस	रात्रि दूसरा प्रहर	प (नि३) मप गमरेसा
८८.	नन्द	"	सा	प	सागमपधनिपध मपसा	सानिधप मपगम रेसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
८९.	नायकी कान्हारा	काफी	म	सा	सा रे ग म प- निसा	सानिमपगम- रेसा	मध्यरात्रि	
९०.	नागस्वरावली	खमाज	म	सा	साग मप धसा	साधपम पग मगसा	रात्रि दूसरा प्रहर	
९१.	नाटकुरजिका	"	सा	म	निसा गम ध- निसा	रे निसाधम गम- रेसा	"	
९२.	नारायणी	"	रे	प	सा रे म प ध सा	सानिधपमरेसा	"	
९३.	नीलाबरी	काफी	रे	प	सा रे म प ध सा	सानिधपमगरेसा	"	
९४.	परज	पूर्वी	सा	प	निसाग मपध- निसां	सा निधप मप- मगरेसा	रात्रि अंतिम प्रहर	
९५.	पट बिहाग	बिलावल	प	सा	सारेग मप निसा	सा निधप निधप मगरेसा	रात्रि प्रथम प्रहर	
९६.	पहाडी	बिलावल	सा	प	सा रे ग प ध सा	सा ध प ग प गरेसा	सुर्वकालिक	



राग नाम	थाट वादी संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
१७. पटमंजरी (वि०)	विलावल मा प	मारे ग म प ध प मपनिमां	मा नि ध नि प मगरेमा	मध्यरात्रि	
१८. पटमंजरी (का०)	काफी मा प	मा रे ग म प ध नि मा	मा नि ध प म ग रे मा	दिन तीसरा प्रहर	
१९. पील	ग नि	मारे ग म प ध प निधमां	निध प मग निमा	"	
१००. पूर्वी	पूर्वी ग नि	मारे ग म प ध नि मा	मा नि ध प म ग रेमा	दिन अंतिम प्रहर	
१०१. पुरिया	भारवा ग नि	निरेमा ग म ध निरेमा	मा नि ध म ग रे मा	मधि प्रकाश काल	
१०२. पूर्विया	ग नि	निरेमा रेगम- धमा	मा नि ध म ग रे मा	मध्याह्नकाल	
१०३. पूर्ववल्याण	रे ध	मारेगम प ध निमां	मा नि ध प मग- रे मा	"	
१०४. पुर्यधिनाश्री	पूर्वी प रे	निरे गमप ध प निमा	रे नि ध प मग मरे- गरेमा	"	
१०५. पंचम	भारवा म मा	माम मग म ध- निध सां	मा नि ध ममग म- गरेमा	उत्तर रात्रि	
१०६. प्रदीपकी	काफी सा म	माम मप निमा	मा नि ध प मग- मप गरेमा	दिन तीसरा प्रहर	

१०७.	प्रभात	भैरव	म	सा	सारे गम पध- निसां	सानिधप गरेसा	मम प्रात काल
१०८	बहार	काफी	म	सा	सा गम पगम निधनिसा	सा निधमप गम रे सा	मध्यरात्रि ,
१०९.	बसत बहार	पूर्वी	सा	प	सा मपगमनिध- निस	रे सा निधप मग मग मगरेसा	वसत ऋतु मध्य- रात्रि
११०	बागेश्री बहार	काफी	म	सा	सा गम धनि धसा	सानि सानि धम- प गमरेसा	वसत ऋतु मध्य गमधनिधमप गमरेसा
१११.	बागेश्री कानडा	”	म	सा	सारे ग (म <sub>६</sub> ) म- मपग (म <sub>६</sub> ) म- ध निसा	सानिध मप गम रे सा	रात्रि तीसरा प्रहर (म <sub>६</sub> ) मरेसा
११२.	बरवा	”	रे	प	सारे मप धनिसा	सानि धप अप गरे गसा	दिन दूसरा प्रहर
११३.	बडहस सारग	”	रे	प	सा रे मप निसा	सानि पम रे सा	”
११४.	बसत	पूर्वी	सा	म	सा ग म ध रे सा	रेनि धप मगमध मगरेसा	रात्रि अन्तिम प्रहर
११५	बागेश्री	काफी	म	सा	सा मग मधनिसा	सा नि ध म ग मगरेसा	मध्यरात्रि ,
११६.	बिलासखानी तोडी	रबी	ध	ग	सा रे गमग पध निसा	सा निधम गमग- रेसा	दिन, दूसरा प्रहर ,

राग नाम	थाट वादी संवादी	आरोही	अवरोही	गान सभ्य	पकड
११७. विलावल	थाट वादी संवादी बिलावल ध ग	आरोही सा रे ग म पध- निमां	अवरोही मा निधप मग रेमा	गान सभ्य मवेरे	
११८. बिहाग	" ग नि	साग मप निसा	सां निधप मग रेमा	रात्रि दूमरा प्रहर	
११९. बिहागडा	" म सा	साग मप धनिसा	सानिधप मगरेमा	रात्रि पट्टला प्रहर	
१२०. वृंदावनी सारग	काफी रे प	निस रे मप निसा	सा निप मरे सा	दोपहर	
१२१. बंगाल भैरव	भैरव ध रे	मा रे गम पधमा	साधप मपम रेमा	प्रात काल	
१२२. भटियार	मारवा म सा	माधप धमपम म- धमां	रे नि धपम पग रेमा	रात्रि आनिम प्रहर	
१२३. भवानी	विलावल म मा	मा रे मध सा	मां धस रेमा	मध्यरात्रि	
१२४. भित्तपड्ज	विलावल म मा	माग मध निमा	मा निध मग मा	मध्यरात्रि	
१२५. भीम	काफी सा प	सा गमप निमां	गरेमा निधपध मगरेसा	निमां रेमा, निध मगरेसा	

१२६. भीम

काफी ध सा नि सा ग म प सा निपमगसा निसा गम गस मप  
निप मप गम पनि स निपमप गमगस

१२७. भीमपलासी

म सा निसागम पनि सा सा निध पमगरेसा दिन तीसरा प्रहर

१२८. भूपालतोडी

भैरवी ध ग सारेग पध सा रे सां धपग पग- प्रात काल

१२९. भूपाली

कल्याण ग ध सारेगप धसा साधप गरेसा रात्रि प्रथम प्रहर

१३०. भैरव

भैरव ध रे सारेगम पध सा निध पमग- प्रात काल  
निसा रेसा

१३१. भैरव बहार

म सा सारेगमप मध- सा निध पमग वसत ऋतु प्रात धनि धप मगरे  
निसा निरेसा रेगरे सा निरेसा काल गरेसा

१३२. भैरवी

भैरवी म सा सारेगम पध- सा निधप मग प्रात काल  
निसा रेसा

१३३. भखार

भारवा प सा सारेसा गमपम सा निधप मध- रात्रि अंतिम प्रहर  
पगमधसा मग पगरेसा

१३४. मनोहर

पूर्वी ग ध सा रेग मध सा रेसा रे निधप ग-  
मगरेसा

राग नाम	थाट	वादी सवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
१३५. मध्यमाद सारंग	काफी रे	प	मारे मप निमां	मां निप मारेमा	दिन हुनग प्रहर	
१३६. मलूहा केदार	बिलावल सा	म	निमा गमप	ना निव पमग	गति दुनग ग्रह	
१३७. मधुवती	तोडी प	मा	निमा गमप	मानिव प म ग	दिन नीनंग ग्रह	
१३८. जयंत मल्लार	काफी प	मां	मारे ग मप निधनि	मात्र निपमप सग	वर्षा ऋतु	पगम रेम निम निधप
१३९. शुद्ध मल्लार	बिलावल म	सा	मारेम प थ मा	मा थ प म रे मा	"	रेरे गनप गमरेमा
१४०. चरजूकी मल्लार	काफी म	मा	मा रे ग न म रे	मा ति थ प गरे		मरेरे ममरेपमप
१४१. चंचल सस मल्लार	"	म	म प थपमा	रे ग ना		ध मां थ पमम रे मम
१४२. रूपमंजरी मल्लार	"	म	माम रे प गम रेगा	मानि मा र्जित म-		मा मरे मप निमा
			निमपमा	प रेम मारे गम		निम
				रेम मा		वनि मप रेम सा
						रे ना
						मामरेप मगमरेम
						पमनिवनिप मगरे
						सानिव निपमा

१४३. धूलिया मल्लार काफी म सा सा रे म प निध- सा निध पमरे म- वर्षा ऋतु मरेमप निधनिम  
 नि सा प मरेसा प मरेसा पसां निसारे सा नि-  
 ध पमस निधप मरे ममप

१४४. मारवा रे ध सा रे गमध नि- सा निध मगरेसा दिन अतिम प्रहर  
 धसा

१४५. मारुबिहाग कल्याण ग नि नि प निरे नि ध प ,  
 निसा मग रेसा

१४६. माड विलावल सा प सागरे मगपम ध- सा ध निप ध सर्वकालिक  
 पनिध सा मपम मस

१४७. मालकौस भैरवी म सा सा गम ध सा निध मगम- रात्रि तीसरा प्रहर  
 निसा गसा

१४८. मालवी पूर्वी रे प सा रे ग मप म- सा निपम गरेसा सायकाल  
 धसा

१४९. मालश्री कल्याण प सा सा गप पनिसा सानिप मगपगसा

१५०. मालगुजी काफी म सा सा गम धनिसा सानिधप मग रात्रिसर्व  
 मगरेसा

१५१. मालारानी कल्याण प रे सा रे मप निसा निसधप रेमप ग- रात्रि प्रथम प्रहर  
 रेसा

राग नाम	थाट	वादी	संवादी	आरोही	अवरोही	गान, मयय	पकड़
१५२. मालिन	मारवा	ग	नि	निसाग प धमां	मांनिधपगग- रेमा	गान, मयय माधंकाळ	
१५३. मालीगौरा	"	रे	प	सा रे ग म प ध निधमां	मांनिधप मनि- धमगरेमा		
१५४. मितभाविणी	काफी	प	मा	सा रे ग म प ध निमा	मां निधपगग- रेमा		नामा रे ग मन पय निपधमां
१५५. मियां की सारंग	"	रे	प	धनिमा रेपध निमां	मांनिध मां नि- प मरेमा	दिन दूसरा प्रहर	
१५६. मिया मल्लार	"	म	सा	रे म रे मा म रे प निध निमा	मानिप मपगम रेमा	मध्यरात्रि	
१५७. मीरा मल्लार	"	म	मा	निमा रे ग म प निधनिमा	माय निप मप- गम रेनिमा		
१५८. मुलतानी	तोड़ी	प	मा	निमा गमप निमां	मा नि धप मग रे मा	दिन चौथा प्रहर	
१५९. मुलतानी धनाश्री	"	प	सा	निमा म ग म प ग म प निम	मांनिधमगम- ग मपगमगरेम	दिन तीसरा प्रहर	निममगमगमगध- पमगमग नि मगरेम निध मा ग रे म
१६०. मेघरंजनी	भैरव	म	सा	नि रेग मनिमा गरे मा	रे मां निम ग मरे गरे मा	रात्रि चौथा प्रहर	

१६१. मेघमल्लार      काफ़ी      सा      प      सा मरे मप नि-      सा निप मरे म-      वर्षाकाल  
निसा      निरेसा
१६२. यमन      कल्याण      ग      नि      सा रे ग मप ध      सा निध प मग      रात्रि प्रथम प्रहर  
निसा      रेसा
१६३. यमनी बिलावल      बिलावल      सा      प      सारोग मग पमध      सानिधपग मगरे      प्रातःकाल  
निसा      गरेसा
१६४. रसरजनी      "      म      सा      सारे मध नि सा      सानिधम धम-      मध्यरात्रि  
रेसा
१६५. रसचंद्र      "      म      सा      सा रे सा गमम      रेसा धमम गम-      प्रातःकाल  
मध मसा      रेसा
१६६. राजकल्याण      कल्याण      ग      नि      निसाग मध मग      सा निरें निध म-      सायकाल  
मधसा      गरेसा
१६७. राजेश्वरी      काफ़ी      म      सा      निसा मगम मध      सा निध मग मग      मध्यरात्रि  
निसा      स
१६८. रागेश्वरी      खमाज      ग      नि      साग मध नि सा      सा निधम गरेसा      रात्रि दूसरा प्रहर  
.
१६९. रामकली      भैरव      प      सा      साग मप धनिसा      स निधपम पध-      प्रातःकाल  
निधपगमरेस
१७०. रामदासी महार      काफ़ी      म      सा      सारोप मगम प-      साध निमप मग-      वर्षाकाल  
निधनिसा      मरेसा      ,



राग नाम	थाट	वादी मंदादी	आरोही	अवरोही	गान्ध ममथ	पकड़
१७१. रेवती (कान्हुरा)	काफ़ी	प सा	सा रे सप धमप सा	सा धनिप नप मगमरेमा	प्रातःकाल	
१७२. रेवा	पूर्वी	ग प	सा रे ग प ध मा	सा धप ग रेमा	मायकाल	
१७३. लच्छासाख	बिलावल	ध ग	सारंग मप धनि मां	मानिध पधनिध- पनमरेमा	प्रातः काल	
१७४. ललित	मारवा	म सा	निरेगम ममग मध सा	रे निध मध मम- ग रेमा	रात्रि अतिम प्रहर	
१७५. ललित गौरी	पूर्वी	म सा	सारेगम ममग पधनिमा	मानिधप धम म गमरेमा	मायकाल	
१७६. चैती गौरी	„	प मा	मारे सप मध निमा	मानिधपमप मध मग रेगरेमा		निधपधमगधम गरे
१७७. ललित पचम	भैरव	म मा	मारे मा गम मप मधनिमा	मानिधप धमम पग रेमा	रात्रि अतिम प्रहर	
१७८. ललित भैरव	„	म मा	मारंग ममम गप गम धनिमा	मांनि धप मग मग गमरेम		म गमधप गम ममग धप गमरेम धपमप ग म ममग
१७९. लक्ष्मीकल्याण	कल्याण	रे प	सा रे ग म रे मप धनितां	मांनि धप मम ग- म रेसा	मायकाल	

१८०. लाजवती      बिलावल प      रे      सा मरेप धधप      साप धधप पम-      मध्यरात्रि  
                                  मपसां      रेसा
१८१. वराटी      ग      ध      सा रेग पमग प-      सा निधप मग      सायकाल  
                                  धनिसा      रेसा
१८२. विभास (भैरव)      भैरव      ध      ग      सा रेग पध पसां      सा धप गपधप      प्रात काल  
                                  गरेसा
१८३. विभास (मारवा)      मारवा      ध      ग      सा रेग मग पध-      सा निधमध मग-      ,  
                                  निधसा      रेसा
१८४. वैजयती      कल्याण प      रे      नि सारे म प निसां      सा नि पमरे सा      सायकाल
१८५. शहाना      काफी प      सा      निसा गमप निध-      सा निधनि पमप      रात्रि तीसरा प्रहर  
                                  पसा      गमरेसा
१८६. शहाना कान्हरा      ,      प      सा      सारेग मपनिसा      सा निधप मप      मध्यरात्रि  
                                  गरेसा
१८७. श्याम कल्याण      कल्याण सा      म      निसा रे मप धप      सोनिध मपगमरे      रात्रि प्रथम प्रहर  
                                  निसा      निसा
१८८. श्याम केदार      खमाज म      सा      सारे साम रेम प      सोनिधप धनिधप      रात्रि दूसरा प्रहर  
                                  धनिसा      मरेसा
१८९. शिवरजनी      काफी प      सा      मग रेग पध सा      सा धपग रेसा      मध्यरात्रि

राग नाम	थाट	वादी संवादी	आरोहो	अवरोहो	गाने समय	पकड
१९०. शिवमत भैरव	भैरव	ध रे	सा रेग मप ध- निसा	सा निधप मग- रेमा	प्रातःकाल	
१९१. शुक्ल बिलावल	बिलावल	म मा	सा ग म प ध- निसा	मां निध निधप मगमरेमा		
१९२. शुद्ध कल्याण	कल्याण	ग ध	मा रेग पधमा	मां निधप मग रेमा	रात्रि प्रथम प्रहर	
१९३. शुद्ध सारंग	काफी	रे प	मा रे मप मप- निसां	मानिपम पधपन- रेनिमा	दिन दूसरा प्रहर	
१९४. शंकरा	बिलावल	ग नि	साग प निध मां	मानिप निध गग गरेमा	रात्रि दूसरा प्रहर	
१९५. श्रीराग	पूर्वी	रे प	सारे मप नि मा	मा निध प मग- रेमा	सायकाल	
१९६. श्रीकल्याण	कल्याण	प मा	मारे मप ध प मां	मा धा मप रे मा	रात्रि प्रथम प्रहर	
१९७. श्रीटक	पूर्वी	प रे	मा रे ग पध नि सा	मां निध प म ग रे मा	सायकाल	
१९८. श्रीरजनी	काफी	म मा	सा गम धनिमां	मां नि ध म ग रेमा	मध्यरात्रि	
१९९. सरपरदा	बिलावल	सा प	सारेगम धपनिध निसां	मा निधप मगम- रेमा	दिन प्रथम प्रहर	

२००. सरस्वती	खमाज	प	रे	सारेमप	निधप	रे निधपम रेमप	मध्यरात्रि
२०१. साजगिरी	मारवा	ग	नि	निधसा	मगमप	मरेसा	
२०२. साधोरी आसावरी	आसावरी	सा	प	निरेग	मगमप	सानिध मधमग	सध्याकाल
२०३. सामत सारंग	काफी	रे	प	धपसा	ध सा	पगरेसा	
२०४. साजन	खमाज	म	सा	सारे मप ध	सा	सानिधप धमप	दिन प्रथम प्रहर
२०५. सावनी कल्याण	बिलावल	सा	प	सारे मप	निसा	मरेम गरेसा	मपधसा निधप
२०६. सावरी	भैरव	प	सा	सारे मप धसा	निसा	सा निप मरेसा	धमप धसा
२०७. साझ का हिडोल	कल्याण	ग	नि	साग मध मनि	धसा	सा निधप मग	रात्रि दूसरा प्रहर
२०८. सिधु भैरवी	आसावरी	म	सा	साग मध	मनि	गसा	सायकाल
२०९. सुधराई	काफी	प	सा	सारे गम पध-	निसा	सा निधप मग-	दिन दूसरा प्रहर
				निसा		रेसा	
				सारेगम पनिसा		सानिधप मप ग-	
						मरेसा	

राग नाम	थाट	वादी संवादी	आरोही	अवरोही	गान समय	पकड़
२१०. सुहा सुघराई	कार्फ	म सा	निमा गम पनि मपसा	सा निप मप गम रेमा	दित का अथवा रात्रि का दूसरा प्रहर	निम रे गमरेमा निप धमपग रेमपथ गम-रेमा
२११. सूर मल्लार	"	म सा	मारे मप निमा	सां निथ मप म-रेमा	वर्षा ऋतु	
२१२. सुहा (काहुरा)	"	म सा	निमा गम पनि मप सा	मा निप मपगम-रेमा	दित दूसरा प्रहर	
२१३. सैधवी (मिहुरा)	"	मा प	मा रे म प थ मा	मा निथपमगरेम गरेमा	सायकाल	
२१४. सोरठ	खमाज रे	ध	मा रे मप नि मा	मारे निथमपथ मरेनिमा	रात्रि दूसरा प्रहर	
२१५. सोहनी	मारवा	ध ग	मा ग म थ नि मा	मारेसानिथ मथ-मगरेमा	रात्रि अन्तिम प्रहर	
२१६. मौराष्ट्र टंक	भैरव म	मा	मा रे ग म प म थ मां	मानिथम निथप मगरेमा	प्रातःकाल	
२१७. हमीर	कल्याण	ध ग	मा रे मा मपथ निथमां	मानिथप मपथप गमरेम	रात्रि अथम प्रहर	
२१८. टिजाज	भैरव म	मा	मारोगमप थनिमा	मानिथप म गमप रेमा	दित दूसरा प्रहर	

२१९. हिंडोल      ध      ग      साग मधनिध सा      सानिधं मग सा      दिन प्रथम प्रहर
२२०. हुसेनी कान्हूरा      सा      प      सा रेग म प ध      सानिधप गमरेसा      मध्यरात्रि
२२१. हेमकल्याण      सा      प      सा रेग प सा      सा धप ग रे सा      रात्रि दूसरा प्रहर
२२२. हसककिणी      काफी      प      सा      साग मप निसा      सानिधप मपग      दिन तीसरा प्रहर
२२३. हसध्वनि      बिलावल      सा      प      सारे गपगरे गप-  
नि सा      सा निप गरेसा      रात्रि प्रथम प्रहर
२२४. हंसमजरी      काफी      प      रे      सारे मपध निसा      साधप मप धप      दिन तीसरा प्रहर
२२५. हंसश्री      खमाज      प      सा      सा गयपनि सा      सां नि मप पग-  
मग सा      रात्रि दूसरा प्रहर

## राग नाम

### पकड़

२५२

१. अडाणा

सा, रे मप, मप, ध (नि रे), निसा, निसा, रे, मा, निसा, ध, निप, मपनाथ, निसा, रे, रे, मा ध, निप, मपरिस, निप, ग (म रे) म रे मा ।

२. अल्हैया बिलावल

ग, रेपप, धनिधनिसां, सानिधप, धनिधप, मगमरे, गप, धनिधनिसां धनिधप, धगप, मग, मरेसा ।

३. आहीर भैरव

सा, ध, नि रे, सा, गमरे, मा, गमपध निधप गमरेसा, मा, निधप गमरेसा, धनि रे ।

४. आसावरी

रेमप, नि ध प, मपध सां रे निधप, मपग, रेसा । (औं) रेमपध, निधगरे म प ग रे नारे निध मपध सां रे नि ध मपध ।

५. आनन्द भैरवी

मप, मपधनिधप, मगरे, गरेस, निधप पधनिम, रेरे, ग म, पध पम, गरेम, मप, धनिधप, पधनिम रे स, निधप, निधपम, गरेस ।

६. आभोगी

ध मा, रे ग, रे, म ग रे, ध मा, गरे, ग मव, धमगरे, गमवमा ध ध मवगरे धमा रे गमव मधमा धमग रे म ।

७. आभोगी कानडा

धमवसा, रेसा, ग (म रे) म रे मा ध मा रे ग (म रे) मरेसा, मधमानधया धमगरे, ग (म १) मरेसा धमरे ग (म रे) रे म ।

८. कलावती

गप, गम, गप, धमां निध, निधप, गपधपगमागप, धनिधप, गपगम, गपध निसा निधपगम ।

९. ककुभ

माग, म, निधप, मप, गम, मा, ग, गम, धनिमां, सांघनिप, धम ग, मा गम । (औं) रे, रे, गमग-रेसा, निमारे, धनिप, मम, मप, धमपमा, ध, प, धमगमरेसा ।

१०. कामोद

सा, रे स, रे रे प, ग, मप, गमरेसां, रे रे प, म पधप, सांघप, गमपग मरेप, गमरे स, रे रे प ।

संगीत शास्त्र

११. काफी  
 १२. कालिङ्गडा  
 १३. केदार  
 १४. कैसी कानडा  
 १५. खमाज  
 १६. खंवावती  
 १७. खट  
 १८. गांधारी  
 १९. गारा  
 २०. गुणकली  
 २१. गुर्जरी तोडी  
 २२. गोपिका बसन्त  
 २३. गोरखकल्याण  
 २४. गौडमल्हार
- सा सा, रेरे, गगम मप, मपधनिसा, निधपमगररेरे, रेपमप, मगरेसा, सा सा, रेरे गग, मम पप ।  
 सा, रेगमप, धप, मधप, मग, मगरेसा, पसा निसा, पधप गमग मगरेसा निसरेग । •  
 सा रे सा, मम ग<sub>१</sub>/प, धप, म, पमरेसा, मप धपम, पमरेसा, सासा, मगप ३ धपम ।  
 निसाम, गम, पग, मग, रेसा, म, ध, निसा, निध, म धनिधम, पग, मग, रेसा, निधनिसा, म ग प,  
 पग, रेगमगरेसा, मधनिसा, निधम, (पग<sub>१</sub>) गप, मगरेसा ।  
 सा, गमपधनिधप, मपधमग, मगपधनिसानिसा नि धप, धमगरेसा । •  
 रे, मपध, निनिधसा, सा निधमप, ग, मसा, मगमसा, रेमपध सा ।  
 रेनिसा, ग, मप, पप, धध, पसां, ध, प, ग, म, निध, प, ध, प, गम, पगमरेसा ।  
 नि ध प, धमप, ग, रेमप, निधप, धम, पग, रेसा, रेमप, निध, निधप ।  
 निसा, निधनिपमप, धनिसा, रेगरेसा, गमप, गामरे गरेसा, निधपध निनिसा ।  
 सा, रेमपध, मपध, मपमरे, मपधसा, साध, पसां पधप मरे मपध, मपमरेसा ।  
 ध, मगरे, ग म निध, निधम रे ग, रे निध सा ।  
 सा, गमप, गमप, (नि निरे) धधनिसा, धप, सांधनिधप, ग, म, गमपनि धसा, मपग, मगसा ।  
 रेमरेसा, निधसा, रेमपधनिध, पध, मरेसा, निधसा, रेमपध भिधसा, रे साधनिध, मरे, मपमरे,  
 निस, निधसां, रेमपधसा ।  
 सा, रेगम, गरेगसा, रेगरेम गरेसा, रेगम, मरेप, मपधनिधम, गरेगसा, रेपम, मपधसां, धपमपम, •  
 गरेगसा, रेगम ।



२५. गौड मल्हार (काफी ठाठ) सा, रेपम, मपग (म रे) मरेसा, ममरेपम, ग (म रे) मरेसा, नाथ, निपम, पमाथनिपम, पग, (म रे) रे सा ।
२६. गौडसारङ्ग सा, रेनिमा, गरेमग, प, रे, मा, मयसा, थ, निपमपमग, गरेमग, परेसा ।
२७. गौरी (पूर्वी ठाठ) मा, निधनि. रे ग, रेसगरे, नारे, निमा. रे, रेगरेसा, म, ग मथपम, रेग. रेम, ग रे मारे निमा ।
२८. " (मैख ठाठ) सा, निधनि, रेगरेम, ग रे नारे निमा. मधनिमा ममरेगेसा. मपधपम, रेग, रे रे सा ।
२९. चन्द्रकान्त ग, रे, सा, निधनिधपसा, गरेग, धमग, परेना, निरेग, रेगरेसा, गपरेग, पमग, निरेगरेसा, धमपग, रे, निमा ।
३०. चन्द्रकौस मा, निमा, ग, धनिम, गमगसा, मधनिम, नानिधमधनिमा, निमाथ, म, गमगसा ।
३१. " (काफी ठाठ) मा, धनिमा (गं.), गम, मग मगमध, तिध, नग, नगसा मध. निमा. निधमगमगसा ।
३२. छायानाट प, रे, गमप. मग, मरेसा, रे रे गन. निधन मपरे गमप. मगमरेसा ।
३३. जलधर केदार मां, रे मा, धपम, ममप, धपम, रेना, ना रे द मरे ना. ना रे म रे ना धन, मपसा, धन. मरेसा ।
३४. जैवन्ती रे ग रे मा, निधपरे गमगरे गरेसा मप. निमा, निधपमप रेगमप, गमरेगेसा रे निधपरे ।
३५. जैत सा, सा रे गरेसा, रेरेसा, रेगप, प, धन, धधग. रेग. धपग, रेना, धांरेसा, मपसा, सारेसां, पग, रेगपसां पधग, सागप, धपग, रेना ।
३६. जैत कल्याण सां, ग, पग, पधपग, रेसा, पग, पधग, सासा गमम, प, पधग, पधपरे, ममारेसा, गपधसां, पधग ।

३७. जैतश्री

निम, गप, मधप, मग, धप, मग, मगरेसा, सा, गपस, गमग, रेसा, निनाग, मपधप, मग, मग, रेसा,  
प, धप, सां सां रे रे सां ग रे सां, रे निधप, प, मगरे ।

३८. जोगिया

रेममप, धमरेसा, निधसा, मपधपधम, रेस, मपधधस रे रे मरेसा, निधप, धनिधप, ममपधध  
मम रे रे सा ।

३९. जौनपुरी

सा, रेमप, निधप, मप, धनिसां, रे निधप, निसां, निधप, मपध मधगरेस ।

४०. छिन्नोटी

धसा, रेमग, प, मग, रेसा, निधप, धसा, रेमग, गमपमग, धपमग, सारेग, सा, निधप, धसा रेमग ।  
सागमपपधसा, धप, मगम, पधसां पप, मप, मगम । (आसावरी) निसागमप, धनिसां रेनिसां ।  
रे सा निधप, गपमगरेसा ।

४१. खिलाफ (भंरव)

४२. मोटकी

साध निपसा, म, पग रेस, गमरेसा, निसगमपधनि, निग, रे, म, सरेपग, मपनि, सां निसां  
सां निसां, सा निधप, मपमग, पधनि, गरे, सा, सरेपग ।

४३. टकी

ग, रेसा, गप, धपसां, निध, प, मग, पग, रेसा, रे रे गप, धधप, निधप, गपगरेप, निरे निधप, पग  
रेस ।

४४. तिलक कामोद

पनिस् रेगसा, रेपमग, स, रेगस, निप निसा रेमपध मग, मपसां, पधमग सारे ग स नि प नि  
सारे गनि ।

४५. तिलग

सा, गमप, निप, मग, गमपनिसां, निपमग स ।

४६. त्रिवेणी

स रेगप, गरेस, पपधपसां, निधप, पगरे रे सा, सारेगरेप, धपसां, निधप, गप, गरेसा ।

४७. मियातोडी

निधमगमधसा, रेममगप, मधमगप, मगरेगरे निधपसा ।

४८. दरबारी कानडा

ग (म ?) रे रे सा ध नि सारेगा (स ?) मरेसा, रेरे ग मप, ध, निपमप, ग (न ?) मरेसा ।

४९. दुर्गा (खमाज)

सा निध सा, मग, मंघनिधमग, मधनिमा, गं म ग सा निधमगसा ।

५०. दुर्गा (बिलावल)

सा, रे मपध मपध, मरे धसा, मपधसा धपमपधमरेधस ।

५१. देवगाधार

धम, पनिध, प, धमपग, रे, पपग, रे, गम, निमा, म रे ग, म, पगरे गना, रे, निमा रेगम पग रेम ।

५२. देवगिरी बिलावल

सा, धनिध, सा, रेग, गग, गरे, मा, सागपध निप, मग, मरे, मा, निमा धनिधना, रेग, मग, प, मग, मरेसा ।

५३. देशकार

सा, गप, धपध, प, धपध, प, धगप, गपधपगमा, रेधमा माधपधपधगप ।

५४. देशाख्या

सा समरेसा, निस्, ग गप, निप, गमरेसा, निमा, मप, पनिपमा, रेम, निमा निप, गगमरेसा, निप, गगमरेसा, निप, पनिपसानिप, गमरेसा ।

५५. दैस

सा, रेमपनिधप, मगरेगनिमा, रेमपनिमा, रेनिधप, रेमपधमगरेगनिन ।

५६. देसी

निसा, रेगरे, निसा, रेमध, ध, मप, रेगमारेनिमा पधधम, रेमप, मपमा, पधमरेगना रेनिम, रेमपधप, धमपरेगसा रे निम ।

५७. घनाश्री

निमा, गमप, धप, निधपग पग, रेसा, निधप, मप, निमा, गमप, धप, निधप, मानिधप, मपग, मपग, रेसा ।

५८. धानी

गमा, गमप, निपनिम, गमा, निप, मग मा, मपगम, प, निमा, निपमप, ग, मप, गमरेसा ।

५९. नट

सा, ग, गम, म, पम, ग, ग, म, प, साधनिप, मग, रे, ग, मप सारेसा, साग, मप, पगम, रेगमप, सारेसा

६५. नट बिहाग

सा, गम, पम, गमपसाप, गमग, मग, मनिधप, पपमपध पमग, मनिधपगमग, पपनिसा, गगसा, पनिपधमपमगरेसा ।

६१. नटकेदार

सा, रेसा, म, मप, धप, म, गम, म, प, सा, धनिप, धपम, सारोगमप, सारेसा ।

६२. नटमल्लार

सा, रे ग, ग (म) रे, सा, निसा, रेसा, निसा, रेग, मप, (प) मग, मरे, रे, मरे, निसा ।

६३. नन्द

सा, गम, पधनिप, ध, मप, गम, गमधपरेसा, सारेसा, गमपधनिप, गमधपरेसा ।

६४. नायकी कानडा

निस, मपसा, निपरे, गमरेस, पनिप, सारोगमरेस, मपसा, निप, रेप, रेगमरेस, निपरे, गमरेस ।

६५. नारायणी

सानि धमप, निधप, मपम, रे, सारे, मरे, धस, मप, धसारेमरे, निधप, मपधप, मरे, मरेस, मपधसा, सारेसा, निधप, मपधसा, धप, मरे, सरे धस ।

६६. नीलांबरी

सा, रेमप, धनिसा, सांनिधप, म, ग, ग रेस ।

६७. परज

सा, निधप, मपधप, गमग, मगरेसा, सापमपधपमगमग, सा निधप मगसग, मगरेसा ।

६८. पहाडी

ग, रेसा, ध, पधसा, गपधप, गरेसाध, धरेगस, गप, धसा, मप, गरे, धसारेग, साध, पधसा ।

६९. पीलू

ग, सनिसारेसा धपमपनिस रेप गस निस ।

७०. पूर्वी

निरेग, मग, पम, धमग, ग, रे, निधप सा, निरेसा ।

७१. पूर्िया

ग, निरेसा, निधनि, मधग, मधनिरे, निमधस निरेस, ग, ग ग निरेनिमधगमधसा निरेस ।

७२. पूर्वी

सा, निरेध, निरेग, मग, निनिधमधमगरेसा, रेनि, मवसा, निरेगम धमगरेसा, निधमगरेनिरे-  
निमधस सरेसा, नि, रेगरेगमधमगरे, गनि, धमगरेस ।

रेग, मपधनि, धप, रे, मप धमग, रेस, निरेनिध, निरेगमप, ममे, निनिधमगरेस, मधमसा, मारेसा,  
निरेनिधप, गमपधनिम, मधमग, निनिधमगरेस ।

निरेग, मप, धप, मग, मरेग, ध, मगरेस, निरेगमप, मधप, मग, मरेग ।

निमा, मगरेस, निधप, मनिप, निम, ग, मन्म, गम, निधप, म, गध, पंग, रेस, मपमरेसा, निममग-  
रेसा निधप, म, गम, पनिधप, गम, पंग, रेस ।

सा, रे रेसा, ग, म, प धप, म, रे, गमम, गम, गरेम, धन, रेगमम, गमगरेस, धनिम, पत्र धनिम,  
रेरेसनि धन, मगम, धपमगरेगममगमरेस ।

सरेसा, मपप, गम, ध, तिमरे निम, निनिप, मप, नम, धनिमगेनिम ।

सा, रेगरेसा, रेमपधमप, रेगरेस, निममगरेसा, रेम रेमपधगा, निधम, धपगरे, गरेगम, मपधनिम,  
सनिरेसां, निनिम, निधप, निधम, पग, रेसा ।

निनिपमरेसा, रेमप, निप, निमरेसा, निप, निप, मरेसा, रेम, मप, मप निप, निमा, सारेसा, मानिप,  
मपनिप, रेस, विसा, रेमप ।

स, ग, मधरेसा, धमनिधप, ममग, मधसारेगानिधपमगमग, मनिधप मग, मगरेस ।

मानिधप, मग, ममग, मधनिमरेसा नित्रममगममपगगधध निनेजा निधपमगमग, रेनममगमग ।

सारेसा, धनिमम, मगग, मधनिध, मधनिमानिध, मग, मगरेसध निमम ।

साम, गम, पगम, रेसा, मधनिमानिप, मपनिनि पमपगम, गरेसा, गमरेस ।

८४. विलासखानी तोड़ी

८५. बिलावल

८६. बिहागडा

८७. बिहाग

८८. वृन्दावनी सारग

८९. भटियार

९०. भरवार

९१. भिन्न षड्ज

९२. भीमपलासी

९३. भूपाल तोड़ी

९४. भूपाली

९५. भैरव

९६. भैरवी

स, रेनिसा, रेग, रेग, मग, रेसा, सरेखस रेग, मग, रेगस, धप, निधमपग, रेगमग, रेस, सधसरेग, रेग, मग, रेस ।

गरेगप, मग, मरेस, गरेगप, धनिधनिस, सनिधपधगप, मगरेगपमग, मरेस ।

गमध, पधनिध, पमगस, गग, पम, मगस, पधनिसासा, निध, प, मपम, गरेस ।

सनिसमग, पमधप, धगमगरेस, पमगमस, निपनिसामगपमगमग ।

सा रेमप, मप, निप, निसनि निपमरेनिस ।

सा ध, धप, म, म, पग, मधसा रेनिधपम पग, मधमगपगरेसा, मधसा, निरेगरेसा, सनि, मपग, मधसा, रेनिध, मग, मगरेस ।

गरेस, ग, मपमग, म ध, पगरेसा, निसा, रेग, मग, मध मग, गरेस, निसा, गमप, मप, मग, ग, पमग, रेसा, नि, सरेग, मग, धमग, पग, रेस ।

सा, ग, गम, मगसाध, निसा, गमधमग, निस, ध नि सगम, ध, मध, निधप, गमधसा, निसधमगस धनिसग मधनिस ।

निसमगरेस, ममपगम, पनिपनिसरेस निधप, मप, गमनिस, गरेस ।

धस, रे ग सा रेस, रेस रेग, प, धप, रेगस, रेग पधस प धपगरेगस ।

सरेगसा धप गप धस, रेग, पग, धपग, रेगरे धस, रेपग ।

स, गम धधप, मपम, गमरेस, धधपमपम, निसधप, गमधधपगम, मगमरेस ।

सा, रेग सरे स धपसरेगपम, गसरेस, गमपधप धपमपम, ग, सरेग, ममरेगस ।

निपम, निरेस, रेसपनिपमपम, रेनिमरेस, पनिमप निपमरे पैमरे निरेस ।

स, रेसां, म, म, पस, गममरेगमप, गमरेनिस. धप, मप, निम, मग, मरेम, मगप, मपन्नति धप, मगमरे, निस ।

निसगमप, मपधप, मपगरेमरेनिम, गमप ।

धनिरे, गमगरे निधनिरे, गमध. धमगरे, गमधनिध, मगरे, निधस ।

रे. निम, गरे, गमपमप, मप, ग, मग, रेम, रेनिन, मग, मग, रेस, निधप, मग, पगरेस, रेनिम, मग, मगरेसा ।

सा, रेगम, रेसमप, ध, पधम. मनिमनि ध. धनिप, पध, म. पग, मम, रेग, गम ।

मधनिमं, निस ध निमधमगनिम, गमम ।

पप, मगम. मासगाप, पमप, पगम, निमगपमग, गपमनिपनिमनिपमग, निपगपगमम ।

स. मगरेस, निधनिम, धनिमरेग. म. मध. धनिध. म, रेगम, गमध. निम, रेम, निधमा, धप, म, मग, मगरेस ।

धनिमरेनिध. निधन. मग. मगम ध मा. निरेग, निरेम, प, मधमग गरेसा, मधम, निरेस, निरेनिध, मनिधमगरेस ।

रेम, धनिप, निध, निध, सनिम, मरे, मम, पप, धप, मरेसा, पनिध, निधसं, निम, मरेस, निधमा निप. मरे सा ।

१०८. मियाँ मल्लार

१०९. मीरामल्लार

११०. मुलतानी

१११. मेघरञ्जनी

११२. मेघमल्लार

११३. यमन

११४. यमनी विलावल

११५. रागेश्री

११६. रामकली

११७. रामदासी मल्लार

११८. ललित (पूर्वी)

११९. विभास (भैरव)

रेमरेसा, निपनप, नित्र, निव, रेप, मरेप, गमरेस, निवनिसा ।

मरे, सरे, निस, गग, मरेप, मप, निवनिस्, रेसा, धवनिप, मपस, साधनिप, मपगम,

मप, निप, रेम, पधमप ।

निसा, मपप, पधप, गमगरेस, निसगमप ।

निरोग, म, मग, रेग, रेस, म, निसरेसेसनिम, ग, मरेगरेस, निरेगम, गमममग, म, गरेस ।

रे, रेमरेस, निपस, सरेसम, रे, सरेमरे, सनिप, मपसा, निप, मरेस, मप, निव, रेस, निसरेमरेस,

निप स, निप, रेरेमरेसा ।

निरोगरे, निरेस, मपरेगरे, धनिरेमरेगधनिरस ।

सारोग, मग, पमवप, गमगरे, गरेस, निधनि धप धनिस्, पमप, गमग, गमगरे, गरेस ।

सा, रेस, निव, निस्, मग, मव, निध, गग, मग, सरेसा, गमधनिस्, मगरेस, सनिध, मवनिध, मगरेस,

निधना ।

स, गमधप, मप, ध, निधप, मप, गम, रेस, धप, मप ।

पगमरेसा, रेनिसा, सरेग, मप, गगमरे, पमनिप, गमरेस, प धनिसा, सरेस, निस्, निप, ममप, गम,

निप, गमरेस ।

निरोगम, ममग, मवमस, ग, मगरेस, निरेगम, ममग, मधसा, रे निधमस, ग, मगरेस, निरेगम ।

स, गप, गपधधप, धगप, गप, गरेस, सरेस, पगप, धस प, धधगपगरेस, गप धपगप ।



## राग नाम

१२०. विशास (मार्वा)

१२१. शहाना

१२२. श्यामकल्याण

१२३. सामन्त सारङ्ग

१२४. श्याम केदार

१२५. शिवरञ्जनी

१२६. शिवमत्त भैरव

१२७. शुक्ल विलावल

१२८. शुद्ध कल्याण

१२९. शुद्ध मारंग

१३०. मंकरा

१३१. श्रीराग

## पकड़

स, निरेग, पग, रेस, निध, मध, सारेस, गप, पध, पग, मपरेसा, मधसा, रेसा, निधमधम नरे निध, मग, पग, रेस ।

निधनिप, धमप, सा, निनिप, मप, गम, पगमप, गमरेसा, सम, म, धप, गम, मपनिमा म, निन-  
रेसा, निप, निनिप, निमपम, निमपगम ।

सा, रेसमप, पधप, मपधप, मरे, निम, रेसप, गमरे, निमा, रेसप, गम, रेसा, रेसप ।

प, म, पनिप, रेरेसा, निम, रेस, प, म, निधप, मप, निम नं निम, रेरेसा, निप, म निधप ।

स, म, रेस, रेसप, मपधपम, पग, मरेस रे रे, मप, निम, मनिरेस, निपप, मपधप, रे प, मरे, सन,  
रे, मा, रे, रेसप मपधपम ।

गा, गपधम, रेगरेस धपगरे, ग रे स धमरेगरे पगरे धमा रेगपधम धपगरेम ।

ग ग, मरेगप, मग, मरेस, रेसा, रे ग रेसा पधनिम, रेस, रे ग रेस निम, धनिधन, पधनिमा ।

स, ग, गम, सपम, रेस, मपधनिग, गम, मपमग, मरे न रेग म मपमग मरेस धम गम प मग,  
मरेस, निग, मर्निध, निपमग ।

ग, रेस, निधन ना, गपरेस, मरेगपधमा, धपरेगपरेम ।

निना रेमग, ममरेसप, निमनिप, धप, मप, मरेगग, रेसप ।

गप, निधमनि, पगपगगि ।

मा, रे रे गरे म, नन धप, रे ग, रे प मग निमं रेरेम रेमनिम रेनिधप रेरे मपरेगरेम ।

१३२ दीपक (पूर्वी)

१३३. भट्टियार (खमाज)

१३४. सावनी कल्याण

१३५ सास का हिडोल

१३६. सुघराई

१३७. सूहासुघराई

१३८ सूरमल्हार

१३९. सूहाकानड

१४० सिद्धरा

१४१. सोरठ

१४२. सोहनी

सा, प, गपगरेसा सागप, मधप, गमधपसा, निसारेसा, प, गपगरेसा ।

सा, ध, ध, निधसा नि ध, स, नि ध, मप, ग, रेस, ध, ध, नि ध सा, निनि, ध, मप, ग, रेस ।

ग, रेस, निधनिधप पसा, रेगरेसा, ससमग, पपधप धपग, रेस, ध, गरेस ।

मग, सनिधसनि, मधस गसनि मगनि धसनि मग, सनि धसनि ।

स ध, धनिप, परेम, मप, निप, स, निसा, गग मनिप, मप, गग, मरेस, धधनिप, मप, निप, निस,

रेसमरेस निसरेस, पनिप, पगमरेस ।

म म

मम

सारे, निस, ग ग मप, गमरेस, निप, स, रेगग सरेस, मप, निपस, निसरेनिस, निपम, मपम, गग

मम

मम

मपरेस, निसरे गग मरेस, निस गग मप ।

निस, रेमप, निधप, मपमरेस, निनिपमरेस, रेस, पनिधप, निस, रेनिस, निधमप, मपनिपमरेस,

सनिधप, मपनिधप, मरेनिस ।

सा, निसगमप, ग, मरेसा, निस, निप, सा, मरे, पग, म, रेस, सग, मपस, निप, मप गमरेस,

निसगमप, निमपसा ।

सा, रेसपधस, निधमपगरे, मगरेस, धमप, निस, रेग, रेस, निधस, रे, मपधनिधमप गरेनिस ।

रेसपनिस, रेनिधप, धमरे, रेपमरेरेसा, रे, प, मपध, मरे, निध, मरे, रेसपनिस रेनिधमरे, पमरे,

निस ।

ग, म धनिसरेस, निधनि धग, मगरेस, ग, मधनिस, निधमग, मधनिसरेस ॥

१४३. हमीर

१४४. हिन्दोल

१४५. हेमकल्याण

सा गमध, निध, स. निधप, मपगमध, पगमरेम, गमध ।

मा, गमधमां ध, मग, मगम, धमा, मग मधमां निधमा धमगमगम ।

पप धप स, रेमा, गमरेम, गमपगमरेमा, धपमा, गमरेम, मगरेमा, पधपमा धप गमपगमरेम,  
पधपमा ।

१४६. हंसकिंकणी

गमप, गरे, निन. गम, माग मपनिमा, निन मधनिमगरेमनिधप, मग म, निमा गमप, पधपग,  
म, प, ग, रेमा ।

१४७. हंसध्वनि

मा रे म, गप, निम निपगपगनरे, निपमनिगरे, गपगरेमरेम ।

१४८. कीरवाणी

म, गम पध, नि, निधपमगरे, मगरेम, निमा, गमपधपमगरेगरेमा ।

१४९. वराटी

पधग, पधमग, गरे, रेग, धमग, रेम मरे रेग, रेम, मा, निरेग, पग, प, पधम, पधग, मग ग, रेम ।

१५०. पञ्चम

मधमा, मनिध, मधमग, मगरेम निमम, म, मग, मधम निधनिमध ।

१५१. साजगिरि

निरेगरे, मगरेम मनिधम, निरेग निरेनिध, मधमा गम, नि, मधम ममगरेम रग, मग,

ध, मा, मनिरेनिध, पधग, पपधमा, निरेनिमधममगरेमा ।

१५२. ललिता गौरि

मध, निरेगरेमनिमां, निधप, धनिप, मप, गरेगरेम, मनिधम, रेरेमपधनि, पगमप, मधम, रेरेमनिधम,  
पधनिप, गमप ।

१५३. लक्ष्मदहन मारंग

म, रेमप, प, निनिप, मरेम, रेमेरेम, मनिधनिप, मप, गगमरेम, मप, निम, मरेमरेम निपमपमं,

मम

म म  
निधनिप, गरेस ।

१५४. पटमञ्जरी

साग, गमरेसा, साध, सारेसा, धधप, पवरेरेरेसा, साग, गमप, मगमरेसा, पपसा, सारेस, सागगमप, मगमरेसा, पधप, गरेगमगरेस ।

१५५. श्रीरञ्जनी

मगरेसा, धनिसा, म, गमध, मधनिधम, गमधनिसां, सानिध, मग, रे, सा ।

१५६. गौड़

सा, मरेसा, निसा, गु, मरेप, धप, मरेप, मपधरेसं, धनिप, मपग, मरेसा, मप, निधसा, सनिरेसा, धनिप, मरेसं, रेनिसं, पनिपम, प, पसनिप, मपगमरेस ।

निनिनि

१५७. कोमल देवी

पप धधध प, धमप, ध, निसा, सनिधनिधपमरेमप, धपगरेसा, समप, रेमप, धपगरेस, प, धप, सरेग, रेस पधमपधमपगरेस ।

१५८. खटवोडी

गगरेस रेमपमप धनिनिधनिप, पमधम, मपसासा, निपमपगरेस, मपधनिसां, धनिसरेगरेसेसनिधप, धनि धप, धममगरेस ।

१५९. जंगला

गरेगसा, रेमप, धनिधप, ध, मप, रेगरेसा, म, पनिसा, निसंरेगरेसं, निसंधप, धधनिसं, धनि, पनि, धप, धम, प, गरेगस, रेमप, धनिध, प ।

१६०. सिंध भैरवी

सा, रेगम, रेग, रेनिस, धपधमपगरेग, सा, रेगरेनिसा, धपधसा, निधप ।

नि

१६१. बसन्त मुखारी

निसगमप, धप, पपनिस, धनिधप, पनिधप, मपमग, मगमरेस, मपधनिसां, सरेसा, निसांधप, पनिधप, मपमग, मरेस ।

१६२. उत्तरी गुणकली

मगमप, ध, पधम, मधमपग, गमरेसा, सरेनि, सारेगम, पधमिस, निधपम, पधनिसं, गंरेसां, निसाधप, मगमग, मरेस ।



१७२. रेवा  
ग, रेग, पग, रे, सा, सारेग, प, पध, पग, सारेग, रेग, सारेसा, धप, ग, पग, रेसा।  
निरोगम, पमगरे, गमपम, गरेसा, निरेनिप, मग, निरे गम, रेगरेसा ।
- १७४ मनोहर  
धमगरे, गरेसा, मधरे निधप, गमगरेसा, मधसं, रेस, रेनिधप ।
१७५. दीपक (बिलावल)  
ना, गमप, म, गमपमग, रेसा, प, म, मग, रेसा, सा, निधप, पधसा, साग, गरेसा, गमपधप, निधप ।  
सरेमप, धमरे, स, पधम, मपधस, रेसाधप, मप ध ध मरेरे, मपमरेस, धस ।
- १७६ गुणक्री  
साम, मप, धप, धसा, धप, साध, निध, पम, मप धसा, म, मपन, मप ध सा, निसा धाप, पनिप, पमसा, मपधसा, मपम ।
१७७. देवरञ्जनी  
सा, रेगम, ध, प, निध, निसा, निध, प, मग, मरे, सा, सरेगम, धप, गमधप, सारेग, मरेस, मारेग, रेग, मपमग, मरेसा ।
- १७८ सर्पदा बिलावल  
सानिप, ग, मग, रेसा, साग, मधरेसा, सा, नि, प, मग, मग, रे, सा ।
१७९. मालवी  
गमपममरेसरे, गम (प) म, ग, म, रेसा, धनिप, सामगप, धप, पसा, ग (प) पग, गमपमग, रेसरे ।
१८०. कामोद नाट  
पम, पधग, मप, गमरेसा, रेनिसा, साधधनिप, धनिसारेस, सा, धनिपम, पधम, निसा, रेनिसा, निप, मधध, निप, धनिरैसा धम, पधम ।
- १८१ कौसी कानडा  
सा, गमपमगस, गम, पनिप, निसनिप, ममपमगस, निपस ।
- १८२ जोग  
स गमगसा मगम, धनिसा निधम, ग, मगस, धनिस गम ।
१८३. जोग कौसा  
निरोगम, ममग, मध, मध, निरे निध मम, गनिरे गम ममग, मगरेसा, निरेगस ।
१८४. ललित (मार्वा)

**अनुबन्ध ३**

**(तालों का प्रस्तार क्रम)**

## संख्या

नियत मात्रावाले असूक्त ताल को कुल कितने प्रस्तार मिल सकते हैं इस पर्यन्त का, अंक-पंक्ति-रूप जो उत्तर पाया जाता है वही संख्या है।

चतुर्भुज प्रस्तार के एक-द्रुतवाले ताल का प्रस्तार—१

“ “ “ द्वि-द्रुतवाले “ के “ —२

आगे ३, ४, ५, ६, ७, ८ इत्यादि द्रुतवाले तालों को, भिन्न-भिन्न मात्रा के प्रस्तारों को, अंक-पंक्ति के रूप में गणने की विधि बतायी जाती है—

अत्य (अंतिम अंक) उपात्य (अत्य से पढ़ा अंक) तुरीय (चाथा अंक) पट्क (छठा अंक) इनको जोड़कर लिखो ता अगला अंक पंक्ति में मिलेगा। जहां-जहां तुरीय और पट्क नहीं उपलब्ध होंग वहां, क्रम में तृतीय और पंचम का मिला लीजिए। या लिखने पर—

३ द्रुतवाले का अत्य— २

“ “ “ उपात्य— १

कुल मिलकर— २ १, २, ३ (अंक-पंक्ति)

४ द्रुतवाले का अत्य — ३

“ “ “ उपात्य— २

(तुरीय की अनुपस्थिति— १

के कारण) तृतीय —

कुल — ६ १, २, ३, ६ (अंक-पंक्ति)

५ द्रुतवाले का अत्य— ६

“ “ “ उपात्य— ३

“ “ “ तुरीय— १

कुल — १० १, २, ३, ६, १० (अंक-पंक्ति)



६ द्रुतवाले का अत्य—१०

” ” ” उपात्य— ६

” ” ” तुरीय — २

(षट्क की अनुपस्थिति— १

के कारण) पञ्च —

कुल — १९ १, २, ३, ६, १०, १९ (अक-पक्ति)

७ द्रुतवाले का अत्य —१९

” ” ” उपात्य—१०

” ” ” तुरीय — ३

” ” ” षट्क — १

कुल — ३३ १, २, ३, ६, १०, १९, ३३ (अक-पक्ति)

८ द्रुतवाले का अत्य — ३३

” ” ” उपात्य—१९

” ” ” तुरीय — ६

” ” ” षट्क — २

कुल — ६० १, २, ३, ६, १०, १९, ३३, ६० (अक-पक्ति)

इस अक-पक्ति के द्वारा किसी ताल के समग्र प्रस्तारों की संख्या की जानकारी-  
मात्र नहीं, अपितु उन प्रस्तारों के बीच द्रुतात्य, लघ्वत्य, गुर्वत्य और प्लुतात्य प्रस्तार  
कितने-कितने होते हैं, इस बात का भी पता चलता है। इसमें, ये चार अक नीचे जोड़े  
गये हैं वे ही यों इसे समझा देते हैं। जैसे—

अत्याक द्रुत मे समाप्त होने का बोधक है

उपात्याक लघु ” ” ” ” ”

तुरीयाक गुरु ” ” ” ” ”

षट्काक प्लुत ” ” ” • ” ”

उदाहरण—

६ द्रुतताल के ताल के द्रुत में मिलाए जानेवाले प्रस्तार—१०

”	”	”	लघु	”	”	”	६
”	”	”	गुरु	”	”	”	२
”	”	”	प्लुत	”	”	”	१

नष्ट

तालों की प्रस्तार-शोभा में, अमुक प्रस्तार कैसा होगा ? यह प्रश्न यदि कोई पूछे तो उसे गष्ट प्रश्न कहते हैं। किसी नाट के बारे में पूछा जानेवाला प्रश्न, समान अर्थ है। इस प्रश्न का उत्तर देने का मार्ग 'सगीतरत्नाकर' में कहीं हुई रीति के अनुसार यों है—

उद्दिष्ट ताल के जिस प्रस्तार के बारे में प्रश्न किया जाता है उसके अन्त तक की अक-पंक्ति को पहले लिखिए। उस प्रस्तार के जो कुल-अंक हैं उसमें उस अंक का जो प्रश्न में दिया गया है घटा दीजिए। घटित होकर बाकी जो अंक रह गया है उसमें अत्याक को, मभव हो तो उपात्य को तथा इसी प्रकार दूसरे अंकों को भी घटा दीजिए। ऐसे घटा देने में, यदि कोई अंक न घटेगा, तो प्रस्तार का एक द्रुत मिलेगा, घटेगा तो उससे एक लघु मिलेगा। लगातार दो लघु मिलने पर दोनों को एक गुरु मान लीजिए। इसी तरह गुरु के मिलने के बाद उसका तृतीय अंक भी घटा तो गुरु को प्लुत में बदल लीजिए। घटे हुए अंक से एक लघु के मिलने के बाद, चाहे दूसरा अंक घटे ही, पर उसमें द्रुत की प्राप्ति न होगी—यानी दूसरे अंक से द्रुत को मत लीजिए। ऐसे प्राप्त अंकों को लिखते समय यदि वे ताल की कालमात्राओं से न्यून हुए तो कमी को द्रुत चरके मिला दीजिए।

उदाहरण—जैसे कोई पूछे कि ६, द्रुतकाल की मात्रा के ताल-प्रस्तार में पन्द्रहवां भेद कैसा है तो अंक-पंक्ति को पहले लिखिए। जैसे—१, २, ३, ६, १०, १५।

प्रश्नविषयक प्रस्तार-भेद की क्रम-संख्या १५ है। इसे, कुल-अंक से—अर्थात् १९ से घटा दीजिए तो बाकी ४ मिलेगा। इस शेष-अंक (४) से अत्याक (१०) को घटा देना असम्भव है। इसमें हमारा आवश्यक एक द्रुत प्राप्त होता है।

बाद में, उसी शेष-अंक (४) से उपात्यांक (६) को भी घटा देना असम्भव होने के कारण और एक द्रुत मिलता है। तदनंतर उसी शेषांक (४) से उपात्य के बगल-वाले तृतीयांक (३) को घटाना संभव है। घट जाने से एक लघु की प्राप्ति होती है। अब के शेष-अंक (१) से ३ के बगलवाले २ को घटाना चाहे संभव क्यों न हो, परंतु उससे द्रुत की प्राप्ति इसलिए नहीं स्वीकृत की गयी है कि वह एक लघु के मिलने के पीछे।

मिली है। इसलिए इस द्रुत को छोड़ दीजिए। पीछे, शेषांक (१) से आखिरी अंक (१) को घटाना मुश्किल है। इससे एक लघु मिल जाता है। इसके पश्चात् शेष के न रहने के कारण खतम हो जाता है। अब प्रस्तार का रूप यो हुआ है—॥०० इसकी अधिकता ताल की काल-मात्रा के समान रहने से द्रुतों के मिलाने की कोई जरूरत नहीं। ऐसे ही नष्ट प्रश्न का उत्तर देना साध्य है।

## उद्दिष्ट

किसी रूप के बारे में यह कहना कि इस रूप का प्रस्तार अमुक भेद का—अर्थात् चतुर्थ, पचम इत्यादि का—है, उद्दिष्ट है। इसे खोज लेने के लिए, पहले-पहल, नष्ट की पहचान के निमित्त जो रीति, प्रयुक्त की गयी है, उसी प्रकार अक-पक्ति को लिखिए। नष्ट में जो अक घटित न हुए हों उनसे द्रुत, और जो घटित हुए हों उनसे लघु, गुरु प्लुत इत्यादि प्राप्त होकर, अन्ततः कुछ शेष न रहने के कारण उसकी ठीक उलटी रीति में प्रस्तार की सख्या को जान सकते हैं। वह रीति यह है कि द्रुत-प्राप्ति के कारण जो अक है उनको छोड़ दीजिए। लघु आदि की प्राप्ति के कारण जो अक है उन सबों को जोड़ कर कुल-सख्या से घटा देने पर अभीष्ट प्रस्तार की भेद-सख्या मिल जायगी।

उदाहरणतया इस प्रश्न को, कि प्लुतप्रस्तार के ॥०० रूपवाले प्रस्तार की क्रम-सख्या कौन है, लीजिए। शुरू में, अक-पक्ति को लिखे। जैसे—१, २, ३, ६, १०, १९।

हमारे अभीष्ट प्रस्तार के आदि में दो द्रुत हैं। अत्याक से पहला अक (१०) और उसके बगल का अक (६) ये दोनों अक, नष्ट में नहीं घटे हैं। इसलिए इनको छोड़ दीजिए। अब उनके बगल में लघु है। इस लघु की प्राप्ति घटे हुए अक से ही उत्पन्न हुई होगी। इसी कारण “३” को लीजिए। इसके पार्श्व में और एक लघु है। साधारणतया दो लघु मिलकर एक गुरु हो जाता है। यहाँ तो दो लघु अलग-अलग हैं; इसलिए गुरु के रूप में अपरिवर्तित रहने के कारण—इनके बीच कोई अक न घटा होगा। अतः “२” को भी छोड़कर बगलवाले “१” को लेना चाहिए। अब हमारे लिये हुये अक “३” और “१” ही हैं। इन दोनों को मिलाकर प्राप्त “४” को कुल-अक (१९) से घटाने पर (१५) मिलेगा। यही “१५” इस प्रस्तार की क्रमसख्या है। दूसरे शब्दों में यह प्रस्तार पन्द्रहवें भेद का है।

दूसरा उदाहरण—प्लुतप्रस्तार के १००१ रूपवाले प्रस्तार की क्रम-सख्या कौन है ?

अभीष्ट प्रस्तार के आदि में लघु है। इसकी प्राप्ति का कारण अक “१०” है। उसे लीजिए। लघु के पार्श्व में दो द्रुत हैं। इस नियम के अनुसार कि घटे हुए अक

६ द्रुतवाले एक ताल को लीजिए। उसके पाताल-अंक १, २, ५, १०, २२, ४४, इन अंको की पक्ति के अत्यांक (४४) से प्रस्तार के समग्र द्रुतों की, उपात्यांक (२२) से कुल लघुओं की, चतुर्थीक (५) से सारे गुरुओं की और षष्ठांक (१) से सब प्लुतों की सख्या जानी जाती है। ऐसे ही आगे देखिए।

### • द्रुतमेरु

द्रुतमेरु भी एक तालिका है जिससे यह पता चलता है कि तालप्रस्तारों के बीच, बिना द्रुत और द्रुत के १, २, ३, ४ आदि द्रुतवाले प्रस्तार कितने-कितने हैं।

इस तालिका में, विषम सख्या के द्रुतों के अधिक मात्रा वाले तालप्रस्तारों के बीच, एक द्रुतवाले, तीन द्रुतवाले, पाँच द्रुतवाले तथा अन्य विषम सख्या के द्रुतवाले भेदों के अंको की और समसख्या के द्रुतवाले तालप्रस्तारों के बीच, बिना द्रुत के, दो द्रुतों के, चार द्रुतों के तथा दूसरे समसख्या के द्रुतवाले भेदों के अंको की जानकारी प्राप्त करने की श्रेणियाँ रहेंगी। इसे बनाने की विधि यों है—

नीचे से, क्रमशः, कम कोठेवाली श्रेणियों को ऊपर बनाते जाएँ। नीचे की पहली श्रेणी में, हमारे अभीष्ट द्रुतों की सख्या जितने कोठों में भर जायगी, उतने कोठे बना लीजिए। उसके ऊपर कोठों की ऐसी पक्ति बनायी जाय कि जिसमें एक कोठा बाईं ओर कम रहे। इसी तरह, इस पक्ति की ऊपरवाली पक्ति की रचना भी उसी बाईं ओर दो कोठे कम करके की जाय। इसी प्रकार दो-दो कोठे कम करके ऊपर बढ़ाते रहे तो अन्त में दो या एक कोठेवाली श्रेणी पाकर रुक जाइए। सबसे नीचे द्रुतों की सख्या के सूचनार्थ, बाईं ओर से १, २, ३ आदि अंको से अंकित कीजिए। तब कोष्ठ-विन्यास यों होगा—

							१	१
					१	१	७	८
			१	१	५	६	२०	२७
	१	१	३	४	९	१४	२५	४४
१	१	२	२	५	४	१२	७	२६
१	२	३	४	५	६	७	८	९

इन कोठों में अक भरने की विधि यह है कि हर एक पक्ति की गार्ड और के पहले दोनो कोठों को १,१ अक से भरो। पीछे, नीचे का पट्टली पक्ति के विषम संख्याक कोठों में, अत्य, उपात्य, चतुर्थ और पष्ठ इनके अधिभाग अकों को लिखो। चतुर्थ एवं पष्ठ अप्राप्य हैं, तो तृतीय और पचम से पूर्ति करें।

समसंख्याक कोठों में अत्य को छोड़कर बाकी अकों को जोड़कर लिखो। तब तीसरे कोठे का अक (विषमसंख्याक) अत्य १ - उपात्य १ - २ है। चौथे कोठे का, (समसंख्याक) अत्याक २ को छोड़कर उपात्य १ - चतुर्थ की अनुपस्थिति से तृतीय १ - २ अक है। पाँचवें कोठे का अक, अत्य २ - उपात्य २ - चतुर्थ १ - ५ है। छठे कोठे का अक, अत्य को छोड़कर उपात्य २ - चतुर्थ १ - पष्ठ के न रहने से पचम १ - ४ है। ऐसे ही अकों को लिखिए।

उसके ऊपरवाली पक्तियों के समसंख्याक कोठों में अत्य, उपात्य, चतुर्थ और पष्ठ इनको उसी श्रेणी से एवं विषमसंख्याक कोठों में अत्य को उसकी नीचेवाली पक्ति से और उपात्य, चतुर्थ तथा पष्ठ इनको उसी पक्ति से, जोड़कर लिखना है। तब नीचे से दूसरी श्रेणी के तीसरे कोठे का अक, उसी श्रेणी का उपात्य १ - नीचेवाली पक्ति का अत्य २ - ३ है। चौथे कोठे का अक, उसी पक्ति का अत्य ३ - उपात्य १ - ४ है। यहाँ यह याद रखना है कि इसमें चतुर्थ व पष्ठ के बदले तृतीय और पचम को न जोड़ा जाय। पाँचवें कोठे का अक, उसी श्रेणी का उपात्य ३ - चतुर्थ १ - नीचेवाली पक्ति का अत्य ५ - ९ है। छठे कोठे का अक, उसी पक्ति का अत्य ९ - उपात्य ४ - चतुर्थ १ - १४ है। सातवें कोठे का अक, उसी पक्ति का उपात्य ९ - चतुर्थ ३ - पष्ठ १ - नीचे वाली पक्ति का अत्य १२ - २५ है। आठवें कोठे में, उसी पक्ति का अत्य २५ - उपात्य १४ - चतुर्थ ४ - पष्ठ १ - ४४ से भरता है। इसी तरह अन्य कोठों को भी अकों से भर कर लेना है।

इस द्रुत मेरु से इसका पता चलता है कि ९ द्रुतवाले ताल के प्रस्तारों में एक द्रुत प्रस्तार के भेद नीची पक्ति के अंतिम कोठे के लिखे अनुसार २६ है; तीन द्रुतों के प्रस्तार भेद उसके ऊपरवाले कोठे के लिखे मुताबिक ४४ है; उसके ऊपरवाला अक "२७" पाँच द्रुतों के प्रस्तार भेदों का द्योतक है। उसके ऊपरवाला अंक "८" मन्दद्रुत के प्रस्तार भेदों का द्योतक है। उसके ऊपरवाले अंक "१" से नौ द्रुतवाले प्रस्तार के भेद का पता चलता है। इन सबों को जोड़ने पर पानेवाले अक "१०६" से प्रस्तारों के तमाम भेदों का विवरण मिलता है।

आठ द्रुतवाले ताल के प्रस्तारों में, बिना द्रुत के प्रस्तार के जितने भेद हों सकेंगे है उसका द्योतक है नीचेवाली पक्ति का अंक "७"। दो द्रुतों के प्रस्तार भेद, उसके

ऊपरवाले अक “२५” से ज्ञात हो जाते हैं। ऐसे ही चार, छ और आठ द्रुतों के प्रस्तार-भेद, क्रमशः ऊपरवाले अको से अर्थात् २०, ७, १ से क्रमशः पाये जाते हैं। इन सबो को जोड़ने पर मिलनेवाले अक “६०” से प्रस्तारों के कुल भेदों का व्यौरा पाया जाता है। इसी तरह बाकी, ७, ६, ५, ४, ३, २ द्रुतवाले ताल के विभिन्न प्रस्तारों को भी जान सकते हैं।

### लघुमेरु

लघु मेरु नाम की तालिका से इस बात का परिचय होता है कि अमुक मात्रा-काल-वाले ताल के प्रस्तारों में बिना लघु के, एकलघु के, द्विलघु के तथा तीन आदि लघुओं के प्रस्तार कितने होते हैं। उसे बनाने की रीति यह है—

द्रुतमेरु के सामन कोठो को बनाओ। उनमें अको को यों भर दो—

									१
							१	५	१५
				१	४	१०	२०	३९	
		१	३	६	१०	१८	३३	६१	
	१	२	३	४	७	१२	२१	३४	५४
१	१	१	२	३	५	७	१०	१४	२१
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०

प्रत्येक पक्ति के पहले कोठे में “१” अक को लिखो। नीचेवाली पक्ति के कोठों को, अत्य, चतुर्थ और पष्ठ के अधिकांश के अको से भरों। चतुर्थ एव पष्ठ अप्राप्य हैं, तो उनके स्थान पर तृतीय और पचम से काम निकालो। अन्य पक्ति के कोठे में, इन तीनों में, उन-उन पक्तियों की नीचेवाली पक्ति के उपात्य को भी जोड़कर लिखना है। इसमें भी चतुर्थ व पष्ठ के बदले तृतीय और पचम को ले लो। तब नीचेवाली पक्ति के तीसरे कोठे में एक मात्र अंत्याक “१” लिखो।

चौथे	काठ	मे	अत्य	१	।	तृतीय	१	२
पाचवें	"	"	"	२	।	चतुर्थ	१	३
छठ	"	"	"	३	।	"	१	५
सातवें	"	"	"	५	।	"	१	७
आठवें	"	"	"	७	।	"	२	१०
नौवें	"	"	"	१०	।	"	३	१४
दसवें	"	"	"	१४	।	"	५	२१

नीचे से दूसरी पंक्ति के कोठों में—

दूसरे	कोठे	में	अत्य	१	।	नीचेवाली पंक्ति का	उपात्य	१	२
तीसरे	"	"	"	२	।	"	"	१	३
चौथे	"	"	"	३	।	"	"	१	४
पाँचवें	"	"	"	४	।	चतुर्थ	१	नी ५०	२ ७
छठवें	"	"	"	७	।	"	२	"	३ १२
सातवें	"	"	"	१२	।	"	३	"	५ २१
आठवें	"	"	"	२१	।	"	४	"	७ २ ३४
नौवें	"	"	"	३४	।	"	७	"	१० ३ ५४

इसी तरह बाकी पंक्तियों के कोठों का भी भर लीजिए।

### इस लघुमेरु से पाये जानेवाले प्रस्तार-भेद

१० द्रुतवाले ताल के प्रस्तारों में, बिना लघु के प्रस्तार-भेद, नीचेवाली पंक्ति के दाहिने छोर के "२१" में मालूम होते हैं। एक लघुवाले ताल के प्रस्तार-भेदों का द्योतक है उसके ऊपरवाला अंक ५४। द्वाँ लघुवाले ताल के प्रस्तार-भेदों का द्योतक है उसके ऊपरवाला अंक ६१। तीन लघुओं के ताल के प्रस्तार-भेद उसके ऊपरवाले कोठे के अनुसार ३९ हैं। चार लघुओं के ताल के प्रस्तार-भेद उसके ऊपरवाले अंक के अनुसार १५ हैं। पाँच लघुओं के ताल के प्रस्तार-भेदों का द्योतक है उसके ऊपरवाला अंक "१"।

ऐसे ही ९, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २, १ आदि द्रुतवाले ताल के प्रस्तारों के बीच, बिना लघु के, एक लघु के, द्विलघु के तथा दूसरी मध्या के लघुओं के भेदों को गणना सकते हैं। एक द्रुतवाले ताल के प्रस्तार में लघु का रहना असम्भव है। बिना लघु के एक प्रस्तार भेद का द्योतक है "१" अंक यह ध्यान देने योग्य है।

गुरुमेरु

\* गुरुमेरु की नीचेवाली पक्ति से उसकी ऊपरवाली पक्ति ऐसी छोटी की जाय कि जिससे उस पक्ति की बाईं ओर तीन कोठे कम हो जायें। इसी तरह, कम कोठेवाली इस पक्ति की ऊपरवाली पक्ति भी, इसकी अपेक्षा बाईं ओर चार कोठों की कमी से रची जाय।

							१	३	९
			१	२	५	१०	२०	३८	७२
१	२	३	५	८	१४	२३	३९	६५	१०९
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०

इन कोठों में अंक भरने का प्रकार—

हर एक पक्ति की बाईं ओर के कोठों में “१” लिखिए। नीचेवाली पक्ति के दूसरे कोठे में “२” लिखिए। तीसरे आदि कोठों में अत्य, उपात्य और षष्ठ इनके अधिकांश लिखिए। षष्ठ की अनुपस्थिति में पंचम को लीजिए। बाकी पक्तियों के कोठों में, अत्य, उपात्य और षष्ठ के अलावा नीचेवाली पक्ति के चतुर्थीक को भी मिला लीजिए। इनमें षष्ठ की अनुपस्थिति के कारण पंचम को नहीं लेना है।

तब नीचेवाली पक्ति के

तीसरे कोठे में अत्य	२ + उपात्य १ =	३
चौथे     "     "     "	३ +     "     २ =	५
पाँचवे   "     "     "	५ +     "     ३ =	८
छठवे     "     "     "	८ +     "     ५ + पंचम १ =	१४
सातवे   "     "     "	१४ +     "     ८ + षष्ठ १ =	२३
आठवे   "     "     "	२३ +     "     १४ +     "     २ =	३९
नौवे     "     "     "	३९ +     "     २३ +     "     ३ =	६५
दसवे    "     "     "	६५ +     "     ३९ +     "     ५ =	१०९



नीचे से दूसरी पंक्ति में—

दुसरे	कोठे	मे	अत्य	१		नीचेवाली	पंक्ति	का	चतुर्थ	१	२			
तीसरे	"	"	"	२	-	उपात्य	१		नी०	५०	"	"	२	५
चौथे	"	"	"	५		"	२		"	"	"	"	३	१०
पाचवे	"	"	"	१०		"	५		"	"	"	"	५	२०
छठवे	"	"	"	२०	-	"	१०	-	"	"	"	"	८	३८
सातवे	"	"	"	३८	-	"	२०	-	"	"	"	"	१४	—

ऊपरवाली पंक्ति में—

दूसरे कोठे में अत्य १ | नीचेवाली पंक्ति का चतुर्थ २ - ३

तीसरे " " " ३ |- " " " " ५ | उपात्य १ ९

इस तालिका में, प्रत्येक द्रुतवाले तालों के प्रस्तारों के बिना, गुरु के, एक गुरु के, दो गुरुओं के तथा दूसरी सख्या के गुरुओं के प्रस्तार-भेद, क्रम से, तलेवाली पंक्ति के अंक, उसके ऊपरवाले अंक, उसी तरह उसके ऊपरवाले अंक आदि में खोज ले सकते हैं।

**प्लुत मेर**

इसमें नीचेवाली पंक्ति की ऊपरवाली पंक्ति ५ कोठों में, कम कोठेवाली करनी है। उसके ऊपरवाले कोठों की सख्या भी उसकी अपेक्षा छ कोठों की कमी की होनी चाहिए।

											१	३
					१	२	५	१०	२२	४४	८९	७४
१	२	३	६	१०	१८	३१	५५	९६	१६९	२९६	५२०	८१२
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३

इन कोठों में अंक भरने का प्रकार—

प्रत्येक पंक्ति की बाईं ओर के कोठों में "१" लिखिए। नीचेवाली पंक्ति के दूसरे कोठे में "२" लिखिए। पीछे, शेष कोठे अत्य, उपात्य और चतुर्थ को जोड़कर लिखते जाइए। चतुर्थ न पाकर तृतीय को जोड़ देना। बाकी पंक्तियों में, अत्य, उपात्य और चतुर्थ के अलावा नीचेवाली पंक्ति के षष्ठ को भी मिलाकर लिखना है। इनमें चाहे चतुर्थ न मिले, परंतु तृतीय को नहीं मिलाना है।

अब नीचे वाली पक्ति के—

तीसरे	कोठे में अत्य	२ + उपात्य	१ = ३	
चौथे	" " "	३ + "	२ + तृतीय	१ = ६
पाँचवे	" " "	६ + "	३ + चतुर्थ	१ = १०
छठवे	" " "	१० + "	६ + "	२ = १८
सातवे	" " "	१८ + "	१० + "	३ = ३१
आठवे	" " "	३१ + "	१८ + "	६ = ५५
नौवें	" " "	५५ + "	३१ + "	१० = ९६
दसवे	" " "	९६ + "	५५ + "	१८ = १६९
ग्यारहवे	" " "	१६९ + "	९६ + "	३१ = २९६
बारहवे	" " "	२९६ + "	१६९ + "	५५ = ५२०
तेरहवे	" " "	५२० + "	२९६ + "	९६ = ८१२

उसकी ऊपरवाली पक्ति के —

दूसरे कोठे में अत्य	१ +	नीचेवाली पक्ति का षष्ठ	१ = २
तीसरे कोठे में अत्य	२ + उपात्य	१ + नी० पक्ति का षष्ठ	२ = ५
चौथे कोठे में अत्य	५ + उपात्य	२ + नी० पक्ति का षष्ठ	३ = १०
पाचवे कोठे में अत्य	१० + उपात्य	५ + नी० पक्ति का षष्ठ	६ + चतुर्थ १ = २२
छठवे कोठे में अत्य	२२ + उपात्य	१० + नी० पक्ति का चतुर्थ	२ + चतुर्थ १० = ४४
सातवे कोठे में अत्य	४४ + उपात्य	२२ + नी० पक्ति का चतुर्थ	५ + चतुर्थ १८ = ८१
आठवे कोठे में अत्य	८९ + उपात्य	४४ + नी० पक्ति का चतुर्थ	१० + चतुर्थ ३१ = १७४

सबसे ऊपरवाली पक्ति के—

२ रे कोठे में अत्य १ + नीचेवाली पक्ति का षष्ठ २ = ३

### संयोग मेरु

अभीष्ट मात्रा-कालवाले ताल के प्रस्तारों में तरह-तरह के भेद अर्थात्—सर्व-द्रुत, सर्वलघु, सर्वगुरु, सर्वप्लुत, द्रुतलघुवाले, द्रुतगुरुवाले द्रुतप्लुतवाले, लघुगुरुवाले, लघुप्लुतवाले, गुरुप्लुतवाले, द्रुतलघुगुरुवाले, द्रुतलघुप्लुतवाले, द्रुतगुरुप्लुतवाले, लघु-गुरुप्लुतवाले इत्यादि के भेद होने की सम्भावना है। इन भेदों के बारे में कोई यदि पूछे कि अमुक प्रकार का प्रस्तार कौन भेद है, तो इस संयोगमेरु के सहारे उत्तर दे सकते हैं कि यह दूसरा, तीसरा इत्यादि। इसकी रचना ऊपर से नीचे की कोठेवाली पक्ति-श्रेणियों से होती है। शुरू में, हमारे अभीष्ट ताल की कालमात्रा के द्रुतों की संख्या तक, ऊपर से नीचे की ओर १, २, ३ इत्यादि लिखते जाएँ। बगलवाली, ऊपर से नीचे की, चारों पक्तियों में भी उसके समानसंख्याक कोठे बना लीजिए। परंतु,



ऊपर से नीचे की ओर पहली चार पक्तियों की पहली पंक्ति के कोठों में हमारे अभीष्ट ताल के सर्वद्रुत भेदों की सख्या, दूसरी पक्ति के कोठों में, सर्वलघु भेदों की सख्या, तीसरी पक्ति के कोठों में सर्वगुरु भेदों की सख्या और चौथी पक्ति के कोठों में सर्वप्लुत भेदों की सख्या पायी जाती है। प्रत्येक पक्ति में किन-किन अगो के भेद दिखाये जाते हैं, इसकी याद दिलाने के निमित्त, उनको पक्तियों के ऊपर लिखना चाहिए। पाँचवी पंक्ति द्रुतलघु-मिश्रित भेदों की सख्या की द्योतक है। छठी पक्ति द्रुतगुरु-मिश्रित भेदों की सख्या की द्योतक है। सातवी पक्ति से द्रुत-प्लुत मिश्रित भेदों की जानकारी होती है। आठवी पक्ति से लघु-गुरु मिश्रित भेदों का बोध होता है। नौवी पक्ति लघु-प्लुत मिश्रित भेदों की बोधक है। दसवी पक्ति गुरुप्लुत-मिश्रित भेदों का बोध कराती है। ग्यारहवी पक्ति द्रुतलघुगुरु मिश्रित भेदों की और तेरहवी पक्ति द्रुतगुरुप्लुत मिश्रित भेदों की द्योतक है।

इन पक्तियों के कोठों में अक भरने की विधि—

पहली पक्ति के सर्वद्रुत भेद एक ही होने से पहले कोठे में “१” लिखो। दूसरी पक्ति के आद्य कोठे में शून्य और दूसरे कोठे में “१” लिखो। तीसरी पंक्ति के आद्य तीन कोठों में शून्य और चौथे कोठे में “१” लिखो। चौथी पंक्ति के पहले पाँच कोठों में शून्य और छठवें कोठे में “१” लिखो। पहली चार पक्तियों के दूसरे कोठों में क्रम से, द्रुत की पक्ति हो तो अत्याक, लघु की हो तो उपात्यांक, गुरु की हो तो चतुर्थाक तथा प्लुत की हो तो षष्ठाक लिखो।

दो-दो अगो से मिश्रित इकाइयों की पक्तियों में अक भरने की विधि—

प्रत्येक इकाई के द्रुत, लघु, गुरु और प्लुत के लिए उसी पक्ति के अत्य, उपात्य, चतुर्थ और षष्ठ को एव पहली चार पक्तियों के अत्य, उपात्य चतुर्थ और षष्ठ के अको को क्रम से मिला लेना है। वैसे, आद्य ४ पक्तियों से अक लेते समय, इकाई के अगों के लिए जां-जो अक-अत्य, उपात्य, चतुर्थ या षष्ठ का अक—नियत है उसको बदल कर लेना चाहिए। उदाहरणार्थ द्रुतलघु-इकाई की पंक्ति में अक इस प्रकार भरना है—

पहले, उसी पक्ति के अत्य को द्रुत के लिए एव लघु के लिए उपात्य को लेना चाहिए। उनके साथ द्रुत और लघु की पक्तियों से भी कई-एक अक जोड़ लेना है। द्रुत व लघु के लिए जो अंत्य तथा उपात्य अंक नियत थे, उनके बदले द्रुतपक्ति के उपात्य और लघुपंक्ति के अत्य को लेना है।

द्रुतगुरु की इकाई की पक्ति में अक भरने की विधि—

पहले, द्रुत के लिए उसी पक्ति के अत्य और गुरु के लिए चतुर्थ को मिला लेना है।

उनके साथ द्रुत और गुरु की पवितरों से भी जोड़ लेने के कर्त्तव्य-एक एक है। द्रुत एवं गुरु के लिए नियत अत्य और चतुर्थ के बदले द्रुतपवित के चतुर्थ तथा गुरुपवित के अत्य को लेना चाहिए। इसी तरह, दूसरी इकाइयों के नियम भी यों ही जान लेना है। तब, आगे लिखे अनुसार अक का पूरण होगा।

# द्रुतलघु-ईकाई

उसी पक्ति के		पहली चार पक्तियों के		लघु-पंक्ति का अंश	
पहले	कोठे में	अंश	उपांश	द्रुत-पंक्ति का उपांश	लघु-पंक्ति का अंश
दूसरे	"	नहीं	नहीं	१	१
तीसरे	"	२	"	१	०
चौथे	"	३	२	१	१
पाँचवें	"	७	३	१	०
छठे	"	११	७	१	११
सातवें	"	२०	११	१	२०
आठवें	"	३२	२०	१	३२
	"	५४	३२	१	५४
	"			१	८७

इसी तरह इस पक्ति के अन्य कोठों में भी अंक भरना है।

अनुबन्ध ३३

# द्रुतगुरु-ईकाई

उसी पक्ति के		पहली चार पक्तियों के		गुरु-पंक्ति का अंश	
पहले	कोठे में	अंश	चतुर्थ	द्रुत-पंक्ति का चतुर्थ	गुरु-पंक्ति का अंश
दूसरे	"	नहीं	नहीं	१	१
तीसरे	"	२	"	१	०
चौथे	"	३	"	१	०
	"	४	"	१	०

४३

पाँचवें	"	"	५	+	२	—	१	१	१
छठे	"	"	१	+	३	—	१	०	०
सातवें	"	"	१३	—	४	—	१	०	०
आठवें	"	"	१८	—	५	—	१	०	०
नौवें	"	"	२४	—	९	—	१	१	३

## संगीत शास्त्र

पहले	कोठे में	अंत्य नहीं	उम्मी	पक्वित के	द्रुत-प्लुत-इकाई	द्रुत-पक्वित का बढ	पहली चार पक्वित के	प्लुत-पक्वित का अंत्य
पहले	कोठे में	अंत्य नहीं	उम्मी	पक्वित के	द्रुत-प्लुत-इकाई	द्रुत-पक्वित का बढ	पहली चार पक्वित के	प्लुत-पक्वित का अंत्य
दूसरे	" "	०	—	—	—	—	—	०
तीसरे	" "	२	—	—	—	—	—	२
चौथे	" "	३	—	—	—	—	—	३
पाँचवें	" "	४	—	—	—	—	—	४
छठवें	" "	५	—	—	—	—	—	५
सातवें	" "	६	—	—	—	—	—	६
आठवें	" "	७	—	—	—	—	—	७
	" "		+	+	+	+	+	११

लघुगुरु-इकाई

पहले	कोठे	मे	उपांत्य	उसी पक्ति के	चतुर्थ	लघु-पंक्ति का चतुर्थ	पहली चार पक्तियों के	गुरु-पंक्ति का उपांत्य	
पहले	कोठे	मे	उपांत्य	उसी पक्ति के	चतुर्थ	लघु-पंक्ति का चतुर्थ	पहली चार पक्तियों के	गुरु-पंक्ति का उपांत्य	
दूसरे	"	"	नही	+	नही	१	+	१	२
तीसरे	"	"	"	+	"	०	+	०	०
चौथे	"	"	२	+	"	१	+	०	३
पाँचवें	"	"	०	+	"	०	+	०	०
छठवें	"	"	३	+	२	१	+	१	७
सातवें	"	"	०	+	०	०	+	०	०
आठवें	"	"	७	+	३	१	+	०	११
	"	"	०	+	०	०	+	०	०

अनुबन्ध ३

लघु-प्लुत-इकाई

पहले	कोठे	मे	उपांत्य	उसी पक्ति के	षष्ठ	लघु-पंक्ति का षष्ठ	पहली चार पक्तियों के	प्लुत-पंक्ति का उपांत्य	
पहले	कोठे	मे	उपांत्य	उसी पक्ति के	षष्ठ	लघु-पंक्ति का षष्ठ	पहली चार पक्तियों के	प्लुत-पंक्ति का उपांत्य	
पहले	कोठे	मे	उपांत्य	उसी पक्ति के	षष्ठ	लघु-पंक्ति का षष्ठ	पहली चार पक्तियों के	प्लुत-पंक्ति का उपांत्य	
दूसरे	"	"	नही	+	नही	०	+	०	०
तीसरे	"	"	"	+	"	१	+	१	२
चौथे	"	"	०	+	"	०	+	०	०
	"	"	२	+	"	१	+	०	३

४१७



पाँचवें	"	"	०	+	०	+	०	=	०
छठे	"	"	३	+	१	+	०	=	१
सातवें	"	"	०	+	०	+	०	=	०

## गुरु-प्लुत-इकाई

	उम्मी पंक्ति के		गुरु-पंक्ति का षष्ठ		पहली चार पंक्तियों के		प्लुत-पंक्ति का चतुर्थ	
	कोठे में	चतुर्थ नही	षष्ठ	नही	गुरु-पंक्ति का षष्ठ	प्लुत-पंक्ति का चतुर्थ		
पहले	"	"	—	—	०	—	०	=
दूसरे	"	"	—	—	०	—	०	=
तीसरे	"	"	—	—	०	—	०	=
चौथे	"	"	—	—	१	—	१	=
पाँचवें	"	"	—	—	०	—	०	=
छठे	"	"	—	—	०	—	०	=
सातवें	"	"	—	—	०	—	०	=

तीन अंगों की इकाई की पंक्तियों में अक भगाने के लिए पहले उन अंगों की नियत पंक्ति के अन्त्य, उपान्त, चतुर्थ और षष्ठको को मिला लेना है। पीछे, इकाई के अंगों को जोड़े-जोड़े के रूप में गेँसे लेकर मिलाना है जैसे दो अंगों की इकाई के, पहली चार पंक्तियों के अन्त्य, उपान्त, चतुर्थ और षष्ठको बदलकर लिये गये हैं। अर्थात्—बड़े अंगों की इकाई की अत्य और उपान्त पंक्तियों में आद्याक को तथा छोटे अंगों की इकाई में अत्याक को जोड़ लेना है।

द्रुतलघुगुरु-इकाई

उसी पंक्ति के		दो अगो की इकाई के	
अंत्य	उपांत्य	अंत्य	उपांत्य
कोठे में	नही +	कोठे में	नही +
पहले	नही +	पहले	नही +
दूसरे	६ +	दूसरे	६ +
तीसरे	१२ +	तीसरे	१२ +
चौथे	३२ +	चौथे	३२ +
पाँचवें	६० +	पाँचवें	६० +
छठवें	१३४ +	छठवें	१३४ +
सातवें	२५१ +	सातवें	२५१ +

द्रुतलघुप्लुत-इकाई

उसी पंक्ति के		दो अगो की इकाई के	
अंत्य	उपांत्य	अंत्य	उपांत्य
कोठे में	नही +	कोठे में	नही +
पहले	नही +	पहले	नही +
दूसरे	६ +	दूसरे	६ +
तीसरे	१२ +	तीसरे	१२ +
चौथे	३२ +	चौथे	३२ +
पाँचवें	६० +	पाँचवें	६० +

## दुतगुरुप्लुत-इकाई

उमी पक्ति के		दो अंगों की इकाई के	
अंत्य	चतुर्थ	षष्ठ	गुरुप्लुत-पंकित का अंत्य
पहले	कोठे में नहीं	नहीं	दुतप्लुत-पंकित का चतुर्थ
दूसरे	" " " "	" "	दुतगुरु-पंकित का षष्ठ
तीसरे	" " " "	" "	

## लघुगुरुप्लुत-इकाई

उमी पक्ति के		दो अंगों की इकाई के	
उपांत्य	चतुर्थ	षष्ठ	गुरुप्लुत-पंकित का उपांत्य
पहले	कोठे में नहीं	नहीं	लघुप्लुत-पंकित का चतुर्थ
दूसरे	" " " "	" "	लघुगुरु-पंकित का षष्ठ

इसी रीति से दूसरे कोठो का पूरण कर सकते हैं। चार अगो की इकाइयो में, अक भरने के लिए, पहले, उसी पक्ति के उन अगो के नियत अत्य, उपात्य, चतुथ और षष्ठाको को मिला लेना है। बाद में, उन-उन इकाइयो के अगो को तीन-तीन करके मिलाना। उन तीन अगो की इकाइयो की नियत-पक्ति की बड़े अगवाली इकाई की अत्य व उपात्य श्रेणियों के आद्याक को एव छोटे अगवाली इकाई में अत्याक को जोड़ ला।

### द्रुतलघुगुरुप्लुत-इकाई

उसी पंक्ति के

३ अगों की इकाई के

अ	ल	च	ष	लघुगुरुप्लुतपक्ति का अत्य	द्रुतलघुगुरुप्लुतपक्ति का उपात्य	द्रुतलघुगुरुप्लुतपक्ति का चतुर्थ	द्रुतलघुगुरुप्लुतपक्ति का षष्ठ
+	+	+	+	+	+	+	+
पहले कोठे में		नहीं		६	६	६	६ = २४

### खंडप्रस्तार

यह तालिका ही द्रुतमेरु के रूप में नीचे बनायी गयी है जो अभीष्ट मात्राकालवाले ताल के, प्लुत, गुरु, लघु और द्रुत जैसे अगो सहित, प्रस्तारो को क्रमशः लिखने पर, उनमें से बिना द्रुत के द्विद्रुत के तथा चतुर्द्रुत आदि के प्रस्तार भेदों की एव एकद्रुत के त्रिद्रुत के और पंचद्रुत आदि के प्रस्तार भेदों की सख्या को जान लेने में काम आनेवाली है। इसी प्रयोजन के लिए, लघुमेरु, गुरुमेरु प्लुतमेरु आदि की रचना हुई है।

अब प्रस्तार रचते समय, बिना द्रुत के, एकद्रुत, द्विद्रुत, त्रिद्रुत आदि के, एवं बिना लघु के, एकलघु आदि के समस्त प्रस्तार क्रमशः कैसे लिखे जायें और ऐसे ही प्रकार गुरु और प्लुतों के प्रस्तारों की रचनामात्र कैसी की जाय, यह बात अवशिष्ट रह गयी है। इसे रचकर दिखाने की रीति का नाम है खंडप्रस्तार।

### खंड प्रस्तार बनाने की विधि

अभीष्ट मात्राकालवाले द्रुत, लघु, गुरु या प्लुतों से युक्त केवल इच्छित प्रस्तारों को क्रमशः लिखिए। उनके बीच अन्य जाति के प्रस्तार आ जायें तो, पहले लिखने योग्य नीचे के अग को छोड़कर, उसके न्यूनाग को एव उसकी दाहिनी ओर के अग की नीची श्रेणी को लिखने की विधि को प्रयोग में लाना चाहिए। ऐसे करके, दाहिनी ओर के ऊपरवाले अगो को लिखने के बाद, कमी को पूरा करने के लिए, बाई ओर

लिखे जानेवाले अंगों को, इच्छित संख्यावाले द्रुत आदि जैसे लिखने पर स्थान पायें, वैसे लिखना चाहिए।

उदाहरणार्थ एक प्लुतमात्रावाले ताल के प्रस्तार को लीजिए। पहले केवल बिना द्रुत के प्रस्तारों को लिखें। तब प्रस्तारों का पहला भेद “S” ; उसके नीचे का दूसरा प्रस्तार “। S” हम, क्रम से, प्रस्तार करते जायें तो लघु के नीचे “०” लिखना पड़ेगा। पर, हमें तो वे ही प्रस्तार चाहिए, जिनके रूप में द्रुत ही न आये। इसलिए लघु के नीचे द्रुत न लिखकर उसकी दाहिनी ओर के गुरु के नीचे लघु लिखना चाहिए। अब की कमी को पूरा करने के लिए केवल एक गुरु लिखें, तो प्रस्तार का रूप “। S” होगा। आगे का प्रस्तार, गुरु के नीचे लघु, उसकी दाहिनी ओर ऊँचेवाले लघु का प्रतिरूप एक लघु और कमी के पूरणार्थ बाईं ओर एक और लघु लिखकर बना सकते हैं। अर्थात् प्रस्तार का रूप “।।।” होगा। इसमें प्रस्तार की रचना समाप्त कर लेनी पड़ती है, क्योंकि आगे के प्रस्तार की रचना में द्रुतहीन होने का अवकाश नहीं है। अतः हमने बिना द्रुत के चार प्रस्तार पाये हैं। द्रुतमेरु की तालिका में, जो बात लिखी हुई है कि ६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में बिना द्रुत के चार ही प्रस्तार होंगे, वह सच्ची निकली।

इसी तरह, द्विद्रुत-प्रस्तार की रचना करनी पड़ती है, तो प्रत्येक प्रस्तार में दो द्रुत होने चाहिए। तब, पहला प्रस्तार “००S” होगा। पहले प्रस्तार के द्रुत के नीचे लघु लिखिए। न्यूनता-पूर्ति-निमित्त गुरु का प्रयोग न करके, एक लघु और उसके पार्श्व में दो द्रुत लिखिए। लीजिए, अब हुआ दूसरा प्रस्तार “००।।” तीसरे प्रस्तार में, लघु के नीचे द्रुत लिखो। दाहिनी ओर के लघु को ज्यों-का-त्यों उतार कर लिखो। कमी के पूरणार्थ एक लघु और एक द्रुत लिख सकोगे। तीसरा प्रस्तार हुआ है ०।०।, चौथा प्रस्तार १००।, पाँचवाँ प्रस्तार ०S०, छठा प्रस्तार ०।।०, सातवाँ प्रस्तार १०।०, आठवाँ प्रस्तार S००, नौवाँ प्रस्तार १।००,

आगे, प्रस्तार कर जायें तो, ज्यादा दो द्रुतों के प्रस्तार ही अवश्य आ पड़ेंगे। इससे यह मालूम पड़ता है कि हमें अभीष्ट इस खंड-प्रस्तार में नौ ही द्विद्रुत-प्रस्तार मिलेंगे। द्रुतमेरु की तालिका में भी इसे भली-भाँति समझ सकते हैं। इसी तरह, दूसरे प्रस्तार भी लिखने योग्य है।

### द्रुतमेरु का नष्ट—१

द्रुतमेरु की तालिका द्वारा, बिना द्रुत के तथा एक, दो, तीन आदि द्रुतों के प्रस्तार-भेदों की संख्या हमें मिलती है। उन भेदों के बीच, किसी भेद के बारे में यदि कोई पूछे,

कि अमुक भेद कैसा है, तब उत्तर देना पड़ता है। इसी प्रश्नोत्तर का नाम है द्रुतमेरु का नष्ट। इसे खोज लेने की विधि यो है—

### नीचे से पहली पंक्ति में

(अ) समसंख्यक द्रुतवाले कोठों के निर्दिष्ट-भेदों का नष्ट प्रश्न—

अभीष्ट भेद की पंक्ति-संख्या को निर्दिष्ट कोठे के अक से, पहले घटाओ। घटने पर बाकी जो रहा उससे, उस कोठे के ऊपरवाले तीसरे कोठे के अक को घटाओ। घटे तो अभीष्ट भेद एक गुरु मिला; अन्यथा एक लघु मिलेगा शेषाक से, पाँचवे कोठे के अक को घटाओ। घटा, तो पहले मिला हुआ गुरु प्लुत हो जाता है। पहले लघु मिला हो तो उससे एक गुरु ही मिलेगा। घटित न होने पर, पहले लघु मिला हो तो उससे एक और लघु मिलेगा। गुरु की प्राप्ति पहले हुई तो, अब घटने की क्रिया न होने से कुछ की भी प्राप्ति नहीं। इतने में ही, ताल के मात्रा-काल के आवश्यक अंग मिल गये तो यही रुकना चाहिए। यदि, आगे, घटा देने के लिए शेषाक कुछ भी न पाने पर, मात्रा-काल के आवश्यक भी अंग न प्राप्त हुए, तो उस कमी को लघुओं से पूरा करना चाहिए। यदि अंग पूरे न हो और अक भी शेष रहे तो, पाँचवें कोठे को अत्य वनाकर उसके तीसरे एव पाँचवे के अको को, पहले कहे अनुसार घटाओ। जहाँ तक शेष पाओ आवश्यकतानुसार यों ही घटाओ।

उदाहरणार्थ, आठ द्रुतवाले ताल के, बिना द्रुत के प्रस्तारों को लीजिए। उनकी संख्या “७”, द्रुत-मेरु की नीचेवाली पंक्ति से स्पष्ट प्रतीत होती है। उनमें से पहले, प्रस्तार के रूप के बारे में प्रश्न किया जाता है, तो शुरू में, ७ में से १ को घटाओ। बाकी रहा ६। उस अक ६ से, तृतीय कोठे के “४” को घटा देने पर शेष हुआ २। घटने के कारण मिला एक गुरु। अब के शेषाक “२” से पाँचवें अक “२” को घटाने पर बच जाता है शून्य। पंचम के भी घटने के कारण पहले का मिला हुआ गुरु प्लुत हो जाता है। कुछ भी शेष बचा नहीं; पर तालमात्रा के अंगों की कमी तो रह गयी है। इसलिए इसके पूरणार्थ बाईं ओर एक लघु को मिला लेना। ऐसा करने पर पहला प्रस्तार १ हुआ।

दूसरे प्रस्तार की जानकारी के लिए “७” से “२” को घटाकर शेष अक “५” से तृतीयाक “४” को घटा देने पर बाकी रहा “१” अक। घटित होने से मिला एक गुरु। अब के शेषाक “१” से पंचमाक “२” को घटा देने की गुंजाइश नहीं, इसलिए किसी की भी प्राप्ति न होगी। इस अवस्था में, तालाग भी पूर्ण निकले नहीं, अक भी शेष रह गये हैं। इसलिए, पंचम को अत्य वनाकर उसके तृतीयाक “१” को घटाने

पर शून्य शेष हुआ है। घटाने से एक और गुरु मिला, तालाग भी पूर्ण हुआ। इससे दूसरा प्रस्तार ५५ हुआ है। ऐसे ही दूसरे भेदों को समझ लेना चाहिए।

(आ) विषमसंख्याक द्रुतवाले कोठों के निदिष्ट भेदों का नष्ट-प्रश्न।

इसको जानने के लिए, सर्वप्रस्तार के नष्ट-प्रकरण में जो गीति कह आये हैं उसमें काम लेना चाहिए। उसके अनुसार, पहले अत्याक से नष्ट का घटाने पर जो अंक बच जाता है उसमें अत्याक के पूर्वांकों को क्रमशः घटात जायें। घटाता लघु मिलेगा, नहीं तो द्रुत मिलेगा, साथ-साथ दो अंक घटे, तो गुरु मिलेगा, गुरु के मिलने बाद उसका तीसरा अंक भी घटा, तो गुरु प्लुत हो जाता है। लघु की प्राप्ति के बाद (पहला) एक अंक न घटकर द्रुत प्राप्त हुआ हो तो भी उसे मत लेना। प्लुत एवं गुरु इन दोनों की प्राप्ति के बाद, दो अंक न घटे हो तब भी उनमें प्राप्त होनेवाले द्रुतों को मत लेना। सर्वप्रस्तार की रीति में, नष्ट की खोज करने समय एक द्रुत मिल गया तो, उसके आगे इस विधि से काम करना है कि जो द्रुतमेरु के समसंख्याक पवित्र के कोठों के नष्टान्वेषण के योग्य हुई हो। उदाहरणतया, ७ द्रुतमात्रावाले ताल के एक-द्रुत प्रस्तारों को लीजिए। द्रुतमेरु की तालिका में यह जाना जाता है कि वे प्रस्तार १२ हैं। इनके पहले प्रस्तार-भेद के बारे में प्रश्न किया है, तो उत्तरनिमित्त “१२” में नष्ट “१” को घटाना। तब शेष ११ हुआ। उस शेषांक “११” में उसके पूर्वांक “४” को घटाने पर “७” शेष हुआ। घटने के कारण मिलता है एक लघु। उस अंक “७” से पूर्वांक “५” को घटाओ। तब “२” बच जाता है, और एक लघु की प्राप्ति के कारण लघु गुरु हो जाता है। उस शेषांक “२” में तीसरे अंक “२” को घटा देने पर शेष रहा शून्य। और लघु के मिलने में गुरु प्लुत के रूप में बदल जाता है। कमी के पूरणार्थ सिर्फ एक द्रुत को जोड़ देना। अब यह रूप ० ५ पहले भेद का है।

दूसरा उदाहरण—पूर्वाक्त (विषम) कोठों के भेदों के बीच कोई पूछे कि ११ वाँ भेद कैसा है, तो उसे जान लेने के लिए “१२” में नष्टांक “११” को घटाना है। शेष हुआ “१”। इससे पूर्वांक “४” को घटाना असम्भव है। इसलिए एक द्रुत मिला। द्रुत-प्राप्ति के कारण, भेद के दूसरे अंगों की जानकारी के लिए समसंख्याक पक्तियों की पद्धति का प्रयोग करना है। “४” को अंत्य बनाकर उसके तृतीयांक “२” को “१” से घटाना है, परन्तु यह भी असम्भव है। इससे एक लघु की प्राप्ति हुई। इसके बाद, पंचमांक “१” को “१” से घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने में गुरु मिला। अन्ततः ११ वाँ भेद ५ १० हुआ। इसी तरह, अन्य विषमसंख्याक कोठों के नष्ट की जानकारी भी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

## नीचे वाली पंक्ति से अन्य पंक्तियों में

इन कोठो के नष्ट को खोज लेने के लिए, नीचे से पहली पंक्ति के समसख्याक द्रुतकाल के कोठो के बारे में जिस रीति का प्रयोग किया गया है, उसके अनुसार तृतीय पञ्चमाको को घटाना है। साथ ही उपात्य के नीचेवाले अक को भी घटा देना है। घटे, तो लघु मिलेगा। नहीं तो द्रुत मिलेगा। प्रस्तार के अग पूर्ण न हों और अक स्वयं भी रह जाते हो, तो पञ्चम को अत्य बनाकर फिर, पहली रीति के अनुसार, घटाकर जाना है। अत्य हो जानेवाला पञ्चम, विषमसख्याक द्रुतपंक्ति में रहे तो, नीचेवाली पंक्ति के विषमसख्याक प्रभेद और समसख्याक द्रुतपंक्ति में रहता तो उसी पंक्ति के (नीचेवाली) समसख्याक प्रभेद के अनुसार घटाने की क्रिया करना है।

उदाहरण—द्रुतमेरु-तालिका से यह समझा जाता है कि ६ द्रुतमात्राकालवाले ताल के प्रस्तारो में द्विद्रुत के भेद ९ है। उनमें से यदि कोई पूछे कि पहला भेद कौन है तो उसे समझा देने के लिए पहले, ९ से नष्टाक “१” को घटाओ। शेष ८ हुआ उससे उसके उपात्य “५” को घटाने पर बाकी हुआ “३”। घटाने से एक लघु मिला। “३” से तृतीयाक “३” को घटाने पर बाकी शून्य हुआ। घटने के कारण लघु गुरु हुआ। घटाने के लिए बाकी अक न रहने के कारण तालाग की कमी के पूरणार्थ “२” द्रुतो को जोड़ लो। अब पहला भेद ००५ सिद्ध हुआ है।

### द्रुतमेरु का उद्दिष्ट—२

नष्ट प्रश्न में, जिन अको के घटित होने के कारण हमें तालाग मिले थे उन्हीं सारे अको को एक-साथ जोड़कर प्रस्तार सख्या से घटाने पर भेद (अभीष्ट) की क्रम-सख्या प्राप्त होती है।

## नीचे से पहली पंक्ति में

(अ) समसख्याक द्रुतवाली पंक्ति के कोठो का उदाहरण—

८ द्रुतमात्रावाले ताल-प्रस्तारो के बीच, बिना द्रुत के भेदों में ॥५ रूपवाले भेद की क्रमसख्या क्या है? इसे जानने के लिए प्रस्तार के आदि अग गुरु की प्राप्ति कैसी हुई होगी—यह समझ लेना है। गुरु होने के कारण, तृतीयाक “४” के घटित होने से प्राप्त होना चाहिए। इसलिए उसे लेना चाहिए। लघु तो जो अंक न घटे होंगे उनसे मिले हैं। इसी कारण उसके मूलभूत अको को मत लो। तदनन्तर समग्र भेदों की सख्या “७” से “४” को घटाने पर बाकी “३” बचा। इससे यह जाना जाता है कि अभीष्ट प्रस्तार बिना द्रुत के प्रस्तारो के तीसरे भेद का है।



(आ) विषममस्याक द्रुतवाली पंक्ति के कोठों का उदाहरण—

७ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों के बीच एकद्रुत के भेदों की संख्या है “१२”। उनके बीच ०।।।। रूपवाले भेद की क्रम-संख्या जान लेना है, तो सर्वप्रस्तार के उद्दिष्ट-मार्ग की विधि का अनुसरण करना है। प्रस्तार का पहला अंग तो लघु है। इसकी प्राप्ति उपात्याक “४” के घटने के कारण मिली होनी चाहिए। उसके पार्श्व में दूसरा लघु है। इसकी प्राप्ति का कारण भी वही होना चाहिए कि त्रिच में एक अंक न घटने वाला अवश्य रहा होगा। वैसा न हुआ होता तो पहले का लघु, गुरु के रूप में अवश्य परिणत हो चुका होता। इसी कारण उपात्य के पूर्वांक को (५ को) बढ़ देना पड़ता है, परंतु उसके पूर्वांक दो को ले लेना है। बाद में और एक लघु है। पहले कहे अनुसार पंचमाक (२) को छोड़कर, इस लघु के लिए, पष्ठाक “१” को मिला लेना है। इसके बगलवाले द्रुत की प्राप्ति एक अघटित-अंक से होनी चाहिए। अतः इस द्रुत के कारण किसी भी अंक को मत लेना। अन्ततः, जो अंक घटे हैं उनको—अर्थात् ४, २, १ को जोड़कर प्राप्तांक ७ को सारे भेदों की संख्या “१२” से घटाने पर शेष हुआ “५”। यही शेषांक “५” एकद्रुत के प्रस्तार-भेदों के बीच अभीष्ट-प्रस्तार की क्रम-संख्या का बोधक है।

नीचेवाली पहली पंक्ति के अलावा अन्य पंक्तियों के कोठे का उदाहरण—

६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में, द्विद्रुत के प्रस्तार-भेद है ९। उनके बीच ० ० ५ वाले रूप की क्रम-संख्या क्या है, यह खोज लेना है।

इस भेद का पहला अंग है गुरु। साथ-साथ दो अंकों के घटने में यह गुरु प्राप्त होना चाहिए। यानी उपात्य का नीचेवाला अंक “५” और तृतीयाक “३” घटे हैं; इसलिए उनको लेना है। उस गुरु के बगलवाले दो द्रुत न घटे हुए अंगों से प्राप्त हैं, अतः इनके लिए किसी अंक को लेने की गुंजाइश नहीं। अब घटा हुआ अंक “५” और “३” को जोड़कर कुल-संख्या “९” से घटाने पर बाकी हुआ १। इस शेषांक से यह जाना जाता है कि ६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में, द्विद्रुत के भेदों के बीच निर्दिष्ट-भेद पहले प्रकार का है।

### लघुमेरु का नष्ट

नीचे से पहली पंक्ति में—

इस पंक्ति के कोठों में, बिना लघु के ही भेदों के अंक निर्दिष्ट है। इसके नष्ट को समझ लेने के लिए अत्यांक से नष्ट-प्रश्न की संख्या को घटाकर बचे हुए शेषांक से उसके पहले कोठों के अंकों को क्रमशः घटाते जाइए। अंक, यदि, न घटे, तो द्रुत मिलेगा

घटे तो गुरु मिलेगा। घटे हुए एक से एक गुरु मिलने पर उसके पार्श्ववर्ती एक या दो अक, चाहे घटे ही, परन्तु उसके लिए द्रुतो को न मिलाया जाय। एक गुरु की प्राप्ति के बाद एक या दो बगलवाले अक न घटे और उसके पार्श्व का अक घटता हो तो, पहले प्राप्त गुरु प्लुत हो जायेगा। दो अको से अधिक के तीसरा अक भी न घटकर चौथा अक घटता हो, तो एक और गुरु मिलेगा।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारो में, बिना लघु के भेद ५ है, यह लघुमेरु की तालिका से जाना जाता है। अब यदि कोई पूछे कि इनमें से तीसरा भेद कौन-सा है, हम इसका इसी रीति से उत्तर देगे।

पहले, भेदों की कुल-संख्या “५” से नष्ट प्रश्नाक “३” को घटाने पर प्राप्त शेषाक “२” से, पाच के पहलेवाले अंक “३” को घटाना है। यह संभव नहीं, इस-लिए एक द्रुत मिला। बाद में, उसके पूर्वाक “२” को “२” से घटाने पर बाकी रहा शून्य। घटने से मिलता एक गुरु। तालाग पूर्ण न होने के कारण, कमी की निवृत्ति के लिए एक द्रुत को जोड़ लो। ऐसा हुआ तीसरा भेद ० ५ ०।

नीचे से पहली के बिना अन्य पक्तियों में—

पहले, भेदों की सारी संख्या से नष्टाक को घटा करके, पीछे द्वितीय एवं तृतीय के नीचेवाले अक और पचमाक को घटा लेना है। ऐसे घटाते समय, न घटने वाले अक से द्रुत और घटनेवाले अक से लघु मिलेगा। एक लघु मिल गया तो उसके बाद घटाने योग्य-अको को उसकी नीचेवाली पंक्ति से लेना चाहिए। ऐसा करते समय उस नियम को निभाना है, जो नीचेवाली पंक्ति के लिए नियत है। अग पूर्ण न होकर, घटाने के लिए अंक भी यदि बच रहे तो पहले कहे अनुसार फिर, पंक्ति-क्रम से घटाते जाइए। अक बाकी न हो, तो कमी का आवश्यक लघुओं से, पूरण कर लेना है। यह सगीतरत्नाकर के भाग से (५ वाँ अध्याय, श्लोक ३९८-४०१) लिया गया है। परन्तु इस विधि पर, बिना अदल-बदल किये, चलने से नष्ट-भेद का सच्चा रूप ठीक-ठीक नहीं प्राप्त होता। कल्लिनाथ और सिंहभूपाल—इन टीकाकारों की टीका के अनुसार भी अभीष्ट-भेद का रूप प्राप्त नहीं होता।

### गुरुमेरु का नष्ट

नीचे से पहली पंक्ति में—

पहले, समग्र भेदों की संख्या से नष्टाक को घटा कर, पीछे उसके पूर्ववर्ती अकों को, सर्वप्रस्तार के नष्ट को घटाने की भाँति क्रमशः घटाते जाइए। इसमें विशेषता यह है कि घटाते समय प्राप्त होनेवाले गुरु को प्लुत में बदल कर लेना है।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में बिना गुरु के भेद “१४” है, यह प्लुतमेरु की तालिका से ज्ञात होता है। उनमें पहला भेद कौन सा है? यह प्रश्न पूछा जाय, तो इसका जवाब इसी रीति पर दिया जायेगा।

पहले गारे भेदों की संख्या “१४” में नष्टांक “१” को घटाने पर शेष हुआ “१३”। इससे “१४” के पूर्वांक “८” को घटाओ। बाकी हुआ “५”; घटाने की क्रिया होने के कारण मिला लघु। शेषांक से पहला अंक “५” घटित हुआ, केवल शून्य बच गया। इस बार पहले प्राप्त लघु गुरु हुआ। विशेष विधि के अनुसार गुरु को प्लुत करके बदल लेना है अब हुआ पहला भेद ५

नीचे से पहली के अलावा अन्य पक्तियाँ में—

- यहाँ उसी विधि का अनुसरण करना चाहिए, जो लघुमेरु की नीचेवाली पहली पक्ति के अलावा अन्य पक्तियों में नष्ट की खोज के लिए अनुगत की गयी है। लेकिन यहाँ, तृतीय के नीचेवाले अंक के बदले, उसी पक्ति के तृतीयांक का लेना चाहिए। उसी पक्ति के पचम के बदले पचम के नीचेवाले अंक का लेना है। अग पूर्ण न हुए हों तो, गुरु से पूर्ति कर लेनी चाहिए।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में एकद्रुतभेद “५” है तो पहला भेद क्या है? इसका उत्तर देंगे। “५” में नष्टांक “१” को घटाने पर शेष “४” हुआ। शेषांक से पूर्वांक “२” को घटाने से यह अंक “२” बचा तथा एक लघु मिला। “२” से तृतीयांक “१” को घटाने पर शेष हुआ “१” और पहले प्राप्त लघु गुरु हुआ। “१” से पचम के नीचेवाले अंक “२” को घटाना संभव नहीं; इसलिए कुछ भी न मिला। पीछे, “२” के पूर्वांक “१” को घटाने से केवल शून्य बचा। इससे एक लघु की प्राप्ति हुई। अन्ततः पहला भेद १५ हुआ है।

### प्लुतमेरु का नष्ट

नीचे से पहली पक्ति में—

इसके लिए सर्वप्रस्तार के नष्ट की रीति के अनुसार क्रमशः घटाते हुए आगे बढ़ाना है।

उदाहरण—६ द्रुतमात्रावाले ताल के प्रस्तारों में बिना प्लुत के भेद “१८” है, यह प्लुतमेरु की तालिका से ज्ञात होता है। यदि कोई पूछे कि इनमें दूसरा भेद क्या है, इसका उत्तर इस रीति से प्राप्त होगा। पहले तमाम भेदों की संख्या से (१८ से) नष्टांक “२” को घटा लीजिए। बचे हुए अंक “१६” से पहले के अंक “१०” को घटाने पर शेष है अंक ६ और एक लघु मिलता है। “६” से पूर्वांक “६” को घटाने पर